ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 74 अंक : 03/04 जून/जुलाई, 2024

हीरक जयंती वर्ष की ओर अग्रसर...

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

UGC CARE Listed Journal

वर्ष : 74 अंक : 03/04 जून/जुलाई, 2024

परामर्श मंडल

श्री भारतभूषण महंत
कार्याध्यक्ष, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी (असम)

डॉ. किरण हाजरिका
सम कुलपति, इंदिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय
नयी दिल्ली-68

प्रो. आर.एस. सर्राजु
सम कुलपति, हैदराबाद विश्वविद्यालय
तेलंगाना-500046

प्रो. प्रदीप के शर्मा
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
सिक्किम केंद्रीय विश्वविद्यालय
काजी रोड, गंगटोक, सिक्किम - 737101

डॉ. दीपक प्रकाश त्यागी
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

डॉ. दिलीप कुमार मेधि
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अमूल्य चंद्र बर्मन
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अच्युत शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

प्रधान संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया
मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

संपादक

प्रो. मोहन
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली-1

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद
प्रभारी साहित्य सचिव
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

DWIBHASHI RASTRASEWAK : A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी-32

संपादकीय कार्यालय :
प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32
फोन : 9101541395, 9101541380
ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सहयोग राशि : 100/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा.लि., इंडस्ट्रियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

विषय सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
	हिंदी विभाग		
	संपादकीय		*5*
1.	समकालीन हिंदी कविता में पर्यावरण चेतना	✍ डॉ. चन्द्रशेखर चौबे	6
2.	हिंदी काव्य में राष्ट्रीय भावना	✍ डॉ. किशोरी लाल शाह	11
3.	काव्यात्मक शिल्प में मानवीय संवेदनाओं का सृजन : फणीश्वरनाथ 'रेणु'	✍ डॉ. संगीता कुमारी	18
4.	बाजारवाद की चंगुल में फंसे अन्नदाता की औपन्यासिक दास्तान : आखिरी छलांग	✍ डॉ. मजीद शेख	24
5.	भोजपुरी लोकगीतों में वर्णित स्त्री जीवन	✍ डॉ. राजकुमार शर्मा	32
6.	कुणाल सिंह के उपन्यास 'आदिग्राम उपाख्यान' में पर्यावरण सजगता	✍ डॉ. सूर्या बोस	38
7.	छायावादी प्रवृति एवं चरित्र के आधार पर 'आकाशदीप' का एक पुनर्मूल्यांकन	✍ डॉ. रचना पाण्डेय	42
8.	गांधीवाद को व्यावहारिक रूप देता हिंदी सिनेमा	✍ डॉ. राजेश कुमार	48
9.	अति सूधो सनेह को मारग है...	✍ डॉ. शगुन अग्रवाल	53
10.	मणिपुरी समाज के परिप्रेक्ष्य में लोकगीत	✍ डॉ. जमुना सुखाम	56
11.	नागमती-वियोग-वर्णन का वैशिष्ट्य : एक अवलोकन	✍ पूजा शर्मा	62
12.	स्त्री अस्मिता के संदर्भ में शेष कादम्बरी का विश्लेषण	✍ राधा गौतम ✍ आचार्य राम पाल गंगवार	72
13.	डॉ. अंबेडकर के चिंतन में स्त्री विमर्श : भारत के विशेष संदर्भ में	✍ राजेश कुमार शाह	78
14.	उत्तराखंड के जनमानस पर गाँधीवादी दर्शन का प्रभाव	✍ कु. नीलम	83
15.	असम की मिसिंग (मिरी) जनजाति का परिचय एवं लोक कथाएँ	✍ नीलाक्षी पावे	87
16.	महादेवी वर्मा और नलिनीबाला देवी के काव्य में रहस्यवाद : एक तुलनात्मक अनुशीलन	✍ सुदर्शिणा दुवरी	95
17.	भारत की संथाल जनजाति : उनकी संस्कृति, परंपरा एवं वर्तमान परिदृश्य	✍ शिवेंद्र शांडिल्य ✍ दाऊद टुडू	101
18.	पंचायती राज संस्थाओं में लैंगिक समानता : उत्तराखंड राज्य के विशेष संदर्भ में	✍ दुर्गा प्रसाद ✍ डॉ. प्रियंका सिंह	106
19.	भारत-विभाजन की त्रासदी और हिंदी उपन्यास 'तमस' व 'देश की हत्या'	✍ अभिषेक उपाध्याय	116

অসমীয়া বিভাগ

20. অসমীয়া সমাজৰ দাপোন - নামঘৰ ✍ ড° মঞ্জুমণি শইকীয়া 122

21. পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোকত ৰামধেনু যুগৰ নাৰী গল্পকাৰৰ চুটি গল্প ঃ এক অধ্যয়ন ✍ ড° অম্বেশ্বৰ গগৈ ✍ ড° বি ডি নিশা 126

22. য়েছে দৰজে ঠংচিৰ 'মিচিং' উপন্যাসত অৰুণাচল প্ৰদেশৰ চেৰদুকপেন জনগোষ্ঠীৰ লোকজীৱন ঃ এটি অধ্যয়ন ✍ ড° পূণ্য লতা গোহাঁই 138

23. লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্য ✍ ড° খামছেং বৰগোহাঁই 151

24. প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ আভিযান্ত্ৰিক নিদৰ্শন ঃ এক অধ্যয়ন ✍ অসীম শইকীয়া ✍ ড° ধীৰাজ পাটৰ 156

25. উজনি অসমৰ নক্তে সমাজৰ উৎসৱ-অনুষ্ঠান ঃ এক ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়ন ✍ ড° খনিকৰ মাউত 163

26. ভাৰতীয় প্ৰেক্ষাপটত শিশুৰ অধিকাৰ ঃ এক পৰ্যালোচনা ✍ ড° বিৰাজ দত্ত 174

27. বড়ো সকলৰ বসন্তকালীন উৎসৱ 'ৰংজালি বৈসাগু' ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন ✍ ড° বনশ্ৰী ভৰদ্বাজ ✍ ড° কবিতা ডেকা 181

28. বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰ আৰু ইয়াৰ প্ৰাসংগিকতা ✍ গৰিমা দত্ত ✍ ড° তেজসা কলিতা 187

29. অসমীয়া আৰু কুঁড়ুখভাষাৰ ৰূপতত্ত্ব ঃ এটি অধ্যয়ন ✍ সুলখো দাস 193

30. ছপা আলোচনীৰ পৰা বৈদ্যুতিন আলোচনীলৈ অসমীয়া গল্প ✍ পৰিণীতা বৰা 200

31. 'কৰ্মবাদ'ৰ আওতাত লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ 'বুঢ়ী আইৰ সাধু'ৰ আলোচনা ✍ কুকুমণি শৰ্মা 209

32. উপন্যাসৰ পৰা চলচ্চিত্ৰলৈ : ৰীতা চৌধুৰীৰ উপন্যাস 'ৰাজীৱ ঈশ্বৰ' আৰু মঞ্জুল বৰুৱাৰ চলচ্চিত্ৰ 'কানীন' ✍ ঋষিকন্যা বাৎস 214

33. বড়ো ভাষাত সংগৃহীত শব্দ ✍ স্বৰ্ণ প্ৰভা চৈনাৰী 219

34. অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি ঃ ছপা, সমৰূপতা আৰু বাদ-বিবাদ ✍ প্ৰাঞ্চী বৰা 225

35. অসমৰ লোকবাদ্য ঃ অৱক্ষয়, সংৰক্ষণ, সংবৰ্দ্ধন ✍ মঞ্জু দাস 235

❑ ❑ ❑

संपादकीय

सिनेमा और संस्कृति

सिनेमा के माध्यम से एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति या अपनी संस्कृति में नई दृष्टि से झाँका जा सकता है। इसके माध्यम से भाषा, समाज और संस्कृति के मूल्यों का साक्षात् दर्शन होता है। यहाँ पर माध्यम दृश्य-श्वव्य होता है। इसलिए तस्वीर और शब्द-ध्वनि मिलकर यथार्थ जीवन से रु-ब-रु कराते हैं। दृश्यात्मकता विश्वास जगाती है। यह लिखित भाषा से अधिक विश्वसनीय प्रतीत होती है। गतिशील तस्वीर और ध्वनि तथा घटनाओं और संवादों से उत्पन्न कथाक्रम - इन दो भाषाओं में सिनेमा अपने दर्शकों से संवाद करता है। पहले से इंद्रिय विश्वसनीयता आती है और दूसरे से मूल्य-आधारित विश्वसनीयता। इसलिए यहाँ दर्शक पहली भाषा से आगे बढ़ते हुए दूसरी भाषा का उपभोक्ता बनता है। इसी द्विभाषिकता में ही सिनेमा की शक्ति और लोकप्रियता निहित है। यहाँ पर दर्शक की अयोग्यता जैसा कुछ भी नहीं है बल्कि वह उन दो भाषाओं के बीच मौजूद संवाद स्थल पर होता है। इस दोहरे भाषारूप के कारण ही सिनेमा से कोई हिंदीभाषी दर्शक या हिंदीतर भाषी दर्शक संवाद स्थापित कर पाता है। सिनेमा की ध्वनिभाषा तो दर्शक से संवाद करती ही है।

सिनेमा भाषा, समाज और संस्कृति के मूल्यों का वाहक है। वाहक के रूप में सिनेमा समाज के भाषा-व्यवहार, जीवन-मूल्य, रहन-सहन, रीति-रिवाज और जीवन के संपूर्ण ताने-बाने को दर्शक के समक्ष प्रस्तुत करता है। सिनेमा की कथा में लिपटी हमारी संस्कृति अजनबी दर्शकों के मध्य एक पाठ की तरह खुलती है। हमारे दर्शकों के लिए सिनेमा किसी स्मृतिभाव से गुजरने जैसा ही है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी लगभग प्रत्येक समाज में सिनेमा ने स्वयं को मनोरंजक उत्पाद के साथ-साथ प्रभावशाली और विश्वसनीय अध्ययन-सामग्री के रूप में प्रस्तुत किया है। सिनेमा में हम एक साथ अतीत, वर्तमान और भविष्य को देखते हैं। हम कैसे थे ? हम कैसे हैं ? और क्या होना चाहते हैं ? ये विचार, मूल्य और आकांक्षाएँ सिनेमा की कथा में ही प्रस्तुत होती हैं।

स्वाधीनता से दो दर्शकों तक हमने राष्ट्रनिर्माण, सामूहिकता और मूलभूत आवश्यकताओं से जुड़े सिनेमा को देखा। हमने उस दौर में जीवन-मूल्यों और मनुष्य के हृदय-परिवर्तन पर पूर्ण विश्वास बनाए रखा था। उस दौर के समक्ष एक स्वप्न था, जो 'मदर इंडिया' की शुरुआत से लेकर अंत तक मौजूद रहता है। वह 'दो आँखें बारह हाथ' का दौर था। आदर्श जीवन-मूल्य और भविष्य के प्रति आशा दोनों ही हमारी फिल्मों में मौजूद हैं। उसके प्रदर्शन में बदलाव तो अवश्य आया है, पर उसके प्रति संतुलित विवेक अब भी मौजूद है। सिनेमा जगत में यह बात प्रचलित लगती है कि आदर्श समाज बनाने की समझ इतिहास और संस्कृति के अनुभवकोश के पुनर्विश्लेषण से प्राप्त होगी। इसके संकेत हमें वर्तमान-अतीत पर आधारित सिनेमा में दिखलाई देते हैं। जैसे-'रंग दे बसंती', 'लगे रहो मुन्ना भाई' आदि। इसमें अतीत के वर्तमान में पुनर्सजित किया गया है। इसके विपरीत सिनेमा दर्शक का हाथ पकड़कर इतिहास के बीहड़ों में भी घूमा है।

बहुभाषिक-बहुसांस्कृतिक भारत में 'मोहेंजोदारो, अशोक, जोधा-अकबर, बाजीराव मस्तानी, लगान, खेलें हम जी-जान से, मंगल पाण्डे : द राइजिंग, द लीजेंड ऑफ भगत सिंह, पिंजर आदि फिल्मों ने साहित्य, जनश्रुति, इतिहास और कल्पना के सम्मिश्रण से खुद को निर्मित किया है। पिछले दशक के अंत में हमारे समाज में सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक समस्या के तंत्र को नियति की तरह दिखलाती दो सफल फिल्में प्रस्तुत हुई हैं -पिपली लाइव और फँस गए रे ओबामा। समाज में बढ़ते आपराधिक रूप को गहराई और गंभीरता के साथ सत्या, कंपनी, मकबूल, ओंकारा, गैंग ऑफ वासेपुर आदि में उकेरा गया है। इन फिल्मों ने न केवल अपराध को बल्कि संबंधों में गिरते अविश्वास को भी अपना विषय बनाया है। हिंदी सिनेमा में खेलकूद पर काफी फिल्में बनी और सफल भी हुईं। जैसे - भाग मिल्खा भाग, दंगल, एम.एस. धोनी। इन फिल्मों ने सफल खिलाड़ियों के जीवन को पर्दे पर उतारकर भारतीय नवयुवकों को प्रेरित किया। देश-प्रेम पर प्रत्यक्ष रूप से 'लक्ष्य', 'स्वदेश' तथा 'एयरलिफ्ट' आदि फिल्में उल्लेखनीय हैं।

अंत में मैं इस अंक के सुधी लेखकों को साधुवाद देता हूँ। ❑

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

प्रसंग

समकालीन हिंदी कविता में पर्यावरण चेतना

डॉ. चन्द्रशेखर चौबे

सहायक प्रोफेसर, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, क्षेत्रीय केंद्र डिमापुर ओल्ड डी.आई.एस. ऑफिस, यूनाइटेड कॉलोनी, वार्ड-20, हाफ नागरजान डिमापुर (नगालैंड)– 797112
7355620345
shekharjnu2@gmail.com

पर्यावरण शब्द परि तथा आवरण-इन दो शब्दों से मिलकर बना है। परि अर्थात चारों ओर, आवरण अर्थात् ढँका हुआ। वे सारी स्थितियाँ, परिस्थितियाँ जो किसी भी जीव या जीवों के विकास पर चारों ओर से प्रभाव डालती हैं, वह उसका पर्यावरण कहलाती हैं। वास्तव में पर्यावरण में वह सब कुछ सम्मिलित है, जिसे हम अपने चारों ओर देखते हैं, जल-थल, वायु, अंतरिक्ष, मनुष्य, जीव-जंतु, पेड़-पौधे, जंगल, पहाड़, नदियाँ, झरने, घाटियाँ, खेत-खलिहान, सागर-महासागर आदि सभी पर्यावरण के भाग हैं। पर्यावरण के विभिन्न जैविक और अजैविक घटक एक-दूसरे पर निर्भर हैं। तात्पर्य यह कि प्रकृति एवं पर्यावरण के बिना पृथ्वी पर मनुष्य समेत सभी जीव-जंतुओं की चेतना संभव नहीं है।

हमारे प्राचीन वेदों एवं आर्ष ग्रंथों में पर्यावरण के महत्व को दर्शाया गया है। पर्यावरण चेतना भारतीय जीवन पद्धति का अभिन्न अंग रहा है। हमारे प्रत्येक क्रिया-कलाप में पर्यावरण संरक्षण अनायास, लेकिन सुचिंतित रूप से समाहित रहा है। भारतीय दर्शन में प्रकृति के *पंच महाभूतों*[1] - पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश से सृष्टि के सभी पदार्थों की निर्मिती मानी गई है। हमारा भौतिक-शरीर भी इन्हीं पंच महाभूतों से बना है, जिसमें प्राण अथवा आत्मा के संचार से मनुष्य सजीव होता है। प्राण भी इन्हीं पाँच तत्वों से मिलकर बना है। वेदों में आत्मा को पुरुष कहा गया है। ब्रह्मांड में प्रकृति से उत्पन्न सभी वस्तुओं में पंच तत्व की अलग-अलग मात्रा मौजूद है। अपने उद्भव के बाद सभी वस्तुएँ नश्वरता को प्राप्त होकर इनमें ही विलीन हो जाती हैं।

जिस प्रकृति का दोहन और विनाश करते हुए विकास की अंधी दौड़ में हम इतने बदहवास होकर भागे जा रहे हैं कि हमारे पास प्रकृति और पर्यावरण के बारे में सोचने का अवकाश ही नहीं रहा। कोरोना महामारी काल में वही प्रकृति हमारे ऊपर जैसे हँस रही थी। विज्ञान के सहारे जल, थल, भूगर्भ, वायुमंडल, मंगल और चंद्रमा पर अपना परचम लहराने वाला, तमाम विपदाओं पर विजय प्राप्त करने वाला आधुनिक मनुष्य एक विषाणुजनित महामारी के सामने लाचार नजर आ रहा था। लाखों मनुष्य मौत के मुँह में समा गए। ऐसी विकट आपदा में सबका ध्यान प्रकृति की तरफ गया। हममें से बहुतेरे यह सोच रहे थे कि कहीं प्रकृति हमसे बदला लेकर अपना संतुलन तो नहीं कर रही है। वास्तव में यह समय हम सब बुद्धिजीवियों के लिए गहरे चिंतन का समय है।

पर्यावरण संकट वास्तव में पश्चिमी औद्योगिक सभ्यता और उपभोक्तावादी संस्कृति के वैश्विक प्रसार से उत्पन्न हुआ संकट है। आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति और तकनीकी क्रांति से दुनिया ग्लोबल हुई है, इसलिए पर्यावरण संकट भी ग्लोबल हो गया है। महात्मा गांधी ने इस संकट को बहुत पहले भाँप लिया था, इसीलिए उन्होंने ने अपने 'हिन्द स्वराज' पुस्तक में आधुनिक शहरी औद्योगिक सभ्यता को शैतानी सभ्यता कहा था, जिसमें मनुष्य के विनाश के बीज सन्निहित हैं। आज से सौ साल से भी पहले गांधी जी ने कहा था यदि भारत ने विकास के लिए पश्चिमी मॉडल को अपनाया तो उसे अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए एक अलग धरती की जरूरत होगी। आज विश्व में पर्यावरण प्रदूषण और ग्लोबल वार्मिंग को रोकने के लिए दुनिया के वैज्ञानिक और विश्व स्वास्थ्य संगठन महात्मा गांधी की उन्हीं बातों को दुहरा रहे हैं और मनुष्य को अपने उपभोग के साधनों में कटौती करने और सरल जीवन जीने का आग्रह कर रहे हैं।

कहना न होगा कि भारतीय संस्कृति में आरंभ काल से ही प्रकृति और पर्यावरण का संरक्षण मानव-मूल्यों के पूरक के रूप में होता रहा है। हमारे सभी पर्व-त्योहार एवं धार्मिक रीति-रिवाज बिना प्रकृति पूजा के संपन्न नहीं होते। प्रकृति और पर्यावरण संरक्षण हमारी धार्मिक आस्था के साथ एकमेव होकर हमारे जीवन का अभिन्न अंग रहे हैं। भारतीय जीवन पद्धति एवं साहित्य, संगीत आदि विविध कलाओं में प्रकृति एवं पर्यावरण के बिना मानव-मूल्यों के सृजन और अनुपालन की कल्पना नहीं की जा सकती। वैदिक काल से लेकर भक्ति काल तक और हिंदी साहित्य में बहुत हद तक छायावाद काल तक सभी काव्य-रचनाओं में मानव चरित्रों की उदात्तता समाज, प्रकृति और पर्यावरण सापेक्ष रही है। छायावादोत्तर काल के हिंदी काव्य में धीरे-धीरे महानगरीय जीवन की समस्याएँ और विसंगतियाँ– कुंठा, संत्रास, अजनबीपन, अकेलापन, निराशा, मूल्य संकट आदि व्यक्ति केंद्रित जीवनबोध के रूप में अधिक अभिव्यक्त होने लगी। नई कविता के दौर में हिंदी कविता वैयक्तिक जीवन-संघर्षों और आंतरिक मनोदशाओं की अभिव्यक्ति में अधिक रमी। प्रकृति अब कविता का स्वतंत्र विषय नहीं रही और न ही आधुनिक मानव के साथ प्रकृति का रागात्मक भाव-बोध स्थापित करते हुए उसका मानवीकरण करने में अब कवि की पहले जैसी रुचि रही। कभी-कभार नगरीय जीवन से ऊबकर या किसी अन्य कारण से जब वह प्रकृति के रमणीय स्थलों की यात्रा और प्रकृति के मनोरम दृश्यों का साक्षात्कार करता था, तब प्रकृति के सुंदर रूपों को अपनी कविता में उकेरता था, परंपरागत प्रतीकों के घिस जाने और उपमानों के मैले हो जाने की चिंता से आतुर प्रकृतिपरक शब्दों में नए अर्थ भरते हुए नए बिंब और प्रतीक गढ़ने का प्रयास करता था।

नई कविता के बाद साठोत्तरी कविता और अकविता का दौर आता है। नक्सलबाड़ी आंदोलन के परिप्रेक्ष्य में राजनीतिक कविताओं का दौर भी आता है। कविता पोस्टर और नारों में तब्दील हो जाती है। बीसवीं सदी के अंतिम

दो दशकों में बाजारवाद, स्त्री और दलित विमर्श का प्रभाव भी कविता में अभिव्यक्त होता है। इन तमाम काव्य-आंदोलनों के बीच समकालीन कवि नगरीय जीवन के दमघोंटू प्रदूषण से बुरी तरह त्रस्त होने लगता है। पर्यावरण प्रदूषण छोटे-छोटे शहरों और कस्बों तक फैलने लगता है। ऐसे में शुद्ध हवा, शुद्ध जल, वृक्षों की हरियाली, पशु-पक्षियों, हरे-भरे खेत, जंगल, पहाड़ और नदियों की सुरक्षा की चिंता समकालीन कवियों को बेचैन करती है। उसे अपने पर्यावरण के प्रदूषित हो जाने का गहरा बोध होता है। समकालीन कवि प्रकृति और पर्यावरण संरक्षण के अनेक रूपों को कविता में अभिव्यक्ति देता है।

पर्यावरण संरक्षण, वृक्षों की रक्षा एवं वन्य जीवों की सुरक्षा को लेकर पहला जन-आंदोलन मध्य काल में राजस्थान में हुआ था। सोलहवीं सदी में भक्ति काल के कवि गुरु जम्भोजी (सं. 1508 से सं.1593) ने सचेत रूप से वृक्षों एवं वन्य जीवों की रक्षा द्वारा पर्यावरण संरक्षण का संदेश दिया था। इन्होंने बिश्नोई पंथ की स्थापना की और सभी धर्मों एवं जातियों को इस पंथ में दीक्षित किया। इन्होंने 29 नियम बनाए, जिसमें पेड़-पौधों की रक्षा और वन्य जीवों की सुरक्षा का पालन भी अनिवार्य किया। इन्होंने मूल मंत्र दिया–जीव दया पालणी अर रुख लीलो नहिं घावै। अर्थात पृथ्वी के समस्त जीवों पर दया करो और हरे वृक्ष मत काटो। बिश्नोई समाज के अनेक स्त्री-पुरुषों ने वृक्षों की रक्षा के लिए अपने प्राण न्योछावर कर दिए, लेकिन वृक्षों को कटने नहीं दिया। आधुनिक काल में जल, जंगल और जमीन को बचाने के लिए अनेक समाज-सेवियों ने आंदोलन चलाया, कुछ जनता द्वारा सामूहिक आंदोलन भी हुए।

वर्तमान हिंदी कविता में पर्यावरण को लेकर चिंता की अभिव्यक्ति एक साथ कई पीढ़ी के कवियों में देखने को मिल रही है। नई कविता के कवि केदारनाथ सिंह से लेकर समकालीन उत्तराधुनिक भारतीय कवि और प्रवासी कवियों की रचानाओं में भी प्रकृति और पर्यावरण के प्रति गहरी संवेदना की अभिव्यक्ति हो रही है। अरुण कमल, राजेश जोशी, उदय प्रकाश, बलदेव वंशी से लेकर ऋषभदेव शर्मा, राजेंद्र मागदेव, कविता वाचकनवी, श्रीप्रकाश मिश्र तक असंख्य कवि पर्यावरण प्रदूषण और वन्य जीवों के संकट पर गहरा क्षोभ व्यक्त करते हुए मर्मस्पर्शी कविताएँ लिख रहे हैं।

केदारनाथ सिंह 'पानी की प्रार्थना' कविता में पानी के जीवनदायी इतिहास से लेकर उसके वर्तमान दूषित स्वरूप तक की यात्रा का संवेदनात्मक चित्र खींचते हैं। कविता कुछ इस तरह आरंभ होती है :-

प्रभु
मैं- पानी- पृथ्वी का
प्राचीनतम नागरिक
आपसे कुछ कहने की अनुमति चाहता हूँ।

आगे इस कविता में पानी पशु-पक्षी, जीव-जंतु, मनुष्य, सूरज सभी की प्यास बुझाते हुए एक दिन स्वयं के दूषित हो जाने पर शर्मिंदा महसूस करता है। कवि के शब्दों में :-

समय ऐसा ही कुछ ऐसा है
कि पानी नदी में हो
या किसी चेहरे पर
झाँककर देखो तो तल में कचरा
कहीं दिख ही जाता है।

कवि पानी के बाजारीकरण पर व्यंग्य करता है, क्योंकि आम आदमी के हिस्से में भले ही दूषित पानी रह गया है, लेकिन पैसे वालों के लिए शुद्ध पानी बाजार में हर समय उपलब्ध है। कवि कहता है :-

पर चिंता की कोई बात नहीं
यह बाजारों का समय है
और वहाँ किसी रहस्यमय स्रोत से
मैं हमेशा मौजूद हूँ।

हम सभी जानते हैं कि मनुष्य का जीवन ऑक्सीजन पर निर्भर है और यह ऑक्सीजन हमें पेड़-पौधों से प्राप्त होता है। मनुष्य वनों को काट कर वास्तव में अपने विनाश को आमंत्रित कर रहा है। महानगरों में भयंकर वायु-प्रदूषण इसका प्रमाण है। समकालीन कवि का ध्यान पेड़-पौधों के संरक्षण और वनों को बचाने पर गया है। वनों के कटने और प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से प्रकृति में असंतुलन पैदा हो रहा है। बाढ़, चक्रवात, सूनामी, भूकंप, हिमस्खलन

आदि आपदाएँ आए दिन विकराल रूप में घटित हो रही हैं। कविता वाचकनवी 'भूकंप' शीर्षक कविता में धरती की इस पीड़ा के द्वारा प्राकृतिक विभीषिका का चित्रण करती हैं :-

मेरे हृदय की कोमलता को
अपने क्रूर हाथों से
बेध कर
ऊँची अट्टालिकाओं का निर्माण किया
उखाड़ कर प्राणवाही पेड़-पौधे
बो दिए धुँआ उगलते कल-कारखाने

....

तुम्हारी कुदालों, खुरपियो, फावड़ों
मशीनों, आरियों, बुलडोजरों से
कंपती थरथराती रही मैं
तुम्हारे घरों की नींव
मेरी बाँहों पर थी

....

मैं थोड़ा हिली
तो लो
भरभरा कर गिर गए
तुम्हारे घर
फटा तो हृदय मेरा ही।[2]

बड़े-बड़े कल-कारखानों और फैक्ट्रियों से निस्तारित दूषित जल, जहरीले रसायनों और महानगरों के कूड़े-कचरों से जल और हवा के साथ मिट्टी भी प्रदूषित हो रही है। बलदेव वंशी इस नगरीय प्रदूषण से त्रस्त धरती की संवेदना को शब्द देते हुए लिखते हैं :-

महानगरीय कचरे में
पंच महाभूतों के ऐसे-ऐसे सम्मिश्रण
नए सभी उत्पाद-रासायनिक
और पालीथीन
धरती पचा नहीं पाई
इस बार

....

इतने वर्षों बाद भी
असमंजस, असमर्थ, अपमान में
अपना धरती होने का धर्म
निभा नहीं पाई

....

मनुष्य जीवन के आधुनिक
आयामों के सामने
लज्जित थी धरती
हाँ! इतना जरूर हुआ
कि उस ठिठकी हुई धरती पर
मिट्टी के ढेर पर
अब कुछ कोमल कोंपलें
सगर्व लहरा रही थीं।[3]

वनों के नष्ट होने से पशु-पक्षियों की अनेक प्रजातियाँ विनष्ट हो गई हैं और कई नष्ट होने के कगार पर हैं। गौरैयों के घोंसले अब हमारे घरों से गायब हो गए हैं। राजेंद्र मागदेव अब अपनी स्मृतियों के सहारे गौरैयों के घोंसलों और अंडों को छूने के रोमांच का चित्रण आने वाली पीढ़ी के लिए करते हैं :-

हमने गौरयों के घोंसले
रोशनदानों में देखे थे
हमने गौरैयों के घोंसले
लकड़ी की पुरानी आलमारी पर देखे थे
हमने वहाँ गौरैयों के अंडे
पंखों, तिनकों और
सुतलियों के बीच रखे देखे थे
हमने अंडों को चुपचाप छूकर देखा था
हम छूते ही अजीब रोमांच से भर गए थे
वह रोमांच आनेवाली पीढ़ियों को
किस तरह से समझायेंगे हम?[4]

आज समाज में सच्चाई, नैतिकता और मनुष्यता के साथ-साथ पेड़-पौधे, हरे भरे खेत, पशु-पक्षी और साँस लेने के लिए शुद्ध हवा भी लुप्त हो रही है। इसीलिए उदय प्रकाश 'बचाओ' शीर्षक कविता में इन सभी को बचाने की कामना करते हैं :-

बचाना है तो बचाए जाने चाहिए गाँव में खेत
जंगल में पेड़
शहर में हवा

पेड़ों में घोंसलें
अखबारों में सच्चाई
राजनीति में नैतिकता
प्रशासन में मनुष्यता
दाल में हल्दी।[5]

माना जाता है कि प्रकृति अपना पारिस्थितिकी संतुलन स्वत: कायम रखती है। रमणिका गुप्ता अपने कविता संग्रह 'प्रकृति युद्धरत है' की शीर्षक कविता में लिखती हैं :-

प्रकृति युद्धरत है
युद्धरत रहती है
युद्धरत रहेगी
नहीं तो उसे मिटना होगा
....
उसका हर सिपाही युद्धरत है हर मोड़ पर
अपने अपने परिवेश में
हर मुहीम पर।[6]

कहना न होगा कि कवि एक सहृदय चिंतक होता है। वह मानव जीवन और मानव अस्तित्व के समक्ष उपस्थित होने वाले प्रत्येक छोटे-बड़े संकटों से टकराता है, चिंतन-मनन करता है, जूझता है और अपने अंत:संघर्षों को कविता में शब्द देता है। समकालीन हिंदी कवियों ने भी अपनी कविताओं के माध्यम से पर्यावरण संकट को लेकर चिंता जाहिर की है, उनकी चिंता में निर्जीव, सजीव समेत संपूर्ण प्रकृति है। प्राकृतिक संसाधनों के दोहन-शोषण एवं पर्यावरण प्रदूषण से प्रकृति में असंतुलन पैदा हो रहा है। प्रकृति असंतुलन से पारिस्थितिकी संकट उत्पन्न हो रहा है। पारिस्थितिकी संकट मानव सृष्टि के संकट की ओर इशारा है। मनुष्य जाति को इस भावी संकट पर गंभीरता से विचार करना होगा एवं इसके उचित समाधान हेतु क्रियाशील होना होगा। ❑

संदर्भ :

1. https://hi.wikipedia.org/wiki/ पंचभूत
2. भूकंप, कविता वाचकनवी, मैं चल तो दूँ, सुमन प्रकाशन, हैदराबाद, संस्करण 2005, पृ. 119
3. कूड़ा, कचरा और कोंपलें, बलदेव वंशी, समकालीन भारतीय साहित्य, जुलाई-अगस्त 2008 , पृ. 147
4. गौरैया नहीं आती अब, राजेंद्र मगदेव, समकालीन भारतीय साहित्य, मई-जून 2009, पृ.39
5. बचाओ, उदय प्रकाश, कवि ने कहा, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009, पृ.93
6. प्रकृति युद्धरत है, रमणिका गुप्ता, नवलेखन प्रकाशन, 1994

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

राष्ट्रबोध

हिंदी काव्य में राष्ट्रीय भावना

डॉ. किशोरी लाल शाह

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी
राजकीय महाविद्यालय सतपुली
पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखंड)
पिन कोड- 246172
✆ 7668991518
✉ dr.kishorilalshah@gmail.com

साहित्य में राष्ट्रीयता की भावना कालातीत से रही है। राष्ट्रीयता की यह विचारधारा अविरल गति से निरंतर हिन्दी साहित्य में प्रवाहित हुई है। इसने राष्ट्रीय भावना के विस्तार में अपनी प्राथमिक भूमिका निभाई है। वस्तुतः साहित्य की सभी विधाओं- कहानी, निबंध, नाटक, उपन्यास, कविता, आत्मकथा, जीवनी, लेखों, पत्र-पत्रिकाओं इत्यादि सभी में राष्ट्रीय भावना की व्यापकता निरूपित हुई है। किंतु इन सभी विधाओं में राष्ट्रीय भावना के अनुशीलन से काव्य का विशिष्ट महत्व है। स्वाभाविक में राष्ट्र के प्रति आत्मीयता तथा अटूट स्नेह की भावना ही राष्ट्रीयता है, जिसमें देश-प्रेम, देश-भक्ति एवं देश के प्रति आत्मसमर्पण की भावना निहित होती है। वर्तमान में राष्ट्रीयता एक ऐसी बलिष्ठ भावना और प्रभावशाली अंतर्दृष्टि है, जिसका संबंध व्यक्ति के अंतर्बोध से होता है, जो अकथनीय होने के निमित्त एक नैसर्गिक मनोभाव में से एक है। इसके माध्यम से व्यक्ति अपने राष्ट्र से असाधारण भाँति संसक्ति रखता है और उसे निरंतर अभ्युत्थित तथा ऐश्वर्यवान अवलोकन के सादृश्य उत्कंठित रहता है। इसी भावना के संवेग से उन्मादी व्यक्ति अपने देश की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों में राष्ट्र अभ्युदय के फलस्वरूप सर्वस्व समर्पित और अपनी शहादत अर्पित करने में गौरवान्वित की अनुभूति करता है। यह अनुभूति मानसिक भावना पर आधृत है। वस्तुतः जिस राष्ट्र में राष्ट्रीयता की भावना जितनी अधिक प्रबल होती है, उतना ही ज्यादा वह प्रतिष्ठित एवं प्रभावशील माना जाता है। इतिहास निर्माण की काव्यधारा में जिस राष्ट्रीयता और सामूहिक प्रेरणा देने वाली भावना की अभिव्यंजना हुई है, अंशतः उसका प्रकटीकरण 'हिंदी काव्य में राष्ट्रीय भावना' नामक शोध पत्र में अवलोकित करने का प्रयास किया गया है।

संकेत शब्द :

राष्ट्रीयता, देश प्रेम, देश भक्ति, स्वाधीनता आंदोलन, ज्ञान-विज्ञान, स्वाभिमान, महिमागान, बलिदान, वीरता, शौर्यता, योद्धा, शोषण, स्वतंत्रता, पराधीन, फाँसी, जेल।

वैदिक काल से ही 'राष्ट्र' शब्द का व्यवहार होता रहा है, लेकिन राष्ट्र और राष्ट्रीयता की भावना पराधीनता की अवधि में अतिशय विकसित हुई, जो साहित्य

की सहायता से हमारे सामने उपस्थित हुई। फलतः साहित्य में राष्ट्रीय भावना का विस्तार हुआ, क्योंकि प्रत्येक राष्ट्र का समाज और उसके साहित्य से पारस्परिक समन्वय अवश्य होता है। अतः किसी भी समाज का अपना एक विपुल जीवन-दर्शन होता है, जो कि राष्ट्र के रूप में दूसरे समाज को प्रभावित करता है। कभी-कभी अन्धानुकरण युक्त विकृत-परंपराएँ, अमानवीय व्यवहार और मानसिक रूढ़ियों से ग्रस्त समाज प्रायः राष्ट्र के पतनोन्मुख का कारण बनता है। किंतु ऐसी स्थिति में कवि ही प्रबोधन के उद्गीथ गाकर मोह-विलास की सुषुप्ति में अनुरक्त राष्ट्र को प्रतिरोध के लिए प्रचालित करता है। अतः साहित्य द्वारा ही राष्ट्रीय भावना जैसी अभिव्यक्त मनोवृत्ति का पोष्य और अभ्युदय मुमकिन है।

वस्तुतः किसी भी देश का साहित्य वहाँ की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक वातावरण के अनुकूल बनता और बदलता है। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी के शब्दों में, *''साहित्य का मानव-जीवन से चिरंतन संबंध है। साहित्य का स्रष्टा मनुष्य है और मनुष्य के लिए ही साहित्य की सृष्टि है। मानव-जीवन ही साहित्य का उपादान और विषय-वस्तु रहा है और रहेगा। मानव-जीवन विकासशील वस्तु है, इसलिए साहित्य भी विकासशील वस्तु है।''*[1]

आदिकाल के चारण कवियों में चाहे वे किसी राजाश्रय में रहते थे, किंतु जन-साधारण में राष्ट्रीय एवं जातीय भावनाओं से गुथा हुआ नव्य-भावों का संचरण करना ही उनकी सृजन का मुख्य ध्येय एवं प्रयोजन रहा है। पूर्व मध्य काल में काव्य का आधार-स्तंभ जीवात्मा और परमात्मा तथा भक्त एवं भगवान के अंतर्संबंधों को दीप्तिमान करना था, किंतु उसमें भी राष्ट्रीय ध्वनि की गूँज सत्यतापूर्ण सुनाई पड़ती है। जहाँ संत कबीर ने अमूर्त ब्रहा की आराधना का उत्कृष्ट आदर्श रूप निर्मित कर राष्ट्रीय आत्म-सम्मान में नवल जीवन का संचरण किया, वहीं राष्ट्रीय भक्त तुलसीदास ने भी राम के लोकाचारी समन्वयक स्वरूप को उद्घाटित कर सांस्कृतिक एकरूपता का परिचय देते हुए लिखा है:-

अगुनहिं सगुनहिं नहिं कछु भेदा, गावहिं श्रुति पुरान बुध वेदा।
अगुन अरूप अलख जग जोई, भक्ति प्रेम बस सगुन सो होई।[2]

यही नहीं, 'श्रीरामचरितमानस' के 'उत्तरकांड' में रामराज्य का निर्णय हमारी राष्ट्रीय उद्भावना के नितांत सदृश तो है ही, उसमें भी 'कलिकाल' और उसके गुण की जो झाँकी विद्यमान है, उसका लक्ष्य भी युगीन वातावरण की प्राणवंत तस्वीर उकेर कर राष्ट्र को आगामिक जीवन के लिए सजग और सचेत करना ही रहा है। फलतः सूरदास ने भी कर्मयोगी, अखिल ब्रह्मांडनायक श्रीकृष्ण की विविध लीलाओं के माध्यम से आध्यात्मिक चेतित भावना का विस्तार करते हुए समाज को सत्कर्म का आत्मज्ञान करवाया। हालाँकि उत्तर-मध्यकाल के शृंगार और विलासमय परिवेश का चित्रण करने वाले कवियों के मध्य भी राष्ट्रीय भावना का पैगाम देने वाले कवियों का अभाव नहीं था। भूषण, गोरेलाल, वृन्द, गुरु गोविंद सिंह, सेनापति और मतिराम जैसे कवियों की हंसवाहिनी राष्ट्रीय भावना से ही अभिप्रेरित हैं। छत्रसाल एवं शिवाजी जैसे राष्ट्र नायकों को अपने काव्य का विषय बनाकर राष्ट्रीयता के कांतिहीन वातावरण में भी राष्ट्रीय प्रणय की प्रत्याशा भरी आभा बिखेरते हुए भूषण कहते हैं :-

दावा द्रूमदंड पर चीता मृगझुंड पर,
भूषण बितुंड पर जैसे मृगराज है।
तेज तम अंश पर कान्ह जिमि कंस पर,
यों म्लेच्छ बंस पर सेर शिवराज है।[3]

ज्यों-ज्यों परिस्थितियाँ बदलती हैं, त्यों-त्यों साहित्य भी उसी के अनुरूप परिवर्तित होने लगता है। हिंदी साहित्य का आधुनिक काल तो सर्वथा राष्ट्रीय भावना से सराबोर है। अतः साहित्यकार अपने युगीन परिवेश से कैसे अछूता रह सकता है? यही कारण है कि हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में जो राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम की तरंग देश में दौड़ रही थी, उसने भारतीय जन-मानस की आँखें खोल दी थी। ब्रह्म समाज, आर्य समाज, प्रार्थना समाज, तत्वबोधिनी सभा, रामकृष्ण मिशन, थियोसोफिकल सोसायटी जैसी संस्थाओं और स्वामी विवेकानंद, रामकृष्ण परमहंस के माध्यम से देश में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक, जातीय अस्मिता और ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में एक नई जन-चेतना का आविर्भाव हुआ, जिसने कवियों को राष्ट्रवादी भावना की भगीरथी बहाने के लिए

प्रेरित किया। डॉ. अशोक कुमार झा के अनुसार, *''वस्तुतः स्वाधीनता आकांक्षा विषयक एकता, भौगोलिक एकता, भाषायी एकता, जातीय एकता, सांस्कृतिक एकता, आर्थिक एकता, धर्मगत एकता, संस्कृति और राष्ट्रीयता का अटूट संबंध, इतिहास और लक्ष्य की समानता आदि राष्ट्रीयता के प्रमुख अंग माने जाते हैं।''*[4]

हिंदी साहित्य में उच्च राष्ट्रीय चिंतन की व्यापकता और राष्ट्रीय स्वाधीनता के साथ-साथ राष्ट्र के बहुमुखी अभ्युदय की भावना दृष्टिगोचर होती है। हिंदी कवियों ने भी स्वतंत्रता आंदोलन में पूर्ण मनोवेग और उमंग के साथ क्रांतिकारी विचारों को उद्दीप्त करने वाली कविताओं, गजलों, मुक्तक-काव्य, खंड-काव्य एवं प्रबंध काव्यों की रचनाएँ कीं। भारतेंदु, द्विवेदी, छायावाद एवं छायावादोत्तर युग में राष्ट्रीय भावनाओं को अभिसिंचित करने वाली रचनाएँ आज भी राष्ट्रीय भावनाओं को जागरूक करने में उपयुक्त हैं। इन कविताओं में देश-भक्ति और देश-प्रेम की महिमा का गौरवगान स्पष्ट रूप से सुवासित है।

भारतेंदु युग के कवियों ने परंपरागत संकीर्ण राष्ट्रीय भावना से ऊपर उठकर भारत के गौरवशाली इतिहास, वर्तमान दुरावस्था की व्याख्या, अंग्रेज सत्ता के प्रति अरुचि उत्पन्न कर सामाजिक पुनरुत्थान एवं आत्मगौरव का भाव जागृत करने का भगीरथ प्रयास किया। भारतेंदु मंडल के कवियों में भारतेंदु हरिश्चंद्र, राधाचरण गोस्वामी, प्रतापनारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन', राधाकृष्ण दास आदि कवियों की रचनाओं में देश भक्ति तथा राष्ट्रीय भावना की उत्कृष्ट अभिव्यंजना हुई है। इन कवियों ने देश की दुरावस्था के लिए उत्तरदायी कारणों का विवेचन, भारतीय जन-मानस में राष्ट्रीय भावना के बीज अंकुरित करने तथा पूर्वकाल के प्रेरणात्मक अनुरागों द्वारा पुनरुद्धार का विचार दिया। डॉ. शेखर चन्द्र जैन के शब्दों में,

"स्वाभाविक में भारत जब सभी क्षेत्रों में पराधीन होकर नगण्य अवस्था में अश्रु बहा रहा था, उस वक्त भारत की व्यापक भूमि, अतीत की समृद्धि तथा गौरव-गाथाओं द्वारा ये कवि देश को पुनीत भावना से अभिप्रेरित कर रहे थे। पुनर्जागरण काल के पुरोधा भारतेंदु ने भारतीय जन-साधारण के हृदय में राष्ट्रीयता और भक्ति भावना का समन्वय करते हुए, उन्हें जगाने का प्रयास किया है। [5]

डूबत भारत नाथ बेगि जागो अब जागो।
आलस-दवेएहि दहन हेतु चहुँ दिशि सो लागों।
महामूढ़ता वायु बढ़ावत तेहि अनुरागो।
कृपादृष्टि की वृष्टि बुझावहु आलस त्यागो। [6]

भारतेंदु मंडल के कवियों ने भारत के अतीत-गौरव पर दृष्टिपात करते हुए कहा कि जिस देश की माटी कभी सोना उगलती थी, आज उसी भूमि के लोग रोटी के टुकड़ों के लिए दर-दर भटक रहे हैं। इस दर्द और क्षोभ को व्यक्त करते हुए प्रतापनारायण मिश्र ने लिखा है कि-

तबहिं लख्यो जहं रह्यो एक दिन कंचन बरसत,
तहं चौथाई जन रूखी रोटिहुं को तरसत,
जहं आमन की गुठली अरु बिरछन की छालैं,
ज्वार चून महं मेलि लोग परिवारहिं पालैं। [7]

द्विवेदी काल में देश के लिए उत्सर्ग, शहादत, समर्पण, समाज एवं राष्ट्र समृद्धि की भावना और प्रोत्साहन के लिए कविता ही मूल साधन बन गई थी। अत: निर्बाध राष्ट्रीय भावना इस युग की मुख्य मनोवृत्ति रही है। इस काल के कवियों ने देश की अनुरूपता, सततता, स्वाधिकार एवं पुनरुत्थान के लिए राष्ट्रीय भावना से युक्त उत्कृष्ट कविताओं की रचना की। भारत के सांस्कृतिक गौरव का महिमा गान, देश की हताश एवं निराश जनता में स्वाभिमान का भाव इस युग के कवियों ने प्रचालित किया। राष्ट्रीय कवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा रचित 'भारत-भारती' की बढ़ती लोकप्रियता तथा राष्ट्रीय भावना से विमुग्ध भारत के अनगिनत नवयुवक आजादगी की जंग में कूद पड़े और अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों का प्रत्यक्ष प्रतिवाद करते हुए जेल की यातनाएँ भी स्वीकार कीं-

'हम कौन थे, और क्या हो गये हैं, जान लो इसका पता
जो थे कभी गुरु, है न उनमें शिष्य की भी योग्यता!
जो थे सभी से अग्रगामी, आज पीछे भी नहीं,
है दीखती संसार में विपरीतता ऐसो कहीं? [8]

एक वक्त था, जब भारत कला-कौशल, सभ्यता और विद्या में विश्व का सरताज हुआ करता था, किंतु एक दौर है कि इन्हीं प्रसंगों का चिंतनीय ह्रास इसमें प्रत्यक्षत: दिखाई देता है। वस्तुत: देश के वर्तमान और भविष्य का उत्तरदायित्व अब युवा पीढ़ी के मजबूत कंधों पर है। इस आशय से स्वतंत्रता और राष्ट्र के प्रति उनके सामर्थ्य एवं अधिकार-बोध का आत्म ज्ञान कराते हुए कवि रामनरेश त्रिपाठी कहते हैं कि-

'तुम अपने सुख के प्रबंध के हो न पूर्ण अधिकारी,
यह मनुष्यता पर कलंक है प्रियबन्धु, तुम्हारी,
पराधीन रह कर अपना सुख शोक न कह सकता है,
वह अपमान जगत में केवल पशु ही सह सकता है। [9]

इस काल के कवियों ने भारत की दासता और दुरावस्था के मुख्य कारण आलस्य, आपसी फूट, खुदगर्जी, अभिजात्यता, अकर्मण्यता, मिथ्याडंबर आदि व्याप्ति को माना है। भारतीय जन-सामान्य को इनसे उभरने की प्राणशक्ति देते हुए रायदेवी प्रसाद पूर्ण अपनी कविता में लिखते हैं कि-

भरतखंड का हाल जरा देखो है कैसा।
आलस का जंजाल जरा देखो है कैसा।
जरा फूट की दशा खोलकर आँखें देखो।
खुदगर्जी का नशा खोलकर आँखें देखो।
है शंख दौलत की कहीं, बल का कहीं गुमान है।
है खानदान का मद कहीं, कहीं नाम का ध्यान है। [10]

छायावादी कविताओं में तो भारत के राष्ट्रीय उद्बोध और स्वाधीनता प्रेम का अनहद नाद सुनाई देता है। इस काल में राष्ट्रीय स्वतंत्रता अपने तरुणाई पर थी। रोलेट एक्ट के दमन के पश्चाात जलियांवाला बाग नृशंस हत्याकांड, महात्मा गांधी द्वारा असहयोग आंदोलन का आरंभ, साइमन कमीशन का बहिष्कार, भगत सिंह के साथ सुखदेव एवं राजगुरु को फाँसी जैसी अमानवीय घटनाओं ने देश में एक नई क्रांति को जन्म दिया। परिणामत: छायावादी कवियों की रचनाएँ भारत की आंतरिक विसंगतियों और विषमताओं को दूर करने के लिए प्राय:

स्वाधीनता की लड़ाई में कूदने की प्रेरणा देती हैं। जयशंकर प्रसाद की 'अरुण यह मधुमय देश हमारा', चंद्रगुप्त नाटक में 'हिमाद्री तुंग-शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती' तथा निराला की 'वर दे वीणा वादिनी' 'भारती जय विजय करें 'जागो फिर एक बार', इत्यादि कविताओं में राष्ट्रीयता की भावना उत्कृष्ट रूप से व्याख्यायित हुई है। 'महाराणा का महत्व' में प्रसाद आत्म-समान, स्वायश्रता का प्रेम, परावलंबी के प्रतिकूल कशमकश, समानता प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ प्रतिज्ञा और राष्ट्रीय प्रतिष्ठा की व्यंजन करते हुए लिखते हैं कि-

कहो कौन है? आर्य जाति के तेज-सा
देश भक्त, जननी का सच्चा पुत्र है,
भारतवासी! नाम बताना पड़ेगा
मसिमुख में ले अहो लेखनी का क्या लिखें!
उस पवित्र प्रात: स्मरणीय सुनाम को
नहीं, नहीं होगी पवित्र यह लेखनी
लिखकर स्वर्णाक्षर में नाम प्रताप का। [11]

हिंदी की राष्ट्रीय काव्यधारा एवं छायावादोत्तर काल की कविताओं में देश-प्रेम और स्वाधीनता की प्रबल भावना और राष्ट्रीय सांस्कृतिक चिंतन की प्रखर अभिव्यंजना हुई है। इस युग में राष्ट्रीयता को मुख्य रूप से अंगीकृत करने वाले अनेक कवि हुए, जिनमें माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', राम नरेश त्रिपाठी, सुभद्रा कुमारी चौहान, रामधारी सिंह 'दिनकर', सियाराम शरण गुप्त, गोपाल सिंह नेपाली, सोहन लाल द्विवेदी, हरिकृष्ण प्रेमी, जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद, शिवमंगल सिंह 'सुमन', श्याम नारायण पाण्डेय, उदय शंकर भट्ट, केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' आदि अनेक कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से भारतीय जनमानस में राष्ट्रीय भावना प्रपूरण तथा देश की समृद्धि के लिए उन्हें अभिप्रेरित किया। माखनलाल चतुर्वेदी की कविताएँ देश पर बलिदान होने की प्रेरणा देती हैं। 'पुष्प की अभिलाषा' नामक कविता राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत अमर कृति है। इसकी पंक्तियाँ भारतीय आत्मा की पहचान कराती हैं, जिससे युगों-युगों तक देश भक्त निरंतर प्रेरणा लेते रहेंगे।

चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ,
चाह नहीं, प्रेम-माला में बिंध प्यारी को ललचाऊँ,
मुझे तोड़ लेना बन माली! उस पथ पर देना तुम फेंक,
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक। [12]

सियारामशरण गुप्त ने 'हम सैनिक हैं' नामक कविता में भारतीयों की वीरता, शौर्यता एवं पराक्रम का विशद चित्रण रेखांकित किया है। इन्होंने रचना के माध्यम से भारतीय जनमानस में मातृभूमि के प्रति अटूट प्रेम तथा देश के लिए बलिदान होने की भावना को प्रगाढ़ किया। कवि अंग्रेज सत्ता के अहंकार को समाप्त करने और देश भक्त वीरों के साहसिक-पराक्रम का परिचय देते हुए कहते हैं-

आओ वीरो! आज देश की कीर्ति बढ़ा दें,
सबके सम्मुख मातृभूमि को शीश चढ़ा दें।
शत्रु जनों को मार यहाँ से अभी हटा दें,
उनका घोर घमंड सदा के लिए घटा दें,
संसार देख ले फिर हमें, तुच्छ नहीं हैं हम कभी,
निज भारतीय बल-वीर्य्य का, आओ, परिचय दें अभी। [13]

रामधारी सिंह 'दिनकर' जैसे प्रबुद्ध व्यक्तित्व ने युगीन परिवेश की पीड़ा को सुना ही नहीं, अपितु पूर्ण मनोवेग से अपनी कविताओं में उद्घाटित भी किया है। जिस समय देश परतंत्रता के जंजीरों में पड़ा था, उस समय राष्ट्रकवि अपनी कविताओं के माध्यम से जन-सामान्य में क्रांतिधर्मा शक्ति का नवल संचरण कर रहे थे। वास्तव में दिनकर की राष्ट्रीय भावना प्रबल एवं सुधारवादी थी, उसमें सामर्थ्य, वीर्य, महानाद, कयामत की दावाग्नि निरंतर सुलगती रही। उनकी वीर रस भरी क्रांति की कविताएँ देश भक्त वीरों को उद्वेलित कर रही थीं। वे निश्चित कर चुके थे कि अब धैर्य और विश्वास का समय नहीं है। हिंसा और युद्ध का समर्थन करते हुए दिनकर भारतीयों से स्वाभिमान और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए मर-मिटने का आह्वान करते हैं-

'छोड़ो मत अपनी आन, सीस कट जाये,
मत झुको अनय पर, भले व्योम फट जाये,
दो बार नहीं, यमराज कण्ठ धरता है,
मरता है जो, एक ही बार मरता है।
तुम स्वयं रण के मुख पर चरण धरो रे!
जीना हो तो मरने से नहीं डरो रे! [14]

दिनकर के संदर्भ में रामवृक्ष बेनीपुरी ने निश्चय ही बहुत खूब लिखा है कि "हमारे क्रांति युग का संपूर्ण

प्रतिनिधित्व कविता में इस समय दिनकर कर रहा है। क्रांतिवादी को जिन-जिन हृदय मंथनों से गुजरना होता है, दिनकर की कविता उनकी सच्ची तस्वीर है।''[15] स्वाभाविक में दिनकर का संपूर्ण काव्य इस युग में प्रत्येक जनमानस के मन-मस्तिष्क में संजीवनी का कार्य कर रहा था।

सुभद्रा कुमारी चौहान भी राष्ट्रीय आंदोलनों में ओजपूर्ण कविताओं की प्रसिद्ध कवयित्री रही हैं। उनकी रचनाओं में भारतीय संस्कृति और प्राचीन इतिहास के गौरव दृष्टिगोचर होते हैं। उनकी देश-प्रेम की कविताओं ने जन-आंदोलन का कार्य किया, लोगों में आत्मज्ञान जगाया और देश की स्वतत्रंता के लिए भारतीयों के हृदय में एक नई उमंग दैदीप्यमान की। अपनी प्रसिद्ध कविता 'झांसी की रानी' में देश भक्त वीरों की श्रेष्ठता का यशोगान करते हुए उन्होंने लिखा है-

जाओ रानी याद रखेंगे ये कृतज्ञ भारतवासी,
यह तेरा बलिदान जगा देगा स्वतंत्रता अविनासी,
होवे चुप इतिहास, लगे सच्चाई को चाहे फाँसी,
हो मदमाती विजय, मिटा दे गोलों से चाहे झाँसी।
तेरा स्मारक तू ही होगी, तू खुद अमिट निशानी थी,
बुंदेले हर बोलों के मुंह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।[16]

सुभद्रा कुमारी चौहान की कविताओं में अंग्रेजों द्वारा किए गए अमानवीय अत्याचारों एवं भारतीय वीरों द्वारा उनके सशक्त जवाब को बुद्धिमता से चित्रांकित किया गया है। उनकी कविता अतीत-गौरव की सच्ची तस्वीर है। त्याग, बलिदान और समर्पण के भाव उनमें सर्व विद्यमान हैं। क्रांति की ध्वनि भी उनकी कविताओं में स्पष्ट सुनाई देती है। यद्यपि विद्रोह उनकी कविता का मूल स्वर है तो बलिदान और समर्पण उनकी प्राण-ध्वनि है। कवयित्री ने राखी के माध्यम से राष्ट्र की एकता और अखंडता का प्रभावपूर्ण चित्रण अभिव्यंजित किया है-

भैया कृष्ण! भेजती हूँ मैं
अपनी राखी, तुमको आज
कई बार जिसको भेजा है
सजा-सजा कर नूतन साज।[17]

कविवर श्याम नारायण पाण्डेय ने स्वाधीनता के लिए देश की जनता में अपनी मातृभूमि के प्रति अक्षुण्ण प्रेम को जगाया और देश के उद्धार के लिए त्याग, बलिदान और साहस के निस्सीम भावना को सुदृढ़ किया। कवि अपनी रचना के माध्यम से भारतीय जनमानस के हृदय में खोए हुए आत्म-गौरव को पुन: जगाने का प्रयास करते हैं। इसलिए उन्होंने अपने काव्य में पुराण के वीरों, योद्धाओं और बलिदानियों के शौर्यपूर्ण योगदान को संयोजित कर व्याख्यायित किया है। ये काव्य रचनाएँ भारतीय जनमानस को सदैव प्रेरणा देती रहेंगी-

स्वतंत्रता के लिए मरो, राणा ने पाठ पढ़ाया था।
उसी वेदिका पर वीरों ने अपना शीश चढ़ाया था।
तुम भी उनके वंशज हो, काम करो, कुछ नाम करो।
स्वतंत्रता की बलिवेदी है, झुककर इसे प्रणाम करो।[18]

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' कृत कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ, शिवमंगल सिंह 'सुमन' कृत वरदान माँगूँगा नहीं, जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद कृत जीवन संगीत, भगवती चरण वर्मा कृत प्रेम संगीत, केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' कृत ज्वाला आदि काव्य रचनाओं में कहीं देश के अतीत-गौरव की गाथा का गर्व, कहीं वर्तमान की निराशा भरी पीड़ा, कहीं आगत की भावना से जगी हुई चिंता जैसी अनेक नवल भावों का संचरण विद्यमान है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि हिंदी कविता ने आदि काल से अविरल होकर देश की वर्तमान तक अपनी जो भूमिका निभाई है, वह सदैव ही स्मरणीय रहेगी। भले ही देश आज स्वतंत्र है, पर राष्ट्रीय भावना एवं राष्ट्रीय हितों को व्यक्तिगत स्वार्थों ने पूर्णत: अपी जंजीरों में जकड़ लिया है, जिसके दूरगामी परिणाम चुनौतीपूर्ण हो सकते हैं।

वस्तुत: हिंदी साहित्य की राष्ट्रीय कविताओं में जहाँ एक ओर परतंत्रता के प्रति वेदना और क्षोभ का भाव अभिव्यक्त किया गया है, वहीं दूसरी ओर देश के गौरवपूर्ण अतीत का गुणानुवाद करते हुए देश के प्रति प्रेम का भाव आविर्भूत हुआ है। शोषण, अन्याय, अत्याचार, पूँजीवादी और अंग्रेज सत्ता के प्रति आक्रोश एवं क्रांति के स्वर प्रस्फुटित हुए हैं। अत: राष्ट्रीय भावना से अभिभूत कवियों ने देश की विसंगतियों में अपेक्ष्य पुनरुत्थान की भी प्रेरणा प्रदान की है। आज देश के सामने प्राय: आंतरिक और

बाह्य सुरक्षा की दृष्टि से चुनौतियाँ कम नहीं हैं। जातिगत-भेद, आंतकवाद, नक्सलवाद, सांप्रदायिकता, भ्रष्टाचार, शोषण जैसे अनेकोनेक आक्षेप हैं, जो राष्ट्र की एकता, सततता और ऐश्वर्य के लिए घातक हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन में जहाँ अनगिनत योद्धाओं ने अपने प्राणों को न्योछावर किया, वहीं हिंदी साहित्य के कवि अपने गीतों, कविताओं और गजलों के माध्यम से देश के प्रति अनुराग की भावना जगाने के साथ-साथ जननी-जन्मभूमि के पवित्र चरणों में श्रद्धावनत होकर आत्म-बलिदान की प्रेरणा देते हैं।

अत: हिंदी साहित्य के आदिकाल से वर्तमान तक के साहित्य का अनुशीलन करने पर तो यही कहा जा सकता है कि राष्ट्रीयता की यह पुनीत भावना एक अविरल तरंगिणी की तरह प्रवाहित होती रही है। भले ही परिस्थितियों के निमित्त इसमें कभी-कभी रुकावट अवश्य उपस्थित हुई हो, किंतु इसकी निर्मल धारा अनवरत प्रवाहमय रही है। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. वाजपेयी, नंददुलारे, (1955), नया साहित्य नये प्रश्न, पृष्ठ-03
2. शर्मा, शिव कुमार, (1986), हिंदी साहित्य: युग और प्रवृत्तियां, 11वां संस्करण, पृष्ठ-235
3. सिंह, बच्चन, (2013), हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, 5वीं आवृत्ति, पृष्ठ-199
4. झा, अशोक कुमार (2011), प्रसाद के कहानी साहित्य में भारतीय संस्कृति एवं राष्ट्रीय चेतना के आयाम, पृष्ठ-57, 58
5. जैन, शेखर चंद्र, (1973), राष्ट्रीय कवि दिनकर और उनकी काव्य कला, पृष्ठ-18
6. शर्मा, हेमन्त, (संपादक), (2000), भारतेंदु समग्र, पृष्ठ-120
7. नगेंद्र, (संपादक), (2020), हिंदी साहित्य का इतिहास, 73वां संस्करण, पृष्ठ-442
8. गुप्त, मैथिलीशरण, (1984), भारत भारती, भविष्यत् खंड, पृष्ठ-153
9. सिंह, बच्चन, (2013), हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, 5वीं आवृत्ति, पृष्ठ-321
10. नगेंद्र, (संपादक), (2020), हिंदी साहित्य का इतिहास, 73वां संस्करण, पृष्ठ-478
11. प्रसाद, जयशंकर, (1985), महाराणा का महत्व, पृष्ठ-09
12. हरदयाल, (2010), आधुनिक हिंदी कविता, पृष्ठ-86
13. गुप्त, सियाराम शरण, हम सैनिक हैं (कविता),
14. हरदयाल, (2010), आधुनिक हिंदी कविता, पृष्ठ-87
15. बेनीपुरी, रामबृक्ष, रामधारी सिंह दिनकर: हुंकार की भूमिका, पृष्ठ-02
16. चौहान, सुधा (1981), भारतीय साहित्य के निर्माता सुभद्रा कुमारी चौहान, झांसी की रानी, शीर्षक, पृष्ठ-86
17. चौहान, सुभद्रा कुमारी, (1980), मुकुल तथा अन्य कविताएं, पृष्ठ-76
18. पांडेय, श्याम नारायण, हल्दीघाटी, पृष्ठ-19

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विवेचन

काव्यात्मक शिल्प में मानवीय संवेदनाओं का सृजन : फणीश्वरनाथ 'रेणु'

डॉ. संगीता कुमारी

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
जगजीवन महाविद्यालय
(मगध विश्वविद्यालय)
गया, बिहार-824234
9810606585
sangitakumarijnu@gmail.com

फणीश्वरनाथ 'रेणु' की सृजनात्मकता की मूल चिंता वह कलात्मकता है, जिसने उस समय में घटित हो रही मूल संवेदनाओं की उपेक्षा की। यह चिंतनीय है कि कोई रचना हमें ऐसा क्या प्रदान करती है कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी हम उससे अपने लिए वह संजीवनी प्राप्त करने की कोशिश करते हैं, जिससे हम तत्कालीन परिस्थितियों में अपनी अर्थवत्ता प्राप्त कर सकें। 'रेणु' नई दिशा और नई संभावनाओं को लेकर हिंदी साहित्य में अवतरित हुए। प्रेमचंद के बाद अधिकांश रचनाकार जहाँ मध्य वर्गीय शहरी जीवन में मुख्य रूप से व्यक्ति विशेष के चित्रण के रूप में मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद और मनोविश्लेषणवाद से विशेषीकृत यथार्थवाद को प्रकट करने में संलग्न थे, वहीं 'रेणु' की रचनाएँ जीवन सत्य के उद्घाटन के साथ-साथ मनुष्य की पीड़ा और उल्लास दोनों को प्रक्षेपित कर रही थीं। 'रेणु' की रचनाएँ मनुष्य की नैसर्गिक आकांक्षा के साथ-साथ उन अज्ञात इच्छाओं के प्रस्फुटन और रोजमर्रा की छोटी-छोटी खुशियों और जरूरतों से भी लैस थीं, जिनके बिना मनुष्य का सर्वाइवल असंभव था। इनकी रचनाएँ उस दौर की हैं, जब देश राजनीतिक रूप से ही नहीं, सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से भी संक्रमणकालीन दौर से गुजर रहा था। एक तरफ विभाजन की समस्या और दूसरी तरफ पश्चिम और आधुनिक संवेदना की नकल में कई बार साहित्य की परंपरागत चेतना धुँधली पड़ रही थी। ऐसे समय में 'रेणु' की रचनाएँ व्यक्ति के जीवन की जटिलता के साथ-साथ सामुदायिक जीवन की सूक्ष्मताओं के विश्लेषण को लेकर कथा में प्रस्तुत हुई। ऐसा नहीं है कि 'रेणु' की रचनाओं में आधुनिक काल की विसंगतियों का चित्रण नहीं है, परंतु यहाँ महत्वपूर्ण यह है कि इन्होंने अपनी रचनाओं में एक व्यक्ति के जीवन की जटिलता को प्रस्तुत करने के लिए सामूहिक जीवन की अभिव्यक्ति की अनदेखी नहीं की। 'रेणु' के यहाँ लोक गीत, संगीत, लोक-नृत्य, रीति-रिवाज आदि लोक-संस्कृति के वे तत्व हैं, जो उनकी रचनाओं को जीवंत बनाते हैं।

निर्मल वर्मा 'रेणु' को हिंदी साहित्य का संत लेखक मानते हैं। वे 'रेणु' की तुलना उन साधु-संतों से करते हैं, जिनके पास बैठने भर से असीम कृतज्ञता का अहसास होता है, हम अपने भीतर धुल जाते हैं, स्वच्छ हो जाते हैं। उनके अनुसार

'रेणु' की मूक उपस्थिति से हिंदी साहित्य में ऐसी ही पवित्रता का अहसास होता था। वे संत की व्याख्या करते हुए लिखते हैं– *''एक ऐसा व्यक्ति, जो दुनिया की किसी चीज को त्याज्य और घृणास्पद नहीं मानता– हर जीवित तत्व में पवित्रता और सौंदर्य और चमत्कार खोज लेता है– इसलिए नहीं कि वह इस धरती पर उगने वाली कुरूपता, अन्याय, अँधेरे और आँसुओं को नहीं देखता, बल्कि इन सबको समेटने वाली अबाध प्राणवत्ता को पहचानता है, दलदल को कमल से अलग नहीं करता, दोनों के बीच रहस्यमय और अनिवार्य रिश्ते को पहचानता है।''*[1]

साधारणत: 'रेणु' की कथ्यात्मकता को आंचलिक पहचान से जोड़ दिया जाता है। 'रेणु' की रचनाओं में निहित लोक जीवन के रूप ग्राम्य जीवन और स्थानीय परंपरागत मान्यताएँ, रीति-रिवाज, तीज-त्योहार, धार्मिक-अधार्मिक विश्वास, अंधविश्वास, मनोरंजन के विविध प्रकार, घृणा, उपेक्षा, प्रेम, आदि सभी समग्र स्थितियों का वर्णन है। यह जनमानस की वे तस्वीरें हैं, जिसमें मानवीय पीड़ा का विषाद, गहन और यथार्थ चित्रण मौजूद है, और इन सब के साथ स्थान विशेष का जिक्र। 'रेणु' की कृतियों में छोटी-छोटी घटनाओं को जिस प्रकार नाटकीयता प्रदान की गई है, वह उनकी कथ्यात्मक व्यापकता को द्योतित करने वाला है।

उदाहरणस्वरूप 'रेणु' की ऐसी ही संवेदनशील कहानी है 'ठेस'। ठेस कहानी का मुख्य पात्र है सिरचन। गाँव में सिरचन जैसा कोई कारीगर नहीं है, जो शीतल पाटी, बाँस की चिक, मोंढ़े, रस्सी के बड़े-बड़े जाले आदि को इतनी कुशलता से बनाता हो। 'रेणु' लिखते हैं– *''सिरचन जाति का कारीगर है। मैंने घंटों बैठ कर उसके काम करने के ढंग को देखा है। ...बिना मजदूरी के पेट भर भात पर काम करने वाला कारीगर! दूध में कोई मिठाई ना मिले तो कोई बात नहीं, किंतु बात में जरा भी झाल वह नहीं बर्दाश्त कर सकता।''*[2] बात की इसी झाल के कारण वह मानू के लिए बना रहा चिक, कुश, शीतल पाटी को बीच में ही छोड़कर चला जाता है, लेकिन जब मानू ससुराल जा रही होती है तब ट्रेन खुलने से पहले सिरचन मानू के लिए बनाए गए सारे सामान उसे पहुँचा देता है। जब वह उसका दाम देने की कोशिश करती है, तब वह हाथ जोड़ लेता है। 'रेणु' ने दिखाया है कि स्वाभिमानी और अपने काम में मँझा हुआ सिरचन आज खेत में मजदूरी करने के लिए विवश है। लोग उसे बेकार ही नहीं, बेगार भी समझते हैं। सोचते हैं कि मुफ्त में मजदूरी देनी हो तभी सिरचन को बुलाओ।

लेकिन सिरचन ने कामचोर होने के बावजूद अपने अंदर की मानवीयता और जिम्मेवारी को बचा रखा है। मानवीय संवेदनाओं को प्रकट करती हुई 'रेणु' की एक और कहानी है 'संवदिया'। 'संवदिया' कहानी में 'रेणु' ने हरगोबिन संवदिया अर्थात संदेशवाहक और हवेली की बड़ी बहुरिया द्वारा संवाद भेजने के दृश्य को मार्मिकता से व्यंजित किया है। हरगोबिन संदेश पहुँचाने का कार्य करता है। यह टूटते हुए सामंती ढाँचे पर लिखी गई कहानी है, परंतु इसमें मालिक और मजदूर का रिश्ता नहीं है, बल्कि गाँव की परंपरागत धरोहर के रूप में गाँव की बहुरिया की सुरक्षा से जुड़ जाती है। बड़ी हवेली अब नाम की हवेली है। इस घर की बड़ी बहुरिया का पति मर चुका है, बच्चे नहीं हैं, देवर और देवरानी साल में फसलों की कटाई और आम के पकने के समय आते हैं और सब कुछ समेट कर ले जाते हैं। घर की आर्थिक स्थिति इतनी खराब है कि उसे अपनी माता के लिए भिजवाने के लिए आए संदेशवाहक को देने के लिए पैसे नहीं हैं। यह बड़ी बहुरिया हरगोबिन संवदिया के माध्यम से अपने मायके संवाद भेजती है, लेकिन संवाद भेजने के बाद पछता रही होती है। उधर हरगोबिन सोचता है कि वह संवाद सुनाते समय अपने कलेजे को कैसे संभाल सकेगा। बड़ी बहुरिया जहाँ-जहाँ रोई है, वह भी रोएगा। परंतु वह संवाद सुना नहीं पाता। वह सोचता है– *''इसी पगडण्डी से बड़ी बहुरिया अपने मायके लौट आवेगी। गाँव छोड़कर चली जावेगी। फिर कभी नहीं जावेगी! ...सुनने वाले हरगोबिन के गाँव का नाम लेकर थूकेंगे– कैसा गाँव है, जहाँ लक्ष्मी जैसी बहुरिया दु:ख भोग रही है!''* [3] 'रेणु' यहाँ दिखलाते हैं कि गाँव में अब भी अपने स्थानीय क्षेत्र के प्रति लोगों का मोह बचा हुआ है। हरगोबिन बड़ी बहुरिया से कहता है– *''मैं तुम्हारा संवाद नहीं कह सका। ...तुम गाँव छोड़ कर मत जाओ। तुमको कोई कष्ट नहीं होने दूँगा। मैं तुम्हारा बेटा! बड़ी*

बहुरिया, तुम मेरी माँ, सारे गाँव की माँ हो! मैं अब निठल्ला बैठा नहीं रहूँगा। तुम्हार सारा काम करूँगा... बोलो, बड़ी माँ तुम... तुम गाँव छोड़ कर चली तो नहीं जाओगी? बोलो... !!'' [4]

यहाँ महत्वपूर्ण है कि भारत की स्थिति यूरोप से भिन्न थी। यहाँ का समाज उन अर्थों में परिवर्तित नहीं हुआ था जिन अर्थों में यूरोपीय या अन्य पश्चिमी समाज का अस्तित्व था। यूरोप में पूँजीवादी सामंती ढाँचे को तोड़कर प्रवेश कर पाया था, इसलिए समाज इतने गहरे स्तर पर प्रभावित नहीं हुआ था, परंतु यहाँ सामंतवाद, पूँजीवाद, आधुनिकतावाद सभी एक साथ अस्तित्व में थे। पारंपरिक मूल्यों को तोड़ने वाली ये संस्थाएँ यहाँ के समाज को बिना संभलने का मौका दिए ही अपने पैर पसार रही थी। उच्च वर्ग और उच्च मध्य वर्ग ने तो फिर भी इस व्यवस्था से अपने को जोड़ने में सफलता पाई, परंतु निम्न वर्ग और निम्न मध्य वर्ग की स्थिति क्रमशः बिगड़ती चली गई। गरीब हो या अमीर- दो जून रोटी की मूलभूत आवश्यकताओं के अतिरिक्त बहुत कुछ ऐसा है, जो जीवन जीने के लिए जरूरी है। सौंदर्य का आनंद उठाने का अधिकार सिर्फ उच्च वर्ग को नहीं है। यह अलग बात है कि इस आनंद को उठाने के लिए उनके पास माध्यम क्या है? लोक संस्कृति में रचे बसे 'रेणु' यूँ ही नहीं अपनी रचनाओं में आल्हा, कजरी, चैती, चनैनी, नौटंकी, फाग, जाट-जट्टिन, बिदापत और मिरदंगिया का जिक्र करते हैं। डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी ने इन्हीं विशेषताओं को रेखांकित करते हुए लिखा है- *''आर्थिक दृष्टि से विपन्न जन सांस्कृतिक दृष्टि से भी विपन्न हो यह जरूरी नहीं। जिसे लोक साहित्य कहते हैं और जिसकी इतनी महत्ता घोषित की जाती है उसके सर्जक, वाहक और संरक्षक आर्थिक दृष्टि से विपन्न और अधिकांशतः अवर्ण होते हैं। अब, स्वाधीनता के बाद संपन्न वर्ग सुविधाओं को गाँजने के चक्कर में लोक संस्कृति से रहित होता जा रहा है। पूँजीवाद लोक संस्कृति का नाशक है।''*[5]

'रेणु' की लोक संस्कृति के वाहक और प्रेम से भरी ऐसी ही कहानियाँ हैं-'रसप्रिया', 'आदिम रात्रि की महक', 'लाल पान की बेगम', 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' आदि। इन सारी कहानियों में प्रेम भी कई रूप में है और लोक संस्कृति से जुड़ी विशेषताएँ भी। यहाँ व्यक्त प्रेम निम्न वर्गीय प्रेम है, जो प्राकृतिक रूप में उपस्थित है। इसके लिए किसी उपवन में खूबसूरत सजे जोड़े और कृत्रिम साज-सज्जा की आवश्यकता नहीं है। एक साधारण-सा दिखने वाला गरीब किसान, हलवाहा, मजदूर भी अपने दिल में प्रेम के स्रोत को दबाकर रख सकता है। 'रसप्रिया' में व्यक्त पँचकौड़ी मृदंगिया और रमपतिया का प्रेम सफल नहीं हो पाता। पँचकौड़ी जब मोहना से मिलता है और उसे पता चलता है कि वह रमपतिया का बेटा है, तब वह मोहना के प्रति एक अज्ञात प्रेम से भर उठता है और अतीत की स्मृतियाँ फिर से सजीव हो जाती हैं। डॉ. सुवास कुमार रमपतिया और मिरदंगिया के बीच के प्रेम पर लिखते हैं- *''मिरदंगिया ने रमपतिया की प्रेम की अवमानना करके, प्रेम में फरेब लाकर अपने जीवन को जो नर्क बना लिया था, यह उसका मानो सही सामाजिक प्रायश्चित है। जब रमपतिया अपने बेटे को 'चोप! रसप्रिया का नाम मत ले!' कहकर डाँटती है तो केवल इस एक छोटी-सी पंक्ति के द्वारा 'रेणु' उसके सारे जीवन की व्यथा, घृणा, आक्रोश, प्रेम और चाह सबकी एक साथ अभिव्यक्ति कर डालते हैं।''* [6]

प्रेम की दृष्टि से ऐसी ही महत्वपूर्ण कहानी है 'आदिम रात्रि की महक', जहाँ करमा का उन्मुक्त प्रेम अंततः उसे अपनी प्रेमिका से दूर जाने से रोक लेता है। ग्रामीण जीवन की छोटी-छोटी आकांक्षाएँ और दांपत्य प्रेम को प्रकट करने वाली कहानी है 'लाल पान की बेगम'। बिरजू की माँ की बैलगाड़ी पर चढ़कर मेला देखने की लालसा है। बिरजू का पिता गाड़ी लाने में देर कर देता है। इससे बिरजू की माँ चिढ़ जाती है। फिर बिरजू का पिता बिरजू की माँ को मेला ले जाने के लिए मनाने की कोशिश करता है। इस मान-मनौव्वल के बीच पनपता गाढ़ा दांपत्य प्रेम इस कहानी के स्थापत्य को गरिमा प्रदान करता है। कथा साहित्य में 'रेणु' द्वारा लिखी गई कहानी 'तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम' अविस्मरणीय है। इस कहानी में हिरामन और हीराबाई के बीच के पनपते प्रेम को दिखाया गया है। यहाँ आधिकारिक कथा के सामानांतर महुआ घटवारिन की प्रासंगिक कथा साथ-साथ चलती है।

'रेणु' की रचनाओं में निहित ग्रामीण जीवन का यह सहज और सरल यथार्थ उनकी रचनाओं को ठोस जीवंतता प्रदान करता है। 'रेणु' की रचनाओं का सौंदर्य जीवन की तमाम जरूरतों और समस्याओं के बीच भी अपने लिए अवकाश ढूँढ़ने का प्रयास है। इन अर्थों में 'रेणु' की रचनाएँ साधन नहीं हैं, वह अपने में साध्य हैं, जिसका कथ्य, सत्य उसकी संरचना में विद्यमान है। निर्मल वर्मा के शब्दों में– *''रेणु जिस आँख से दुनिया को देखते थे, उनके आँसू में वह डबडबाती हुई चमकती थी। हम नहीं जान पाते हैं कि वह दुनिया के आँसू हैं, जो रेणु की आँखों में चमक रहे हैं या रेणु की आँख हैं, जिसमें दुनिया डबडबा रही है। आकाश में पक्षियों की पाँत हम खेतों पर देखते हैं– उड़ती छायाओं की धूमिल रेखा। हवा में लोक गीतों का उफनता ज्वार– गर्द, मांसल, मैला–जैसा गिरते हुए पानी के ऊपर धुआँ उठता है, सफेद, फेनिल, फुहार।''*[7]

'रेणु' की रचनाएँ अनुभव सत्य का वह निचोड़ हैं, जिसने साहित्य की परंपरागत परिपाटी में जीवन का अविरल लय भर दिया। और संभवत: यही कारण है कि उनकी रचनाएँ गद्य में भी काव्य का आनंद प्रदान करती हैं। साधारणत: पद्य के पास बिंब, प्रतीक, स्वप्न, लय और संगीत का एक सामूहिक संस्कार होता है, जबकि गद्य अधिक स्वाधीन व्यक्तित्व और परिवेश की माँग करता है। हिंदी गद्य का विकास भी कमोबेश उन्हीं परिस्थितियों में हुआ, जिनमें पश्चिमी गद्य ने पहली बार साँस ली थी। बल्कि यूँ कहें कि भारतेंदु युग से द्विवेदी युग तक का हिंदी गद्य एक संघर्षरत परंपरा का क्रमगत विकास है।

आधुनिक काल में साहित्यिक विधाओं के भीतर कई परिवर्तन हुए। पहले जहाँ विधाएँ एक सीमा में बँधी रहती थीं या यह कहें कि उसके कुछ नियम होते थे, अब उनका अतिक्रमण होने लगा था। इस अतिक्रमण ने अनेक नवीन विधाओं को जन्म दिया जैसे कहानी, जीवनी, गद्यकाव्य, ललित निबंध, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, पत्रकारिता आदि।

यहाँ यह ध्यातव्य है कि 'रेणु' ने गद्य की लगभग सभी विधाओं पर लिखा है, जो उनकी गहन अंतर्दृष्टि के चिंतन और अनुभव की देन है। फणीश्वरनाथ 'रेणु' की कथात्मकता को समझने के लिए उनके औपन्यासिक पैटर्न को समझना होगा। मैला आँचल (1954) 'रेणु' द्वारा लिखा गया पहला उपन्यास है। इस उपन्यास के प्रकाशन के साथ ही आंचलिकता को लेकर कई सवाल खड़े किए गए या यह कहना ज्यादा प्रासंगिक होगा कि आंचलिकता संबंधित कई मंतव्यों और परिभाषाओं का चलन भी इसके साथ प्रारंभ हुआ। यह बहस महत्वपूर्ण इसलिए भी हुआ क्योंकि 'रेणु' ने स्वयं इसकी भूमिका में लिखा है– *''यह है मैला आँचल, एक आंचलिक उपन्यास। कथानक है पूर्णिया। पूर्णिया बिहार राज्य का एक जिला है; इसके एक ओर है नेपाल, दूसरी ओर पाकिस्तान और पश्चिम बंगाल। विभिन्न सीमा–रेखाओं से इसकी बनावट मुकम्मल हो जाती है, जब हम दक्खिन में संथाल परगना और पच्छिम में मिथिला की सीमा–रेखाएँ खींच देते हैं। मैंने इसके एक हिस्से के एक ही गाँव को– पिछड़े गाँवों का प्रतीक मानकर– इस उपन्यास–कथा का क्षेत्र बनाया है। इसमें फूल भी है, शूल भी, धुल भी है गुलाब भी, कीचड़ भी है, चन्दन भी, सुंदरता भी है, कुरूपता भी मैं किसी से दामन बचाकर निकल नहीं पाया।''*[8]

'रेणु' ने यहाँ लिखा है 'आंचलिक उपन्यास'। ऐसे में वास्तव में इस उपन्यास में किन तथ्यों को महत्ता दी गई है

इसकी जगह आलोचना की सारी धुरी 'आंचलिकता' पर ही केंद्रित हो गई और वह उसी के इर्द-गिर्द मैला आँचल उपन्यास के गुण-धर्म को परखने लगी। मैला आँचल की 'भूमिका' में 'रेणु' द्वारा लिखे गए शब्द 'आंचलिक' को तरजीह देकर उनकी लगभग सभी रचनाओं को आंचलिक कथा-साहित्य के रूप में चिह्नित और चित्रित किया जाता रहा है। परंतु मैला आंचल की इसी 'भूमिका' में कुछ पंक्तियों के बाद ही 'रेणु' कहते हैं कि 'मैंने इसके एक हिस्से के एक ही गाँव को- पिछड़े गाँवों का प्रतीक मानकर- इस उपन्यास-कथा का क्षेत्र बनाया है।' और संभवत: यह प्रतीक हर उस पिछड़े गाँव और समाज को रिप्रेजेंट करने के लिए गढ़ा गया, जिसकी अनुगूँज को राष्ट्रीय पटल पर अंकित करना था। अर्थात यह प्रतीक प्रतिनिधि है किसी भी गाँव विशेष का। यहाँ महत्वपूर्ण यह था कि इसे अंचल विशेष की जगह राष्ट्रीय संदर्भों में परिभाषित किया जाए, क्योंकि अंचल राष्ट्र से निरपेक्ष नहीं होता, वह राष्ट्र का ही अंग होता है। 'रेणु' इस उपन्यास में पूर्णिया जनपद का वर्णन जिस आत्मीयता से करते हैं, वह उनकी पैनी दृष्टि का परिचायक है। जनजीवन एवं रचना के क्षेत्र से जुड़ाव ही 'रेणु' की ताकत है और इसलिए 'रेणु' ने मैला आँचल में कुछ ही वर्षों की कथा को जिस विस्तार से चित्रित किया है, वह शताब्दियों को अपने कथा फलक में अंकित करने वाले रचनाकारों के लिए ईर्ष्या का विषय है। और शायद यही कारण है कि नेमिचन्द्र जैन ने मैला आँचल को देहाती जीवन पर लिखे गए अन्य सभी उपन्यासों से भिन्न भी माना है और विशिष्ट भी। नेमिचन्द्र जैन के अनुसार, *''भारतवर्ष की अतुलनीय लोक-संस्कृति की अपूर्व संपत्ति का इस पुस्तक में सर्वथा नवीन उपयोग है। वह कभी न थमने वाले किंतु सर्वथा संवेदनशील पार्श्व संगीत की भाँति है, जिसमें जीवन के रंगमंच पर चलने वाले नाटक की हर बदलती भावदशा के अनुरूप नई लय है, नया स्वर-विन्यास है, नए बोल हैं, नई नृत्य भंगिमाएँ हैं। अंत तक लेखक ने अपने इस विवेक को बनाए रखा है कि जिनके जीवन में संगीत और लय है वे सुख में विभोर होने पर भी गाते और नाचते हैं और दु:ख से आक्रांत होने पर भी। लोक जीवन में संगीत और नृत्य को एक नई प्रतिष्ठा इस उपन्यास ने प्रदान की है, जो निश्चय ही केवल आंचलिक नहीं है।''*[9]

हिंदी आलोचना की यह विडंबना रही है कि वह किसी रचना को उसके रचनात्मक निकस के आधार पर व्याख्यायित करने की जगह उसे या तो प्रेमचंद की परंपरा में या उसे आंचलिकता के नाम पर किसी स्थान या क्षेत्र विशेष तक सीमित कर छोड़ दिया गया। परिणामत: 'रेणु' की रचनाओं के प्रति निष्पक्षता छोड़ दी गई। जबकि 'रेणु' की रचनाओं ने आलोचकीय मानदंडों के समक्ष नई चुनौतियाँ प्रस्तुत कीं।

दरअसल, साहित्य में 'रेणु' का आगमन परिपक्व उम्र में हुआ था, इसलिए अपने साथ वह अनुभवों का पूरा भंडार लेकर आए थे। *''शायद ही किसी हिंदी उपन्यासकार ने उपन्यास की 'नैरेटिव' परंपरा को झिंझोड़कर उसे प्रेमचंद्रीय ढाँचे से बाहर निकालकर इतना नाटकीय, इतना लचीला, इतना काव्यात्मक बनाया था, जितना 'रेणु' ने और यह नाटकीयता, यह कविता अलंकारमय और कृत्रिम नहीं थी, क्योंकि परंपराग्रस्त किसान और आधुनिक ऐतिहासिक आंदोलन के बीच जिस मुठभेड़ को 'रेणु' ने अपना विषय बनाया था, उसमें पहले से ही बारूदी नाटकीयता विद्यमान थी। उसमें सिर्फ दिया सलाई लगाने की देर थी।''*[10]

'रेणु' की कथात्मक संरचना का एक और महत्वपूर्ण तत्व है किंवदंतियाँ, फैंटेसी आदि का प्रयोग। औपनिवेशिक काल में अंग्रेजों का भय साधारण जन के अंदर दहशत की तरह मौजूद है। ततमा टोली का नंदलाल अंग्रेज साहब के भूतहे जंगल से ईंट चुराने गया- *''जंगल से एक प्रेतनी निकली... नंदलाल वहीं ढेर हो गया।''*[11] नंदलाल मरा है सर्पदंश से, लेकिन लोगों के मन में बैठी हुई नीलयुग की स्मृति सर्पदंश की इस घटना को फैंटेसी का रूप दे देती है।

इसी प्रकार परती परिकथा में परती अर्थात बंध्या या बंजर जमीन की कथा मुख्य कथा के रूप में है। इसके साथ कई और छोटी-छोटी कथाएँ अंगी कथा के रूप में मौजूद हैं और उनसे जुड़ी हैं लोक कथाएँ, किंवदंतियाँ और मिथक। उपन्यास के शुरुआत में ही 'रेणु' लिखते हैं-

''धूसर, वीरान, अन्तहीन प्रान्तर!
पतिता भूमि, परती जमीन, बन्ध्या धरती।
धरती नहीं, धरती की लाश, जिस पर कफन की तरह

फैली हुई है बालूचरों की पंक्तियाँ। उत्तर नेपाल से शुरू होकर, दक्षिण गंगा तट तक, पूर्णिया जिले के नक्शे को दो असम भागों में विभक्त करता हुआ- फैला-फैला यह विशाल भू-भाग। लाखों एकड़ भूमि, जिस पर सिर्फ बरसात में क्षणिक आशा की तरह दूब हरी हो जाती है।''[12]

इस धरती के परती रहने का संबंध उस क्षेत्र में कोसी नदी के कारण आए बाढ़ से संबंधित है, जो आज भी उसे क्षेत्र के लिए महा आपदा है। कोसी की महाविनाश लीला के साथ-साथ लाजमयी और मलारी का गीत परती की सफेद बालू पर मानो पंख फड़फड़ाता हुआ उड़ता है। पाँचों 'कुंडों' में पाँच चाँद रात भर झिलमिलाते, चाँदनी की इन स्वप्निल संगीतमय वातावरण के बीच उल्लास हो या तनाव- जीवन धारा अपनी गति से प्रवाहमान रहती है।

'रेणु' की कथात्मक संवेदना का एक महत्वपूर्ण पक्ष है उनके जीवन और सृजनात्मकता दोनों ही जगहों पर राजनीतिक संलग्नता। अपने निजी जीवन में वह राजनीतिक रूप से सक्रिय थे, सोशलिस्ट पार्टी के सदस्य थे और विधानसभा का उन्होंने चुनाव भी लड़ा था, जहाँ उन्हें हार का सामना करना पड़ा था। जयप्रकाश नारायण के संपूर्ण क्रांति आंदोलन से भी वे जुड़े थे। राजनीति की जटिलताओं और विद्रूपताओं को उन्होंने बहुत नजदीक से देखा था। और शायद यही कारण है कि 'रेणु' के सभी उपन्यासों (मैला आँचल, परती परिकथा, जुलूस, कितने चौराहे और पल्टूबाबू रोड) में किसी-न-किसी रूप में राजनीतिक पार्टी की अंदरूनी समस्याओं, उनमें आ रही अराजकता और परिवर्तन को पहचानने की कोशिश की गई है। लेकिन राजनीतिक और सामाजिक संदर्भों का अपना समाजशास्त्रीय महत्व है, जिसका अनुपात साहित्य और समाजशास्त्रीय विषयों में संतुलन की माँग करता है। 'रेणु' की रचनात्मकता की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि उनकी रचनाओं में इन तत्वों की उपस्थिति के बावजूद उनकी कलात्मकता और साहित्यिक संवेदनाएँ अपनी ताजगी और सजीवता के साथ मौजूद हैं।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि 'रेणु' पहले ऐसे कथाकार थे, जिन्होंने भारतीय कथा-साहित्य की जातीय संभावनाओं की तलाश की थी। यह तलाश शिल्प और सिद्धांत के स्तर पर ही नहीं थी, बल्कि एक ऐसे रचनात्मक स्तर पर थी, जहाँ जिंदगी का कच्चा माल स्वयं अपने रचने वाले के हाथों से अपने लिए प्राण खींच लेता है ताकि वह एक नए खुले और अपेक्षाकृत मुक्त ढाँचे से अपने लिए साँस ले सके। ❑

संदर्भ :

1. निर्मल वर्मा, 'रेणु : समग्र मानवीय दृष्टि', शताब्दी के ढलते वर्षों में, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2006, पृ. 356
2. फणीश्वरनाथ 'रेणु', ठेस, रेणु रचनावली, खंड-1, (5 खंडों में), भारत यायावर (सं), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012 पृ. 176
3. फणीश्वरनाथ 'रेणु', संवदिया, रेणु रचनावली, खंड-1, (5 खंडों में), भारत यायावर (सं), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012, पृ. 329
4. वही, पृ. 333
5. विश्वनाथ त्रिपाठी, 'रेणु की कहानी-तीसरी कसम', कुछ कहानियाँ कुछ विचार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, पृ. 52
6. डॉ. सुवास कुमार, आंचलिकता, यथार्थवाद और फणीश्वरनाथ रेणु, साहित्य सहकार, दिल्ली, 1998, पृ. 99
7. निर्मल वर्मा, 'उपन्यास की परती परिकथा' आदि, अंत और आरंभ, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2017, पृ. 142-143
8. फणीश्वरनाथ 'रेणु', मैला आँचल, राजकमल पेपरबैक्स, नई दिल्ली, 2003, 'भूमिका'
9. नेमिचन्द्र जैन, 'हिंदी उपन्यास की एक नयी दिशा', विवेक के रंग, डॉ. देवीशंकर अवस्थी (स.), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृ. 162
10. निर्मल वर्मा, 'रेणु : समग्र मानवीय दृष्टि', शताब्दी के ढलते वर्षों में, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2006, पृ. 359
11. फणीश्वरनाथ 'रेणु', मैला आँचल, राजकमल पेपरबैक्स, नई दिल्ली, 2003, पृ. 14
12. फणीश्वरनाथ 'रेणु', परती परिकथा, राजकमल पेपरबैक्स, नई दिल्ली, 2006, पृ. 7

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

बाजारवाद के चंगुल में फँसे अन्नदाता की औपन्यासिक दास्तान : आखिरी छलांग

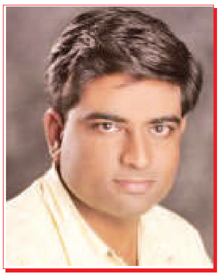

डॉ. मजीद शेख

सहयोगी प्राध्यापक एवं शोध निर्देशक,
हिंदी विभाग, प्रतिष्ठान महाविद्यालय,
पैठण, जिला-औरंगाबाद
महाराष्ट्र-431107
09765944586
majidmshaikh@gmail.com

भूमिका :

हिंदी साहित्य में भारतीय किसानों पर जितने उपन्यास लिखे गए हैं, उनमें 'गोदान' एक अति उत्कृष्ट कृषक जीवन का महाकाव्यात्मक उपन्यास है। पिछले कई दशकों में भारतीय किसान खासकर उसकी त्रासदी और समस्याओं को उद्घाटित करने वाले उपन्यास बहुत कम मात्रा में देखने को मिलते हैं। वैश्विकरण का प्रभाव और भारतीय किसानों की त्रासदी को स्पष्ट रूप में अभिव्यक्ति नहीं मिली है। शिवमूर्ति ने अपने उपन्यास 'आखिरी छलांग' द्वारा इस कमी की पूर्ति करने का सराहनीय प्रयास किया है। इस उपन्यास की अपनी अलग विशेषता यह है कि यह उपन्यास अपनी व्याख्या में उस दर्द को समझने की अपेक्षा इसके चरित्र संवादों के संदर्भ में अपना लक्ष्य स्पष्ट करता है। इस उपन्यास का मुख्य चरित्र यह जानते हुए भी कि यह (भूमंडलीकरण और बाजारवाद) व्यवस्था उसके लिए घातक है, उसमें फँसता चला जाता है और अंत में आत्महत्या करने पर बाध्य होता है।

व्यक्तित्व :

शिवमूर्ति का जन्म 11 मार्च, 1950 ई. को सुल्तानपुर जिले के गाँव कुरंग में एक सीमांत किसान परिवार में हुआ। पिता के गृह त्यागी हो जाने के कारण इन्हें अल्प आयु में ही आर्थिक संकट तथा असुरक्षा का सामना करना पड़ा। इसके चलते मजमा लगाने और जड़ी-बूटियाँ बेचने जैसे काम भी इन्हें करने पड़े। कुछ समय तक अध्यापन और रेलवे की नौकरी करने के बाद उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग से चयनित होकर सन 1977 ई. में बिक्री कर अधिकारी के रूप में स्थायी जीविकोपार्जन से लगे तथा मार्च, 2010 ई. में एडिशनल कमिश्नर के पद से अवकाश प्राप्त किया। वरिष्ठ साहित्यकार अब्दुल बिस्मिल्लाह के शब्दों में, *''शिवमूर्ति एक विचारवान लेखक के रूप में ही सामने आते हैं। और एक अजीब बात मुझे लगी, जो किसी बड़े अधिकारी में नहीं होती। जिस पद पर वे कार्यरत थे वहाँ तमाम प्रकार की सुख-सुविधाएँ, हर प्रकार की संपन्नता थी, उसके बावजूद उनके अंदर एक साधारणता थी।''*[1]

भाषा पर शिवमूर्ति की जबर्दस्त पकड़ रही है। अपनी भाषा से वे पूरा दृश्य खड़ा करते हैं। दूधनाथ सिंह लिखते हैं, *''शिवमूर्ति की रचनाओं में कथावस्तु और चरित्र इतने प्रबल हैं कि वे भाषा के किसी भी ऊपरी ताम-झाम और छलावे के बिना अपने को पाठकों के बीच धमाकेदार तरीके से स्थापित कर लेते हैं। उन्होंने बहुत कम लिखा है, लेकिन बहुत अच्छा लिखा है।''*[2]

शिवमूर्ति का व्यक्तित्व प्रगतिशील विचारों से प्रतिबद्ध है। इनका कथन हैं कि, *''सांप्रदायिकता और जातिवाद दोनों प्रमुख सामाजिक बीमारियाँ हैं। एक नागनाथ है तो दूसरा साँपनाथ। लेकिन जातिवाद सांप्रदायिकता से ज्यादा विभाजनकारी है। सांप्रदायिकता समाज को दो हिस्सों में बाँटती है, लेकिन जातिवाद उसे खंड-खंड कर देता है। जातिवाद हमारे साथ पैदा होने के दिन से चिपक जाता है और मरने तक नहीं छोड़ता।''*[3]

शिवमूर्ति का 'आखिरी छलांग' वर्ष 2008 (नया ज्ञानोदय अंक जनवरी) में प्रकाशित तीसरा महत्वपूर्ण उपन्यास है, जिसकी पृष्ठभूमि अवध का ग्रामांचल है। किसान जीवन और ग्रामीण समाज की कारुणिक यथार्थ पर केंद्रित यह उपन्यास गाँवों की वर्तमान वास्तविक दुर्दशा का जीवंत दस्तावेज है। प्रखर आलोचक प्रियम अंकित ने लिखा है, *''शिवमूर्ति का उपन्यास 'आखिरी छलांग' कल्पना से कहीं अधिक भयावह यथार्थ को पकड़ने की ईमानदार कोशिश है। शिवमूर्ति के कथा साहित्य में ग्रामीण जीवन के भरोसेमंद दृश्य मिलते हैं। कायदे से देखा जाए तो ग्रामीण परिवेश की जीवंत दृश्यात्मकता में पुनर्रचना करना शिवमूर्ति की ऐसी खासियत है, जो समकालीन कथाकारों को उनसे रश्क करने पर बाध्य कर सकती है।''*[4]

1. भारतवर्ष में किसानों की स्थिति :

भारतवर्ष में किसानों की स्थिति में कोई बड़ा बदलाव नहीं हुआ हैं। स्वाधीनता पूर्व जो हालात थे, कमोबेश मात्रा में बरकरार है। 'आखिरी छलांग' उपन्यास का पहलवान कहता है, *''पिता बताते थे कि दस-पाँच रुपये ही देना होता था, लेकिन इतनी छोटी रकम भी नहीं जुटती थी। गाली गुप्ता मार-पीट सुनना सहना पड़ता था। वह जमींदारी का जमाना था। आज इतने दिनों बाद भी किसान के जिंदगी में बहुत कुछ नहीं बदला, जितना बदलना चाहिए था।''* [5] यह स्थिति जमींदारी प्रथा में थी, पर लोकतंत्र में भी पूँजीपतियों की अपेक्षा किसानों के साथ नाइंसाफी हुई है। *''इधर तीन-चार साल में ऐसा कोई साल नहीं गुजरा, जब वे किसी बड़े खर्चे की चपेट में न आए हों। अभी-अभी तो बेटे की इंजीनियरिंग की फीस जमा करने में घर की सारी लेई पूँजी साफ हुई। पिछले साल बेटी ब्याहने के लिए खेत गिरवी रखना पड़ा। उसके पिछले साल ट्यूबवेल की बाकी रह गई किस्तों के चलते बैंक वाले मोटर और पंखा खोलकर ले जाने की धमकी दे गए तो ब्याज सहित आठ बकाया किस्तें एक साथ चुकानी पड़ीं। खाद का यह लोन उसके भी एक साल पहले का है। सोचा ही नहीं था कि बीस-बाइस सौ का यह कर्ज इतना भारी पड़ेगा कि जेल जाने की नौबत आ जायेगी।''* [6] देश के अन्नदाता किसानों की यह स्थिति हमें सोचने पर मजबूर करती है।

2. हिंदी-उपन्यास परंपरा में कृषक जीवन :

प्रेमचंद युग पूर्व से ही किसान जीवन की समस्याओं को लेकर उपन्यास लिखे जाते रहे हैं। परंतु उन्हें एक मजबूत आधार प्रेमचंद-युग से ही प्राप्त हुआ। प्रेमचंद के आगमन ने ही हिंदी उपन्यास को मनुष्य जीवन की सच्चाइयों से रूबरू करवाया। मानव जीवन की अनेक समस्याओं में से प्रमुख रूप से किसान जीवन की समस्याओं को प्रेमचंद ने अपनी रचनाओं का मुख्य आधार बनाया। *''वे किसान-जीवन के हर कोने से परिचित थे। जैसी उनकी जानकारी असाधारण थी, वैसा ही किसानों से उनका स्नेह भी गहरा था। किसानों के संपर्क में आने वाली शोषण की जंगी मशीन के हर कल-पुर्जे से वे वाकिफ थे।''* [7] अर्थात किसान और उनके जीवन की समस्याओं पर जो भी उपन्यास लिखे गए हैं, उनके प्रेरणास्रोत प्रेमचंद बने हुए हैं। जितेंद्र श्रीवास्तव ने बिल्कुल सही लिखा हैं, *''किसानों का प्रेमचंद के लेखन के साथ कुछ वैसा ही रिश्ता है, जैसा साँसों का जिंदगी के साथ होता है। प्रेमचंद अपने समय के संभवत: अकेले ऐसे रचनाकार थे, जिन्होंने हिंदुस्तान के समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र- दोनों को ठीक समझा था।''* [8]

आज भी किसान कई समस्याओं से जूझ रहे हैं, केवल

उनके शोषण का तरीका बदला है। वर्तमान समय में किसानों को केंद्र में रखकर लिखे गए प्रमुख उपन्यास निम्नांकित हैं- जमीन (भीमसेन त्यागी), सल्तनत को सुनो गांव वालों (जयनंदन), हलफनामे (राजू शर्मा), आखिरी छलांग (शिवमूर्ति), काली चाट (सुनील चतुर्वेदी), कंदील (राजकुमार राकेश), अकाल में उत्सव (पंकज सुबीर), आदिग्राम उपाख्यान (कुणाल सिंह), तेरा संगी कोई नहीं (मिथिलेश्वर), फांस (संजीव), यह गांव बिकाऊ है (एम. एम. चंद्रा), बहुत लंबी राह (कर्मेंद्रु शिशिर), हिडिम्ब (एस.आर. हरनोट), चलती चाकी (सूर्यनाथ सिंह), ताकि बची रहे हरियाली (अनंत कुमार सिंह), उल्टी उड़ान (मिथिलेश अकेला), आग ही आग (प्रह्लाद चंद्र दास), एक थी मैना एक था कुम्हार (हरि भटनागर), माटी-राग (हरियश राय), ढलती सांज का सूरज (मधु कांकरिया), ओह रे! किसान (अंकिता जैन) आदि।

3. प्राकृतिक आपदा और किसान :

किसानों के सामने प्राकृतिक आपदा एक ऐसी समस्या है, जिससे किसान कभी बच नहीं पाता। बेमौसम बरसात और ओलावृष्टि से किसान संकट में आ जाता है। उसे कभी बाढ़ तो कभी आँधी आदि समस्याओं से गुजरना पड़ता है। कभी फसल की बुआई के समय उसके सामने पानी की समस्या आती है तो कभी फसल पकने पर अत्यधिक बारिश से उसकी फसलें खराब हो जाती हैं। प्राकृतिक आपदा ऐसी समस्या है, जिससे किसान कभी नहीं बच सकता है।

'आखिरी छलांग' उपन्यास में किसानों के सम्मुख सूखे की स्थिति उत्पन्न हो गई है। बारिश का कहीं कोई आसार नहीं नजर आ रहा है। किसानों की फसल सूख रही है, *''लगता था, इस साल कही धान रखने की जगह नहीं बचेगी, लेकिन उत्तरा नक्षत्र ने धोखा दे दिया। झकझोर पुरवा बहने लगी। नीले आसमान में सफेद बगुलों की तरह बादलों के टुकड़े दिखते और गायब हो जाते। भीषण सूखे के सारे लक्षण प्रकट हो गये। राजधानी तक हल्ला मच गया। एक चौथाई फसल सूख गई तो करीब दस दिन बाद नहर में पानी आया।''* 9

4. सरकारी तंत्र और किसान :

हमारे समाज में किसानों की स्थिति में गिरावट का मुख्य कारण सरकारी तंत्र हैं। इस देश में लगभग 85 प्रतिशत किसान लघु एवं सीमांत किसान की श्रेणी में आते हैं। इनके पास पहले से ही जमीन कम होती है, जिसके कारण इन्हें अपना जीवनयापन करने के लिए बहुत-सी कठिनाइयों से गुजरना पड़ता है। इनके पास खेती करने के लिए पर्याप्त साधन न होने के कारण इन्हें औरों के पास जाना ही पड़ता है।

शिवमूर्ति 'आखिरी छलांग' लघु उपन्यास में भारतीय किसान की बदहाली को मूलत: सरकार की किसान विरोधी नीतियों का परिणाम मानते हैं और साथ ही इस उपन्यास का प्रमुख चरित्र पहलवान को केंद्र में रखकर किसान की व्यक्तिगत एवं सामाजिक समस्याओं के माध्यम से कृषि की दुर्दशा और पांडे बाबा की आत्महत्या के प्रसंग के माध्यम से किसानों से आत्महंता बनने के कारणों की पड़ताल करते हैं।

शिवमूर्ति इस उपन्यास की कथा पहलवान के जीवन से आरंभ करते हैं, जिन्हें अखाड़े, कुश्ती में कुशलता प्राप्त नहीं है, बल्कि उन्हें आलू उत्पादन में 'कृषि रत्न' का सम्मान मिला है। वह पाँच-छह एकड़ के जोरदार सामंती किसान हैं। *''पहलवान तो पूरे गाँव की 'नाक' हैं। ऐसे गाँव जिसमें डी.एम., एस.डी.एम., डॉक्टर, इंजीनियर और जज से लेकर दर्जनों लेक्चरर, वकील दरोगा तक पैदा हुए हैं।''* [10] गाँव में उनका मान-सम्मान हैं। *''पर इधर कुछ दिनों से पहलवान को एक-एक करके इतने 'झोड़' लगे कि उनकी एक ढर्रे पर चलने वाली आत्मतुष्ट दिनचर्या में खलल साफ दिखने लगा है। कितने दिन हो गए सगरे में नहाये। अब अपने दरवाजे के कुएँ से ही दो-चार लोटे पानी दायें-बायें डालकर नहान पूरा करने लगे हैं।''* [11] समय और परिस्थितियाँ पहलवान के ऊपर अपना प्रभाव छोड़ने लगे हैं। वे सोचते हैं कि, *''सयानी बेटी के लिए दो साल से वर खोज रहे हैं, लेकिन कहीं कामयाबी नहीं मिली। पिछले साल तो किसी तरह बेटे की इंजीनियरी की फीस भर दी गई। इस साल कोई रास्ता नहीं दिखता। तीन साल हो गए गन्ने का बकाया अभी तक नहीं मिला।*

सोसाइटी से ली गई खाद का कर्ज न चुका पाने के चलते पिछले साल पकड़ लिए गए थे। हर दूसरे महीने ट्यूबवेल के बिल की तलवार सर पर लटक जाती है। बेटी का विवाह कहीं तय भी हो जाए तो उसके खर्च का इंतजाम कैसे होगा? यह सब स्थायी चिंता के कारण बने हुए हैं। मन रोज-रोज छोटा होता जा रहा है।'' [12] लड़की के लिए अच्छा वर ढूँढ़ने में जब पिता हताश हो जाता है तो उसकी असहाय स्थिति पहलवान के रूप में अभिव्यक्त होती हैं, *''बेटी का बाप बन कर जितनी बार कोई किसी लड़के के बाप के दरवाजे जाता है, उतनी बार उसका चल्लू भर खून घटता है।''*[13] कोई भी मनुष्य जब कर्ज के तले दब जाता है तो इसकी मति निष्प्रभ हो जाती है। *''उनसे एक हाथ छोटे मरियल से अमीन ने ऐसा चित किया वे कराह भी नहीं पा रहे हैं। अखाड़े में सीखे सारे दाँव जिंदगी के इस रणक्षेत्र में बेकार साबित हो गए।''* [14]

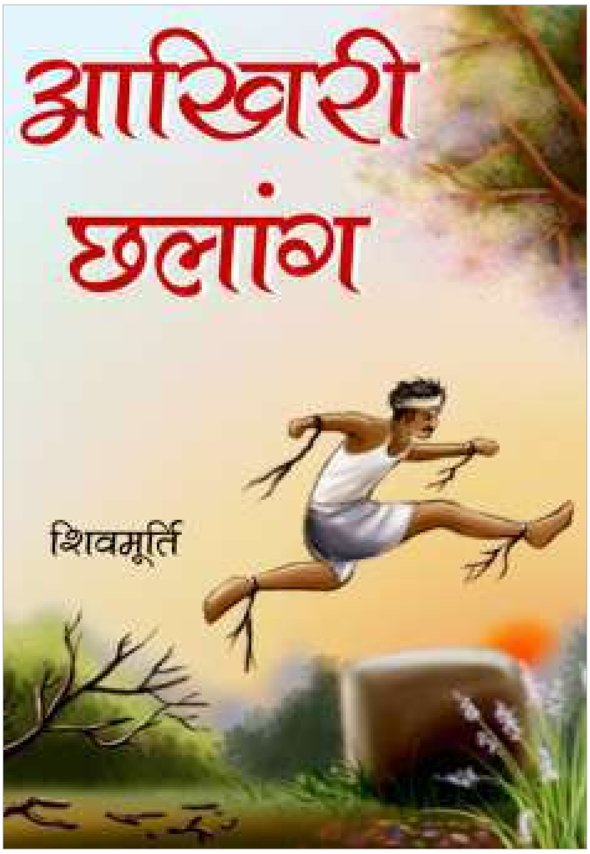

इस सामंती किसान की सोच में बदलाव आने लगा है। खेत बेचकर बेटे को इंजीनियरिंग की पढ़ाई कराएँ या फिर अतिरिक्त दहेज दे कर बेटी का विवाह करें। यह दोनों चीजें वर्तमान समय में तीव्र से तीव्रतर हुई है। ऐसे में पहलवान का चिंताग्रस्त होना लाजिमी है। यदि भारतीय गाँवों में पहलवान जैसे बड़े किसानों की यह स्थिति है तो छोटे किसानों का क्या हस्र या स्थिति होगी इसका हमें अंदाजा आ जाता है। उपन्यास की कथा में यह विचारणीय बिंदु है।

5. अर्थव्यवस्था का शिकार किसान-अन्नदाता :

भारतीय राजनीति और अर्थव्यवस्था का पहला और अंतिम शिकार भारत का आम किसान है। *''जिस परिवार में बाहर से नगदी की आमदनी नहीं है उसका आज के जमाने में गुजर होना मुश्किल है। जैसे गड्ढे से खोदी गई मिट्टी उसी गड्ढे को भरने के लिए पूरी नहीं पड़ती उसी तरह खेती-किसानी की आमदनी खेती-किसानी भर को भी नहीं अंटती। और कहाँ से अंटे ! डीजल, बिजली, खाद, कीटनाशक, जोताई-मड़ाई मजूरी-सबका रेट तो हर साल दस पाँच रुपए बढ़ जाता है। नहीं बढ़ता तो किसान की पैदावार का दाम। इसलिए जितनी लंबी खेती उतना ही लंबा घाटा। जितनी ज्यादा पैदावार उतना ज्यादा घाटा।''*[15] यूरिया, खाद, नहर-रेट, जुताई से लेकर स्कूल-कॉलेज और इंजीनियरिंग की फीसों में बढ़ोतरी की सीधी मार किसानों पर पड़ती है, क्योंकि किसानों के लिए योजना बनाने वाले तमाम पूँजीपति हैं, जिन्हें कृषि-कर्म से कोई मतलब नहीं है। उन्हें यह भी नहीं पता होता कि आलू जमीन के नीचे आता है या ऊपर। पहलवान को ऐसा महसूस होता है कि इज्जत चली गई खेलावन भाई। खेलावन पहलवान को समझाते हैं, *''पागल न बनिए। इज्जत जाती है घटियारी काम करने से। किसी की बहन-बेटी को गलत निगाह से देखने से। लेन-देन तो सारी दुनिया करती है। समझिए एक झूठा सपना था जो बीत गया।''* [16] इस प्रकार का दृढ़ विश्वास ही अन्नदाता को

जीवन जीने का साहस देता है, *''किसान के घर में जन्म लेकर न कोई पहले कोई सुखी रहा है न आगे कोई रहेगा। इन्हीं परिस्थितियों में जिंदगी की नाव खेना है।''*[17]

देश-दुनिया की अच्छी जानकारी खेलावन को है। वह अपनी बातों से पहलवान को समझाने का प्रयास करते हैं, जो उपन्यास में आधुनिक दुनिया की ओर खुलने वाली खिड़की की तरह अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं। वह व्यवस्था के गुण-दोषों को जानते हैं। वे अपनी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक अनुभवों से ग्रामीण लोगों में जागरूकता निर्माण करते हैं। वे कहते हैं, *''पश्चिम के देशों में किसानों को भारी सब्सिडी दी जाती है। सस्ती दर पर खाद, बिजली, बीज, दवा वगैरह। मैंने कहीं पढ़ा था, अमेरिका अपनी गायों को रोज चौबिस डालर की सब्सिडी देता है।''*[18] किसानों के लिए पूँजीपतियों की तर्ज पर अच्छा कानून बनाना चाहिए। खेलावन कहते हैं, *''उनका कानून बनाने में आला दर्जे का दिमाग लगा है। वे लिमिटेड कंपनी बनाते हैं। करोड़ों नहीं, अरबों का लोन लेते हैं। सब्सिडी लेते हैं। फिर भी अगर उनकी कंपनी 'सिक' हो जाए अर्थात डूबने लगे तो उसकी सेहत सुधारने के लिए बी.आई.एफ.आर. है, डिफरमेंट है।''*[19] इस देश के किसानों को बचाना है तो इनकी उन्नति हेतु सरकार को अच्छे-से-अच्छे कानून बनाने पड़ेंगे। तभी तो फौज के रिटायर सूबेदार हरदयाल कहते हैं, *''यह देश करोड़पतियों से नहीं, निरहू-घुरहू लोगों से ही जिंदा है खेलावन।''*[20] यदि किसानों के लिए सरकार ने कुछ सकारात्मक नहीं किया तो इनका भविष्य अंधकारमय रहेगा, *''निरहू-घुरहू नहीं बचेंगे तो दस-बीस साल में पूरा देश कटोरा लेकर भीख माँगता नजर आएगा। मेरी बात गलत साबित हो जाए तो गधे के पेशाब से मूँछ मुड़ा दूँगा।''*[21] यह कहीं-न-कहीं सामाजिक अर्थव्यवस्था से उपजा हुआ क्षोभ और रोष है, जो साफ-साफ यह कह रहा है- पूँजीपति सत्ता के शीर्ष पर और किसान सत्ता के पैरों के नीचे।

6. ऊँच-नीच यानी जाति-पाँति की भावना :

वर्तमान समय में किसानों में जागृति हुई है, उनमें आपसी शक्ति का दायरा बढ़ा है। पर यहाँ भी जातिवाद मुख्य है, जिस एकता की कमी के कारण किसान कोई बड़ी लड़ाई नहीं लड़ पा रहा है। उपन्यास की कथा में जब गाँव के खिलाफ धरना-प्रदर्शन करके ज्ञापन देने की बात निर्धारित हुई तो केवल पच्चीस-तीस लोग इकट्ठा हुए। खेलावन की जबानी, *''ज्यादातर ठाकुर बाभन इसलिए नहीं आये, क्योंकि इस प्रदर्शन का कार्यक्रम खेलावन जैसी पिछड़ी जाति के आदमी ने बनाया है।''*[22] कारण कि प्रदर्शन का यह कार्यक्रम खेलावन जैसे पिछड़ी जाति के आदमी कर रहे थे, ऐसे में सवर्ण अपने को इससे दूर रखना चाहते थे। पर सच तो यह है कि किसानों को सवर्ण-अवर्ण के भेदभाव से कोसों दूर जा कर सरकारी व्यवस्था के खिलाफ व्यापक आंदोलन करना होगा, तभी किसानों की मुक्ति संभव है। अन्यथा पहलवान की ही बात सच साबित होगी, *''पहलवान को लगता है कि इतनी पढ़ाई-लिखाई करने और देश दुनिया घूमने के बाद भी गाँव का आदमी सामूहिक हित के काम के लिए एकमत होने के मुद्दे पर भी जाति-पाँति की भावना से उबर नहीं पाता। इसी तरह की बात उन्होंने एक बार अखबार में पढ़ी थी कि जिनकी नीतियों और षड्यंत्रों के चलते किसान का जीना दूभर हो रहा है, उनसे लड़ना तो दूर, किसान को उनकी पहचान ही नहीं है।''*[23] किसानों का जातिवादी होना भी इनकी दुर्गति का एक कारण रहा हैं, *''जातिवादी अलगाव न होता तो कितनी मजबूती आ जाती गाँव में! फौलाद जैसी मजबूती।''*[24] बावजूद पहलवान में अदम्य जिजीविषा और आत्मविश्वास की कमी नहीं है, *''किसानों की कब्र के लिए गड्ढा खोदने वाले बहुत हैं तो उनके जिंदा रहने की राह खोजने वाले भी कम नहीं हैं।''*[25]

7. कृषि पर निर्भर किसानों की दुर्दशा :

आज किसान पूरी तरह से हाशिए पर है। उसके जीवन में किसानी कर्म के साथ-साथ बेटे की ऊँची शिक्षा और बेटी के विवाह के लिए दहेज की समस्या मुँह बाये खड़ी है। उपन्यास की कथा में पहलवान जब बेटी के लिए रिश्ता देखने जाते हैं तो उन्हें निराशा हाथ लगती है। युगीन बाजारवादी व्यवस्था ने इन दोनों स्थितियों में किसानों की कमर तोड़कर रख दी है। उपन्यास की कथा में, *''क्या है इनके पास जो बाबू जी इस तरह लट्टू हुए जा रहे हैं। न कोई कोटा परमिट न कोई कालेज भट्टा, न कोई टरक ट्रैक्टर न*

कोई ठेका पट्टा। कहां से संभालेंगे हमारी हजार लोगों की बारात? शादी का बजट कितना है? कौन सी गाड़ी देंगे? साफ-साफ बात होनी चाहिए।'' [26] वह आज के दहेज परंपरा का जीवंत प्रमाण हैं, जहाँ लोग मुँह खोलकर अपनी माँगें मनवा रहे हैं, जिसमें उन्हें दूसरे की आर्थिक मन:स्थिति का ख्याल रखना आवश्यक नहीं लगता है। पहलवान अपनी बेटी के लिए इसी दहेज की समस्या से चिंतित हैं। वहीं बेटे को इंजीनियरिंग की पढ़ाई में उनके सारे खेत मानो हाथ से निकल जाएँगे तभी उसकी पढ़ाई संभव है। पहलवान का चिंतित होना स्वाभाविक है, *''उनके जैसा चार एकड़ की जोत वाला किसान अगर साल की दोनों फसलों की कुल पैदावार बेच दे तो भी खाद, बीज, सिंचाई, मजदूरी का खर्च घटाने के बाद जो कुछ हाथ लगेगा उससे एक साल की फीस का इंतजाम होना मुश्किल है। चार साल तक इस तरह की फीस भरिए तब कहीं बेटा इंजीनियर कहलाने लायक होगा। अगर लगातार पास करता चले तब। लगभग सभी ने माना कि आज के जमाने में सिर्फ खेत के भरोसे किसी भी किसान के लिए बेटे को इंजीनियरिंग पढ़ाना संभव नहीं है।''* [27] इस देश का किसान आज भी आत्मनिर्भर नहीं बना है। उन्हें कई समस्याओं से निरंतर संघर्ष करना पड़ता है। पहलवान के शब्दों में, *''सचमुच हम तब भी भिखारी थे जब अंग्रेजों का, नवाबों का, जमींदारों का राज था और आज भी भिखारी हैं, इस राज में भी जिसे सब सुराज कहते हैं।''* [28]

8. किसान विरोधी भू-अधिग्रहण नीति :

भारत सरकार की किसान विरोधी नीति जो भू-अधिग्रहण की वकालत करती है, वास्तव में बहुराष्ट्रीय कंपनियों की इन बाजारवादी नीतियों का खुला समर्थन करती है, जो किसानों को कमजोर बनाने के लिए कटिबद्ध है। 'आखिरी छलांग' उपन्यास में हमें बाजारवाद के इसी संकट की आहट मिलती है। चाहे हरे-भरे बाग की जगह समतल भीटा बनने का प्रसंग हो या बैल के खुर में नकली दवा डालने का प्रसंग। इस उपन्यास का एक पात्र सदैव प्रथम श्रेणी में पास होने वाला राजेश्वर उर्फ पी.सी.एस., जिसने एम.ए. फिलॉसफी में टॉप किया है, पहलवान के शब्दों में, *''जहाँ गाँव के ज्यादातर लड़के कालेज और बाजार में लड़कियों का दुपट्टा खींचने और हा-हा, ठी-ठी करने में लगे हैं, झोपड़ी जैसे अपने घरों में ऐश्वर्या राय और शाहरूख खान का पोस्टर चिपकाने में लगे हैं, वहीं राजेश्वर जैसा लड़का भी उनके गाँव में पैदा हुआ है - इस पर उन्हें गर्व है।''* [29] राजेश्वर किसानों को पाँच तरह के खतरों से अवगत कराते हैं, *''बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा बीज पेटेंट कराने से पैदा खतरा। किसानों की जमीन हड़प कर उद्योगपतियों को दिए जाने का खतरा। सड़कों का जाल बिछाने में किसान की जमीन माटी के मोल कब्जा करने का खतरा। किसानों के लिए जरूरी चीजों पर सब्सिडी बढ़ाने की बजाय घटाते चले जाने का खतरा। कितनी आँख खोल देने वाली बात बताई कि दूसरे उत्पादकों के उत्पाद के लिए एम.आर.पी. तय होता है यानी मैक्सिमम रिटेल प्राइस, जबकि किसान के उत्पाद के लिए मिनिमम। सपोर्टिंग प्राइस न्यूनतम समर्थन मूल्य। बाकी के हिस्से में मैक्सिमम और किसान के हिस्से में मिनिमम। इतना मिनिमम कि लागत का आधा मिलना भी पहाड़।''* [30] यही वे खतरे हैं, जो बड़े पैमाने पर अन्नदाता को आत्महंता बनने पर मजबूर करते हैं।

9. किसानों में अदम्य जिजीविषा :

किसान में अदम्य जिजीविषा होती है। वह निरंतर सर्जक के रूप में अपनी भूमिका का निर्वाह करते रहता है। परिणामस्वरूप वह कितना भी बड़ा संकट आने पर डगमगाता नहीं, तो बड़ी चालाकी और हिम्मत से रास्ता निकालने का प्रयास करता है। खेलावन कहते हैं, *''नहीं लड़ेगा तो मरेगा, मर तो रहा ही है और जल्दी मरेगा। देश-दुनिया के नक्शे से गायब हो जाएगा। कोई रोक नहीं सकता। बहुत सारे मुद्दे हैं, जिनसे लड़ना जरूरी है। जैसे सरकार की नीतियाँ। गेहूँ पैदा करने में लागत बारह रुपए किलो आती है, लेकिन गेहूँ बिकता है सात रुपए किलो, आलू और प्याज किसान के घर पैदा होता है तो दो रुपए किलो बिकने लगता है। दो महीने बाद जैसे किसान के घर से बाहर निकला, दस रुपए किलो हो जाता है। पिछले पैंतिस साल में जमीन सौ गुनी महँगी हो गई। सोना पचहत्तर गुना, डीजल पचास गुना जबकि गेहूँ सिर्फ सात गुना। सारी मंदी किसानों के लिए ही है। पिछले दिनों बजट की खबर*

अखबार में छपी थी, उसमें जो चीजें सस्ती की गई थीं उसमें भी कार, कम्प्यूटर, कालीन और कोकाकोला और जो चीजें महँगी की गई थी उनमें थी बीड़ी-माचिस, चाय-बिस्कुट, पोस्टकार्ड। बडे पूँजीपतियों के कारखाने में बनने वाली और अमीर लोगों के उपयोग में आने वाली चीजें सस्ती हो गईं और कुटीर उद्योग में बनने वाली या गरीब के काम में आने वाली चीजें महँगी। जिस सरकार की नियत ऐसी गरीब विरोधी, किसान विरोधी हो, उसके खिलाफ गरीब नहीं खड़ा होगा, किसान नहीं खड़ा होगा तो कौन खड़ा होगा?''[31] किसानों को आत्मरक्षा के लिए संघर्ष करना आवश्यक है। यदि किसान संघर्ष छोड़ दे तो उसकी स्थिति बिल्कुल मृत प्राणियों की तरह हो जाएगी। खेलावन फिर कहते हैं कि, *''जगना तो पड़ेगा। लड़ना तो पड़ेगा। जिंदा रहना है तो अपने मारने वालों के सामने उठना तो पड़ेगा। वरना जैसे हजारों जातियाँ, जनजातियाँ, पशु-पक्षियों की प्रजातियाँ इस दुनिया से उच्छिन्न हो गईं, वैसे ही किसान नाम की प्रजाति भी विलुप्त हो जाएगी।''*[32]

10. किसानों में अंधविश्वास का बोलबाला :

शिवमूर्ति के जीवन में कृषि-कर्म का यह व्यापक अनुभव कोश है, जो बदलते समय में किसानों की कथा को उसी रूप में सृजित करते हैं। गाँव की ऐसी जबर्दस्त पकड़ प्रेमचंद और फणीश्वरनाथ रेणु के लेखन को भी कभी-कभी असंमजस में खड़ा कर देती है। इनके लेखन की बड़ी विशेषता यह है कि वे अपनी कथा में पूरे गाँव के यथार्थ को ला खड़ा कर देते हैं बिना किसी लाग-लपेट के तथा वहाँ का यथार्थ और मुखरित रूप में अभिव्यंजित हो पड़ता है। गाँव के मनुष्य में अनुभव का गहरा चिंतन होता है। कम शब्दों में जीवन का व्यापक फलसफा बताना इनकी खासियत होती है। पहलवान का मिडिल स्कूल का सहपाठी मुरली जब उन्हें मिलता है तो पुरानी यादों को तरोताजा करते हुए कहता है, *''जवानी का खाया-पिया ही बुढ़ापे में काम आता है भइया। कहते हैं कि घोड़े का, पहलवान का और वेश्या का बुढ़ापा बहुत खराब गुजरता है।''*[33]

ग्रामीण अंधविश्वास को भी वे कथा में लाते हैं, जो बदलाव की प्रक्रिया में गाँव से गायब होने का नाम ही नहीं ले रहा है। पहलवान जानते हैं कि, *''सचमुच, क्या है किसान की जिंदगी? एक कोना ढाँकिए तो दूसरा उघार हो जाता है।''*[34] दलिद्दर के प्रतीक पुराने सूप का हाथ-पैर तोड़कर उसे ऐसे गड्ढे में फेंकना जहाँ से वह वापस न लौट सके। *''इस्सर (ऐश्वर्य) आवै, दलिद्दर जावै।''*[35] कोई राह नहीं इस दुष्चक्र से बाहर निकलने की। माचे पर लेटे-लेटे पहलवान याद करते हैं – आज के सपने में पांडे बाबा हँस रहे थे। उनके साथ अलग-अलग रस्सियों में टंगे बीसों घंट भी हँस रहे थे। व्यंग्य की हंसी। किसी के सिर पर महाराष्ट्रीयन पगड़ी थी। किसी के सिर पर काठियाबाड़ी। कोई ओड़िया बोल रहा था कोई कन्नड़। ये लोग कौन हैं बाबा? आप लोग इस तरह मुझे देखकर क्यों हँस रहे हैं? *''हम विभिन्न प्रांतों के आत्महत्या करने वाले किसान हैं बच्चा। एक घट बोला, हँस रहे हैं तुम्हारी इस बचकानी सोच पर कि तुम हिंदुस्तान में रहकर किसानी जीवन के दुख और दरिद्रता से मुक्ति का सपना देख रहे हो। यह सपना कभी पूरा नहीं होने वाला बच्चा।''*[36]

उपन्यास के अंत में पहलवान स्वयं को सभी चिंताओं से मुक्त करते हैं। लेकिन यह छलांग नहीं है। इस छलांग की प्रेरणा पांडे बाबा की बरसी पर आयोजित जनसभा से मिलती है। पहलवान में बरखी के दिन वाले नेताजी के भाषण से बदलाव आता है। घर वापसी के क्रम में, *''उन्हें लगता है कि उनके साथ उनचासों पवन दौड़ पड़े हैं। मुंढे से हुमक कर हवा में छलांग लगाते हैं तो उन्हें लंका के लिए छलांग लगाते हनुमान जी याद आ जाते हैं।''*[37] अर्थात पहलवान बेटी के विवाह की चिंता, बेटे के फीस की चिंता, ट्यूबवेल के बिल की चिंता इन सभी को दरकिनार कर यह मौत के खिलाफ लगाई गई छलांग है। ...आखिरी छलांग।

निष्कर्ष :

सारांश रूप में कहा जा सकता है कि किसान महँगे बीज, खाद, कीटनाशक एवं सिंचाई जैसी मूलभूत आवश्यकताओं को भी पूरा नहीं कर पा रहा है। बीज बोने से लेकर बेचने तक उसे कई समस्याओं से गुजरना पड़ता है। सरकार की योजनाएँ, जो किसानों को कुछ राहत दे रही हैं। फिर भी किसान कर्ज लेने के लिए विश्व रहता

है। वर्तमान कृषि प्रणाली एवं कृषक समाज पूरी तरह से सामंती और जमींदारी प्रथा से मुक्त नहीं हो पाया है। प्रथाएँ तो समाप्त कर दी गईं, पर कृषक समाज आज भी उनके दुष्परिणामों को भुगत रहा है। प्राकृतिक आपदाएं उसकी स्थिति को और भी बदतर बना देती हैं। किसानों की दुर्गति का सबसे बड़ा कारण उनका आत्मनिर्भर न होना ही रहा है। हम उम्मीद करते हैं कि भविष्य में किसान आत्मनिर्भर बनें और अपना जीवन स्तर बेहतर बनाएं। ❑

संदर्भ सूची :

1. Shivmurti.blogspot.com से
2. उपर्युक्त
3. उपर्युक्त
4. उपर्युक्त
5. शिवमूर्ति, आखिरी छलांग, NotNul Online PDF Book, पृ. 15
6. उपर्युक्त, पृ. 15
7. डॉ. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली (5वां सं. 2008), पृ.177
8. प्र.सं. रवींद्र कालिया, प्रेमचंद : दलित एवं स्त्री विषयक विचार, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली (प्र.सं.2012), पृ. 9
9. शिवमूर्ति, आखिरी छलांग, NotNul Online PDF Book, पृ. 3
10. उपर्युक्त, पृ. 13
11. उपर्युक्त, पृ. 1
12. उपर्युक्त, पृ. 2
13. उपर्युक्त, पृ. 54
14. उपर्युक्त, पृ. 15
15. उपर्युक्त, पृ. 8
16. उपर्युक्त, पृ. 17
17. उपर्युक्त, पृ. 16
18. उपर्युक्त, पृ. 16
19. उपर्युक्त, पृ. 16
20. उपर्युक्त, पृ. 17
21. उपर्युक्त, पृ. 17
22. उपर्युक्त, पृ. 4
23. उपर्युक्त, पृ. 5
24. उपर्युक्त, पृ. 5
25. उपर्युक्त, पृ. 54
26. उपर्युक्त, पृ. 18
27. उपर्युक्त, पृ. 25-26
28. उपर्युक्त, पृ. 52
29. उपर्युक्त, पृ. 52
30. उपर्युक्त, पृ. 52
31. उपर्युक्त, पृ. 28-29
32. उपर्युक्त, पृ. 29
33. उपर्युक्त, पृ. 57
34. उपर्युक्त, पृ. 32
35. उपर्युक्त, पृ. 31
36. उपर्युक्त, पृ. 49
37. उपर्युक्त, पृ. 59

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

भोजपुरी लोक गीतों में वर्णित स्त्री जीवन

डॉ. राज कुमार शर्मा

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग
श्री गुरु नानक देव खालसा कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110005
9721264694
rajkumar.sharma@sgndkc.du.ac.in

जन मानस में अपनी प्रचुरता एवं व्यापकता के कारण लोक-साहित्य के अंतर्गत लोक गीत अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। लोक गीतों में अभिव्यक्त मानवीय संवेदनाएँ अपनी सहजता और सरलता के कारण पाठक तथा श्रोता वर्ग के मर्म को छूकर उसके अंतस को झकझोर देती हैं- *''नाना अभावों और जातिगत प्रत्यूहों से घिरा लोक-जीवन अपनी खुरदरी रूपाकृति और अकृत्रिम बाना द्वारा अभिजात वर्ग की नागर रुचि और तथाकथित विकसित सौंदर्य बोध को धक्का मार सकता है, किंतु मानवीय संवेदना की जैसी समृद्धि वहाँ दिखाई देती है, अन्यत्र दुर्लभ है।''*[1] इस प्रकार के गीतों में ग्राम संस्कृति की सोंधी गंध अनुस्यूत रहती है, जिसमें खेती-किसानी से लेकर जीवन के विविध पक्ष खुरदुरे यथार्थ के साथ अभिव्यक्ति पाते हैं। इनकी उत्पत्ति का कोई ठोस प्रमाण उपलब्ध नहीं है- *''लोक गीत खेत में नहीं उपजते, पेड़ पर नहीं फलते, लेकिन खेत और पेड़ की हरीतिमा का उच्छल उल्लास हृदय में उद्दीपन पैदा करता है और गीत का जन्म होता है। माटी और प्रकृति की रंग शोभा, तीज-त्योहार का उल्लास, जन्म और संस्कार-अनुष्ठान की मंगल चेतना, सामाजिक अभाव-अभियोग, विकृति-विक्षोभ की उदग्र मुद्रा, जागतिक कलुष बंधन से उत्तीर्ण होने की अकुलाहट और देवाराघन की पुनीत प्रेरणा, दैवी सत्ता को हाँक लगाती सौभ्य चेतना, मांसल सौंदर्य की स्पृहा, उद्यम शृंगार की उद्दीपक अभिव्यक्ति, अर्थात जीवन की समग्रता के प्रति संसक्ति और नाना छंदों-सुरों एवं विभिन्न राग-मुद्राओं में उसकी अभिव्यक्ति ही भोजपुरी लोक गीतों की सामान्य पहचान है।''*[2] कहने का आशय है कि लोक साहित्य परंपरा विहित होती है, जिसमें जन सामान्य का हृदयोद्गार अपने स्वाभाविक रूप में बिना किसी अतिशयोक्ति एवं अतिरंजना के वर्णित रहते हैं। लोक मानस के सजग चितेरों ने समाज को जिस रूप में देखा, समझा, परखा, अनुभव किया उसको बिना किसी लाग-लपेट के उसी रूप में अपने गीतों की विषय-वस्तु बनाया। अतएव लोक साहित्य स्वानुभूति का साहित्य है, जिसमें लोक संवेग सुख-दुःख, हर्ष-विषाद तथा सामाजिक अंतर्द्वंद्व आलोड़ित रहता है। लोक साहित्य की विषय-वस्तु के संदर्भ में डॉ. महीपाल सिंह राठौर का कहना है कि- *''भारतीय किसान ने लोक की परंपरा को अजस्र स्रोत के रूप में प्रवाहित करने में अपना योगदान दिया*

है। उसने लोक की धुरी को धारण किया है और वह इस लोक साहित्य की आधार भूमि है। लोक मनुष्य समाज का वह वर्ग है, जो अभिजात्य संस्कार और पांडित्य के अहंकार से शून्य परंपरा के प्रवाह में जीवित रहता है।''[3] अत: किसी समाज विशेष की वास्तविकता से परिचित होने के लिए शिष्ट साहित्य की अपेक्षाकृत लोक साहित्य ज्यादा महत्त का समझ में आता है, क्योंकि लोक साहित्य लेखकीय चातुर्य का प्रतिफल नहीं, बल्कि अल्हड़ बच्चे के मनोद्‌गार जैसा होता है, जहाँ तनिक भी बनावटीपन नहीं होता।

जहाँ तक भोजपुरी लोक साहित्य की बात है तो इसका अपना प्राचीन इतिहास रहा है, जिसमें भोजपुरी परगना के साथ ही बिहार के लगभग संपूर्ण हिस्से तथा उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग की संस्कृति, समाज, रीति-पर्व, त्योहारों आदि की श्रेष्ठ एवं विकृत रूपों का चित्रण अपने स्वाभाविक रूप में हुआ है। भोजपुरी लोक गीत के अंतर्गत विवाह, सोहर, जोग, सेहला, पिंडिया, बहुरा, गोधन, जँतसार, नागपंचमी, कजली, झूमर, होली, पचरा, गोंडगीत, निर्गुण, सोहनी, रोपनी, बारहमासा, बिरहा आदि आते हैं, जिसमें धरती का प्रगाढ़ अनुराग, सहज प्रकृति प्रेम, उदात्त सौंदर्य, शृंगार का मादक रूप, जातिगत प्रपंच तथा मानवीय संवेदना अपनी पूर्णता को प्राप्त है। शिष्ट साहित्य की तुलना में लोक साहित्य की संप्रेषणीयता अधिक सहज और तीक्ष्ण होती है, लोक-गीतकार अपनी यश:कीर्ति के लिए रचना नहीं करता, बल्कि अपनी संवेदना को जन-जन के कंठ की आवाज बनाना चाहता है। यही कारण है कि जहाँ एक तरफ इन गीतों में जीवन के उज्ज्वल पक्ष-देशभक्ति, भाई-बहिन के निश्च्छल, नि:स्वार्थ, स्वाभाविक प्रेम, पिता-पुत्री, माँ-बेटी के अलौकिक प्रेम तथा विभिन्न मानवीय आदर्शों को वाणी दी गई है तो वहीं दूसरी तरफ अनेक सामाजिक बुराइयों-स्त्री अशिक्षा, बाल-विवाह, विधवा विवाह, सती प्रथा, अनमेल विवाह, बहु-विवाह इत्यादि से उपजने वाली सामाजिक समस्याओं का यथार्थ रूप में चित्रण किया गया है। इसी यथार्थपरक आईने में भोजपुरी समाज में महिलाओं की क्या स्थिति-परिस्थिति रही हैं इसका आकलन करना ही इस शोध-पत्र का उत्स है।

भारत एक उत्सवधर्मी देश है, जिसकी जड़ें धर्म की धुरी पर टिकी हैं, इसीलिए यहाँ के लोक गीतों में धार्मिक छौंक बहुतायत मात्रा में दिखाई पड़ता है। इसी धार्मिक मान्यता, रीति-रिवाज या अशिक्षा का वशीभूत भोजपुरी समाज सदियों से ही कन्या जन्म को अभिशाप के रूप में देखता आया है। यही कारण है कि पुत्र के जन्मते ही 'खेलवना' और सोहर जैसे परंपरागत लोक गीतों के माध्यम से पूरा परिवार नए मेहमान का स्वागत करता है। सानंद उत्सव का वातावरण छाया रहता है। सास-ननद के द्वारा दान पुण्य और नाच-गाने किए जाते हैं तो वहीं कन्या के जन्म लेते ही पैरों तले की जमीन खिसकती जान पड़ती है, सारा आनंदोत्सव काफूर हो जाता है, यहाँ तक की घर में अवसाद और मस्तक पर विषाद की रेखाएँ छा जाती हैं। धीरे-धीरे कन्या बड़ी होने लगती है, किशोरावस्था की दहलीज पार करने के साथ ही माता-पिता की चिंता बढ़ने लगती है। कभी यही चिंता हिंदी के प्रसिद्ध कवि निराला को भी सतायी थी, जिसे 'सरोज स्मृति' जैसे शोक गीत में देखा जा सकता है। हमारे धर्म ग्रंथों में जहाँ एक तरफ कन्या दान को अत्यंत पुण्य का फल माना गया है, वहीं दूसरी तरफ तिलक-दहेज की समस्या इतनी जटिल है कि उसे सुलझाते-सुलझाते माता-पिता को कन्या जन्म अपराध बोध मालूम होने लगता है, जिसे इस गीत के द्वारा और बेहतर ढंग से समझा जा सकता है-

''जाहु हम जनिती धियवा कोरवी रे जनमि हैं,
पिहितीं हम मरिचि झराई रे।
मरिचि के झारे-झुरे धियवा मरि रे जइतिं,
छुटि जाइते गरेहुआ संताप रे।''[4]

उक्त गीत में बेटी के जन्म से व्यथित माँ कहती है कि यदि मुझे पहले पता चल गया होता कि मेरे गर्भ में पलने वाली शिशु धिया (पुत्री) है तो मैं अत्यधिक तीखी अर्थात् झराने वाली मिर्च पीसकर पी लेती, जिससे गर्भस्थ शिशु की मृत्यु हो जाती और मुझे इस प्रसव वेदना से होकर न गुजरना पड़ता। यह स्थिति आज भी हमारे समाज में कन्या भ्रूण हत्या के रूप में विद्यमान है। कहीं-न-कहीं इस कुत्सित मानसिकता की जिम्मेदार सड़ी-गली रूढ़िगत मूल्य-मान्यताओं के साथ दहेज जैसी कुप्रथाएँ हैं, जो कमोबेश

कुछ परिवर्तित रूप में आज भी हमारे सभ्य समाज को मुँह चिढ़ा रही हैं।

पुत्री के जन्म के बाद परिवार में किस प्रकार से मातम का वातावरण छा जाता है, इसका भी वर्णन भोजपुरी लोक गीतों में हुआ है-

''जाहि दिन बेटी हो तोहरो जनम भइले,
भइली भदउआ के रात ए।
सासु ननद घरे दिअरो न बारे ली,
उहो प्रभु बोले ले कुबोल हो।''[5]

कन्या जन्म के बाद एक महिला को जिस पारिवारिक सामाजिक और मानसिक तनाव के वातावरण से होकर गुजरना पड़ता है, उक्त गीत इसी बात की तस्दीक करता है। जो सासू-ननद पुत्र के जन्म पर अन, धन, सोना लुटा रही थीं, वही आज घर-आँगन में दिया जलाने को भी राजी नहीं। यही नहीं, पति देव सीधे मुँह बात न कर प्रसूता पर इस तरह से तंज करते हैं कि वह मर्माहत हो जाती है। अंतत: यह कहा जा सकता है कि भोजपुरी समाज में जन्म से ही लड़के-लड़की में भेदभाव किया जाने लगता है।

जैसे-जैसे लड़की बड़ी होने लगती है, वैसे-वैसे माता-पिता की चिंता बढ़ने लगती है। योग्य वर की तलाश और वर पक्ष की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में पिता की नींद हराम हो जाती है तथा माँ को इस बात की चिंता हमेशा सताती रहती है कि बेटी के हाथ कब पीले होंगे-

''मरिचि के पतवा झलारी हो बाबा, नगर में सोर होइ जाइ ए।
जेकरा हो घरे बाबा धियवा कुँवारी से कइसे सोवे निभेद ए।''[6]

यह चिंता बेटी के विवाहोपरांत ही समाप्त होती है-

जाहि दिन बेटी हो तोहरो बिआह होइहें, बाबा के हिरदया जुड़ाए ए।
धन-धन बेटी हो तोहरो जनम भइले, देवतन लिहले बसेढ़ ए।

स्त्री जाति के साथ एक-दूसरे प्रकार की समस्या अनमेल या वृद्ध विवाह की है, इसका भी वर्णन भोजपुरी लोक गीतों में मिलता है। यह समस्या लंबे अरसे से चली आ रही है। आज भी इस प्रकार की छिट-पुट घटनाएँ समाचार पत्रों की सुर्खियों में छायी रहती हैं। इस सामाजिक बुराई पर हिंदी साहित्य के विभिन्न रचनाकारों ने भी जमकर लेखनी चलाई है। मुंशी प्रेमचंद और उनके समकालीन लेखकों ने अपनी कृति-व्यक्तित्व के माध्यम से इस तरह की घटनाओं से पनपने वाली सामाजिक बुराइयों की तरफ पाठक समुदाय का ध्यान आकृष्ट कराया है। 'गोदान' में सोना और रामसेवक तथा 'निर्मला' में वकील तोताराम और निर्मला का प्रकरण अनमेल विवाह का ही उपज है। क्रमश: रामसेवक और तोता राम सोना और निर्मला की पिता के उम्र के हैं, जिनके समक्ष खड़ी होने में भी ये नव युवतियाँ लज्जा का अनुभव करती है। इतना ही नहीं, 'सेवासदन' उपन्यास की कथा तंतु भी इसी घटना से बुनी गई है। इस तरह के सामाजिक मुद्दे पर हमारा भोजपुरी लोक साहित्य पहले से ही मुखर रहा है। भोजपुरी का एक लोक गीत है, जिसमें नवयुवती का बूढ़े व्यक्ति से विवाह हो जाने के उपरांत दांपत्य जीवन में आने वाली कठिनाइयों का वर्णन किया गया है-

सोवे मैं गइले रे रंग महलिया सेज पर बुढ़ऊ रे बलमुआ,
पाकलि दढ़िया नजरिया जे परले, जिउवा जरल हमार।
अतना दुलार चेल्हिकवो ना कइले, जेतना बुढ़ऊ दुलार।[7]

उपरोक्त गीत एक नवयुवती के मनोव्यथा की मार्मिक अभिक्ति है। कभी-कभी इस तरह के परिस्थितियों की जिम्मेदार माता-पिता की तंगहाली और धन-एषणा भी होती है। आर्थिक तंगी के चलते जब एक दंपति अपनी जवान बेटी को कुपात्र के हाथों बेचता है, तब लोकचेता कवि हृदय आहत होकर चित्कार उठता है-

''पइसा के लालच पड़ि के बुढ़ऊ से सादी रे।
सादी ना कइले ई त मोर बरबादी रे।
कोठा ऊपर कोठरी बुढ़ऊ बोलाउस रे।
जात सरमवा लागे राम बुढ़ऊ के जोरू रे।

मलिया हरामी ठट्टा मरलसि, बुढ़ऊ के जोरु रे।''[8]

उपरोक्त गीत इस बात का प्रमाण है कि हमारे समाज के कुछ लोग चंद पैसों के लालच में अपने ही हृदयांशी को उससे दोगुने-तिगुने उम्र के पुरुष के हाथों बोच देते थे। यही नवयुवती जब अपने बूढ़े पति के साथ बाग-बगीचे, खेत-खलिहान को निकलती है तो ग्रामीण जन उसे मसखरी का पात्र बना लेते हैं। इसी समस्या को आधार बनाकर भोजपुरी के प्रसिद्ध लोक नर्तक एवं कवि 'भिखारी ठाकुर' ने 'बेटी बेचवा' नामक लोक नाट्य की रचना की है। डॉ. कृष्ण बिहारी सिंह के शब्दों में कहें तो- *''वय-विसंगत विवाह की विकृति को लेकर भोजपुरी में असंख्य गीत सुनाई पड़ते हैं। आर्थिक अभाव से पीड़ित और निरूपाय होकर अपना गाँव घर छोड़ने की विवशता को लेकर विरह-विदग्ध कंठ के स्फुरित अनेक गीत भोजपुरी क्षेत्र में गूँजते रहते हैं।''*[9]

यह सच है कि हमारे समाज में महिलाओं की दुर्गति के प्रमुख कारणों में से एक आर्थिक पराधीनता भी है, जो लंबे समय से चली आ रही है। इस समस्या पर लोक और शिष्ट दोनों साहित्यकारों ने स्वतंत्र रूप से विचार किया है। भक्तिकालीन कवि गोस्वामी 'तुलसीदास' जी लिखते हैं- *''कत विधि सृजि नारि जग माहीं। पराधीन सपनेहूँ सुख नाहीं।''*[10] तुलसीदास का संकेत कहीं-न-कहीं आर्थिक पराधीनता की तरफ ही है, जो उसकी दुर्गति की पुरौती कर देती है, जिसे इस लोक गीत में भी देखा जा सकता है-

''बाट में भेंटे रसिया कवन राम हो,
कहाँ रे जालु मोर रनिया।
आजु के खदचिया ओराइल बाटे हो,
जोबन बेंचे ओई गलिया।
आजु के खरचिया में चलाइब हो,
जोबनवा में हम सझिया।''[11]

उक्त गीत में पुरुष की लंपटता के साथ प्रोषित-पतिका के मनोदशा का वर्णन किया गया है। पति परदेशी है, जिसे अपनी भार्या के भरण-पोषण की किंचित चिंता नहीं, इस पर सास-ननद के ताने-बाने-अब किसकी कमाई खाओगी? किसके सहारे रहोगी? यही नहीं राह चलता लंपट बटोही भी उसकी आर्थिक तंगहाली का मखौल उड़ाते हुए- प्रश्न करता है कि कहाँ जा रही हो?.... मैं तुम्हारा संपूर्ण खर्च उठाने के लिए राजी हूँ, बशर्ते तुम मुझे अपने यौवन का सहचर बनाओ। इस प्रकार के तमाम भोजपुरी लोक गीत भोजपुर समाज में स्त्री की आर्थिक पराधीनता के हवालिया बयान हैं। वर्तमान समय में बढ़ते शिक्षा के प्रचार-प्रसार के परिणाम स्वरूप जैसे-जैसे भोजपुरी समाज में महिलाएँ जागरूक और शिक्षित हो रही हैं, वैसे-वैसे उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हो रही है।

भोजपुरी या यूँ कहा जाए लगभग भारतीय समाज में पुत्र के बिना दंपति का कोई अस्तित्व नहीं समझा जाता। संतान के बिना महिला की जो दुर्दशा होती है, उसे जिस मानसिक दौर से होकर गुजरना पड़ता है, परिवार समाज के लोग इस तरह का दमाघोंटू माहौल बना देते हैं कि उसमें उसका जीना दूभर हो जाता है। इस परिस्थिति की भी पड़ताल हमारे लोक गीतकारों ने किया है-

''जइ सन बन में के कोइलरि बने-बने कुहुके ले हो।
ए राम ओइसन जियरा हमरा कुहुकेला एक रे बालक बिनु हो।
जइसन बोरसी के आग हवे धीरे-धीरे-सुनुगेला हो।
ओइसे जियरा हमरा सुनुगेला, एकरे बालक बिनु हो।''[12]

इस गीत में एक बंध्या स्त्री की मनोदशा का बड़ा मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है। पुत्र के अभाव में स्त्री का हृदय यूँ ही नहीं कोयल का कुहकन या अँगीठी की आग बन गया है, बल्कि लोक व्यवहार की छींटाकसी तथा धार्मिक मान्यताओं ने बनने के लिए मजबूर कर दिया है। अंततः वह बढ़ई से अलभ्य कामना करते हुए काठ का बच्चा बनाने व उस बच्चे से रोने का निवेदन करती है, जिससे उसके भाल पर लगे बांझिन का कलंक मिट सके-

''काठ के बालक गढ़ि दिहले, अँगने धरी दिहलाई हो।
बाबुल मोरे आँगने रोई ना सुनावहु, मैं बाँझिनि कहावहुँ हो।
रानी बढ़ई के गढ़ल होरिलवा, रोवन नाहीं जाइन हो।
दैव गढ़ल जो मैं होइतों, तो रोइ के सुनउतेऊँ हो।''[13]

इतने पर भी जब उसकी मनोकामना फलवती नहीं होती तो वह अपनी जीवन लीला समाप्त कर लेना चाहती है-

उस मन करे मइया जहरवा खाइ मरितों हो।
दुइ मन करे मइया अगिनिया जरि हो जाऊँ।

दरअसल, हमारा भोजपुरी समाज इतना रूढ़ि और परंपरा में आबद्ध है कि उसे लगता है पुत्र के बिना स्वर्ग की प्राप्ति संभव नहीं है। कभी-कभी नीपूती स्त्री सास-ननद की प्रताड़ना और पति के कोप का शिकार बन जाती है। और तो और गाँव गिराँव के लोग उसे बाझिन की संज्ञा से विभूषित कर पुत्रहीन दंपति का मुँह देखना भी पसंद नहीं करते, यहाँ तक की उससे रास्ता बचाने लगते हैं, किन्हीं बंध्या स्त्री उनके समक्ष न पड़ जाए। इन्हीं सब सितम से वह माहुर खाने और अग्नि में जलकर मरने की बात करती है।

भोजपुरी समाज में विधवा स्त्री का जीवन बहुत असहाय और दैनीय हो जाता है, वह परिवार और समाज में हेय की दृष्टि से देखी जाती है, किसी मांगलिक अनुष्ठान में उसकी उपस्थिति अनुचित माना जाता है। हमारा समाज पुरुष प्रधान समाज है, जहाँ पुरुष को अनेक प्रकार की स्वतंत्रताएँ प्राप्त हैं, वहीं अनेक प्रतिबंधों से स्त्री जीवन को जकड़ दिया गया है। शायद इसीलिए प्रसिद्ध कथाकार मुंशी प्रेमचंद ने कहा है- ''पुरुष में नारी के गुण आ जाते हैं तो वह महात्मा बन जाता है। नारी में पुरुष के गुण आ जाते हैं तो वह कुलटा हो जाती है।'' उक्त कथन में पुरुष वर्चस्ववादी समाज के दोहरे चरित्र पर बड़ा तीक्ष्ण व्यंग्य किया गया है। इसी दोहरे चरित्र से ग्रसित हमारा पुरातन समाज जहाँ एक तरफ 'विधुर' को अनेक शदियाँ रचाने की इजाजत दी थी, वहीं विधवा को उसके समस्त-शृंगार-पटार को छीनकर सांसारिकता से दूर घर के एक कोने में सुबक-सुबक कर मरने के लिए छोड़ दिया जाता था। यदि उसका जीवन समाज द्वारा निर्मित खाँचे में ठीक से न बैठा तो उसे कुलटा की उपाधि से अलंकृत कर देना आम बात थी। कुल मिलाकर भोजपुरी समाज में पुरुष के बिना महिला का कोई अस्तित्व न था। यथा-

''के मोरा छइहें राड़ के भडैया,
के मोर बितइहें दिनवा रतिया हो राम।''[14]

उक्त गीत में महिला की यह चिंता, पति के बिना मुझ राड़ (विधवा) की मड़ई कौन छापेगा और मेरे दिन-रात कैसे बीतेंगे समाज की कलई खोलने के लिए पर्याप्त है। उक्त समस्या पर लोक साहित्य के साथ शिष्ट साहित्य भी मुखर रहा है। महादेवी वर्मा कृत 'अतीत के चलचित्र' में संकलित 'भक्तिन' का प्रसंग इसी समस्या से संबंधित है। खैर आज व्यवस्थाएँ बदल रही हैं, आधुनिक शिक्षा के प्रचार-प्रसार के चलते पुरातन मूल्य मान्यताओं में सुधार हो रहा है, आज हमारे समाज में विधवा पुनर्विवाह जैसी प्रथा प्रचलन में आ गई है।

भोजपुरी समाज में लंबे समय से पर्दा प्रथा चली आ रही है, किंतु हाल के कुछ वर्षों में इसमें कमी आई है। हालाँकि बहुतायत घरों में आज भी स्थितियाँ पहले जैसी ही हैं। अब भी ग्रामीण परिवेश में पति-पत्नी, बड़े-बुजुर्गों, माता-पिता, सास-ससुर के सामने मिलने और बातचीत करने में संकोच और झिझक की अनुभूति करते हैं। जैसे कि इस लोकगीत में वर्णित है-

''चुनरी पहिरि मैं ओलर्यो ओसरवा,
पियवा के मन ललचाय हो गोरिया।
चोर की नैयो पिया लुकि-लुकि आवे
जेकरे मैं बारी बियाही तेऊ पख फोरवा।''[15]

इतना ही नहीं, नई-नवेली बहू को अवगुंठन की आड़ में ही दिन बिताना पड़ता है, कहीं उसका मुँह न दिख जाए-

''बाबू राउर धनि आँगुठ मोरि चलै घूँघट काढ़ि चले हो रामा।''[16]

अतएव भोजपुरी लोक गीत पर्दा प्रथा का भी पटाक्षेप करता है।

यदि स्त्री जीवन से संबंधित समस्याओं की गहन पड़ताल करें तो हम देखते हैं कि प्राचीन काल से लेकर लगभग 19वीं सदी के पूर्वाद्ध तक भारतीय समाज में सती प्रथा जैसी प्रभावी कुरीति काफी थी। यह ऐसी प्रथा थी, जिसमें पति की मृत्यु के बाद महिला को जीने का अधिकार नहीं था। वह पति के शव को गोद में लेकर चिता की अग्नि में स्वयं को भस्म कर लेती थी। यदि भारतीय इतिहास का सिंहावलोकन करें तो राजपूत काल में यह प्रथा अपने चरम पर थी। इस काल विशेष में सैकड़ों की संख्या में

भारतीय ललनाओं का हँसते-हँसते धधकती अग्नि की ज्वाला में प्रवेश कर जौहर कर लेने की अनेक कहानियाँ वर्णित हैं। भोजपुरी लोकगीतों में इस विषय का भी तस्दीक किया गया है, यथा-

''पानी के पिआसल हरिनवा, जमुनवा घाटे रे जाय।
बोअलो मैं चीनवा हे रामा हरिनवा चरि रे जाय।।
X X X
चाम मासु बेचहि बहेलिया हाडवा दिहेरे मोर।
ओही हाड़ लेइ सती होइबों एहि जमुना के तीर।।''[17]

उक्त गीत में हिरनी और बटोही के माध्यम से सती प्रथा की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। इसी तरह का एक अन्य गीत-

''जो रउरा होई सामी सत के बिअहुता।
अँचरा अगिनिया सामी सत के बिअहुता।
अँचरा भभकि उठल सतिया भसम भइली।''[18]

उक्त गीत में भी सती प्रथा का जिक्र मिलता है। खैर यह प्रथा बहुत पहले ही समाप्त हो चुकी है, किंतु भोजपुरी लोक साहित्य में *''जीवन की कठोरता, कुरूपता और कुरीति का यथार्थ चित्रण इन गीतों में दिखाई पड़ता है।''*[19]

समग्रत: कहा जा सकता है कि तमाम प्रकार की वर्जनाओं और विडंबनाओं के बावजूद भोजपुरी के लोक गीतों में स्त्री जीवन का चित्रण विशुद्ध स्वाभाविक, पवित्र एवं निर्मल दिखाया गया है। वह कठिन दौर से गुजरते हुए भी अपने चरित्र को स्खलित नहीं होने देती। जरूरत पड़ने पर महिलाओं ने भी निज सतीत्व की रक्षा करते हुए समाज को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान किया है। यदि किसी क्षेत्र विशेष में नारी शक्ति पीछे भी रह गई थी तो इसका जिम्मेदार पुरुष समाज ही था और है भी। शिक्षा के बढ़ते प्रभाव ने आज स्त्री समाज को उनकी शक्ति और अधिकारों से परिचित कराया। आज जीवन के हर क्षेत्र में हमारी बेटियाँ आगे आकर समाज का प्रतिनिधित्व कर रही हैं। फिर भी उनके अधिकारों में कुछ न कुछ कमी रह गई है, जिसकी भरपाई इस समाज को करनी होगी। यह बात हमें भली-भाँति समझनी होगी की स्त्री शक्ति के अभाव में हमारा समाज अधूरा रह जाएगा। महिलाओं को कमतर आँकना कहीं-न-कहीं हमारे समाज की नादानी साबित होगी। ❑

संदर्भ सूची :

1. कृष्ण बिहारी मिश्र, आलेख (पत्रिका), पृष्ठ 13
2. कृष्ण बिहारी मिश्र, आलेख (पत्रिका), पृष्ठ 14
3. लोक साहित्य की रूप रेखा, पृष्ठ 3
4. रामनरेश, त्रिपाठी, कविता कौमुदी, भाग-5, पृष्ठ 29
5. कृष्ण देव उपाध्याय भोजपुरी के लोकगीत, पृष्ठ 83
6. डॉ. रविशंकर उपाध्याय, भोजपुरी लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्याय, पृष्ठ 197
7. कृष्णदेव उपाध्याय, भोजपुरी के लोकगीत, पृष्ठ 244
8. कृष्णदेव उपाध्याय, भोजपुरी के लोकगीत, पृष्ठ 246
9. आलेख (पत्रिका), पृष्ठ 27,28
10. डॉ. रविशंकर उपाध्याय, भोजपुरी लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, पृष्ठ 29
11. रामनरेश त्रिपाठी, ग्रामगीत, भाग-5, पृष्ठ 92
12. कृष्णदेव उपाध्याय, भोजपुरी लोकगीत, पृष्ठ 98
13. कृष्णदेव उपाध्याय, भोजपुरी लोकगीत, पृष्ठ 107
14. कृष्णदेव उपाध्याय, भोजपुरी के लोकगीत, पृष्ठ 138
15. कृष्णदेव उपाध्याय, भोजपुरी के लोकगीत, पृष्ठ 307
16. वही, पृष्ठ 308
17. डॉ. रविशंकर उपाध्याय, भोजपुरी लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, पृष्ठ 118
18. कृष्णदेव उपाध्याय, भोजपुरी लोकगीत, पृष्ठ 133
19. कृष्ण बिहारी सिंह, आलेख (पत्रिका), पृष्ठ 24

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

चिंतन

कुणाल सिंह के उपन्यास 'आदिग्राम उपाख्यान' में पर्यावरण सजगता

डॉ. सूर्या बोस

श्रीरागम, कोट्टीयम पी.ओ.
कोल्लम जिला-691571
8078535021
sooryaranjith1977@gmail.com

पर्यावरण पृथ्वी का संरक्षण कवच है। भारतीय पुराणों के अनुसार आबोहवा के अधीश देवराज इंद्र है। आबोहवा का नियंत्रण मूलतः पाँच चीजें करती हैं-वायु मंडल (atmosphere), जल मंडल (hydrosphere), हिम मंडल (cryosphere), स्थल मंडल (lithosphere), जीव मंडल (biosphere)। इन पाँचों के बीच की ऊर्जा का विन्यास ही एक क्षेत्र की आबोहवा का नियंता है। भारतीय संस्कृति में जल, वायु, धरती तथा वनस्पति एवं जीव-जंतुओं का अद्वितीय स्थान है। ईश्वरीय शक्ति का स्थान देकर इनकी पूजा करते हैं। पूजा करने का मतलब है संरक्षण करना। जिसकी पूजा करता है, मनुष्य उसकी रक्षा भी करता है। शायद इसलिए हमारे वेद-पुराणों या धार्मिक ग्रंथों के प्रति डर या भक्ति के कारण हम अपनी पर्यावरण की रक्षा करते थे। जिस समय से हम पश्चिम की सभ्यता की ओर उन्मुख हुए, हमारी शक्ति अर्थात प्रकृति के प्रति श्रद्धा घट गई। पर्यावरण को दूषित या विकृत करने का पहला कदम वहीं से शुरू होता है।

आदिग्राम उपाख्यान : कथावस्तु

नई सदी के उभरते साहित्यकारों में प्रमुख हैं कुणाल सिंह। भारतीय ज्ञानपीठ नवलेखन पुरस्कार, भारतीय भाषा परिषद युवा पुरस्कार आदि पुरस्करों से सम्मानित कुणाल सिंह का जन्म हुगली, पश्चिम बंगाल में हुआ। सनातन बाबू का दांपत्य, आज इतवार नहीं आदि आपकी कहानियाँ हैं। 'आदिग्राम उपाख्यान' आपका प्रमुख उपन्यास है।

कुणाल सिंह कृत 'आदिग्राम उपाख्यान' सरकार के कारखानों की बढ़ौती वाली मानसिकता के कारण त्रस्त कृषकों एवं गाँव वासियों की प्रतिक्रिया की दास्ताँ है। इसकी पृष्ठभूमि में पर्यावरण सजगता की जरूरत पर चिंतन किया गया है। आदिग्राम पश्चिम बंगाल का एक प्राकृतिक सुषमा से भरा गाँव है। वह बांग्लादेश सीमा से सटा हुआ है। खेती ही वहाँ की जीविका है। 1976 के आसपास आदिग्राम में सी.पी.टी. कंपनी का पदार्पण हुआ। साढ़े तीन सौ एकड़ में कारखाना खोला। कोई

डेढ़ सौ किसानों की जमीन को उन्हें यह लोभ देकर हथियाया गया था कि जब कारखाना शुरू हो जाएगा, उन्हें नौकरी दी जाएगी। उद्धरण है– *''खेती–बाड़ी में क्या रखा है! देखो कल्कत्ते में लोग खेती–बाड़ी नहीं, नौकरी करते हैं, इसलिए बाबु हैं, अमीर हैं।''* कंपनी बंद हो गई। 'किसान घर के रहे न घाट के'– यह पुरानी बात है। आज वह जगह सी.पी.टी. कंपनी की है; और मलबा बन गया है। मलबे का कोई मालिक नहीं। वैसे समकालीन स्थिति भी कोई दूसरा नहीं है। केमिकल हब बनाने के लिए जमीन हड़पने कई लोग आदिग्राम में मौजूद हैं। उन्हें उन्नीस हजार एकड़ चाहिए। आदिग्राम, बशीरपुर, मुंशीग्राम, रानीरहाट और कसारीपाड़ा गाँव वे हड़पना चाहते हैं। पहले कॉन्ट्रैक्ट पर मजदूरी देने, पैसा देने का लालच दिखाते हैं। लेकिन पहले के अनुभव के कारण किसान संघर्ष करने लगते हैं तो दंगा करवाके गाँव हड़पने की कोशिश करते हैं। कुछ पार्टी के नेता भी कंपनी के साथ हैं। कलकत्ते तक किसानों की आवाज नहीं पहुँचती है। बलात्कारी कॉमरेड गाँव को अपने पाँव तले कुचल डालते हैं। गाँव उजड़ जाने के बाद बात कलकत्ते तक पहुँच जाता है। उद्धरण है – ''धर्मतल्ला में नगर के हजारों बुद्धिजीवी, संस्कृति कर्मी, रंगकर्मी, शिल्पी, सिनेमादां, कवि–कथाकार जमा हैं। महाश्वेता देवी प्रेस कॉन्फ्रेंस कर रही हैं, मेधा पाटकर, गौतम घोष, विभाष चक्रवर्ती, वार्त्य बासु, जय गोस्वामी, अपर्णा सेन, अशोक सेकसरिया, सॉवली मिश्र, कौशिक सेन आदि जनसभाएँ कर रहे हैं। कबीर सुमन गा रहे हैं–––जानान दिच्छे एई मुहूर्त, कोथाय कादेर प्राणेर दाम, रक्तो दिये प्राण बिकिये, पथ देखाच्छे आदिग्राम/ चाटुज्जेटा कबीर होलो, बदले दिलाम आमार नाम, सबाराई नाम बदले गेलो, सबाराई नाम आदिग्राम।''

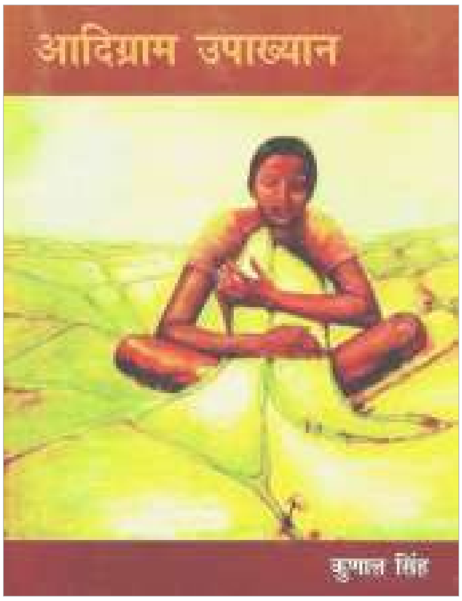

उपन्यास के अंत में कुणाल सिंह का एक प्रश्न है। मन को झकझोरता प्रश्न– *''आदिग्राम उपाख्यान' लिखते हुए एक सवाल से बार–बार दो–चार हुआ कि वियतनाम पर अमेरिकी हमले के खिलाफ जब जुलूस निकाला गया था तब पोस्टरों पर जो कुछ भी लिखा गया था – अमार नाम तोमार नाम....इत्यादि; तो 'वियतनाम' की तुक में 'आदिग्राम' तो सटीक बैठता है, लेकिन वह जो न रोटी बेलता है न खाता है, बस रोटी से खेलता है, वह तीसरा आदमी कौन है?*

दोस्तो, इस सवाल पर तो ममता बनर्जी भी मौन हैं।''

यहाँ उपन्यास समाप्त होता है। कई सवाल पाठकों के मन–मस्तिष्क में झूलता झोड़कर!

पर्यावरण सजगता :

संयुक्त राष्ट्र जलवायु सम्मेलन में सोलह साल की लड़की ग्रेटा थनबर्ग ने पर्यावरण प्रदूषण की ओर अनदेखा करने वाले विश्व नेताओं से अपना आक्रोश व्यक्त किया था कि पर्यावरण की रक्षा के लिए वे कुछ नहीं कर रहे हैं। आगे हम भारत की आदिग्राम की पर्यावरण सजगता पर नजर डालें।

कार्बन फूट प्रिंट :

विश्व भर के पर्यावरण कार्यकर्ता (environmental activist) कार्बन फूट प्रिंट कम करने का आह्वान दे रहे हैं। इसका क्या मतलब है? किसी व्यक्ति, वस्तु, उत्पन्न या संस्था द्वारा बहिर्गमित कार्बन डाइऑक्साइड या ऐसे गैस की मात्रा कार्बन फूट प्रिंट कहलाता है। खाना बनाने से लेकर कारखाने तक से ऐसे गैस अंतरिक्ष में फैल रहे हैं। इसी की नाप–तौल से व्यक्ति या राष्ट्र की कार्बन फूट प्रिंट की मात्रा जान सकते हैं। जहाँ तक आदिग्राम की बात है, कार्बन फूट प्रिंट की बहुत कम मात्रा हम देख सकते हैं। कारखाना खुलने के बाद की स्थिति दूसरी होती। 'आदिग्राम

उपाख्यान' के खलनायक प्रेम चोपड़ा को मान सकते हैं। हरयाणा में उनका पूर्वकाल ध्यान देने योग्य है। 'क्लीन दिल्ली ग्रीन दिल्ली' नारों के समय 1990 के बाद गुड़गांव, फरीदाबाद, नोएड़ा और गाजियाबाद को नेशनल कैपिटल रीजन कहे और माने-जाने की शुरुआत हुई। इनमें से गुड़गांव ज्यादातर विदेशी कंपनियों का पहला चुनाव था। प्रेम चोपड़ा का किस्सा यहीं से शुरू होता है। गुड़गांव का एक बेकार-बेरोजगार युवक प्रेम चोपड़ा, गुड़गांव के साथ आगे बढ़ता है। कुणाल सिंह लिखते हैं, *''नई सदी के आते-आते जहाँ गुड़गांव इस क्षेत्र में 'नुमेरो उनो' बन गया, वहीं प्रेम चोपड़ा भी मोटी तनख्वाह के पैकेज पर होंडा कंपनी में सी.ई.ओ. मिस्टर हिरोशी का मुख्य सलाहकार नियुक्त हो गया।''* दूसरा एक उद्धरण है, *''हरियाणा इन्वेस्टमेंट गाइड' की मानो तो भारत में हरियाणा एक ऐसा राज्य है, जहाँ विदेशी पूँजी का निवेश इसलिए ज्यादा हुआ है कि यहाँ का लॉ आंड ऑर्डर सर्वोत्तम है और सरकार का मजदूरों के प्रति रवैय्या अत्यंत 'मधुर' है।...* 'मधुर' संबंध का इससे बड़ा प्रमाण क्या होगा कि गुड़गांव में जो लेबर कोर्ट है, वहाँ आज की तारीख में कोइ छह हजार से ज्यादा लेबर केस लंबित पड़े हैं।'' कॉर्पोरेट जगत में प्रेम चोपड़ा चर्चे का सबब बना रहता है। होंडा कंपनी की छँटनी के विरुद्ध शांतिपूर्ण तरीके से मार्च करने वाले मजदूरों पर उसने पुलिस को हायर करके लाठी चार्ज करवा दिया था। 'हायर एंड फायर' पॉलिसी का इस्तेमाल चोपड़ा ने आदिग्राम में भी किया। यहाँ पुलिस को नहीं कॉमरेड को हायर किया था। कुछ भी हो आज पर्यावरण प्रदूषण का आँकड़ा इस प्रकार है कि विश्व के सबसे ज्यादा प्रदूषित दस शहरों में से सात भारत में है। गुड़गांव इसमें सबसे आगे है। 2019 के अक्टूबर-नवंबर महीने में हमने दिल्ली के 'स्मोग' के बारे में सुना था। धुआँ प्रदूषण और कुहरे के कारण त्रस्त दिल्ली का चित्र हमने देखा था। इसमें सिर्फ किसानों को कोसना ठीक नहीं है। पहले से कारखानों की अतिरेक वहाँ है। डीजल गाड़ियों की भी कमी नहीं है। आदिग्राम की प्रशांत सुंदर प्रकृति में कारखानों का धुआँ क्या नहीं कर सकता। हम इससे पूर्णतः अवगत है। यहाँ हमें यह भी सोचना चाहिए कि 'कारखाना चाहिए या खाना'। स्वच्छ वायु चाहिए या स्मोग। सिंगापुर और चीन में से खबर आती है कि प्रदूषित वायु को स्वच्छ बनाती चिमनी उन लोगों ने बनाया है। श्लाघनीय बात है। आशा है भारत भी इस ओर जल्दी से कदम रखेगा।

वनस्पति एवं जीव-जंतु :

भारतीय संस्कृति में वनस्पतियों एवं जीव-जंतुओं का प्रमुख स्थान है। पीपल, वट से लेकर तुलसी तक हिंदू सभ्यता में पूजे जाते हैं। ताड़, छतिवन आदि दुरात्माओं का आवास कहा जाता है। किसी भी तरह इन पेड़ों का नाश न हो; यही सोचकर शायद पेड़ों के प्रति पूजा या भय जताया गया था। जीव-जंतुओं की स्थिति भी भिन्न नहीं है। कहा जाता है कि वामनावतार से पहले महाविष्णु ने मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह आदि का अवतार लिया था। देवताओं के वाहन के रूप में भी जीव-जंतु पूजे जाते हैं। 'आदिग्राम उपाख्यान' के उद्धरण देखिए-

1. *''अभी इत्मीनान की दो-तीन साँसें ही भरी थी कि याद आया, यह अगहन का महीना है। फौरन से पेश्तर बैठे-बैठे ही मेंढक की तरह कूदकर ताड़ के पेड़ से दूर जा छिटका।''*

2. बरगद में भूत रहते हैं। इस विश्वास को बढ़ावा देने वाला उद्धरण देखिए-

''शमसुल ने बरगद को देखते हुए कहा, 'वैसे जतिन बाबु, जरा इस बरगद को ध्यान से देखिये, कैसे दो-दो पुरसा ऊँची जड़ काढ़े खड़ा है, और वे हवा में बहुत धीमे डोलते इसके सूंड! रात के सुनसान में इसे देखिये, कुछ देर बस देखते रहिये तो खुदा कसम एक मिनट के लिए सब कुछ यकीन कर लेने का मन करता है।''

इस तरह पर्यावरण की रक्षा के लिए बनाए गए किस्सों के कारण ही गाँवों में स्वच्छता है। कुणाल सिंह ने इसी स्वच्छता को बचाने के लिए इस तरह कम-से-कम हिंदी पाठकों का ध्यान आकर्षित करने का भरसक प्रयास किया है। आदिग्राम में कारखाना आ जाने से पाँच गाँवों का नामोनिशान मिट जाएघा। इसका आक्रोश, गुस्सा उपन्यास में भरा पड़ा है।

स्थल मंडल :

स्थल मंडल अर्थात धरती का पथरीला ऊपरी भाग पर्यावरण की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। पेड़ काट कर कारखाने या फ्लैट्स वगैरह बनाने से धरती का तापमान बढ़ने लगता है। खेत-खेती के नाश से वहाँ की आबोहवा में भयावह व्यतिरेक आने की संभावना है। इससे अनभिज्ञ होने पर भी अपनी जमीन और रोजी-रोटी के लिए आदिग्राम के लोग संग्राम की तैयारी करते हैं। उपन्यास से उद्धरण देखिए- *''सी.पी.टी कंपनी ने हमारी जमीनों के साथ क्या किया, आपको अच्छी तरह से पता है। फिर अपनी जमीन अपनी होती है, इसे देकर हम दूसरों की चाकरी क्यों करें। चाकरी में साले खिलाते हैं तप्त और हगाते हैं रक्त।''*

चित्तो मालिक आवेश में आ गया, ''भाइयो, हम अपनी जमीन हरगिज नहीं देंगे....... जान देबो, जोमी देबो ना।''

रघुनाथ आदिग्राम का एक जागरूक नौजवान है। वह सब लोगों को मिलाकर एक जमीन अधिग्रहण प्रतिरोध समिति का गठन करता है। उद्धरण है : ''आदिग्राम, मुंशीग्राम, रानीरहाट, जगदलपुर, कासारीपाड़ा आदि गाँव की पाँच फसली जमीन को किसानों की मर्जी के खिलाफ, और बिना उनसे कुछ पूर्व राय लिए, सरकार कैसे हथिया सकती है? कहा जा रहा था कि चिह्नित की गयी उन्नीस हजार एकड़ जमीन पर सरकार स्पेशल इकोनोमिक जोन निर्मित करेगी। अधिसूचना के साथ किसी भी तरह के वैकल्पिक पुनर्वास की कोई घोषणा नहीं थी। अपने ही हाथों से चुनी गयी सरकार के चंगुल से अपनी जमीन को बचाने के लिए ही यह जमीन अधिग्रहण प्रतिरोध समिति गठित की गयी थी।''

निष्कर्ष :

आज हम सिर भिन्ना रहे हैं कि जलवायु परिवर्तन के कारण हिम गल रहे हैं; समुद्र का पानी ऊपर की ओर आ रहा है; वैश्विक तापमान बढ़ रहा हैं। लेकिन इन सब के तह में कौन है? यह क्यों हो रहा है? मनुष्य की करतूतों के कारण। इसी लिए ग्रेटा थनबर्ग; डोनाल्ड ट्रंप से भिड़ गई है। जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करने के लिए विश्व नेता इकट्ठे हो रहे हैं। कई संघटन भी विश्व भर में पर्यावरण की रक्षा के लिए प्रस्तुत है। हमारे बचे-खुचे गाँवों की रक्षा, खेती-बाड़ी की रक्षा हम से भी हो सकती है। यही 'आदिग्राम उपाख्यान' का संदेश या उद्देश्य भी है।

उपन्यासकार कुणाल सिंह का आक्रोश कुछ गाँव, परंपरा, संस्कृति के नष्ट होने के प्रति है। हमें भी अपने ग्लोबल गाँव के प्रति सजग होना है। वक्त बीतता जा रहा है। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

आदिग्राम उपाख्यान, कुणाल सिंह, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2011

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

अवलोकन

छायावादी प्रवृति एवं चरित्र के आधार पर 'आकाशदीप' का एक पुनर्मूल्यांकन

डॉ. रचना पाण्डेय

असिस्टेंट प्रोफेसर
श्री शिक्षायतन कॉलेज
कोलकाता-700071
7980670449
rachanapandey78@yahoo.com

सन 1925 तक हिन्दी कहानियों की दो धाराएँ परिलक्षित होने लगीं - यथार्थवादी दृष्टिकोण को स्पर्श करती हुई जीवन के व्यावहारिक पक्ष को लिखी हुई जैसे प्रेमचंद, सुदर्शन, विश्वंभर नाथ 'कौशिक', चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' आदि की कहानियाँ और आदर्श प्रधान प्रवृति से प्रेरित भाव सत्य को लेकर जैसे जयशंकर प्रसाद, चंडीप्रसाद 'हृदयेश' राधिकारमण प्रसाद आदि की कहानियाँ।

जयशंकर प्रसाद प्रधानतः कवि हैं। यही कारण है कि उनके सम्पूर्ण गद्य साहित्य पर भी उनका कवि रूप ही आच्छादित रहता है, परंतु इससे उनकी कहानियों की महत्ता और मूल्य कम नहीं होते। प्रसाद की कहानियों में काव्य तत्व की प्रधानता, इतिहास के अंचल में स्वछंदतावादी जीवन की झलक, चरित्रों में भाव संघर्ष, अंतर्द्वंद्व तथा मनोवैज्ञानिक उतार-चढ़ाव, प्रेम और करुणा, त्याग, बलिदान, भावुकता तथा चित्रात्मकता, नियतिवादी तथा दार्शनिक प्रवृतियों का प्राधान्य है। तथापि परवर्ती कहानियों में भावुकता-चित्रमयता थोड़ी कम हुई है और इनका स्थान मनोविज्ञान ने लिया। *'प्रसाद की कहानियाँ एक ओर यदि प्रेम के उद्दात रूप और सर्वस्व-बलिदान में निहित साहस एवं शौर्य को रेखांकित करती हैं, वहीं वे परस्पर दो विरोधी भावों के संघात और द्वंद्व को नाटकीय कौशल के साथ प्रस्तुत करती हैं...आकाशदीप में यह द्वंद्व प्रेम और घृणा के बीच है।'*[1]

1929 में प्रकाशित 'आकाशदीप' कहानी ऐतिहासिक, काल्पनिक चित्रण, संवेदनशील वातावरण, नाटकीय विधान, रहस्यमय खंड चित्र प्रस्तुत करता है। यह एक रोमांटिक स्वछंदतावादी कथा की विशिष्टता से संपन्न है। प्रसाद की विशेषता है कि घटनाओं के जरिए नहीं, चरित्रों के घात-प्रतिघात से उत्पन्न नाटकीय स्थितियों के जरिए कथा को उत्कर्ष की ओर ले जाते हैं। *''उनकी कहानियाँ प्राय: व्यक्तिगत भावना और स्थापित नैतिकता का द्वंद्व सामने रखती हैं, वहाँ विकल्प भावना और कर्तव्य का है - कभी यह कर्तव्य, राष्ट्र-प्रेम, कभी मठ -मर्यादा और कभी पारिवारिक शत्रुता के निर्वाह का है। इस द्वंद्व में छटपटाती और उसमें कर्तव्य की ओर झुकती हुई उनकी कहानियों की नायिकाएँ अक्सर उस मानसिक स्थिति का शिकार हैं, जिसे मनोविज्ञान में 'एम्बिवेलेंसी' कहते हैं। अर्थात एक ही व्यक्ति या*

वस्तु के प्रति प्यार और घृणा की समान तीव्र भावना का होना। 'मैं तुमसे घृणा करती हूँ जलदस्यु, लेकिन तुम्हें प्यार भी करती हूँ' वाली स्थिति की अभिव्यक्ति उनकी कहानियों में कहीं शब्दों में है और कहीं संकेतों में। अतिरिक्त रोमानी वातावरण और कल्पित कथानकों के बावजूद प्रसाद हिन्दी के पहले सफल कहानीकार हैं।''[2] कहा जा सकता है कि मन को विचलित और विचारोन्मुख करने की क्षमता जैनेन्द्र, अज्ञेय आदि कहानीकारों को प्रसाद से प्राप्त हुई है।

छायावादी प्रवृतियों के आधार पर अगर हम कहानी की समीक्षा करें तो पाते हैं कि इसके तत्व कहानी में उभर कर आए हैं। जैसे मुक्ति का स्वर, प्रणय की अनुभूति, सौंदर्य चेतना, प्रतिकात्मकता, स्वाभिमान व व्यक्तिवाद का स्वर, अतीत का स्मरण, रहस्यवाद, वेदना और निराशा, मानवतावाद, राष्ट्रप्रेम,लाक्षणिक भाषा आदि।

कहानी की शुरुआत में ही चंपा कहती है– 'मुक्त' होना चाहते हो? चंपा का ही एक और कथन है – 'जल में बंदी होना कठोर प्राचीरों से तो अच्छा है' बुद्धगुप्त मुक्त होने के लिए नायक के साथ द्वंद्व युद्ध करता है। यह सारे संकेत मुक्त और स्वच्छंद होने की ओर ही इशारा करते हैं। छायावाद का संपूर्ण काव्य ही किसी भी तरह के **बंधनों से मुक्ति** का आह्वान है।

कहानी में **कल्पना** का उपयोग अनुभूति के विविध पक्षों और प्रसंगों की उद्‌भावना में किया गया है और उसे व्यक्त करने में प्रतीकों और बिंबो का सहारा लिया गया है। 'तारों से सजा नीला आकाश और नील समुद्र के आकाश में पवन उधम मचा रहा है' जैसे चित्रण कई हैं।

एक और छायावादी तत्व **प्रणय की अनुभूति** पूरी कहानी में लेखक और पाठक के बीच संचरित करती रहती है। (क) 'चंपा ने युवक जलदस्यु के समीप आकर क्षतों को अपनी स्निग्ध दृष्टि और कोमल करों से वेदना विहीन कर दिया।' (ख) बुद्धगुप्त झुककर चंपा को बजरे पर चढ़ाने के लिए हाथ बढ़ाता है। (ग) बुद्धगुप्त जब घुटनों के बल चंपा के सामने छलछलाई आंखों से बैठा है।

(घ) बुद्धगुप्त ने एक बार चंपा के पैर पकड़ लिए। (ङ) किसी आकस्मिक झटके ने एक पल के लिए दोनों के अधरों को मिला दिया।

छायावादी प्रेम प्रसंगों में अश्लीलता नहीं है, वह कहीं न कहीं मन के एक कोने को स्पर्श कर जाती है।

छायावादी साहित्य का सौंदर्य पक्ष भी काफी वजनी है और इस कहानी में भी पूरी तरह से उभर कर आया है। यहाँ प्रकृति और नारी दोनों के सौंदर्य की छटा है। जहाँ तक प्रकृति का प्रश्न है, वह छायावादी प्रवृत्ति के अनुसार कोमल भी है और कठोर भी।

प्रकृति के कोमल रूप का वर्णन देखिए – (क) *'शरद के धवल नक्षत्र नील गगन में झलमला रहे थे। चंद्र की*

उज्ज्वल विजय पर अंतरिक्ष में शरद लक्ष्मी ने आशीर्वाद के फूलों और खिलों को बिखेर दिया।'[3] (ख) *'अनंत जलनिधि में उषा का मधुर आलोक फूट उठा...।'* [4] (ग) *'सामने जल राशि का रजत श्रृंगार था...।'* [5]

प्रकृति के कठोर रूप का भी वर्णन दृष्टव्य है – (क) *'तरंगे उद्वेलित हुई...भीषण आंधी पिशाचिनी के समान नाव को अपने हाथों में लेकर कड़क क्रीड़ा और अट्टहास करने लगी।'* [6]

मन की भावनाओं के साथ प्रवृत्ति का कितना सुंदर मेल है इसका उदाहरण देखिए- (क) *'जैसे बेला में चोट खाकर सिंधु चिल्ला उठता है'*[7] (मानवीकरण) (ख) 'सृष्टि नील से भर उठी।' (ग) *'तुम एक बहकी हुई तारिका के समान मेरे शून्य में उदित हुई।'*[8] (घ) समुद्र वक्ष पर विलंबमयी राग-रंजीत संध्या थिरकने लगी। (मानवीकरण)

नारी का सौंदर्य – (क) बुद्ध गुप्त देखता है 'चंपा के असंयत कुन्तल उसकी पीठ पर बिखरे थे। दुर्दान्त दस्यु ने देखा अपनी महिमा में अलौकिक एक तरुण बालिका।' (ख) जया के लिए कहा गया वचन 'नील नभोमंडल से मुख में शुक्र नक्षत्रों की पंक्ति के समान उसके दांत हंसते ही रहते।' (ग) चंपा को वनदेवी सा सजाया था आदि उदाहरण से नारी सौंदर्य की झलक भी मिल जाती है।

प्रतीकात्मकता भी छायावादी साहित्य की मूल प्रवृत्ति है जो इस कहानी में उभर कर आई है। (क)आंधी, तूफान, लहरें, पवन का उधम मचाना आदि विरोधी परिस्थितियों का प्रतीक बन कर आया है। (ख) आकाशदीप अंधेरे में प्रकाश का प्रतीक है। पथ प्रदर्शक का प्रतीक है।

स्वाभिमान या व्यक्तिवाद का स्वर भी कहानी में है जो एक प्रमुख छायावादी प्रवृत्ति है।

(क)चंपा बुद्धगुप्त के प्रस्ताव को जब ठुकरा देती है तब वह कहता है *'बुद्धगुप्त को आज्ञा दे कर देखो वह क्या नहीं कर सकता...।'* [9]

(ख) *'चलोगी चंपा? पोतवाहिनी पर असंख्य धनराशि लादकर राजरानी सी जन्मभूमि के अंक में?'*[10] चंपा द्वारा प्रस्ताव को ठुकराना भी व्यक्तिवादी चेतना ही है। वैभवों को छोड़कर जाने की बात अगर बुद्धगुप्त करता तो शायद चंपा मान जाती, परंतु वह धनराशि साथ रखने की बात करता है, जिससे चंपा के अहम् को चोट लगती है।

कहानी में ऐसे भी प्रसंग आते हैं, जिसमें **अतीत का स्मरण** है, जो निसंदेह एक छायावादी प्रवृत्ति ही है।

(क) चंपा कहती है *'परंतु मुझे उन दिनों की स्मृति सुहावनी लगती है, जब तुम्हारे पास एक ही नाव थी...।'* [11]

(ख) *'वह नक्षत्रों की मधुर छाया...।'*[12] (ग) *'मेरी माँ? आह! नाविक यह उसी की पुण्य स्मृति है...।'*[13]

(घ) *'स्मरण होता है वह दार्शनिकों का देश...।'*[14]

रहस्यवाद की झलक भी कहानी में मिल जाती है (क) *'उस मोहिनी के रहस्य पूर्ण नील जाल का कुछ स्फूट हो उठा...।'*[15] (ख) *'वहाँ एक आलिंगन हुआ जैसे क्षितिज में आकाश और सिंधु का...।'* [16]

वेदना और निराशा का संकेत कहानी में कुछ इस तरह दिखाई देता है – (क)बुद्ध गुप्त कहता है *'आह! उन लहरों में मेरा विनाश हो जाए...।*[17] (ख) *'किंतु देखती हूँ मुझे भी उसी में जलना होगा।'*[18] (ग) *'तुम इस निष्ठुरता में भी कितने महान होते...।'*[19] (घ) *'अंधेर है जलदस्यु! तुम्हें प्यार करती हूँ।'* [20]

बुद्धगुप्त का रोना, घुटनों के बल बैठना आदि प्रसंग में प्रेम तो है पर साथ ही वेदना तथा करुणा का भाव भी पैदा करता है।

मानवतावाद स्वछंदतावाद की एक प्रमुख प्रवृति है –चम्पा जब कहती है *'मुझे छोड़ दो इन निरीह भोले-भाले प्राणियों के दुख की सहानुभूति और सेवा के लिए ...'*[21] तो यहाँ व्यक्तिगत प्रेम से ऊपर उठकर मानव कल्याण का भाव ही जगता है।

भाषा में काव्यात्मकता है, तत्सम शब्दावली भी है, सांकेतिकता है, कौतूहल और जिज्ञासा का भाव है। **लाक्षणिकता** का उदाहरण भी मिल जाएगा जैसे- (क) *'दूरागत पवन चम्पा के अंचल में विश्राम लेना चाहता है।'* [22] (ख) *'पश्चिम का पथिक थक गया है'* [23] (ग) *'कितने वर्षों से मैं ज्वालामुखी को छाती से दबाया हूँ।'*[24]

इस संदर्भ में यही कहना है कि छायावादी साहित्य की अनुभूति केवल मन के स्तर पर ही नहीं रुकती बल्कि वह गहरी उतरती हुई आत्मा के लोक में संचरण करती है निराशा, अकर्मण्यता के स्थान पर आशा, आत्मविश्वास और कर्मवाद की प्रखरता से युक्त है और इस दृष्टि से तथा छायावादी प्रवृतियों के आलोक में कहानी खरी उतरती है।

कहानी के दो प्रमुख पात्र चम्पा और बुद्धगुप्त की बात करें तो पाते हैं कि चम्पा का चरित्र विलोमों का समुच्चय है। पूरा कथानक चम्पा के क्रिया-कलाप एवं निर्णयों के इर्द-गिर्द घूमता रहता है। एक तरफ हम देखते हैं कि वह त्याग और लोक-कल्याण कि भावना का उत्कृष्ट नमूना है। वह साहसी है, स्वाभिमानी है - बुद्धगुप्त जब कहता है- 'अरे! तुम तो नारी हो' तब वह कहती है - 'क्या नारी होना कोई पाप है!' वह सेवा और त्याग की साक्षात मूर्ति है, उसे ऐश्वर्य सुख भोगने की लालसा नहीं है वह द्वीपवासियों की सेवा का संकल्प लेती है। वह जब कहती है - 'मेरे लिए सब भूमि मिट्टी है।' तब उसमें कर्तव्यनिष्ठा भी दिखती है। वह भावुक और कोमल है, छोटी सी बात में खुश होती है, उसमें लालच नहीं है। कहती है 'जब तुम्हारे पास एक ही नाव थी और चम्पा के उपकूल में पण्य लादकर हमलोग सुखी जीवन बिताते थे।' उसे पुरुष का ऐश्वर्य नहीं बल्कि सानिध्य चाहिए। वह स्पष्ट्रवादी भी है - बुद्धगुप्त जब दस्युवृत्ति छोड़ने की बात करता है तब वह कहती है - *'तुमने दस्युवृत्ति छोड़ दिया है, परंतु हृदय वैसा ही अकरुण, सतृष्ण और ज्वलनशील है।'*[25] उसे अपने पिता का हत्यारा कहने में भी संकोच नहीं करती।

दूसरी दृष्टि से देखें तो कहानी में चम्पा के चरित्र का एक अन्य पक्ष भी दिखता है। चम्पा का त्याग और बलिदान, प्रेम का उदात्तीकरण अवश्य करते हैं, लेकिन अपने ही अंतर्द्वंद्व और मनोविकारों से जूझती चम्पा को मुक्त नहीं कर पाते। कहानी के आरंभ में मुक्ति के लिए उद्धत चम्पा अपनी मानसिक-भावनात्मक मुक्ति कि रूपरेखा नहीं बना पाती। (जिस कालखंड की यह रचना है, वहाँ अनेक सामाजिक कुरीतियों की जकड़न से स्त्री को स्वतंत्र निर्णय लेने का अधिकार नहीं था।)

चम्पा विलोमों का समुच्चय है वह कर्मठ और अकर्मण्य, आत्मनिर्भर और पराश्रित एक साथ है। कहानी के प्रारंभ में बंधन से मुक्ति की रणनीति, पोत से रज्जु काटने का आदेश और शस्त्र वही देती है। वही चम्पा द्वीप में पाँच बरस बिताने के बाद बुद्धगुप्त से कातर गुहार लगाती है-'मुझे इस बंदीगृह से मुक्त करो।' वह निर्णय पर पहुँच नहीं पाती, आत्मविश्वास का अभाव भी दिखाई देता है, आत्मनिर्णय को स्थगित करती है *'मैं अपने अदृष्ट को अनिदृष्ट ही रहने दूँगी, वह जहाँ ले जाए।'*[26]

प्रसाद के लेखन की एक अन्य विशेषता है सांकेतिकता और वचन विपर्याय जिसके सहारे वे स्वयं को भाषा की सीमा से मुक्त कर पात्रों के व्यक्तित्व की संश्लिष्ट अन्तः परतों को बुनने लगते हैं। चम्पा बुद्धगुप्त से घृणा के दो कारण गढ़ती है- (क) पिता का हत्यारा। (ख) उसे लगता है दस्युवृति छोड़ने के बाद भी बुद्धगुप्त अपने को परिभाषित नहीं कर पाया। वास्तविकता यह है कि वह स्वयं अकरुण, सतृष्ण और ज्वलनशील है प्रतिशोध ने कर्तव्यपालन को संवेदनात्मक विवेक से विच्छिन कर उसे हृदयहीन बना दिया है। बुद्धगुप्त ने उसे बांधा नहीं है, वह तो स्वयं फरियाद की तरह उसके पैरों पर गिरा पड़ा। वह स्वयं अपने मनोविकारों में फंसी है। मुक्ति का मार्ग उसके अंदर से प्रशस्त होगा वह जानती है, किन्तु प्रयास नहीं करती। वह प्रेम और प्रतिशोध को सही-सही पहचान नहीं पाती। उसका ओजस्वी व्यक्तित्व क्रमशः कुम्हलाने लगता है। अति भावुकता, आत्म-प्रवर्चना, आत्माभिमान और पलायन तक पहुँचता है और अंततः आत्मदमन में अपने आपको शून्य कर लेती है। कहानी के अंत में चम्पा निरीह भोले-भले प्राणियों के दुख की सहानुभूति और सेवा के लिए चम्पा द्वीप पर रह जाती है।

प्रेमचंद और प्रसाद चूंकि दोनों एक ही युग के संघर्षगाथा के गायक हैं और अपनी भिन्न दृष्टियों के बावजूद गांधी जी के प्रभाव से अछूते नहीं रहे हैं, इसलिए अस्वाभाविक नहीं कि राष्ट्रीय-स्वाधीनता आंदोलन में वे स्त्री की भागीदारी को सेवा और त्याग कि मूर्ति के रूप में सुनिश्चित करें। प्रसाद ने चम्पा को मूल्यों की धारक शक्ति के रूप में चित्रित किया है।

चम्पा के ठीक विपरीत है बुद्धगुप्त की चारित्रिक संरचना। वह दुर्दांत जलदस्यु से सफल व्यापारी, संवेदनहीन क्रूर हत्यारे से संवेदनशील प्रेमी की भूमिका में उसके व्यक्तित्व का विकास हुआ है। कथा के प्रारंभ में वह चम्पा के समक्ष बौना और व्यक्तित्वहीन है। अपनी महिमा में अलौकिक वह तरुण बालिका उसके लिए श्रद्धा और विस्मय कि वस्तु है। चम्पा के सानिध्य में वह निरंतर अपने नए-नए रूप अन्वेषित करता चलता है- *'वह विस्मय से अपने हृदय को टटोलने लगा। उसे एक नई वस्तु का पता चला वह थी कोमलता।'*[27] उसका व्यक्तित्व एक आदर्श पुरुष की पूर्णता को प्राप्त करती है। वह बलवान, कठोर, पराक्रमी, उधमी, प्रजापालक वत्सल, आश्रयदाता, महत्वाकांक्षी और उन्मत्त प्रेमी भी है। मणिभद्र के ठीक विपरीत बुद्धगुप्त है। मणिभद्र घृणित प्रस्ताव के कारण चम्पा के क्षोभ का कारण बनता वहीं बुद्धगुप्त चम्पा को अपने जीवन की धुरी बनाना चाहता है। उसे वस्तु समझकर बलपूर्वक गृहीत नहीं करता उसे मनुष्य का दर्जा देकर प्रेम प्रस्ताव स्वीकार करने की याचना करता है। दूसरे को सम्मान देने का उसमे बड़प्पन है। वह मणिभद्र नहीं बनना चाहता, इसलिए उसके सामने दोहरी चुनौती है-चम्पा के प्रेम के साथ-साथ विश्वास को भी जीतना। चम्पा के लिए बुद्धगुप्त का चरित्र एक गरिमामय, संवेदनशील, स्वप्नदर्शी मनुष्य के रूप में उभरता है। निर्जन चम्पा द्वीप पर आश्रय लेकर उसने अपने भीतर और बाहर को पूरी तरह से पुन:सृजित किया। वह स्वीकार करता है कि - पशुबल और धन के उपासक के मन में किसी शांत और कांत कामना कि हंसी खिलखिलाने लगी, परंतु इससे कहीं अधिक मूल्यवान है, अपनी अज्ञानता का स्वीकार कि *'फिर भी मैं न हँस सका'*[28] लेखक इसके कारणों का विश्लेषण नहीं करते बल्कि पाठक से संकेत समझने का आग्रह करते हैं। सिंधु की लहरों पर शासन करने वाला पराक्रमी वीर अपनी इकलौती पराजय पर व्यथित है कि चम्पा के विश्वास को क्यों न जीत पाया। चम्पा द्वारा उसके प्रेम प्रस्ताव के अस्वीकार के बाद अपनी कर्मण्यता और पराक्रम के बावजूद बुद्धगुप्त का चरित्र अनायास परत दर परत खुलने लगता है। वह वर्तमान के क्षण पर अपनी पूरी जिंदगी न्योछावर नहीं कर सकता वह भविष्य की ओर देखता है और पहली बार ताम्रलीप्ति का वह क्षत्रिय अपनी मातृभूमि का अभिषेक करने के लिए विकल होता है - *'स्मरण होता है वह दार्शनिकों का देश! वह महिमा की प्रतिमा! मुझे वह स्मृति नित्य आकर्षित करती है।'*[28] परंपरा से जुड़ने का यह क्षण उसे चम्पा के सम्मोहन से मुक्त भी करता है। प्रेम हृदय की निजी अनुभूति न रहकर देशप्रेम के धरातल को संस्पर्श कर लेती है। वह अपने जीवन का नियंता स्वयं बनता है। यह वही मनोभूमि है, जहाँ प्रसाद के नायक व्यक्ति न रहकर राष्ट्रप्रेम के प्रतीक बन जाते हैं।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि आकाशदीप वास्तव में अंतर्द्वंद्व प्रधान कहानी है। कहानी में चरित्र-चित्रण अत्यन्त मार्मिक है। बुद्धगुप्त केवल जलदस्यु नहीं, वह वीर, क्षमाशील, देश प्रेमी है। चम्पा का चरित्र अनोखा है। चम्पा जलदस्यु बुद्धगुप्त से प्रेम करती थी, किंतु उसे आशंका थी कि उसी ने उसके पिता की हत्या की है और यह शंका उसकी कहानी के अंत तक बनी रहती है। पिता का स्मरण आते ही उसका हृदय घृणा से भर जाता अन्यथा वह उससे प्रेम करती थी। वीरता, उत्साह, पितृ-मातृ भक्ति सहानुभूति और सौहार्द्र की मूर्ति है। आकाशदीप की ही भांति चम्पा का प्रेम निष्कलुष, एकाकी और दूर देश का वासी बना रहता है। चम्पा के प्रेम, निष्ठा, समर्पण के आलोक में बुद्धगुप्त भीतर के अंधेरे बीहड़ की दूर तक यात्रा कर आया है और उसी से प्रेम का छोटा सा दीपक लेकर भीतर का पाठ आलोकित भी कर सका है। भटके हुए को राह दिखाना बेशक जरूरी कार्य है, लेकिन व्यक्ति आकाशदीप की तरह निष्प्राण स्तम्भ नहीं होता। उसे अपने भीतर के अंधकार को भी विनष्ट करना होता है तभी अपनी ज्योतिर्मयी दृष्टि से वह वैचारिक-मानसिक जड़ता को नष्ट कर सकेगा। अन्यथा समुद्र के खारे जल में अविचल खड़ा रह कर उम्र के बीत जाने की प्रतीक्षा करेगा। अपनी विशेषताओं के कारण कहानी पाठकों का मन मोह लेती है। प्रसाद जैसे उत्कृष्ट कलाकार की कला का प्रयास भी हम इस कहानी में सहज ही पा लेते हैं। लेखक ने आकाशदीप को सेवा और त्याग के एक रूपक के रूप में महत्व दिया है। अतीत के प्रति वेदनापूर्ण मोह प्रसाद की अन्य कहानियों (पुरस्कार, ममता, अपराधी, स्वर्ग के खंडहर,बंजारा) में भी है। प्रेम के ऊपर कर्तव्य की स्थापना की बात की गई है। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. मधुरेश, हिन्दी कहानी का विकास, सुमित प्रकाशन, दिल्ली, संस्कार 2021, पृष्ठ–16
2. राजेंद्र यादव, कहानी स्वरूप और संवेदना,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्कारण 2020, पृष्ठ–29
3. सं. विनोद शंकर व्यास, सुधाकर पाण्डेय, हिन्दी कहानी गंगा–मधुकरी, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, नई दिल्ली, प्रथम संस्कारण संवत् 2053, पृष्ठ–3
4. वही – पृष्ठ – 2
5. वही – पृष्ठ – 3
6. वही – पृष्ठ – 1
7. वही – पृष्ठ – 6
8. वही – पृष्ठ – 3
9. वही – पृष्ठ – 5
10. वही – पृष्ठ – 6
11. वही – पृष्ठ – 4
12. वही – पृष्ठ – 4
13. वही – पृष्ठ – 4
14. वही – पृष्ठ – 6
15. वही – पृष्ठ – 5
16. वही – पृष्ठ – 6
17. वही – पृष्ठ – 6
18. वही – पृष्ठ – 6
19. वही – पृष्ठ – 6
20. वही – पृष्ठ – 5
21. वही – पृष्ठ – 6
22. वही – पृष्ठ – 3
23. वही – पृष्ठ – 3
24. वही – पृष्ठ – 5
25. वही – पृष्ठ – 4
26. वही – पृष्ठ – 3
27. वही – पृष्ठ – 3
28. वही – पृष्ठ – 6

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विश्लेषण

गांधीवाद को व्यावहारिक रूप देता हिंदी सिनेमा

डॉ. राजेश कुमार

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महिला
महाविद्यालय, रोहतक
9896321474
drrajeshgautam2020@gmail.com

शोध-सार :

हिंदी सिनेमा के एक सौ दस वर्ष के इतिहास में सैकड़ों ऐसी फिल्में बनी हैं, जिनमें गांधी अथवा उनकी विचारधारा किसी-न-किसी रूप में उपस्थित है, चाहे वह सत्य, अहिंसा व त्याग हो, हृदय-परिवर्तन हो, सत्याग्रह हो, ईमानदारी हो, स्वावलंबन हो या अछूतोद्धार की परिकल्पना हो। गांधी से संबंधित हिंदी फिल्मों को हम मुख्यत: तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। पहले वर्ग में वे फिल्में आती हैं, जो गांधी जी की जीवनी पर आधारित हैं, जैसे - रिचर्ड एटनबरो की 'गांधी' (1982), श्याम बेनेगल की 'मेकिंग ऑफ महात्मा', 'गांधी से महात्मा तक' (1996), कमल हसन की 'हे राम' (2000), फिरोज अब्बास खान की 'गांधी-माई फादर' (2007) आदि। इन फिल्मों में कहीं-कहीं गांधी को नकारात्मक ढंग से भी प्रस्तुत किया गया है। दूसरे वर्ग में हम उन फिल्मों को रख सकते हैं, जो गांधी जी के समकालीन किसी नेता की जीवनी पर बनाई गई है तथा उनमें प्रसंगानुसार गांधी जी का चित्रण हुआ है। इनमें 'जिन्ना'(1998), 'डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर' (2000) तथा शहीद भगत सिंह के जीवन पर आधारित अनेक फिल्में सम्मिलित हैं। तीसरे वर्ग में वे फिल्में आती हैं, जिनकी कथा-पटकथा में गांधी के विचारों एवं सिद्धांतों को व्यावहारिक रूप से घटित होते दिखाया गया है। 'अछूत कन्या' (1936), 'अछूत' (1940), 'सुजाता'(1959); 'जोगन' (1950), 'आंधियाँ'(1952), 'मदर इंडिया', 'नया दौर' व 'दो आँखें बारह हाथ' (1957), 'जिस देश में गंगा बहती है' (1960), 'सत्यकाम' (1969), गांधीगिरी (2016), 'हे राम, हमने गांधी को मार दिया' (2018), 'रोड टू संगम' (2009), और 'लगे रहो मुन्ना भाई' (2006) इस श्रेणी की प्रमुख फिल्में हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र तीसरे वर्ग की फिल्मों पर केंद्रित है।

बीज शब्द :

हिंदी सिनेमा, व्यावहारिक गांधीवाद, अस्पृश्यता, सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, हृदय परिवर्तन।

मूल आलेख :

अपने आरंभिक काल से ही हिंदी सिनेमा गांधी और गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित रहा है। वस्तुत: *''हिंदी फिल्मों को दो थीम्स ने बहुत गहरे तक प्रभावित*

किया है- पहली है राम कथा और दूसरी है गांधीजी का व्यक्तित्व और उनके सिद्धांत।''[1] गांधीवाद के सिद्धांतों को चरितार्थ करने वाली 'अछूत कन्या'(1936), 'अछूत'(1940) एवं 'सुजाता'(1959) अस्पृश्यता एवं छुआछूत की भावना का प्रबल प्रतिरोध रचने वाली फिल्में हैं। बिमल राय की 'सुजाता' में तो गांधी जी की मूर्ति और उनकी सूक्तियों का प्रेरणादायक प्रयोग हुआ है। *''नदी के घाट पर बनी उनकी मूर्ति और वहाँ लिखा सूक्त कहानी को न केवल आगे बढ़ाता है, वरन उसे अर्थवत्ता भी प्रदान करता है।''*[2] नायक का नायिका के प्रति कथन- ''आत्मनिन्दा आत्महत्या से भी बड़ा पाप है।'' प्रत्यक्ष रूप से गांधी जी का कथन है। फिल्म में नायिका बार-बार गांधी की शरण में जाती है। फिल्म 'जोगन'(1950) की नायिका अपनी इच्छा के विरुद्ध होने वाली शादी का विरोध करने के लिए ब्रह्मचर्य की राह अपनाती है तो फिल्म 'आंधियाँ'(1952) में सूदखोर महाजन के विरुद्ध पूरा गाँव सत्याग्रह पर उतर आता है।

वी. शांताराम की फिल्म 'दो आँखें बारह हाथ'(1957) प्रेम एवं सहानुभूति द्वारा हृदय-परिवर्तन के गांधीवादी विचार पर आधारित है। फिल्म में एक आदर्शवादी जेलर मुक्त कारागार के रूप में एक ऐसा अभिनव प्रयास करता है, जिसमें अपराधी को दंडित न करके स्वयं सुधरने का अवसर प्रदान किया जाए। उस जेलर का मानना है कि यदि अपराधियों के श्रम को सार्थकता में बदला जाए तो वे शिष्ट नागरिक बन सकते हैं। अपराधियों के हाथ श्रम और शक्ति का प्रतीक हैं तथा जेलर की आँखें विवेक का। विवेक के द्वारा श्रम व शक्ति को मंगलकारी बनाया जा सकता है। विश्वनाथ त्रिपाठी के अनुसार, *''इस सामाजिक उद्देश्य का मेल गांधीवादी संगति में है।''*[3] जेलर के सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार से अंततः ये सभी अपराधी न केवल अपने बुरे कर्मों पर शर्मिंदा होते हैं, वरन इतने बदल जाते हैं कि उन पर लाठियाँ बरसती है और वे प्रतिरोध तक नहीं करते, क्योंकि वे हिंसा न करने के लिए अपने 'बाबूजी' (जेलर) से वचनबद्ध हैं। अपनी प्रतिज्ञा पर अहिंसक ढंग से अडिग रहकर जुल्म सहते जाना गांधीवाद का ही एक अंग है। फिल्म का प्रार्थना गीत 'ऐ मालिक तेरे बंदे हम' गांधीवादी आदर्शों की ही प्रतिकृति है।

फिल्म 'नया दौर' (1957) सामूहिक श्रम एवं स्वावलंबन की महत्ता को दर्शाती है। औद्योगिक क्रांति के दुष्परिणामों को देखते हुए गांधीजी ने अपने देश में लघु उद्योगों को प्रोत्साहित किया एवं परंपरागत यंत्र के प्रतीक रूप में चरखा को जन-जन तक पहुँचाया। वे आधुनिक मशीनों का उपयोग मनुष्य की सहायता एवं उसके कार्य को सरल बनाने के लिए ही करने के पक्षधर थे। गांधीजी नहीं चाहते थे कि मशीनें मानव श्रम की उपेक्षा कर शक्ति को कुछ हाथों में केंद्रित कर दें। *'' 'नया दौर' में लेखक तथा निर्देशक ने आदर्शवादी दृष्टिकोण से काम लिया- ग्रामीण अपनी मेहनत के बल पर सड़क तथा पुल का निर्माण करते हैं यह हमारे लिए प्रेरणादायक है।''*[4] इसी वर्ष की फिल्म 'मदर इंडिया' में गांधी की विचारधारा बहुत ही मजबूती से उभर कर आई है। फिल्म में राधा और उसका बड़ा बेटा रामू लाला सुखीराम द्वारा किए जाने वाले शोषण का विरोध जिस अहिंसक ढंग से करते हैं, वह गांधी जी की याद दिला देता है।

सन 1960 में आई फिल्म 'जिस देश में गंगा बहती है' में आद्यांत प्रेम एवं मानवीयता की सतत धारा प्रवाहित रहती है। फिल्म का नायक राजू एक ऐसा सच्चा इंसान है, जिसमें प्यार है, दया है, त्याग है, मानवता है। वह स्वयं अभावग्रस्त होते हुए भी देना जानता है। अपने इन्हीं अद्वितीय गुणों के द्वारा वह खूंखार डाकुओं को आत्मसमर्पण के लिए विवश कर देता है। डाकुओं का सरदार उससे कहता है, *''तू पुलिस का आदमी भी है और पापियों को मुक्ति का रास्ता भी दिखाता है? कौन है रे तू, कहाँ का रहने वाला है?''*इस पर राजू कहता है, *''ताऊ जी, एक देश है दुनिया में जहाँ दाता भिखारी को भिक्षा नहीं दे पाता तो हाथ जोड़कर कहता है, मेरे को माफी दे दे भाई! जहाँ खिलाने वाला खाने वाले को बोलता है कि आपने बड़ी दया की जो मेरा चौका पवित्र किया। जहाँ पापी और हत्यारा अपने पाप से पलटता है तो रामायण जैसा ग्रंथ लिखता है और ऋषि वाल्मीकि कहलाता है। ताऊ जी! हम उस देश के वासी हैं, जिस देश में गंगा बहती है।''*[5] यह विशुद्ध गांधीवादी विचारधारा है। फिल्म में दर्शाया गया डाकुओं के आत्मसमर्पण का दृश्य सन 1961 में

साक्षात दिखाई देता है, जब चंबल के डाकू आत्मसमर्पण करते हैं। यह आत्मसमर्पण गांधीवादी विचारक विनोबा भावे और जयप्रकाश नारायण के प्रभाव से हुआ था।

नारायण सान्याल के उपन्यास पर आधारित फिल्म 'सत्यकाम' (1969) एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है, जो अपनी चौदह पीढ़ियों से चली आ रही ईमानदारी व सच्चाई की परंपरा को अत्यंत दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ाता है। उसके लिए झूठ बोलना गाली के समान है। वह अपनी सत्यनिष्ठा, ईमानदारी एवं लगन से लोगों की सेवा करना चाहता है। वह एक दृढ़प्रतिज्ञ, कोमल हृदय एवं परदु:खकातर इंसान है, जो अपने आदर्शों के कारण समकालीन स्वार्थी एवं बेईमान व्यवस्था में स्वयं को समायोजित नहीं कर पाता। ऐसे व्यक्ति का बेबसी और पराजय का भीषण बोध लिए मृत्यु के आगोश में समा जाना गांधीवादी आदर्शों पर एक बड़ा प्रश्न-चिन्ह लगा देता है। *''सत्यकाम आजाद भारत में सत्य से विचलन की महागाथा है। यह फिल्म हमें बेईमानी के आईने में अपना चेहरा पहचानने के लिए विवश करती है, जहाँ सत्य एक बेकार की चीज बन चुका है।''*[6] अनुराग कश्यप की 'ब्लैक फ्रायडे' (2004) में गांधी की उक्ति-'आँख के बदले आँख लेने की नीति पर चलें तो पूरी दुनिया अंधी हो जाएगी' कथा की पृष्ठभूमि में रहती है।

फिल्म 'गांधीगीरी' के नायक एन.आर.आई., रायबहादुर सिंह गांधी जी के सिद्धांतों में दृढ़ विश्वास रखते हैं। वे गांधीवादी सिद्धांतों के ह्रास से दुखी हैं तथा भारत में आकर गांधी जी के सिद्धांतों की पुनर्स्थापना करना चाहते हैं। भारत में वे चार अपराधियों को गांधीवादी तरीकों से सुधारने में सफल होते हैं, जिससे गांधीवादी मूल्यों की सार्थकता बनी रहती है। परंतु फिल्म एक डॉक्यूमेंट्री की भाँति नीरस एवं उबाऊ है। इसीलिए एक समीक्षक ने लिखा है कि *''मैं आपको सुझाव देता हूँ कि आप यह फिल्म न देखें तथा अपना सप्ताहांत सोकर बिता लें।''*[7]

2018 में नईम ए. सिद्दिकी ने फिल्म 'हे राम, हमने गांधी को मार दिया' बनाई। *''गांधीवादी होने का दावा करने वाले सिद्दीकी, फिल्म के रूप में एक लंबा उपदेश देते हैं, जो गांधी-दर्शन की हत्या की पड़ताल करता है।''*[8] देश-विभाजन के समय हुए दंगों के शिकार कैलाश सिंह दंगों के लिए महात्मा गांधी को उत्तरदायी मानते हैं, जबकि स्कूल शिक्षक दिवाकर त्रिपाठी की विचारधारा बिल्कुल विपरीत है। वे गांधी जी के अहिंसा और सांप्रदायिक सद्भाव में विश्वास करते हैं। फिल्म में चित्रित घटनाएँ दो अलग-अलग विचारधाराओं का प्रतिबिंब बन जाती हैं।

फिल्म 'रोड टू संगम' (2010) के नायक हसमदुल्लाह के चरित्र के माध्यम से गांधी जी के सत्याग्रह एवं प्रेम के सिद्धांतों को अत्यंत सशक्त एवं प्रभावी ढंग से स्थापित किया गया है। हसमदुल्लाह एक मोटर वर्कशॉप के मालिक हैं। उन्हें एक बहुत पुरानी फोर्ड गाड़ी के इंजन की मरम्मत का काम मिलता है। इसी गाड़ी में रखकर गांधीजी की अस्थियों का विसर्जन संगम में किया जाना है। हसमदुल्लाह

को इस गाड़ी के जंग खाए इंजन को ठीक करना है। इससे पहले कि वे यह कर पाते, मुस्लिम कमेटी ने शहर बंद का फरमान जारी कर दिया। हसमदुल्लाह स्वयं इस कमिटी के जनरल सेक्रेटरी हैं। वे कमिटी के पदाधिकारियों से दुकान खोलने की अनुमति माँगते हैं ताकि अपना काम कर सकें, परंतु उन्हें अनुमति नहीं मिलती। फिर भी वे इंजन को ठीक करने के लिए दुकान खोलते हैं। कमिटी के लोग उन्हें रोकते हैं। बाजार के सदर इनायत भाई उनसे चाबी छीन लेते हैं। गांधी के सिद्धांतों की व्यावहारिकता यहीं घटित होती है। बार-बार माँगने पर भी जब इनायत चाबी नहीं देता, तब हसमदुल्लाह कहते हैं, *''इनायत भाई! याद रखिएगा, यह ताला टूटेगा नहीं और ना ही दूसरी चाबी बनेगी। हम यहीं बैठे हैं, चौखट पर और यहाँ से हिलेंगे नहीं। जब तक आप खुद यह चाबी हमें नहीं देंगे, तब तक यह दुकान हम नहीं खोलेंगे; फिर चाहे आप वह आज दें, कल दें, या एक साल बाद, देंगे आप ही।''*[9] और अंततः इनायत को चाबी देनी पड़ती है। हसमदुल्लाह गांधीजी के प्रेम-सिद्धांत में विश्वास रखने वाले एक सच्चे भारतीय मुसलमान हैं और यही प्रेम इलाहाबाद के प्रत्येक नागरिक को गांधी जी के अस्थि-कलश की गाड़ी के साथ संगम तक ले जाता है।

गांधी की विचारधारा का सर्वाधिक सशक्त एवं व्यावहारिक प्रकटीकरण जिस फिल्म में हुआ है वह है- राजकुमार हिरानी की 'लगे रहो मुन्ना भाई' (2006)। इस फिल्म ने एक नई संकल्पना दी - गांधीगिरी। 'मुन्ना भाई एमबीबीएस' में जो गांधीगिरी 'एक प्यार की झप्पी' तक सीमित थी, वह यहाँ एक अत्यंत व्यापक आधार ग्रहण कर लेती है। यह सुखद आश्चर्य ही है कि लोगों ने इस फिल्म की तर्ज पर गांधीगिरी के प्रयोग कर डाले। आम आदमी से लेकर सांसदों तक ने गांधीगिरी को एक अस्त्र के रूप में इस्तेमाल किया। मुन्ना भाई की गांधीगिरी ने इतिहास बन चुके गांधी को पुनर्जीवित कर दिया। *''वह गांधीगिरी जो गंभीर दार्शनिक बातें नहीं करती, सीधे-सादे रास्ते तैयार करती है, जिन पर चाहे तो कोई भी चल सकता है, सिर्फ अपने अहंकार से मुक्ति पानी होगी। फिल्म का नायक मुन्ना भाई गांधी के बारे में चार अक्षर पढ़कर विद्वान नहीं बन गया। बस उसने गहरी मोहब्बत में डूब कर गांधी के आदर्शों की मूल बातें समझ ली हैं।''*[10] स्पष्ट है कि 'कहना गांधीवाद है करना गांधीगिरी'।

मुन्ना भाई दादागिरी, गुंडागिरी, भाईगिरी सब कुछ करता है। वह रेडियो जॉकी जाह्नवी से प्यार करता है तथा जाह्नवी द्वारा गांधी जी पर किए जाने वाले क्विज को जीतकर उससे मिलना चाहता है। वह प्रोफेसर मुरली प्रसाद शर्मा बनकर अनुचित ढंग से क्विज जीत लेता है। जाह्नवी कुछ वृद्ध व्यक्तियों के साथ 'सेकंड इनिंग्स हाउस' नामक बंगले में रहती है। मुन्ना को इन व्यक्तियों के आगे गांधी जी पर प्रवचन देना है। गांधी के बारे में जानने के लिए मुन्ना को लाइब्रेरी जाना पड़ता है। लाइब्रेरी में उसके साथ गांधीजी की चेतना का एकाकार होता है। उसे गांधी प्रकट दिखाई देते हैं और कहते हैं कि जब भी उसे उनकी जरूरत हो, उन्हें याद कर ले, वे आ जाएँगे। बस फिर तो मुन्ना हर काम गांधीजी की सलाह पर करता है और बाकायदा गांधीवाद का विशेषज्ञ-प्रोफेसर मुरली प्रसाद शर्मा बन जाता है ।

मुन्ना भाई लक्की सिंह के लिए बिल्डिंगें खाली कराता है। लक्की सिंह को अपने समधी के लिए सेकेंड इनिंग्स हाउस की जरूरत है। लक्की सिंह मुन्ना भाई को झांसा देकर मुन्ना के दाएँ हाथ सर्किट के जरिए उसे खाली करा लेता है। जब मुन्ना को पता चलता है तो वह सर्किट पर हाथ उठा देता है। गांधी मुन्ना को सर्किट से माफी माँगने के लिए कहते हैं। मुन्ना जैसे 'भाई' के लिए गलती का एहसास करके किसी से माफी माँगना बहुत ही कठिन काम है। यही गांधीगिरी की पहली मंजिल है, जिसे वह पा जाता है। सर्किट को सॉरी बोल कर मुन्ना बहुत हल्का हो जाता है।

मुन्ना भाई गांधी जी के कहने पर जाह्नवी और वृद्ध व्यक्तियों के साथ लक्की सिंह के बंगले के सामने सत्याग्रह कर देता है। वह लक्की सिंह को 'गेट वेल सून' के संदेश के साथ फूल भिजवाता है। लक्की सिंह का गार्ड मुन्ना के गाल पर एक धमाकेदार थप्पड़ मार देता है। इस पर सर्किट आवेश में आता है, परंतु मुन्ना कहता है, *''नहीं, बापू बोला*

अगर दुश्मन बाएँ गाल पर मारेगा ना तो दायाँ गाल आगे करने का।''[11] पर बापू ने यह तो नहीं बोला कि जब दाएँ गाल पर भी थप्पड़ पड़ जाए तो क्या करने का। सो दूसरे गाल पर थप्पड़ पड़ते ही मुन्नाभाई अपने एक ही पंच से गार्ड को चित कर देता है। उसी समय गांधी प्रकट होते हैं और कहते हैं, *''मुन्ना, उन्हें वार करने दो, लेकिन तुम हाथ मत उठाना। ऐसा करने से दुश्मन के स्वभाव में परिवर्तन आता है। उसकी नफरत घटती है और हमारे लिए इज्जत बढ़ती है। लक्की को दिखा दो हम पलट कर नहीं मारेंगे, ना ही अपनी राह छोड़ेंगे। चलो मुन्ना, माफी माँगो।''*[12] और मुन्ना गार्ड से माफी माँगता है।

मुन्ना भाई रेडियो जॉकी बनकर लोगों को गांधीगिरी सिखाता है और उनकी समस्याओं के समाधान बताता है। मुन्ना की सलाह पर गांधीगिरी के व्यवहार से एक नवयुवक आत्महत्या से बच जाता है, एक लड़की अपने वर के व्यक्तित्व की सही पहचान कर लेती है और एक रिटायर्ड स्कूल मास्टर की रुकी हुई पेंशन झट से मंजूर हो जाती है। यही गांधीगिरी उस बदतमीज व्यक्ति को शर्मिंदा होने पर मजबूर कर देती है, जो रोज पान की पीक अपने पड़ोसी के दरवाजे पर थूकता था। ये सब घटनाएँ गांधीगिरी की अचूक सफलता का प्रमाण हैं। अंत में मुन्ना भाई की गांधीगिरी लक्की सिंह के मामले में भी सफल होती है और लक्की सिंह स्वयं उसे सेकंड इनिंग्स हाउस की चाबी सौंप देता है। इस प्रकार यह फिल्म गांधी के मूल्यों की व्यावहारिक प्रतिष्ठा करती है। फिल्म गांधी के सिद्धांतों को ऊपर से नहीं लादती, वरन उन्हें मुन्नाभाई जैसे चरित्र के साथ एकाकार करके वास्तविकता के धरातल पर उतार देती है। यह एकमात्र ऐसी फिल्म है, जिसमें गांधीजी स्वयं उपस्थित होकर अपने विचारों एवं सिद्धांतों को व्यावहारिक रूप देने की युक्ति बताते हैं।

निष्कर्ष :

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि गांधीवाद का प्रभाव न केवल भारतीय समाज, साहित्य एवं राजनीति पर पड़ा, वरन हिंदी सिनेमा भी इससे बहुत अधिक प्रभावित हुआ है। हिंदी सिनेमा ने गांधीवाद के सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक दोनों पक्षों का चित्रण अपने कथानक ने किया है। गांधी वी के सिद्धांतों को व्यावहारिक रूप में दर्शाने वाली फिल्में अत्यंत सफल रही हैं। यह गांधीवाद में लोगों की आस्था का द्योतक है। ❑

संदर्भ सूची :

1. 'सिनेमा के मूल में हैं गांधी के आदर्श', लेखक–अनंत विजय, दैनिक जागरण–सप्तरंग, हिसार संस्करण, 2 अक्टूबर 2020
2. सिनेमा में गांधी www. amarujala.com
3. 'दो आँखें बारह हाथ : बाजारवाद का कलात्मक प्रतिरोध' संक. हिंदी सिनेमा–बीसवीं से इक्कीसवीं सदी तक, संपा. प्रह्लाद अग्रवाल, प्र. साहित्य भंडार, इलाहाबाद, सं. 2013, पृ.सं.152.
4. उपर्युक्त, पृ.सं.178
5. फिल्म – 'जिस देश में गंगा बहती है' (1960), निर्देशक–राधू करमाकर, संवाद लेखक–अर्जुन देव रश्क
6. हिंदी सिनेमा–बीसवीं से इक्कीसवीं सदी तक, पृ.स. 307
7. Movie reviews of Gandhigiri, bollypedia.in, translated by me.
8. ' Hamne Gandhi Ko Maar Diya': An ode to Mahatma Gandhi, businessstandard.com, March, 2018, translated by me.
9. फिल्म – 'रोड टू संगम'(2009), निदेशक एवं लेखक – अमित राय
10. जुग जुग जिए मुन्नाभाई – छवियों का मायाजाल, ले. प्रहलाद अग्रवाल, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, प्र. सं. 2011, पृष्ठ संख्या 173
11. फिल्म – लगे रहो मुन्नाभाई (2006), निर्देशक–राजकुमार हिरानी, संवाद लेखक–राजकुमार हिरानी, अभिजीत जोशी
12. उपर्युक्त

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विवेचन

अति सूधो सनेह को मारग है...

डॉ. शगुन अग्रवाल

एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय
दिल्ली-110096
9911409460
shagagar945@gmail.com

प्रेम की सहजता, सरलता तथा अजन्यता को रेखांकित करने वाली यह पंक्ति रीतिकालीन रीतिमुक्त कवि घनानंद की है, जिन्होंने अपने काव्य में युगीन प्रवृत्ति के प्रभाववश श्रृंगार को कथ्य के रूप में स्वीकार अवश्य किया, किंतु अपने स्वच्छंद व्यक्तित्व तथा निजी विशेषताओं के चलते उन्होंने भाव और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से रीति के बाह्य बंधनों को न केवल अस्वीकार किया, वरन उनका विरोध भी किया। प्रेम के सीधे मार्ग पर चलते हुए 'मन देकर छटांक' की आशा करने वाले इस धीर पथिक की कविता को वही समझ सकता है, जो हृदय की आँखों से प्रेम की पीड़ा को देखने में समर्थ हो-

''जग की कविताई के धोखे रहैं ह्याँ प्रबीनन की मति जाति जकी।
समुझै कविता घनानंद की हिय आँखिन नेह की पीर तकी।''[1]

इसमें दो राय नहीं कि घनानंद की कविता 'जग की कविता' अर्थात अन्य लोगों की कविता (रीतिबद्ध कवियों) से भिन्न है और इस अलगाव का मूलाधार है स्वानुभूति की प्रधानता, लेकिन यह भी सच है कि रीतिकालीन रीतिबद्ध कवियों के काव्य में भी अनन्य प्रेम तथा संवेदनात्मक रूप-चित्रण के सहज स्वच्छंद, उन्मुक्त उदाहरण बहुतायत में उपलब्ध हैं। आचार्य शुक्ल ने ठीक ही लिखा है, *''इन रीतिग्रंथों के कर्ता भावुक, सहृदय और निपुण कवि थे.... उनके द्वारा बड़ा भारी कार्य यह हुआ कि रसों (विशेषत: श्रृंगार रस) और अलंकारों के बहुत ही सरस और हृदयग्राही उदाहरण अत्यंत प्रचुर परिमाण में प्रस्तुत हुए।''*[2]

रीतिकवियों पर प्राय: यह आरोप लगाया जाता है कि उनके काव्य में मात्र भोगेच्छा जनित, कामुकता प्रधान श्रृंगार का चित्रण मिलता है तथा किसी भी प्रकार की निजी विशिष्टताओं से रहित ये कवि लकीर के फकीर रहे हैं। साहित्य अकादमी से प्रकाशित भारतीय साहित्य के निर्माता सीरीज के अंतर्गत 'घनानंद' शीर्षक पुस्तक में लल्लन राय लिखते हैं, *''चिंतामणि, देव, मतिराम, पद्माकर आदि अधिकांश रीतिबद्ध कवियों में पूर्ववर्ती काव्यशास्त्रीय परिपाटी का अंधानुकरण करने के कारण प्राय: एकरसता दिखाई देती है।''*[3]

रीतिकवियों द्वारा अपनी स्वच्छंद रागात्मक वृत्तियों की अभिव्यक्ति हेतु लक्षण-निरूपण का माध्यम अपनाने के कारण यह धारणा अंशत: ही सही मानी जा सकती

है। प्रेमी युगल के मानसिक तादात्म्य की अनेक सहज, सरल तथा भाव-प्रवण झाँकियाँ रीतिकाव्य में मिलती हैं, जो प्रेम की इस कसौटी पर पूर्णत: खरी उतरती हैं कि - *''प्रिय के दर्शन, स्पर्श, श्रवण, भाषण आदि से (प्रेमी के) अंत:करण का द्रवित हो जाना ही प्रेम है।''*[4]

हर प्रकार की शास्त्रीय प्रतिबद्धता से दूर भावों के सहज-स्फीत प्रवाह की दृष्टि से रीति कवियों के काव्य से कुछ अंश दृष्टव्य हैं, जहाँ उनकी चमत्कारिक एवं अलंकारिक प्रवृत्तियाँ पूर्णत: दब गई हैं। इन कवियों की सौंदर्य दृष्टि एकपक्षीय नहीं है। स्त्री-पुरुष दोनों की आकर्षक छवि इनकी रागात्मक चेतना को उद्वेलित करती है। नैसर्गिक सौंदर्य अनिवर्चनीय है और नायक-नायिका एक-दूसरे की रूप-छवि देख-देख अघाते नहीं-

''शरद जुन्हाई में कन्हाई आए औचक ही
आनन्द मंगल अंग अंग न समात है।
पिय को बदन पिया, पिया को बदन पिय,
चाहि-चाहि ललचाहि क्यों हूं न अघात है।''[5]

भोलापन सहज सौंदर्य की विशिष्टता है। आचार्य भिखारीदास के अनुसार ऐसे विलक्षण सौंदर्य को संसार की कुदृष्टि से बचाना जरूरी है, इसीलिए वे लिखते हैं-

''भई अनखौही अवलोकत अली को फेरि
अंगन संवारती डिठौना दे निहारती।
गात की गोराई पर सहज भोराई पर
सारी सुंदराई पर राई लोन वारती॥''[6]

गौर वर्ण, आँखों में आलस्य, दृष्टि में शरारत और मीठी मुस्कान वाली नायिका का सौंदर्य ऐसा है कि मतिराम उसे जितना निकट से देखते हैं, वह उतना ही निखरता जाता है-

''कुंदन कौ रंग फीको लगै झलकै अति अंगनी चारू गुराई।

ज्यों-ज्यों निहारिये नेरे हवै नैननि त्यो त्यों खरी निकरे-सी निकाई।।''[7]

यह रीति कवियों की रागात्मक चेतना ही है, जो प्रिया के रूप की मधुरता भी उन्हें नमकीन प्रतीत होती है-

''वा मुख की मधुराई कहा कहौं, मीठी लगै यान लुनाई''[8]

''कितौ मिठास दयौ, दई इतै सलौने रूप।'' [9]

रीति कवियों द्वारा चित्रित ऐसे तमाम उदाहरण हैं, जहाँ सौंदर्यानुभूति का धरातल पूर्णत: मानसिक है। शारीरिक निकटता का विकल्प होते हुए भी इन कवियों का मन सौंदर्य के प्रभाव की व्यंजना में ही अधिक रमा है। वस्तुत: सौंदर्य *''हमारी आंतरिक इंद्रियानुभूतियों का प्रतिबिंब''*[10] होने के कारण प्रेम का मुख्य उपकरण है। रीति कवियों के सौंदर्य चित्रण की यह बारीकी और प्रभावान्विति अनायास ही रीतिमुक्त कवि घनानंद का स्मरण करा देती है-

''रावरे रूप की रीति अनूप, नयो नयो लागै ज्यों-ज्यों निहारियै।''[11]

प्रिय के इस विलक्षण सौंदर्य के प्रति अछोर ललक ही उनके एकनिष्ठ, साहसी प्रेम का आधार है। इस आसक्ति में न कहीं गार्हस्थ्य जीवन की अपेक्षा है न किसी प्रकार के शारीरिक संपर्क की अभिलाषा। इस सीधे सच्चे प्रेम में केवल प्रिय को दृष्टि के माध्यम से हृदय में उतार लेने की साध है-

''भोर ते साँझ लो कानन ओर निहारति बावरी नेकु न हारति।

साँझ ते भोर लौं तारन ताकिबौ तारनि सौं इकतार न टारति।''[12]

प्रेम मूलत: एक सात्विक वृत्ति है। आंतरिक, अनन्य प्रेम-भावना ही मनुष्य को मनुष्य बनाती है और यही मनष्य और पशु के बीच की विभाजक रेखा है। रीति कवियों का तो सर्वसाध्य ही प्रेम है। प्रियतम को अपने अनुकूल बनाए रखने हेतु प्रेमी को अपना हृदय प्रेम की तरलता से स्निग्ध रखना होगा और काम, क्रोध, लोभादि की रजोगुणी धूल से उसे सुरक्षित रखना होगा-

''जो चाहत चटक ना घटै,
मैलौ होय न मित्त
रज राजस न छुवाइए,
नेह चीकने चित्त।''[13]

प्रेम जितना सरल और प्रेम-मार्ग जितना सीधा होता है, प्रेम-पाश उतना ही विकट होता है। इस रास्ते पर जो बढ़

जाता है फिर उसे कुछ भी भाता नहीं–

''घर न सुहात न सुहात बन बाहिरहू
बाग न सुहात जे, खुस्याल खुशबोही सों।
रातहू सुहात न सुहात परभात आली
जब मन लागि जात काहु निरमोही सों।''[14]

प्रेमी हृदय की रूप-पिपासा की तुष्टि का एकमात्र माध्यम है आँखें। *प्रिय की रूप माधुरी की प्यासी आँखें प्रेमी को कहीं का नहीं छोड़तीं। घड़ी, पल, छिन ये नेत्र युगल प्रिय मुख की आरती उतारना चाहते हैं।*[15]

रीति कवियों की यह घोर आसक्ति, तन्मयता और भावना मूलकता उनके भाव-भीने हृदय की अमूल्य निधि है। *प्रेम में बौराई नायिका घर-द्वार, लाज-शर्म सब बिसार बैठी है, ले देकर प्राण बचे हैं, वो भी देह छोड़ना ही चाहते हैं।*[16]

प्रेम की उदासीनता को समझते हुए भी ऐसी एकनिष्ठता, प्रिय को भला-बुरा न कहकर निरंतर उसकी मंगल कामना करना, प्रेम को साधन नहीं साध्य मानना – *ये विशेषताएँ रीति कवियों के प्रेम को गुरु गंभीर शील प्रदान करती हैं और अनायास ही रीतिमुक्त कवियों की नायिका का स्मरण करा देती हैं, जो प्रेम की राह पर मिलने वाली हर वेदना को अपना भाग्य मान स्वीकार करती है और प्रिय का मंगल ही चाहती है।*[17]

उपयुक्त समग्र विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि रीति कवि मूलत: मानव-मानस के कवि हैं। प्रेम के संयोग तथा वियोग दोनों ही पक्षों के चित्रण में उन्होंने अपनी गहन सूझबूझ का परिचय दिया है। हृदय के अंतर्द्वंद्व को उन्होंने बड़ी बारीकी से पकड़ा और अभिव्यक्त किया है। उनके प्रेम भाव पूरित असंख्य पद इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि उन्होंने न केवल आंतरिक अनुभूतियों की सहज, अकृत्रिम अभिव्यक्ति की है, अपितु आवश्यकता पड़ने पर सामाजिक मर्यादाओं तथा परंपरागत रूढ़ियों की अवहेलना भी की है। सच तो यह है कि न तो प्रेम के मार्ग में किसी प्रकार के टेढ़ेपन की गुंजाइश है न इस मार्ग पर चलने वालों के हृदय में। ❑

संदर्भ सूची :

1. घनानंद कवित्त, पृष्ठ 41/3.
2. हिं.सा.का इतिहास, आ. शुक्ल, पृ.सं 131
3. घनानन्द, लल्लन राय, पृष्ठ सं. 30
4. रीतिकालीन कवियों की प्रेमव्यंजना, डॉ. बच्चन सिंह, पृ.सं 104
5. कुलपति, रसरहस्य – 3, 41
6. रससारांश, भिखारीदास, पृ.सं. 52
7. रसराज, मतिराम, पृ.सं 6
8. रसराज, मतिराम, पृ.सं 310
9. बिहारी रत्नाकर, बिहारी, दो.सं 473
10. रीतिकालीन कवियों की प्रेम-व्यंजना, डॉ.बच्चन सिंह पृ.सं 97
11. घनानंद ग्रंथावली, पृ.सं 15, 61
12. घनानंद ग्रंथावली, पृ.सं 211, 85
13. बिहारी रत्नाकर, दोहा 396
14. जगद्विनोद, पद्माकर, पृ. सं 661
15. 'घरी-घरी पल-पल' जगद्विनोद, पद्माकर, पृ.सं 654
16. 'लाज छुटी गेहौ छुट्यो....' मतिराम सतसई, दोहा 81
17. घनानंद कवित्त, 68

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

लोकरंग

मणिपुरी समाज के परिप्रेक्ष्य में लोक गीत

डॉ. जमुना सुखाम

अध्यापिका, हिंदी
नीलपद्मा उच्च माध्यमिक विद्यालय
शांतिपुर, इंफाल वेस्ट, मणिपुर-795136
9774675045
jsukham@gmail.com

समाज व्यक्तियों के समूह का नाम है। इसमें व्यक्तियों व सामाजिक संबंधों की व्यवस्था समाविष्ट है। व्यक्ति की वैयक्तिक गुण, धन, शिक्षा, पेशा आदि के आधार पर सामाजिक व्यवस्था एवं इसकी गति का निर्धारण होता है।

इस आलेख में पूर्वोत्तर क्षेत्र 'मणिपुर' की संस्कृति, भाषा और उसके मोहक रूपी अनुभूतियों वाले लोक गीतों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। पूर्वोत्तर भारत के आठों राज्यों में सैंकड़ों जनतातियाँ रहती हैं। सबकी भाषा, संस्कृति, रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज अलग-अलग हैं। सही मायने में पूर्वोत्तर भारत लोक साहित्य की खान है। हर एक पेड़, पहाड़, नदी, पत्थर, जंगल, रास्ते के साथ उनकी कथा-कहानियाँ, किंवदंतियों की सांस्कृतिक विरासत जुड़ी हुई है।

'राल्फ वी. विलियम्स' ने लोक गीत के बारे में कहा है- *''लोक गीत न पुराना होता है न नया। वह तो जंगल के एक वृक्ष जैसा है, जिसकी जड़ें तो दूर जमीन में धँसी हुई हैं, परंतु जिनमें निरंतर नई-नई डालियाँ, पल्लव और फल लगते हैं।''*[1]

भारत की विभिन्न भाषाओं की शृंखला में पूर्वी सीमा पर स्थित मणिपुर राज्य की भाषा है 'मणिपुरी'। यह भाषा मणिपुर की अधिकाधिक बोली जाने वाली भाषा है। मणिपुरी भाषा के अलावा यहाँ अन्य कई भाषाएँ भी बोली जाती हैं, जिनमें हिंदी, नेपाली, बंगाली, बिहारी, असमिया, नागामिज तथा जनजातीय भाषाएँ प्रमुख हैं। इन सीमावर्ती भाषाओं का गहरा प्रभाव मणिपुर की मूल प्रकृति में भी देखा जा सकता है। यहाँ की संस्कृति समृद्ध और प्रबुद्ध रही है। प्रकृति के सुरम्य अँचल में बसा हुआ यह क्षेत्र संस्कारों एवं परंपराओं से भी अछूता नहीं है। यहाँ के त्योहारों, पर्वों, वैवाहिक अवसरों और जन्म से मृत्यु तक गाए जाने वाले लोक गीतों में प्रकृति का गहरा दृश्य देखने को मिलता है।

लोक गीत को मणिपुरी में 'खुनुं इसै' कहा जाता है। मणिपुरी लोग ईश्वर पर बहुत विश्वास करते हैं। इन लोगों के गाने-बजाने, पर्व-त्योहार व ईश्वर भक्ति संबंधी पूजा-पाठ आदि में राजा-महाराजाओं की प्रशंसा, देश के विकास, सुख-शांति तथा और कई अन्य प्रसंग जुड़े हुए हैं। यहाँ के सांस्कृतिक परिवेश को देखकर कह सकते हैं कि यहाँ कई जातियाँ-जनजातियाँ अपने-अपने खान-पान, रहन-

सहन, वेश-भूषा, जीवन शैली को अपनाकर जीवन यापन करती हैं। यहाँ मैतेई जनजातियों के अलावा अन्य कई जनजातियाँ भी निवास करती हैं। जैसे- आईमोल, अनाल, अंगामी, चीरू, चोथे, गांते, मार, कबुई, काचा नागा, नागा, काईराव, कोईरेंग, कोम, लमगांड., माओ-मराम, मरिङ, लुसाई, मोनशाङ, मोयोन, पाईते, पुरूम, राल्टे, सेमा, सिमते, सकते, ताङखुल, थादौ, वाईफै, जौ आदि।

मैतेई या या मणिपुरी जाति के लिए लोक गीत मूलतः कई भागों में विभक्त किया जा सकता है। जैसे-

1. Ritualistic अर्थात लाई हराओबा या धर्म से संबंधित गीत।

2. Emotional अर्थात प्रेम-प्रसंग संबंधी गीत।

3. Seasonal अर्थात गाँव या अँचलों में गाए जाने वाले लोक गीत, जो ऋतुओं के अनुसार गाए जाते हैं, जिसके अंतर्गत व्रत, श्रमगीत शामिल हैं। इसके अलावा पहाड़ी क्षेत्रों से संबंधित लोक गीत, कथा संदर्भित लोक गीत तथा बालगीत आदि भी शामिल हैं।

1. Ritualistic अर्थात लाई हराओबा या धर्म से संबंधित गीत :

मणिपुर में बहुत सारे ऐसे धार्मिक स्थान हैं, जहाँ का पानी, स्थान-विशेष तथा क्षेत्र कई आस्थाओं से जुड़ा हुआ है। जल पवित्रता और धर्म स्थान के संदर्भ में कहा जा सकता है- *''कौब्रू पहाड़ के नीचे का पानी शुद्ध और पवित्र मानते हैं। जिस प्रकार प्रयाग के संगम या हरिद्वार ऋषिकेश के गंगा जल को पवित्र मानते हैं, उसी तरह का महत्व वहाँ के लोगों का उस जगह के पानी पर है। 'कौब्रू' का पानी शुद्ध और मीठा है, क्योंकि वहाँ से कई नदियों की धारा की शुरुआत होती है, वहाँ पानी साफ होता है। और भी ऐसे बहुत सारे स्थल हैं, जहाँ वहाँ के लोग धार्मिक आस्था के साथ जाते हैं। इनके कुछ नाम इस प्रकार हैं- कौब्रू लैखा, सेरौ, पुरूक सौबी -एक जगह जहाँ पर गुनगुना पानी बुलबुलों के साथ निकलता रहता है। वहाँ के लोगों की मान्यता है कि उस जगह के पानी में डुबकी लगाने से शरीर का कोई भी रोग दूर हो जाता है।''*[2]

धर्म से संबंधित लोक गीतों में देवी-देवताओं के पूजा-पाठ आदि शमिल हैं। मणिपुर में 'कौब्रू' हराओबा अर्थात इस पूजा को खास महत्व दिया जाता है। पूरे राज्य में सर्वप्रथम इसकी पूजा की जाती है। *माना जाता है कि 'कौब्रू' पूजा से पहले किसी देवी-देवता की पूजा नहीं की जा सकती, ऐसा करना अशुभ माना जाता है।*[3]

जिस प्रकार उत्तराखंड में सर्वप्रथम ईश्वर वंदना इस प्रकार की जाता है-

''यूं को राज राखी देवता,
यूं को माथा भाग दे देवता।
यूं को बेटा बेटी राजी रखी देवता।
यूं का कुल की जोत जगे देवता।''[4]

मणिपुर में सेकमाई हराओबा में इस प्रकार ईश्वर वंदना की जाती है-

'हा लम्पू हनबा लाईयिङथौओ
लाईज ईरोन्नूङदगी कारकलो ने।
शरिकना चोमजाओ खिङलमखो
लैशङगी खयोम लाकनदि कारगेदे।
कौब्रू की मचा अहलओ
लाईज ईरोनूङदगी कारक ओ दे
शरिकना चोमचाओ खिङलम्मो।...... ।।[5]

इसमें कौब्रू देवता को जल की गहराई से निकल कर अर्थात उभर कर आने का निवेदन किया गया है, क्योंकि कौब्रू देवता नदी के भीतर अर्थात पर्वत की चोटी पर निवास किया हुआ माने जाते हैं।

कंलै हराओबा :

ईश्वर वंदना तथा ईश्वर की संतुष्टि हेतु जो नृत्य व गीत किए जाते हैं, उसे मणिपुरी में 'लाई हराओबा' कहा जाता है। कंलै हराओबा में ईश्वर की वंदना इस प्रकार की जाती है-

''हौ-हो-होई-हा-हा-हा
हेरिलो हेरिलो,
हायूते खूलोईते हे हयाहे।
सिबु थोईना हराओबा लैबरा लैबने।
शे शे नसे शया नसे दा।
नोङथौरेनगी शगोलने ममैदा गे गे लाओबने
अङौबा आः शगोन नबरा।
तूम्बी तूम्बी नातूम्बी शिङजू शुरम्मू।
नङगी शिङजू याईनम्बी कनाना चाबिगनी।''[6]

इसमें राजा के आगमन का संकेत है।

ककचीङ हराओबा :

लाईनिङथौ जो देवों के देव हैं, उन्हें फूल-फूल आदि अर्जित कर उनकी पूजा इस प्रकार की जाती है-

''लाईजा ईखै निङथौबा कोन्दे
नाकथङ माईबना लाईनिङथौ दे।
लूपा कोनथा याईथारे,
शना कोनजन याईचल्ले, लाईनिङथौ दे।
लाईज ईरोन नूङदबू
लैराङ खयोम ताकलक्ले, लाईनिङथौ दे।''[7]

चकपा फैयेङ हराओबा :

ईश्वर वन्दना और पूजा के आरंभ के पहले देवता को आवाज देकर जैसे उन्हें मंदिर तक के रास्ते ले जा रहे हो-

हा याईनिङथौ ईशापी/नोङयाई चिङखोङ लालहा
रूपो हे शामू खूतनिङथौदूना/हा हा लमहौरेदे।
हा लाईरेम्मा ईखैरेन नामूङबी/
मालेम षना लैमरोनदगी/कारकओदे।[8]

अन्द्रो हराओबा :

अन्द्रो हराओबा अर्थात अन्द्रो क्षेत्र के पूजा-पाठ में देवी-देवताओं के गुणगान के बाद श्रम या कृषि संबंधी गीत गाते हुए नृत्य का प्रदर्शन करते हैं-

''हङपियो ऐ शङलेन लाईगी लाईनिदा/हत्तेङ चादि खाबमना
हन्जोक चादि लाईफना/लाईनिङथौ खोङबू शूबदि
खुनजाओनबा शूबनि/खूनहोङनबा शूबनि
लैपाक मरा तानबा/निङथौ मफम चेतनबा
लाईनिङथौ खोङबू शूबनी/है है है।''[9]

2. प्रेम प्रसंग संबंधी लोक गीत :

लोक गीतों में सौंदर्य एवं प्रेम की अनुभूति के साथ-साथ भावों के अनुभूति का भी सहज चित्रण किया गया है। मणिपुरी लोक गीतों में प्रेम प्रसंग संबंधी गीत भी देखने को

मिलते हैं। इसके अंतर्गत हैं–

(क) खुल्लङ ईशै।
(ख) मीतै पाङलशिङगी अर्थात मैतेई मुसलमानों के गीत।
(ग) खेत या श्रम गीत।
(घ) बाल गीत आदि।[10]

(क) खुल्लङ ईशै:

मणिपुर में प्रचलित लोक गीतों में प्रेम प्रसंगों से संबंधित लोक गीत अतुलनीय हैं। इसमें दिल की शिकायतें, संदेश, सवाल–जवाब आदि शामिल हैं, जो प्रसंगवश अपने परिवेश का प्रयोग किया गया है।

'खुल्लङ ईशै' मणिपुर का ऐसा लोक गीत है, जो एक–दूसरे के आमने सामने जवाबदेही के रूप में गाया जाता है। इसकी शुरुआत लैशेमलोन के अंतर्गत लुप्त हुए नोङथाङ लैमा और हराबा दोनों के प्रथम मिलन और प्रेम संवाद से मानी जाती है। इसको 'पाओशा ईशै' भी कहते हैं–

''हराबा– अतिङ तरङ मथकता/ङान्ना शान्ना लैरिबी
पायमा ऐगी नुङशिबी/तिल्लाङ ऐना खोयदाबी
पेम्मा नङबू कनानो ?

नोङथाङलैमा– हे नहाबा अपिखक
लैकू मरूम खोयचोप्पा
लैराई मरूम खोयहाईबा/
लैतुम हुना पाओशाबा
ईपल पूल्लाङ कायरेदो/
पूल्लाङ लूरोई कायबबू/
शिंबीरोयबू हायबरा ?''[11]

जिस प्रकार कंलै हराओबा, ककचिंङ हराओबा में देवी–देवताओं के प्रेम प्रसंग संबंधित गीत गाए जाते हैं, उसी प्रकार मानव जीवन के बीच भी प्रेम प्रासंगिक लोक गीत प्रचलित हैं। इस प्रकार के गीतों में गायन पूर्व तैयारी नहीं की जाती, बल्कि स्वत: तत्काल निर्मित हो जाता है। जैसे–

''पुरुष–
हा शिङेल लैरङ चनूरा सकहेन्बी
लैरङ नखोईबू उरूबदा/चिङजाओ खोईमू ऐहाक्की
पायमा पीगूक हूरबी/हायनिङबा वादि फैयूम शा
लेमलै ङारू पनगुम्मी/करम्बा कोरौ नूमित्ता
हायनिङबा वाशि फोंदोकचबा ङमगदगे ईनेमचा।

स्त्री–
हा खोईमू अथोईबा/पाखङगी नपाव ताबदा
नूजा ओईबी ऐहाकसू/पाईमा पीबूक हुजैदा।''[12]

(ख) मीतै पाङलशिङगी अर्थात मैतेई मुसलमानों के गीत :

मणिपुरी मुसलमानों का गीत मर्दों से पहले औरतों ने गाया है। इन मुसलमानों के गीतों पर मैतेई जाति का प्रभाव भी अवश्य पड़ा है। जैसे–

''हे: है, हे हाई/मलेमनिदि अङाङबा/मालेम माना ङाल्लिडै
केगेदा खुल्लङ मचाशिङ/हारैना ङमथुङ ताल्लसि
हा: हे, है हाई,/हे: है, है हाई।''[13]

(ग) खेत व श्रम से जुड़ी लोक गीत :

मानवता का श्रम के साथ एक अटूट संबंध है। खेती के कार्यों के साथ–साथ किसानों की थकावट, मन बहलाव सुख के लिए कई गीत भी गाए जाते हैं। सही समय पर बारिश न होने से तथा अकाल के डर से किसानों द्वारा खेतों में बारिश हेतु गीत गाए जाते थे, देवी–देवताओं की पूजा की जाती थी। इससे संबंधित गीतों को 'नोङलाओ' कहा जाता है। लाङजिङ पहाड़ की पूर्वी दिशा में स्थित नोङजुखोङ नामक स्थान में पूजा–प्रार्थना की जाती है। यह मणिपुर के पवित्र ग्रंथ 'पूया' में 'चिङलोन लाइहूई' नामक खंड में देखने को मिलता है। यथा–

''नोङ ओ चुरो/हनुबा हनुबी ताओथरो
लाङजिंग मतोन थूमहत्लो/पातषोय नूराबी ताओथरो''।[14]

इन सभी लोक गीतों में से सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय लोक गीत जो मैतेई जाति में प्रचलित है, वह है 'खोंजोम पर्व'। इसमें गेयता के साथ–साथ गाथा भी सम्मिलित है। मणिपुर की दक्षिण पूर्वी दिशा में लगभग 32 कि.मी. की दूरी पर 'खोङजोम' नामक गाँव में सन 1891 को अंग्रेजों द्वारा भारत पर आक्रमण और देशवासियों द्वारा वीरतापूर्वक लड़ाई और मैतेई प्रजा के साथ घमासान युद्ध का वर्णन इस गीत में है। इस लड़ाई का आँखों देखा वर्णन गुरु 'धोबी लैनी' नामक एक व्यक्ति ने किया और यह युद्ध

आगे चलकर 'खोङजोम युद्ध' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। हर वर्ष 23 अप्रैल को 'खोङजोम दिवस' के नाम से आज भी मनाया जाता है। इससे वर्तमान में 'खोङजोम पर्व' नामक लोक गीत प्रचलित हुआ है।

वैष्णव धर्म के प्रभाव से इस गीत के आरंभ में गौरचन्द्र और प्रार्थना गीत गाकर खोङजोम पर्व की शुरुआत की जाती है। अंत में भजन और मनशिक्षा गाकर समाप्त किया जाता है। लेकिन आज तक खोङजोम युद्ध के अलावा इस गीत में रामायण, महाभारत, राज्याभिषेक, मोईराङ पर्व और लैरोन आदि भी गाए जाते हैं। इसमें नटसंकीर्तन, ताल तथा कई रूप शामिल होने से यह लोक गीत के रूप में अधिक प्रचलित होने लगा है। खोङजोम पर्व के अंतर्गत 'थाङजिङ' पर्वत जो एक पवित्र स्थान है, वहाँ का गुण-गान करते हुए यह लोक गीत प्रचलित है-

''ईबुधौ थाङङि ना सेम्बा लम/पानथोईबीनदि कोनबा लम
केगे मोईराङ लैबाक्ता/चिङखू तेलहैबा निङथौओ
येत्ता ङाकई अशूप्पा/ईपू थोङलेन थोङारेन
ओईदा ङाकई लूवाँशू/शीनौ चाओबा नोङथोलना
तूङदा थौगल तौईदा/मथङ खनबा चिङखूबा
मपूना चानबा पूरेम्बा/निङथौबू चेतना शेन्नजै।''[15]

(घ) बाल गीत :

बाल गीत मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं।

1. माता-पिता, भाई-बहन, चाचा-चाची तथा बुआ आदि द्वारा गाए गए गीत।
2. स्वत: निर्मित गीत।

पहले प्रकार के गीत को 'लोरी' कहते हैं। इसमें माँ अपने बच्चे को सुलाते समय इस प्रकार गाती है-

''था था थाबुङतोन/नचा मोईराम्बी पोबिगे
पोबी षनम नम्बिगे/हैबोङ मशा अमतङ
थादबिरकउ थाबूङतोन/नथिरक्ता ताखरे/नयूङलक्ता ताखरे
हा कनाना चाबिनी।'' [16]

स्वत: निर्मित गीतों में-

1. *उची ची ची खाङमैतट/खरूङ मपाल खौशाबा*
   उची राबा मैतटपा, शेन्द्राङ लाकई फ्रंङ।
2. *नोम नोम शगाई तोङ/चानबा लैते तखेनथाङ।*
3. *पि-पि-पियोरी पियोशखी धिमापूर,*
   कहा चले कोहिमा, लम्पाक्ता चिङजाओ,
   मिथाईचाबी लम्बोईबी/दम् दम् दम्। [17]

कथा संदर्भित लोक गीत :

इसके अंतर्गत मैतेई व मुसलमानों के नाच संबंधी लोक गीत के साथ-साथ हास्य व्यंग्य संबंधी गीत भी प्रचलित हैं। जैसे-

''लौरी चतपी, फिङाङ शेतपी/तादगी मतु ईनम्मा शम्बान्दोङ ताहौरे हायदूना/शम्बान्दोङ खूनगे चतपदी/ क्वाकनबू चेनख्रेदो।।'' [18]

पहाड़ी लोक गीत :

इसके अंतर्गत पहाड़ी क्षेत्रों में निवासित कई जनजातियों और उनके लोक गीत शामिल हैं। जैसे कबुई जनजाति, थादौ, पाईते, ताङखूल आदि।

कबुई जनजातियों का सबसे प्रसिद्ध त्योहार 'गानङाई' है। यह पाँच दिनों तक अपने रीति-रिवाजों के साथ मनाया जाता है। इन्हीं पाँच दिनों के आधार पर इसका नाम भी अलग-अलग है। जैसे- ङाईगङपूईनै, तमचनपूईनै, गानङाई,नपचनपूईनै, राङपत आदि। इसी पर्व के प्रथम दिवस पर स्थानीय बड़े-बुजुर्ग लोग अपने इष्ट देव का अर्चन-वंदन करते हुए बाग-बगीचे की सुंदरता, फल-फूलों से हरे भरे सौंदर्य दृश्य का चित्रण इस गीत के द्वारा करते हैं-

कूमै पूईकाई खौ/अल्हाम थाई नाईये;
लाङदाई शम लोकन ने,/चमपन अनै अनजोन जाउपूकि
लाङदाईषा कूमैपू/कशिम शूपोङ बमखोन्ने। [19]

निष्कर्ष :

भारत की विभिन्न लोक-संस्कृति, परंपरागत त्योहार, लोक-नृत्य आदि के बीच मणिपुरी या मैतेई संप्रदाय के लोक गीत भी अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। सहज सरल जीवन निर्वाह करने वाले मैतेई लोगों के इस गीत में सामाजिक रीति-रिवाज, लोक-विश्वास के साथ अपनी निजी विशेषताएँ भी शामिल हैं। इन गीतों के माध्यम से लोग अपने हृदयगत भावनाओं को व्यक्त करते हैं। उनके पास अपने गीतों के प्रचार-प्रसार के लिए भले ही कम माध्यम हो, यह मनुष्य को मनुष्य होने का एहसास इसकी संस्कृति ही हमें दिलाती है। ❑

संदर्भ सूची :

1. लोग गीतों के संदर्भ और आयाम, डॉ. शान्ति जैन, प्रथम संस्करण 1999 ई. विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी चौक, वाराणसी 221001
2. समन्वय पूर्वोत्तर, माघ 2078,चैत्र 2079, जनवरी–मार्च 2022, ISBN 2231–6132 प्रकाशन– क्षेत्रीय निदेशक, केंद्रीय हिंदी संस्थान. क्षेत्रीय केंद्र: डिमापुर
3. उत्तराखंड का लोक साहित्य और जनजीवन. डॉ. सरला चंदोला, ISBN 81.85727.60.0, प्रकाशक : तक्षशिला प्रकाशन, प्रथम संस्करण सं. 1999. 23/4761 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002.
4. मणिपुरी खुनुङ इशै खोमजिन्बा, लोईश्रम विरेन्द्र कुमार सिंह, साहित्य अकादमी, प्रथम संस्करण–1999. ISBN 81.260.0843.1, प्रकाशन–पेजमेकर्स 23 बी. रासबिहारी एवेन्यू, कलकत्ता 700026.
5. वही पृष्ठ 26
6. वही पृष्ठ 56
7. वही पृष्ठ 69
8. वही पृष्ठ 72
9. वही पृष्ठ 76
10. वही पृष्ठ 77
11. वही पृष्ठ 95
12. वही पृष्ठ 94
13. वही पृष्ठ 192
14. वही पृष्ठ 103
15. वही पृष्ठ 104
16. वही पृष्ठ 105
17. वही पृष्ठ 108
18. वही पृष्ठ 216
19. वही पृष्ठ 223.

सहायक पत्रिकाएँ :

1. समन्वय पूर्वोत्तर, खंड–4, अंक: 3, वैषाख–आषाढ़, 2078/अप्रैल–जून 2021. ISBN 2231.6132, प्रकाशक क्षेत्रीय निदेशक, केंद्रीय हिंदी संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, शिलोंग
2. समन्वय पूर्वोत्तर, खंड–6, अंक: 2, वैषाख–आषाढ़, 2079/अप्रैल–जून 2022. ISBN2231.6132, प्रकाशक– क्षेत्रीय निदेशक, केंद्रीय हिंदी संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, डिमापुर
3. भाषा, संपादक–डॉ. अनिता डगोरे, अंक 307, वर्ष 62, मार्च–अप्रैल 2023, ISBN 0523.1418, प्रकाशक–केंद्रीय हिंदी निदेशालय उच्चतर शिक्षा विभाग, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार.पश्चिमी खंड–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110066.

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

परख

नागमती-वियोग-वर्णन का वैशिष्ट्य : एक अवलोकन

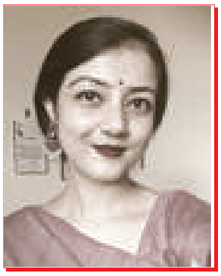

पूजा शर्मा

सहायक आचार्या, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय
गुवाहाटी, असम-781014
8638964510
poojasarma2c015@gmail.com

शोध-सार :

'रसराज' शृंगार के संयोग और वियोग पक्षों में से वियोग या विप्रलंभ शृंगार हृदयग्राहिता एवं मार्मिकता के कारण काव्य-प्रणेताओं में सर्वाधिक चर्चित रहा है। हिंदी साहित्य-समेत समूचे भारतीय वाङ्मय में वियोग-वर्णन की स्रोतस्विनी का प्रवाह दृष्टिगोचर होता है। मध्यकालीन धर्म-साधना के हस्ताक्षरों में प्रमुख मलिक मुहम्मद जायसी ने भी अपने गौरव-ग्रन्थ 'पद्मावत' में वियोग-वर्णन के प्रति विशेष रुचि दिखाई है। भक्ति-आध्यात्मपरक साधना की दृष्टि से रत्नसेन और पद्मावती के वियोग-वर्णन अगर 'पद्मावत' महाकाव्य के महत्वपूर्ण प्रसंग हैं तो भावों की सांद्रता और कलात्मक उत्कृष्टता की दृष्टि से नागमती-वियोग-वर्णन इस कालजयी महाकाव्य का हृदयस्थल है। इस वियोग-वर्णन में कवि-पुंगव जायसी की समन्वय-चेतना एवं कला-कुशलता भारतीय और फारसी परंपराओं के समंजन, हिंदू दांपत्य-जीवन के सात्विक माधुर्य के निरूपण, प्रकृति-जगत के बहुरंगी पक्षों के संयोजन, विरहिणी नारी-हृदय के मर्मोद्घाटन-उदात्तीकरण तथा प्रभविष्णु भाषिक प्रयोग के माध्यम से फलीभूत हो उठी है।

बीज-शब्द : मलिक मुहम्मद जायसी, 'पद्मावत', 'नागमती-वियोग खंड', वियोग-वर्णन, समन्वयात्मकता, सामान्यीकरण, विश्वव्यापी चेतना।

1. प्रस्तावना :

'प्रेम की पीर' के अमर गायक मलिक मुहम्मद जायसी (1475-1542 ई.) भक्तिकालीन निर्गुण धारा की प्रेममार्गी (सूफी) शाखा के प्रतिनिधि कवि हैं। उनकी सर्जनाओं में 'पद्मावत', 'आखिरी कलाम', 'चित्ररेखा', 'मसलानामा', 'कहरानामा' आदि उल्लेखनीय हैं। इनमें से उनकी अक्षय-कीर्ति के आधार स्तंभ के रूप में प्रसिद्ध मसनवी शैली में रचित 'पद्मावत' (1540 ई.) न केवल सूफी काव्यधारा की प्रतिनिधि कृति है, बल्कि समूचे हिंदी साहित्य के अग्रणी महाकाव्यों में प्रमुख है। भाव-पक्ष और कला-पक्ष के सुंदर संतुलन से संपुष्ट यह कालजयी रचना न सिर्फ प्रेममार्गी साधकों के लिए आदर्श रही, अपितु काव्य-रसिकों के लिए भी परम आदर की वस्तु बनी। उपसंहार-सहित 58 खंड वाले इस महाकाव्य का 30वाँ खंड- 'नागमती-वियोग खंड' अपनी रमणीयता, मार्मिकता तथा हृदयस्पर्शी

विश्वव्यापी चेतना के कारण 'पद्मावत' का प्राण-बिंदु बन पड़ा है। कवि-पुंगव जायसी द्वारा प्रस्तुत यह वियोग-वर्णन सूफी साहित्य-समेत समस्त हिंदी साहित्य में सर्वथा अद्वितीय एवं अनूठा है, जिसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए समीक्षक-विद्वान डॉ. गोविंद त्रिगुणायत ने लिखा है- *''नागमती के विरह की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह एक नारी के हृदय की करुण-व्यथा होते हुए भी विश्व-मात्र की व्यथा प्रतीत होती है।...सच तो यह है कि नागमती के विरह की विराटता, पवित्रता एवं मार्मिकता ही पद्मावत का सर्वस्व है।''* (त्रिगुणायत 1973 : 427)

2. अध्ययन का सीमांकन :

कविवर जायसी-प्रणीत अनेकानेक कृतियों की चर्चा यद्यपि की जाती है, परंतु प्रस्तुत शोधालेख में उनके अनुपम महाकाव्य 'पद्मावत' के 'नागमती-वियोग खंड' पर ही समीक्षात्मक दृष्टि केंद्रित की गई है। उल्लेखनीय है कि नागमती का लौकिक विरह प्रमुख रूप से इस खंड में वर्णित होने के अतिरिक्त 'नागमती-संदेश खंड', 'चित्तौर-आगमन खंड', 'पद्मावती-नागमती-विलाप खंड' एवं 'पद्मावती-नागमती-सती खंड' में भी परिलक्षित किया जा सकता है। वियोग-शृंगार-वर्णन की परंपरा के आलोक में नागमती-वियोग-वर्णन के वैशिष्ट्य एवं महत्व के विवेचन-विश्लेषण-मूल्यांकन करने तक ही यह अध्ययन सीमित रहेगा।

3. अध्ययन में व्यवहृत पद्धति एवं प्रक्रिया :

वैज्ञानिक शोधालेख-लेखन की प्रक्रिया की माँग के अनुरूप इस शोधालेख में जायसी-प्रणीत 'पद्मावत' के 'नागमती-वियोग खंड' एवं उससे संबंधित समीक्षात्मक संदर्भित सामग्रियों का संकलन किया गया है। तत्पश्चात इन सबके तटस्थ निरीक्षण एवं व्याख्या-विश्लेषण के जरिए आशय-ग्रहण के उपरांत विचाराधीन विषय के संबंध में निर्णय-निष्कर्ष तक पहुँचने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोधालेख में समीक्षात्मक, विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक पद्धतियों का प्रयोग किया गया है। बहुल रूप से स्वीकृत एवं व्यवहृत समकालीन एम.एल.ए. {Modern Language Association (MLA)} शोध-पद्धति को यहाँ आधार रूप में यथासंभव अपनाया गया है।

4. अध्ययन का उद्देश्य :

वियोग शृंगार के शास्त्रीय स्वरूप एवं भारतीय वाङ्मय, विशेषत: हिंदी काव्य में वियोग-वर्णन की परंपरा पर एक सरसरी दृष्टि डालते हुए कविवर जायसी-कृत 'पद्मावत' के कंठहार-सरीखे 'नागमती-वियोग खंड' में निरूपित नागमती-वियोग-वर्णन की विशेषताओं और मौलिक उद्भावनाओं का सोदाहरण अध्ययन करना तथा कुछेक विशिष्ट वियोग-वर्णनों के साथ संक्षिप्त तुलनात्मक विवेचन द्वारा उसके महत्व का सम्यक मूल्यांकन करना इस शोधपरक अध्ययन का उद्देश्य है।

5. विश्लेषण एवं निर्वचन :

प्रिय से मिलन के अभाव की स्थिति वियोग या विरह को प्रेम की कसौटी स्वीकार किया गया है। विरहावस्था में प्रेम घटता नहीं, बढ़ता है, उसे प्रगाढ़ता एवं जीवंतता मिलती है। आधुनिक साहित्य के प्रसिद्ध कवि रामनरेश त्रिपाठी की अधोलिखित काव्य-पंक्तियाँ इसी भाव का मूर्तिकरण हैं, यथा--

विरह प्रेम की जागृत गति है
और सुषुप्ति मरण है,
मिलन अंत है मधुर प्रेम का
और विरह जीवन है।

(सिंह, संपा 2007 : 67)

वास्तव में, हृदयस्थ भावों का जितना सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचन वियोग शृंगार-वर्णन में होता है, उतना संयोग में नहीं। शृंगार के संयोग पक्ष में बाह्य-चेष्टाओं एवं काम-क्रीड़ाओं की ही अधिकता होती है, अंत:करण की सूक्ष्म भाव-वृत्तियों का प्रकाशन एवं अहं, वासना और काम से मुक्त प्रेम के शुद्ध रूप का प्रकटीकरण वियोग पक्ष में ही होता है।

भारतीय काव्यशास्त्रीय दृष्टि से वियोग के सामान्यत: चार रूपों- प्रथमानुराग या पूर्वराग, मान, प्रवास और करुण तथा दस काम-दशाओं, यथा- अभिलाषा, चिंता, स्मृति, गुण-कथन, उद्वेग, उन्माद, प्रलाप, व्याधि, जड़ता एवं मूर्च्छा या मरण का उल्लेख किया जाता है। इधर, फारसी की मसनवी शैली में रचित प्रेमाख्यानक सूफी-काव्य में प्रेम-

विरह को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। सूफियों का अपने आराध्य के प्रति प्रेम 'इश्क-ए-मजाजी' (लौकिक) से 'इश्क-ए-हकीकी' (अलौकिक) की ओर उन्मुख होता है। अपने आराध्य के प्रेम-विरह में आकंठ निमग्न चिर-विरही सूफी कवि जायसी ने प्रेम-विरह को ही साधना के मार्ग के रूप में ग्रहण करके 'पद्मावत' महाकाव्य में इसका जो भव्य चित्रण किया है, उससे भारतीय प्रेमपरक भक्ति-साधना में एक नया आयाम जुड़ गया है।

5.1 भारतीय वाङ्मय में वियोग-वर्णन की परंपरा :

हिंदी-साहित्य में वियोग-वर्णन की जो धारा देखी जाती है, उसका मूल स्रोत वस्तुत: भारत के प्राचीनतम साहित्य में विद्यमान है। इस संदर्भ में संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश साहित्य पर एक सरसरी दृष्टि डालना समीचीन होगा। विश्व की प्राचीनतम उपलब्ध रचना ऋग्वेद के दसवें मंडल के 95वें सूक्त में वर्णित उर्वशी और पुरुरवा का विरह-वर्णन प्रभावशाली वर्णनों की कोटि में रखा जाता है। उसके बाद रामायण तथा महाभारत के अंतर्गत राजा संवरण-कुमारी तप्ता एवं नल-दमयंती प्रेमाख्यानों में विरह की उदात्त अभिव्यंजना परिलक्षित होती है। 'भारतीय संस्कृति के चितेरे' महाकवि कालिदास-कृत 'कुमार सम्भवम्', 'मेघदूतम्' आदि तो वियोगी हृदय के मर्मस्थल माने जाते हैं। संस्कृत के नाट्य-साहित्य में उल्लेखनीय हैं— 'मालती-माधव' नाटक, भवभूति-कृत 'उत्तररामचरित' आदि। संस्कृत के गद्य-साहित्य में 'वासवदत्ता', 'दशकुमार चरित', 'कादम्बरी' आदि में प्रेम-विरह का भव्य रूपांकन दृष्टिगोचर होता है।

संस्कृत की विरह-वर्णन-परंपरा का विकास प्राकृत में 'गाथा सप्तशती', 'वज्जालग्ग' आदि में होता हुआ परिलक्षित किया जा सकता है। अपभ्रंश के मुक्तक-काव्यों में, विशेषत: 'संदेश रासक' आदि में विरह की अनुभूति का विशुद्ध रूप उभरकर आया है। इस तरह से देखा जा सकता है कि भारतीय वाङ्मय में रसराज के वियोग रूप को प्रधानता देते हुए उसकी भाव-वृत्तियों के प्रकाशन की एक अविच्छिन्न धारा प्रवाहित होती आ रही है।

5.2 हिंदी काव्य में वियोग-वर्णन :

वियोग-वर्णन परंपरा की दृष्टि से हिंदी काव्य के प्रारंभिक कवियों में 'मैथिल कोकिल' विद्यापति का वियोग-वर्णन उल्लेखनीय है। कविवर विद्यापति के अनंतर महात्मा कबीरदास की विरहानुभूतियाँ, कविवर जायसी द्वारा 'पद्मावत' में किया गया वर्णन, महाकवि सूरदास का श्रीकृष्ण एवं गोपी-विरह-वर्णन, लोकनायक गोस्वामी तुलसीदास द्वारा 'रामचरितमानस' में उद्भासित विरह के स्थल, 'कृष्ण-प्रेम-दीवानी' मीराँबाई के विरह-वर्णन आदि उल्लेखनीय हैं। इधर रीतिकाल में बिहारी, देव आदि

रीतिकवियों ने जहाँ विरह के बाह्य-रूप को अधिक प्रधानता दी, वहीं घनानंद, ठाकुर, आलम, बोधा आदि रीतिमुक्त कवियों के लिए 'प्रेम की पीर' ही काव्य का मुख्य उपजीव्य रहा। आधुनिक कवियों में भारतेंदु हरिश्चंद्र के वर्णन, मैथिलीशरण गुप्त के 'साकेत' और 'यशोधरा' के वर्णन, कामायनीकार जयशंकर प्रसाद के वर्णन, महादेवी वर्मा एवं सुमित्रानंदन पंत आदि के वर्णन उल्लेखनीय विरह-वर्णन रहे। वस्तुत: हिंदी साहित्य के कवियों ने वियोग शृंगार को अधिक महत्व प्रदान करते हुए उसके चतुर्दिक रूपों का उद्घाटन कर उसे एक दिव्य भावभूमि पर प्रतिष्ठित कर दिया है।

5.3 'पद्मावत' में वियोग-वर्णन का स्वरूप :

कविवर जायसी-कृत 'पद्मावत' महाकाव्य में संयोजित विरह-वर्णन वस्तुत: तीन संदर्भों में परिलक्षित किया जा सकता है-- (i) राजा रत्नसेन का राजकुमारी पद्मावती के प्रति विरह, (ii) पद्मावती का रत्नसेन के प्रति विरह और (iii) रानी नागमती का राजा रत्नसेन के प्रति विरह। इनमें से प्रथम दो जहाँ आध्यात्मिक विरह से संबंधित हैं, तो वहीं अपने पति के प्रति नागमती की विरह-वेदना लौकिक धरातल से जुड़ी हुई है। 'पद्मावत' महाकाव्य भारतीय प्रेमाख्यान को आधारस्वरूप ग्रहण कर लौकिक प्रेम की अभिव्यंजना द्वारा अलौकिक अध्यात्म की प्राप्ति की कथा है। अत: इसमें कविवर जायसी ने 'रूपक तत्व' के समावेश द्वारा पद्मावती को परमात्मा, राजा रत्नसेन को भक्त-साधक तथा रानी नागमती को 'दुनिया-धंधा' के रूप में प्रस्तुत किया है।

5.4 नागमती-वियोग-वर्णन की विशेषताएँ :

नागमती-वियोग-वर्णन पद्मावती के प्राप्तयार्थ योगी-वेश धारक रत्नसेन के प्रवास से जन्य रानी नागमती के विरह पर आधारित है। कुल ऊनविंशति पदों में चित्रित इस वियोग-वर्णन के प्रथम तीन पर्यक अपने पति रत्नसेन की प्रतीक्षा में रत नागमती की व्यथा पर आधृत हैं, उसके अनंतर चतुर्थ से लेकर पंद्रहवें पद तक बारहमासा का वर्णन है और अंतिम चार नागमती के प्रकृति-जगत के साथ संवाद से संबंधित हैं। कविवर जायसी द्वारा उद्भासित इस वियोग-वर्णन में कुछेक ऐसी विशेषताओं का समायोजन हुआ है, जिन्होंने इसे मनोरम बना दिया है। इस संदर्भ में समर्थ आलोचक-विद्वान आचार्य रामचंद्र शुक्ल का कथन द्रष्टव्य है, *''इसी नागमती के विरह-वर्णन के अंतर्गत वह प्रसिद्ध बारहमासा है, जिसमें वेदना का अत्यंत निर्मल और कोमल स्वरूप, हिंदू दांपत्य जीवन का अत्यंत मर्मस्पर्शी माधुर्य, अपने चारों ओर की प्राकृतिक वस्तुओं और व्यापारों के साथ विशुद्ध भारतीय हृदय की साहचर्य भावना तथा विषय के अनुसार भाषा का अत्यंत स्निग्ध, सरल, मृदुल और अकृत्रिम प्रवाह देखने योग्य है।''*

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 33)

5.4.1 भारतीय एवं अभारतीय (फारसी) परंपरा का समन्वय :

नागमती-वियोग-वर्णन में भारतीय कामशास्त्र की परंपरा के पूर्णरूपेण निर्वहन के साथ ही कुछेक अभारतीय (फारसी) तत्वों के समावेश द्वारा नूतनता लाने का सफल प्रयास किया गया है। इस विराट समन्वय की ओर संकेत करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है, *''पद्मावत में यद्यपि हिंदू जीवन के परिचायक भावों की ही प्रधानता है, पर बीच-बीच में फारसी साहित्य द्वारा घोषित भावों के भी छींटें कहीं-कहीं मिलते हैं।''*

(शुक्ल, संपा. सं. 2056: 32)

भारतीय कामशास्त्रानुसार विरह के चार रूपों में रानी नागमती का विरह प्रवासजन्य-विरह है, वह प्रोषितपतिका नायिका की कोटि में आती है एवं उसमें विरह की दसों दशाएँ पूर्णत: घटित होती दिखाई पड़ती हैं :-

(i) **अभिलाषा :** अपने पति रत्नसेन के प्रवास से व्यथित नागमती किसी भी स्थिति में, फिर चाहे अपने को भस्मीभूत कर राख-रूप में भी अपने प्रिय से मिलने की अभिलाषा व्यक्त करते हुए कह उठती है-

यह तन जारौं छार कै, कहौं कि 'पवन! उड़ाव'।
मकु तेहि मारग उड़ि परै, कंत धरै जहँ पाव॥

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 141, पद-12)

(ii) **चिंता :** नागमती अपने स्वामी के प्रवास से व्याकुल ही नहीं है, बल्कि उसे इस बात की भी चिंता रहती है कि कहीं उसका 'पिउ' किसी नागरी नारी के जाल में न फँस जाए -

नागर काहु नारि बस परा । तेइ मोर पिउ मोसौं हरा ।।

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 137, पद-1)

(iii) **स्मृति :** प्रिय के वियोग में नागमती को संयोग के दिनों की स्मृतियाँ सताती हैं और सुखदायक स्थल उसकी विरहाग्नि को और भी उद्दीप्क करते हैं -

सखिन्ह रचा पिउ सँग हिंडोला।
हरियरि भूमि, कुसुंभी चोला ।।

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 138, पद-5)

(iv) **गुण-कथन :** नागमती विरह की व्याकुलता में बीते दिनों के सुखदायी क्षणों का, अपने पति रत्नसेन के गुणों का स्मरण करती है और उनसे पुन:मिलन की इच्छा से व्यथित हो उठती है।

(v) **उद्वेग :** प्रिय-वियोग की अवधि के क्रमश: बढ़ते ही नागमती में उद्विग्नता आने लगती है। उसकी तड़प उसे धीरे-धीरे बेसुधी की ओर ले जाती है और तब वह पपीहे की भाँति 'पिउ पीऊ' रटने लगती है।

(vi) **उन्माद :** प्रिय का कोई संदेश न पाकर विरहिणी नागमती उपायविहीन होकर घर-घर जाकर लोगों से अपने प्रियतम का पता पूछने लगती है और जब मनुष्य-जगत से उसे सहानुभूति प्राप्त नहीं होती, तब वह उन्मादवश पक्षियों से अपनी दु:ख-वेदना व्यक्त करती है-

बरस दिवस धनि रोइ कै, हारि परी चित झंखि।
मानुस घर घर बूझि कै, बूझै निसरी पंखि॥

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 142, पद 17)

(vii) **प्रलाप :** विरह-व्यथा से जर्जरित नागमती प्रकृति-जगत की ओर उन्मुख होती है और पक्षियों से अपनी वेदना की व्यंजना करती है, उनसे आग्रह करती है कि वे उसके पति के पास उसका संदेशा ले जाएँ।

(viii) **व्याधि :** विरह की इस दशा तक आते-आते नागमती का पूरा शरीर व्याधिग्रस्त हो जाता है, वह क्षीणकाय हो गई है। रक्त सूख चुका है, माँस गिर-गिर कर खत्म हो चुका है- बस हड्डियों का ढेर भर वह रह गई है।

(ix) **जड़ता :** रत्नसेन के प्रवास का विरह-रूपी बाण नागमती के हृदय में इस तरह से गड़ा हुआ है कि वह जड़वत हो गई है, पसीजने से उसकी चोली तक भींग गई है।

(x) **मूर्च्छा या मरण :** नागमती रत्नसेन की प्रतीक्षा में रत-रहकर मूर्च्छित-मरणोन्मुख स्थिति तक पहुँच जाती है, जहाँ उसका रक्त-माँस-विहीन शरीर शिथिल पड़ जाता है -

रकत ढुरा माँसू गरा, हाड़ भएउ सब संख ।
धनि सारस होइ ररि मुई, पीउ समेटहि पंख ॥

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 140, पद 10)

इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि नागमती-वियोग-वर्णन में शास्त्रसम्मत आठों सात्विक भावों-स्तंभ, स्वेद, रोमांच, प्रलय, स्वर-भंग, वेपथु, अश्रु और वैवर्ण्य की संयोजना भी की गई है। इनमें से वेपथु सात्विक का एक उदाहरण द्रष्टव्य है, जहाँ नागमती विरह की आग में झुलसकर हिंडोले पर झूलते व्यक्ति-सम काँपती है --

हिय हिंडोल अस डोलै मोरा। बिरह झुलाइ देइ झकझोरा॥

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 :138, पद 5)

नागमती वियोग-वर्णन में फारसी साहित्य के किन्हीं तत्वों का समायोजन भी यत्र-तत्र होता परिलक्षित किया जा सकता है। भारतीय वियोग-वर्णन-परंपरा में रक्त, माँस, हड्डी आदि के वर्णन को वीभत्स माना जाता है। उपरोल्लिखित उदाहरण में देखा जा सकता है कि सूफी कवि जायसी ने इनका समावेश फारसी साहित्य-सम्मत आधार पर किया है। फारसी कामशास्त्र में विरह की नौ दशाएँ बताई गई हैं - (i) आहे-सर्दो (ठंडी आह भरना), (ii) रंगे जर्दो (रंग का पीला पड़ना), (iii) चश्मेतर (आँखों से आँसू बहना), (iv) इंतजारी (प्रतीक्षा), (v) बेकरारी (बेचैनी), (vi) बेसब्र (धैर्यहीन होना), (vii) कम खुर्दना (खाना कम खाना), (viii) कम गुफ्तनो (कम बात करना), (ix) नींद हराम (नींद न आना) (त्रिगुणायत 1973 : 433)। नागमती-वियोग खंड में इनके उदाहरण प्राप्त किए जा सकते हैं ।'बेसब्र' का एक उदाहरण द्रष्टव्य है -

परबत समुद अगम बिच, बीहड़ बन बनढाँख।
किमि कै भेंटौं कंत तुम्ह? ना मोहि पाँव न पाँख॥

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 138, पद 5)

भारतीय और फारसी परम्परा का यह अपूर्व समन्वय न केवल कविवर जायसी की समन्वय-साधना का परिचायक है, बल्कि इसने नागमती-वियोग-वर्णन को अद्वितीयता से परिपूर्ण कर दिया है ।

5.4.2 बारहमासा की शैली का प्रयोग :

कविवर जायसी ने भारतीय कामशास्त्रानुसार बारहमासा अर्थात वर्ष के बारहों महीनों के आधार पर नागमती की विरह-व्यथा को शब्दाभिव्यक्ति दी है। नागमती-वियोग-

वर्णन में चित्रित बारहमासा परंपरागत वर्णनों से पृथक एवं विशिष्ट है। कविवर जायसी ने अपने बारहमासा की अथ और इति आषाढ़ के वर्णन से की है। 'मेघदूतम्' के प्रणेता महाकवि कालिदास के आषाढ़-वर्णन- 'आषाढ़स्य प्रथम दिवसे...' की भाँति जायसी का वर्णन भी आषाढ़ महीने से आरंभ होता हुआ सावन, भाद्र, क्वार, कार्तिक, अगहन, पूस, माघ, फागुन, चैत्र, बैसाख, जेठ तक बढ़ते हुए अंत में पुन: आषाढ़ पर आकर समाप्त होता है। वर्ष के इन विभिन्न महीनों में होने वाले प्राकृतिक परिवर्तनों के साथ-साथ विरहिणी नागमती की व्यथाओं में परिवर्तन और व्याप्त प्रभाव के दिग्दर्शन नितांत स्वाभाविक सादृश्य-कथन एवं परंपरागत उपमा-उत्प्रेक्षा-विधानों द्वारा किए गए हैं। इस बारहमासे में मुख्यत: दो बातें दृष्टिगत होती हैं- (i) प्राकृतिक वस्तुओं और व्यापारों का समावेश और (ii) दु:ख के नाना रूपों और कारणों की उद्‌भावना।

आषाढ़ के महीने का एक स्थल द्रष्टव्य है, जब गगन मेघासन्न है, घनघोर घटा घिरी हुई है; दादुर, मोर, कोयल-संग समूचा संसार वर्षा के आगमन से रोमांचित है-उस अवस्था में विरह-विदग्धा नागमती प्रिय के वियोग में एकाकी और निस्सहाय है, यथा --

चढ़ा असाढ़, गगन घन गाजा। साजा बिरह दुंद दल बाजा।।

--------------×--------------

जिन्ह घर कंता ते सुखौ, तिन्ह गारौ औ गर्ब।
कंत पियारा बाहिरै, हम सुख भूला सर्ब।।

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 138, पद 4)

विरह की दशा में संयोग के सुखदायक स्थल हृदय को पीड़ा पहुँचाते हुए विरहाग्नि को और भी अधिक उद्दीप्त करते हैं । नागमती को प्रकृति की स्निग्ध कमनीयता, मलयज मोहकता और वासंती कौमार्य सभी कष्टदायक प्रतीत होते हैं, यथा -

करहिं बनसपति हिये हुलासू। मौ कहँ भा जग दून उदासू।।
फागु करहिं सब चाँचरि जोरी। मोहिं तन लाइ दीन्ह जस होरी।।

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 140, पद 12)

बारहमासा के अंतर्गत कविवर जायसी ने किन्हीं स्थानों पर नागमती के लौकिक विरह में अलौकिकता का आरोपन किया है। ऐसा ही एक स्थल दर्शनीय है- जेठ की ज्वाला के वर्णन के प्रसंग में कवि ने लिखा है कि पर्वत, समुद्र, मेघ, शशि और सूर्य इस आग को सहन करने में असमर्थ हैं। इस ज्वाला में जलने की शक्ति केवल भारत की सती नारी में ही होती है -

गिरि, समुद्र, ससि, मेघ, रबि, सहि न सकहिं वह आगि।
मुहमद सती सराहिए, जरै जो अस पिउ लागि।।

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 142, पद 15)

अत: कविवर जायसी ने परंपरागत रूप में बारहमासा का प्रयोग करते हुए अपनी मौलिक उद्‌भावनाओं द्वारा उसे नवीनता भी प्रदान की है ।

5.4.3 हिंदू दांपत्य जीवन के मधुर-मार्मिक चित्रों की योजना :

नागमती और राजा रत्नसेन के सुखद दांपत्य जीवन में रत्नसेन के प्रवास से उत्पन्न व्याघात नागमती के विरह का मूल है। कविवर जायसी ने नागमती-वियोग-वर्णन में हिंदू-दांपत्य जीवन के माधुर्य के अंकन द्वारा जिस नूतनता का समावेश किया है, वह कबीर, सूर, मीराँ आदि के वर्णनों से सर्वथा विशिष्ट है। नागमती पतिव्रता धर्म के पथ पर अडिग रहने वाली एक भारतीय नारी के रूप में चित्रित है। उसका पति चाहे उसका त्यागकर पर-नारी के रूप-श्रवण से बेसुध होकर चला गया हो, पर वह अपने उसी पति का स्मरण कर चिंतित-संतप्त-व्याकुल रहती है और चित्तौड़ के उसी पंथ को निहारती रहती है, जिस ओर से उसका 'पिउ' गया था, यथा -

नागमती चितउर पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा॥ (शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 137, पद 1)

कविवर जायसी ने नागमती को एक पतिपरायणा नारी के रूप में अंकित किया है-एक ऐसी नारी जो एक वर्ष तक, एक-एक ऋतु, एक-एक महीने में प्रवास की लंबी अवधि को अपने विरह के ताप से सहती जाती है और यही अभिलाषा रखती है-

अबहूँ मया दिस्टि करि, नाह निठुर! घर आउ।
मँदिर उजार होत है, नव कै आइ बसाउ॥

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 142, पद 16)

5.4.4 सात्विकता :

नागमती का विरह-वर्णन सात्विकता एवं पवित्रता का साक्षात प्रमाण है। इस बात में कोई संदेह नहीं कि पति के प्रवास से व्यथित नागमती समस्त प्रकृति-जगत के हर्षोल्लास और नए दंपतियों के मिलन से अवश्य दु:खित होती है, पर उस दु:ख, उस पीड़ा में खीझ के भाव का अभाव है। महाकवि सूरदास की गोपियों की खीझ विरहिणी नागमती की वेदनानुभूति में परिलक्षित नहीं होती। सूर की गोपियाँ तो कृष्ण के वियोग में वृंदावन की हरियाली पर ही खीझ उठती हैं, यथा -

मधुबन तुम क्यौं रहत हरे।
बिरह बियोग स्याम सुन्दर के, ठाढ़े क्यौं न जरे।

(वर्मा, संपा., 2013 : 240, पद 68)

पर नागमती की वेदना-व्यथा की गाथा में निर्मलता है, कोमलता है, उदात्तता है, जहाँ उसकी वेदना के प्रभाव से समूचा प्रकृति-जगत आप ही व्यथित हो उठता है-

तेहि दुख भए परास निपाते। लोहू बूड़ि उठे होइ राते॥

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 143, पद 19)

वस्तुत: एक सती-साधवी भारतीय नारी का गांभीर्य एवं माधुर्य नागमती की वाणी से निसृत हो उसकी विरहाभिव्यक्ति में सात्विकता-रूप में परिणत हुआ है । इस संदर्भ में आलोचक-विद्वान आचार्य रामचंद्र शुक्ल का कथन प्रणिधानयोग्य है - *''यह आशिक माशुकों का निर्लज्ज प्रलाप नहीं है; यह हिंदू गृहिणी की विरह वाणी है। इसका सात्विक मर्यादापूर्ण माधुर्य परम मनोहर है।''*

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 34)

5.4.5 अत्युक्ति एवं अतिशयोक्तिपूर्ण होते हुए भी प्रभविष्णुता से आपूरित :

नागमती की विरह-वेदनानुभूतियों के प्रकटीकरण में कविवर जायसी ने अत्युक्ति और अतिशयोक्ति का सहारा अवश्य लिया है, पर वह अधिकांश संवेदना और भावाभिव्यक्ति-स्वरूप है, परिमाण के निर्देश-रूप में नहीं। आचार्य शुक्ल ने इस संदर्भ में बड़ी ही सटीक टिप्पणी की है - *''जायसी का विरहवर्णन कहीं-कहीं अत्यंत अत्युक्तिपूर्ण होने पर भी मजाक की हद तक नहीं पहुँचने पाया है, उसमें गांभीर्य बना हुआ है। इनकी अत्युक्तियाँ बात की करामात नहीं जान पड़तीं, हृदय की अत्यंत तीव्र वेदना के शब्द संकेत प्रतीत होती हैं। उनके अंतर्गत जिन पदार्थों का उल्लेख होता है वे हृदयस्थ ताप की अनुभूति का आभास देने वाले होते हैं; बाहर से ताप की मात्रा नापने वाले मानदंड मात्र नहीं।''*

(शुक्ल, संपा. सं. 2056: 26)

विरहजन्य कृशता के वर्णन में कविवर जायसी ने कवि-प्रथानुसार पूरी अत्युक्ति की है, पर उस अत्युक्ति में गंभीरता एवं हृदयस्थ वेदना विद्यमान है। बिहारी की नायिका की तरह जायसी की नायिका की दुर्दशा नहीं हुई है, न तो वह इतनी क्षीणकाय हो गई है कि यमराज को चश्मा लगाकर उसे देखना पड़े, न ही वह इतनी दुर्बल हो गई है कि साँस खींचते वक्त उसके झोंके से चार कदम पीछे हट जाए और साँस निकालते वक्त उसके साथ चार कदम आगे बढ़ जाए। जायसी का वर्णन खिलवाड़ या मजाक नहीं होने पाया है, यथा-

दहि कोइला भइ कंत सनेहा। तोला माँसू रही नहिं देहा।
रकत न रहा बिरह तन गरा। रती रती होइ नैनन्ह ढरा॥

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 142, पद 17)

5.4.6 ऊहात्मकता का लगभग अभाव :

नागमती-वियोग-वर्णन के किन्हीं दो-एक स्थलों पर कविवर जायसी का वर्णन ऊहात्मक अवश्य हुआ है, पर वहाँ भी उनकी दृष्टि विरह-ताप के वेदनात्मक एवं दृश्य अंश पर ही अधिक रही है। विरह-ताप की मात्रा का आधिक्य सूचित करने के लिए उन्होंने ऊहात्मक या वस्तु-व्यंजनात्मक शैली का प्रयोग किया है, लेकिन वहाँ ऊहा की आधारभूत वस्तु का स्वरूप कविवर बिहारी की भाँति बाहरी नाप-जोख का न होकर सत्य और स्वत:संभवी हो उठा है, यथा-

जेहि पंखी के निअर होइ, कहै बिरह कै बात।
सोई पंखी जाइ जरि, तरिवर होइ निपात॥

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 143, पद 18)

वस्तुत: जायसी का ऊहात्मक प्रयोग उनके भावों के गांभीर्य एवं माधुर्य को मलीन नहीं कर पाया है; वह बिहारी के वर्णनों की भाँति हास्यास्पद नहीं हो उठा है।

5.4.7 रानी नागमती का रानीपन भूलकर साधारण-स्त्री जैसा व्यवहार :

चित्तौड़ के अधीश्वर राजा रत्नसेन और उनकी पटरानी नागमती! भव्य महल की शान-शौकत में रहने वाली, दासियों से सेवा लेने वाली, सदा विलासिनी रूपवती रानी नागमती-अपने पति के वियोग में अपना व्यक्तित्व भूलकर एक साधारण स्त्री के रूप में उभरती है। ऐसा व्यक्तित्वांतरण अपूर्व है और उससे भी अधिक अपूर्व है उसका व्याप्त प्रभाव। इस संदर्भ में आचार्य शुक्ल का निम्नोक्त कथन सर्वथा विचारयोग्य है -*''अपनी भावुकता का बड़ा भारी परिचय जायसी ने इस बात में दिया है कि रानी नागमती विरह दशा में अपना रानीपन बिल्कुल भूल जाती है और अपने को केवल साधारण स्त्री के रूप में देखती है। इसी सामान्य स्वाभाविक वृत्ति के बल पर उसके विरह वाक्य छोटे-बड़े सबके हृदय को समान रूप से स्पर्श करते हैं। यदि कनकपर्यक, मखमली सेज, रत्नजड़ित अलंकार, संगमरमर के महल, खसखाने इत्यादि की बातें होतीं तो वे जनता के एक बड़े भाग के अनुभव से कुछ दूर की होतीं। जायसी ने स्त्री जाति की या कम-से-कम हिंदू गृहिणी मात्र की सामान्य स्थिति के भीतर विप्रलंभ शृंगार के अत्यंत समुज्ज्वल रूप का विकास दिखाया है।''*

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 33-34)

विरहिणी नागमती एक साधारण गृहिणी के रूप में सामान्यीकृत होकर उसी की भाँति एक तरफ जहाँ आषाढ़ के महीने में अपनी झोपड़ी का छप्पर बनवाने को लेकर चिंतित होती है, तो वहीं दूसरी तरफ ग्रामीण स्त्री की भाँति पति की अनुपस्थिति में वर्षा से बचने हेतु छाजन ठीक कराने को लेकर व्यथित होते हुए कहती है, यथा-

तपै लागि अब जेठ असाढ़ी। मोहि पिउ बिनु छावनि भइ गाढ़ी॥

---------------×---------------

भई दुहेली टेक बिहूनी। थाँम नाहिं उठि सकै न थूनी॥
बरसै मेघ चुवहिं नैनोहा। छपर छपर होइ रहि बिनु नाहा।।
कौरों कहाँ ठाट नव साजा? तुम बिनु कंत न छाजनि छाजा॥

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 142, पद 16)

कविवर जायसी का नागमती को साधारण ग्रामीण गृहिणी के रूप में प्रस्तुत करने के पीछे उनकी लोकोन्मुखता की प्रवृत्ति ही कार्य करती हुई परिलक्षित होती है।

5.4.8 प्रकृति के विविध रूपों का समावेश :

कवि पुंगव जायसी ने बारहमासा के माध्यम से प्रकृति-जगत की वस्तुओं एवं व्यापारों के साथ विरहिणी नागमती की वियोग-दशा का सादृश्य स्थापित कर प्रकृति के प्रमुखत: तीन रूपों का समावेश किया है-

(i) आभ्यंतर जगत एवं बाह्य प्रकृति का एकमेव रूप: एक व्यापक हृदयहारिणी एवं विस्तृतविधायिनी पद्धति पर बाह्य-प्रकृति को मूल आभ्यंतर जगत के प्रतिबिंब-स्वरूप प्रस्तुत किया गया है, यथा-

कुहुकि कुहुकि जस कोइल रोई। रकत आँसु घुँघुची बन बोई।।
भई करमुखी नैन तन राती। को सेराव? बिरहा दुख ताती।।

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 143, पद 19)

(ii) प्रकृति का उद्दीपनात्मक रूप : प्रकृति-पट पर ऋतुओं के विविध आवरणों के हटने के साथ-साथ जो हर्षोल्लास की स्थिति रहती है, उसके विपरीत नागमती के अंतर्मन की वेदना एवं सुखदायक अनुभूतियों के प्रत्यक्षीकरण से उद्दीप्त विरहाग्नि का जो वर्णन जायसी ने किया है, वह दर्शनीय है-

कातिक सरद चंद उजियारी। जग सीतल, हौं बिरहै जारी॥

---------------×-------------

सखि मानैं तिउहार सब, गाइ देवारी खेलि।
हौं का गावौं कंत बिनु, रही छार सिर मेलि।।

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 139, पद 8)

(iii) प्रकृति का परदु:खकातर रूप : विरहिणी नागमती जब विक्षिप्त-सी वन-उपवनों में रोती फिरती है, घर-घर जाकर लोगों से अपने प्रिय का पता पूछ-पूछ कर हार जाती है, तब वह प्रकृति-जगतोन्मुख होती है। वह उपवन के पेड़-पौधों और पक्षियों से अपनी व्यथा का वर्णन करती है। गोस्वामी तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' में श्रीराम द्वारा वन के खग, मृगादि से सीता का पता पूछना भर दिखाया था-'हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी, तुम्ह देखी सीता मृगनैनी।' (पौद्दार, संपा. सं. 2044 : 567); पर यहाँ तो

नागमती का विरह-क्रंदन सुनकर मध्यरात्रि को एक पक्षी विरह-ताप से व्याकुल होकर बोल उठता है--

फिरि फिरि रोव कोइ नहीं डोला। आधी राति बिहंगम बोला।।
तू फिरि फिरि दाहै सब पाँखी। केहि दुख रैनि न लावसि आँखी।

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 144, पद 1)

इस संदर्भ में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने सटीक टिप्पणी की है-

''...जायसी ने जिस प्रकार मनुष्य के हृदय में पशु-पक्षियों से सहानुभूति प्राप्त करने की संभावना की है, उसी प्रकार पक्षियों के हृदय में सहानुभूति का संचार भी। उन्होंने सामान्य हृदयत्व की सृष्टिव्यापिनी भावना द्वारा मनुष्य और पशु-पक्षी सबको एक जीवन-सूत्र में बद्ध देखा है।''

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 30)

कविवर जायसी ने प्रकृति-जगत के प्रत्येक उपकरण के साथ मानव के चिरंतन रागात्मक संबंध को स्वीकारते हुए मानव और प्रकृति के संवाद को शब्दाभिव्यक्ति दी है।

5.4.9 उत्कृष्ट अलंकार-विधान एवं प्रभविष्णु भाषिक संरचना का समायोजन :

कविवर जायसी द्वारा प्रस्तुत नागमती-वियोग-वर्णन आलंकारिकता, साहित्यिकता और काव्यात्मकता की दृष्टि से अपने चरमोत्कर्ष पर है। अलंकारों का समायोजन इस विरह-वर्णन में अनायास ही हुआ है। अलंकारों में प्रमुख रूप से प्रधानता हेतुत्प्रेक्षा अलंकार की है। ऐसा ही एक स्थल द्रष्टव्य है, जहाँ नागमती के शरीर में लगी विरहाग्नि से उठे धुँए से भौंरों और कौओं के काले हो जाने की कल्पना की गई है-

पिउ सौं कहेउ सँदेसड़ा, है भौंरा! हे काग!
सो धनि बिरहै जरि मुई, तेहि क धुवाँ हम्ह लाग॥

(शुक्ल, संपा. सं. 2056 : 139, पद 9)

हेतुत्प्रेक्षा के अतिरिक्त उपमा, रूपक आदि अलंकारों का प्रयोग भी परिलक्षित किया जा सकता है। कविवर जायसी ने विरह-ताप का वर्णन भी अधिकतर सादृश्य-संबंध-मूलक गौणी लक्षणा द्वारा ही किया है, जिसके फलस्वरूप उनकी भाषा की प्रभविष्णुता और भी अधिक निखरकर आई है। उन्होंने दोहा-चौपाई शैली में ग्रामीण अवधी भाषा का प्रयोग करते हुए सरल, मृदुल, स्निग्ध, स्वाभाविक और प्रवाहपूर्ण शब्द-विधान का समायोजन किया है। भाषिक संरचना की इस प्रभावोत्पादक क्षमता ने इस वियोग-वर्णन को और भी अधिक मनोरम एवं मनोहारी बना दिया है।

6. तुलनात्मक विवेचन :

नागमती-वियोग-वर्णन के समग्रतः मूल्यांकन हेतु भारतीय वाङ्मय के कुछेक वियोग-वर्णनों के साथ उसका एक संक्षिप्त तुलनात्मक विवेचन इस संदर्भ में अनुचित न होगा -

(i) 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' नाटक में कविकुलगुरु कालीदास ने शकुंतला के वियोग में व्यथित एक मृग-शावक का चित्रण प्रस्तुत किया है। जब शकुंतला अपने गुरु-भाइयों-सहित गुरु-पिता कण्व मुनि के आश्रम से राजा दुष्यंत के राज-प्रासाद में जाने को निकलती है, तब वह पालित मृग-शावक विरह से कातर होकर शकुंतला के वस्त्र को मुँह से पकड़ कर रोकने का प्रयास करता है। मनुष्य की विरह-व्यथा से किसी मूक पशु के कातर होने का यह चित्रण निश्चय ही अनूठा है। कविवर जायसी ने भी ऐसा ही एक चित्र उभारा है - जब रानी नागमती विरह की अतिरेकता में राज-प्रासाद छोड़ कर वन-वन घूमती है और वन के पशु-पक्षियों को अपनी व्यथा-कथा सुनाकर उन्हें अपना संदेशा पति रत्नसेन तक ले जाने का अनुरोध करती है, तब मध्य रात्रि में एक विहंगम नागमती के क्रंदन के उत्तर में बोल उठता है। मनुष्य के विरह-भाव से एक पक्षी के कातर हो उठने का यह चित्रण निश्चय ही रमणीय है।

(ii) मैथिल-कोकिल विद्यापति ने विरह की गहन तल्लीनता और सघनता में नायिका राधा के व्यक्तित्वांतरण का चित्रण किया है। विरहिणी राधा प्रतिक्षण 'माधव-माधव' का स्मरण करते हुए स्वयं 'माधवमयी' बन जाती है। इस स्थिति में कृष्णमयी बनी राधा को राधा का ही विरह सताने लगता है। इस प्रकार दोनों ही स्थितियों में विरहिणी राधा को विरह का ताप झेलना पड़ता है। नागमती-वियोग-वर्णन में भी ऐसा एक दृश्य उकेरा गया है, जहाँ

विरह की सघनता में तल्लीन विरहिणी नागमती अपना रानीपन भूलकर साधारण स्त्री-सी बन जाती है और वैसा ही व्यवहार करने लगती है। इसीलिए पति की अनुपस्थिति में जेठ-आषाढ़ के महीने में वर्षा की झड़ी लगते ही वह अपनी झोपड़ी के छप्पर छाने को लेकर चिंतित हो उठती है। नागमती के व्यक्तित्व का ऐसा अंतरण सर्वथा आकर्षक बन पड़ा है ।

(iii) नागमती का विरह हिंदू दांपत्य-जीवन की मर्यादा में चित्रित एक प्रमुख विरह-वर्णन है। ऐसा ही एक अन्य उदाहरण है 'साकेत' महाकाव्य में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा चित्रित उर्मिला का विरह-वर्णन। कविवर गुप्त ने आधुनिक युग के अनुरूप लक्ष्मण-पत्नी उर्मिला को पर-दु:खकातर रूप में चित्रित किया है। उर्मिला अयोध्या-नगरी की सारी प्रोषित-पतिकाओं को अपने पास बुलाकर उनका दु:ख बाँटती है, पिंजरे में बंद पालित पक्षियों को उड़ा देती है और राज-उपवन के माली-मालिनों को कर्तरी लेकर फूल के पौधों को कतरने के स्थान पर उन्हें सींचने का आदेश देती है। मध्ययुगीन कवि जायसी द्वारा प्रस्तुत नागमती के वियोग-वर्णन में इस पर-दु:खकातरता का निश्चय ही अभाव परिलक्षित होता है, परंतु रानी नागमती के हृदयस्थ भावों का उदात्तीकरण एवं विस्तार अवश्य देखा जा सकता है ।

7. निष्कर्ष :

नागमती-वियोग-वर्णन के वैशिष्ट्यों पर हुए पूर्वोक्त विवेचनोपरांत यह स्पष्ट होता है कि सूफी कवि जायसी द्वारा प्रस्तुत यह वियोग-वर्णन भारतीय परंपरा के अनुसार होते हुए भी कुछेक निराली विशेषताओं से आपूरित है। फारसी साहित्य के विरह-वर्णन की पद्धति का समावेश, बाह्य प्रकृति में विरहिणी नागमती के अंतर्जगत की भावानुभूतियों का प्रतिफलन, रानी नागमती का साधारण स्त्री-जैसा आचरण और सर्वोपरि एक व्यक्ति की विरह-व्यथा में विश्व-मात्र की विरह-व्यथा का बिंबीकरण -ये नागमती-वियोग-वर्णन की अनूठी विशेषताएँ हैं। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि कविवर जायसी-प्रणीत 'पद्‌मावत' में निरूपित नागमती-वियोग-वर्णन सिर्फ हिंदी साहित्य में चित्रित विरह-वर्णनों में ही प्रमुख नहीं है, अपितु समस्त भारतीय वाङ्‌मय तथा विश्व साहित्य के वियोग-वर्णनों में भी मूर्धन्य स्थान पाने योग्य है। ❑

संदर्भ सूची :

त्रिगुणायत, गोविंद. जायसी का पद्‌मावत : काव्य और दर्शन. द्वितीय. कानपुर : साहित्य निकेतन, 1973

पौद्दार, हनुमानप्रसाद, संपा. श्रीरामचरितमानस. सताइसवाँ. गोरखपुर : गीता प्रेस, 2044

वर्मा, धीरेन्द्र, संपा. सूरसागर सार. इलाहाबाद : साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड, 2013

शुक्ल, रामचंद्र, संपा. जायसी ग्रंथावली. उन्नीसवाँ. काशी : नागरी प्रचारिणी सभा, 2056

सिंह, विजयपाल, संपा. आधुनिक काव्यधारा. वाराणसी: अनुराग प्रकाशन, 2007

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

स्त्री अस्मिता के संदर्भ में 'शेष कादम्बरी' का विश्लेषण

राधा गौतम
शोधार्थी, हिंदी विभाग
बाबासहेब भीमराव अंबेडकर
विश्वविद्यालय (केंद्रीय), लखनऊ
उत्तर प्रदेश - 226025
6394442759
salikram963258@gmail.com

आचार्य राम पाल गंगवार
शोध निर्देशक, हिंदी विभाग
बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर
विश्वविद्यालय (केंद्रीय), लखनऊ
विद्याविहार रायबरेली रोड
उत्तर प्रदेश - 226025
9415284738
rplrnarayani@gmail.com

शोध सार :

यह शोध पत्र अलका सरावगी के नारी संबंधी दृष्टिकोण को समझने का प्रयास करता है। इनके उपन्यासों में स्त्रियों की मनोस्थिति का चित्रण बखूबी किया गया है। अलका सरावगी के इस उपन्यास में भी हर स्त्री पात्र अलग-अलग मनोस्थिति से गुजरती है। इसमें अलका सरावगी ने अकेलेपन की त्रासदी से जूझतीं स्त्रियों का चित्रण किया है। इस उपन्यास के केंद्र में स्त्री अस्मिता के लिए संघर्ष दिखाई देता है। अलका सरावगी मानती हैं कि साहित्य समाज के लिए है और साहित्य के माध्यम से ही समाज की समस्याएँ लेखकों द्वारा पाठकों के समक्ष प्रस्तुत की जाती हैं। अलका सरावगी द्वारा रचित उपन्यास 'शेष कादम्बरी' भी स्त्रियों की अनगिनत समस्याओं को उद्घाटित करता है। समय के साथ स्त्री के प्रति समाज में आए बदलाव को अलका सरावगी ने बारीकी से स्पष्ट किया है। यह स्त्री के मन की घुटन को भी चित्रित करता है कि कैसे स्त्री अपने मन की बात किसी से कह नहीं पाती है। इस उपन्यास में इन्हीं सब बातों को मुख्य रूप से उठाया गया है।

बीज शब्द :

अस्मिता, अस्तित्व, पहचान, विमर्श, परंपरा, संघर्ष, आंदोलन, सुदृढ़, संवेदनशील, सशक्त, अधिकार।

प्रस्तावना :

अस्मिता क्या है? हिंदी शब्दकोश के अनुसार अस्मिता का अर्थ अपनी सत्ता का भाव है। अस्मिता का सीधा अर्थ पहचान से है। इस पहचान के कई रूप हो सकते हैं-जैसे देश, जाति, नाम, धर्म, लिंग आदि। हिंदी के प्रसिद्ध साहित्यकार राजेन्द्र यादव अस्मिता के बारे में लिखते हैं कि *''अस्मिता जितनी मेरी है उतनी ही मेरे परिवेश और परंपरा की भी है। उसमें वर्ग, वर्ण, क्षेत्र, धर्म, परंपराएँ सभी कुछ घुला-मिला है।''*[1] अस्मिता अपनी निजी पहचान के साथ-साथ उस समाज की भी पहचान बताती है, जिसके द्वारा हम इस समाज में होते हैं। जब हमारी पहचान खतरे में होती है या जब किसी की पहचान मिटाने की कोशिश की जाती है, तब वह अपनी पहचान को बचाने के लिए संघर्ष करता है और यह प्रयास आंदोलनों तथा साहित्य लेखन, इतिहास लेखन आदि में अभिव्यक्त होता है। व्यक्तिगत या सामाजिक

तौर पर जब व्यक्ति को यह अनुभव होता है कि उसकी अस्मिता खतरे में है, तभी अस्मिता प्राप्ति का संघर्ष होता है। इस संघर्ष का मुख्य उद्देश्य किसी समुदाय या व्यक्ति के लिए अपनी पहचान को बचाना होता है। शोषित व्यक्ति या समुदाय अपने अधिकारों के लिए समाज के शोषण के विरुद्ध खड़ा हो जाता है, जैसे दलित आंदोलन, स्त्री आंदोलन, आदिवासी आंदोलन आदि। अस्मिता को बचाने के मूल में संघर्ष विद्यमान होता है। अस्मिता प्राप्ति के लिए कोई शोषित, पीड़ित, वंचित समुदाय संघर्ष करता है तब यह संघर्ष किसी अन्य समुदाय से उसके विचारों का टकराव भी सिद्ध होता है। किंतु यह नहीं कहा जा सकता है कि अस्मिता के लिए किया गया संघर्ष नकारात्मक है, क्योंकि हर व्यक्ति की अपनी पहचान होती है और इसी पहचान को बनाए रखने के लिए वह संघर्ष करता है।

हिंदी में विमर्श शब्द अंग्रेजी के डिस्कोर्स शब्द के लिए प्रयोग किया जाता है। अस्मिता विमर्श को अंग्रेजी में आइडेंटिट डिस्कोर्स कहते हैं। इसके लिए कम-से-कम दो पक्षों का होना अनिवार्य है, जिससे तर्कसंगत निष्कर्ष पर पहुँचा जा सके। विमर्श से बहुत-सी समस्याओं के समाधान भी निकले हैं। अस्मितामूलक विमर्श पर कई विचारधाराओं का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। विमर्श शब्द से जागरूक होने का बोध होता है और बिना जागरूक हुए अस्मिता का बोध संभव नहीं है, क्योंकि जब तक शोषित या उपेक्षित वर्ग जागरूक नहीं होगा, वह अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष नहीं कर पाएगा।

अलका सरावगी द्वारा लिखित साहित्य में भी स्त्रियाँ अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करती दिखाई देती हैं। 'शेष कादम्बरी' में अकेले रहने वाली स्त्री की स्थिति को चित्रित किया गया है। जहाँ एक ओर यह उपन्यास स्त्री मन की कोमल भावनाओं को व्यक्त करता है, वहीं दूसरी ओर इसके केंद्र में स्त्री शोषण की विभीषिका उद्घाटित होती है। 'शेष कादम्बरी' के माध्यम से अलका सरावगी ने तीन पीढ़ियों के द्वारा स्त्री जीवन की विविध समस्याओं को सामने लाने का प्रयास किया है। उपन्यास में मारवाड़ी समाज में स्त्री के प्रति सामाजिक विचारधारा और भारतीय समाज में नारी की स्थिति को देखा जा सकता है। उपन्यास की केंद्रीय पात्र रूबी दी है, जिसका व्यक्तित्व प्रेरणादायी है। वह जीवन में सभी कष्टों को झेलती हुए मानती है कि जीवन है तो उसका कोई उद्देश्य अवश्य होता है चाहे समझ आए या न आए। शेष कादम्बरी उपन्यास स्त्री मन की स्थिति को प्रस्तुत करने वाला उपन्यास है। इसके पात्र सविता, माया बोस, अपर्णा बनर्जी, फराह आदि के जरिए स्त्री अस्मिता से जुड़े प्रश्नों को उठाया गया है। इसमें यह स्पष्ट किया गया है कि कैसे स्त्रियाँ अपने मन की बात किसी से नहीं कह पाती हैं और अपनों के बीच भी वह स्वयं को अकेला ही महसूस करती है। रूबी दी अकेलेपन से जूझते हुए स्वयं को सशक्त बनाती है और 'परामर्श संस्था' की नींव डालती है। यहाँ समाज की सतायी हुई महिलाएँ रूबी दी से अपना दु:ख.दर्द बांटने आती हैं। इसी संस्था में रूबी की मुलाकात सविता से होती है।

स्वभाव से संकोची वह अपने मन के प्रश्न किसी से नहीं कहती है। वह सदैव प्रश्न पूछे जाने का इंतजार करती है, *''क्या बात है, तुम आई नहीं कई दिनों से? रूबी दी सविता से पूछती है। जवाब में सविता कुर्सी पर बैठे-बैठे अपनी हस्तरेखाएँ देखती रही, क्या देखती रहती हो तुम अपने हाथों में, ज्योतिष वगैरह कुछ जानती हो क्या? रूबी दी से आज रहा नहीं गया। अचानक सविता द्वारा उत्तर दिया गया मैं हाथ देखना जानती हूँ।''*[2] हस्तरेखाएँ देखने वाली सविता से रूबी को एक जुड़ाव महसूस होने लगा था। वह स्वयं में और उसमें समानता देखती है। सविता निरंतर परामर्श आती है, तब रूबी को जीवन के बारे पता चलता है कि वह उसे कोई अपनाना नहीं चाहता है, वह नितांत अकेली है। सविता के पिता तथा पति के लिए स्त्री केवल भोग की वस्तु है। उनके लिए स्त्रियों की भावनाओं का कोई मूल्य नहीं है। कम बोलने वाली सविता रूबी से अपना दर्द बाँटते हुए कहती है, *''उसके हाथों में ठीक पापा के हाथ जैसी रेखाएँ थीं, यानी दो शादियाँ, सविता ने अचानक से कहा। उसने कहा कि उसे एक से एक सुंदर लड़कियों के साथ घुमने की आदत है, सविता के होंठ दुख से थरथरा रहे थे-अब आप कहिए कि कोई औरत कैसे ऐसे रह सकती है? कैसे बर्दाशत कर सकती है यह सब? सिर्फ सर पर छत के लिए।''*[3] हमारे समाज में स्त्रियाँ अपने अधिकारों के लिए आवाज नहीं उठा पाती हैं। वह निरंतर शोषण का शिकार होती है, क्योंकि समाज हर बात के लिए स्त्री को ही दोषी ठहराता है, किंतु समय के साथ इस सोच में थोड़ा बदलाव भी आया है।

इस उपन्यास की कथा एक तरफ रूबी दी के अतीत की स्मृतियाँ हैं, दूसरी ओर उसकी नातिन कादम्बरी से फोन के द्वारा बातचीत का सिलसिला। कादम्बरी बचपन से विदेश में पली-बढ़ी है, परंतु उसने अपने कार्यक्षेत्र के लिए भारत को चुना। वह शुद्ध हिंदी बोलती है। वह मिलनसार और अपने कार्य को पूरी गंभीरता के साथ करती है। रूबी दी से कादम्बरी की बात फोन के द्वारा ही होती है। *''जीरो वन वन, सिक्स फोर टू वन थ्री फाइव-जोर-जोर से नंबर उचारते हुए रूबी दी ने फोन मिलाया, रूबी दी, रूबी दी, कहिए मैं कादम्बरी। तबीयत-पानी ठीक है तो? तबीयत-पानी कहना तुम्हारे नाना से तुम्हारी माँ ने सीखा और अपनी माँ से तुमने? रूबी दी ने चकित होकर सोचा। क्या कर रही हो इन दिनों, किस-किस का उद्धार किया। ओ.के. अच्छी नानी, प्यारी नानी, फिर बात करेंगे।''*[4] कादम्बरी से बातचीत रूबी को अकेलेपन से कुछ राहत देती है। रूबी दी कादम्बरी से असीम स्नेह रखती है। रूबी दी अक्सर अपनी स्मृतियों में खो जाती है। वह सविता और स्वयं में समानता देखती है, सविता की तरह उनका भी कोई नहीं था, जिससे वह अपने मन की पीड़ा बाँट सके। सत्तर वर्षीय रूबी दी का जीवन विराट सूनी इमारत जैसा था। अपनों की चाह होती है इस उम्र में, किंतु अपनों के नाम पर सिर्फ उसकी नातिन कादम्बरी ही थी। चौबीस वर्षीय कादम्बरी उपन्यास में आधुनिक स्त्री का प्रतिनिधित्व करती है। उसका व्यक्तित्व संवेदनशील सुदृढ़ और सशक्त है। वह अखबार तथा टी.वी. के लिए गहन मुद्दों पर रिपोर्ट लिखती है। इसी क्रम में वह रूबी दी को देवीदत्त मामा के ऊपर लिखी रिपोर्ट भेजती है, *''रूबी दी ने कादम्बरी की रिपोर्ट का शीर्षक पढ़ा, तो उन्हें अचम्भा हुआ, 'अदृश्य आदमी?' यह रिपोर्ट देवीदत्त मामा के विषय में थी। रूबी दी ने लंबी साँस छोड़कर पन्ना पलटा तो देखा कि आगे के पन्ने पर कुछ लिखा नहीं है, वह सोचती है कादम्बरी ने उन्हें रिपोर्ट का एक हिस्सा ही मात्र भेजा है। रूबी दी यह सोचती है कि कादम्बरी यह बात जानती है कि उसकी नानी की अपने इस 'दिग्विजयी' या शायद दिग्भ्रमित मामा से कभी नहीं बनी।''*[5] रूबी दी की बड़ी पुत्री गौरी का देवीदत्त मामा से जुड़ाव अधिक था।

रूबी बचपन से ही अकेलेपन को झेलती आई थी, इसलिए वह अक्सर अपनी अतीत की स्मृतियों में खो जाती है। रूबी दी को अपने माता-पिता से असीम स्नेह प्राप्त हुआ, किंतु वह उसके अपने माता-पिता नहीं थे। जब वह ग्यारह वर्ष की थी, तब उन्हें यह पता चला जब उसकी मामी उसकी माँ से झगड़ा करते हुए कहती है, *''बाई आपके तो बच्चे हुए नहीं। आपने पैदा नहीं किए न, इसलिए आपको मालूम नहीं कि थप्पड़ मारकर भूखे बच्चे के सोने पर माँ को कितनी तकलीफ होती है। क्या कह रही हैं? मामीजी पैदा नहीं किए बच्चे, तो वह क्या आसमान*

से टपक पड़ी थी? कितनी मूर्ख हैं मामीजी माँ इनसे बात ही क्यों करती हैं।''[6] अपने बारे में छिपे सत्य को जानकर रूबी के बालमन पर गहरा आघात लगा। उसका जीवन एक नया मोड़ ले लेता है। उसे लगने लगता है उसका कोई नहीं है और यहीं से रूबी के घुटन भरे जीवन की शुरुआत होती है। उस रात के बाद रूबी अपने माता-पिता से छोटी से छोटी चीजों की भी इच्छा जाहिर नहीं कर पाई।

अकेलेपन से जूझती रूबी के जीवन में मिस्टर वियेना का प्रवेश होता है, रूबी के पिता ने उसे पढ़ाने के लिए मिस्टर वियेना को नियुक्त किया था। उनका साधारण व्यक्तित्व रूबी के मन को छू जाता है। वह रूबी को 'माई प्रेशस रूबी' कहने लगते हैं। वह अपने हर प्रश्न का उत्तर मिस्टर वियेना से चाहती है, जिन्हें वह कभी किसी से पूछ नहीं पाई। मिस्टर वियेना उसके हर प्रश्न का उत्तर बिना प्रश्न किए देते हैं। वह जानना चाहती है कि *''उसके घर का एक कमरा हमेशा बंद क्यूँ रहता है। मिस्टर वियेना उसे बताते हैं कि तुम्हारे पिता की बहन यानी तुम्हारी बुआ ने एक अंग्रेज के प्रेम में पड़ कर खुद को वहाँ जला डाला था-मिस्टर वियेना के हाथ काँप रहे थे और उनकी आवाज भी।''*[7] उस दिन के बाद मिस्टर वियेना को किसी ने नहीं देखा। बहुत सारी बातों में यह पता चला कि रात को गंगा में नौका पलट जाने से उनकी मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु के बाद रूबी को यह पता चलता है कि बुआ का अंग्रेज प्रेमी कोई और नहीं, बल्कि मिस्टर वियेना ही थे। वह हत्प्रभ रह जाती है। रूबी फिर से अकेली हो जाती है। लेखिका ने यह बताने का प्रयास किया है कि समाज के लिए जाति, धर्म सर्वोपरि है न कि प्रेम। समाज विजातीय प्रेम को स्वीकार नहीं कर पाता। आज भी हमारे समाज में इस तरह की कुरीतियाँ व्याप्त हैं।

रूबी दी बचपन की स्मृतियों से निकल कर युवावस्था की स्मृतियों में पहुँचती है, जहाँ सुधीर के साथ बिताए वक्त को याद करती है। बचपन से अकेलेपन की शिकार रूबी को अपनी ससुराल में ज्यादा अमीर होने तथा अधिक पढ़ी-लिखी होने के कारण तानों का सामना करना पड़ता है। मानो जैसे यह सब उसके दोष हैं, क्योंकि हमारे समाज का स्त्री के प्रति दृष्टिकोण ही ऐसा है कि वह हर बात के लिए स्त्री को ही दोषी ठहराता है। यह रूबी के साथ भी होता है। जब वह पहली बार अपनी ससुराल में प्रवेश करती है, *''शादी के जोड़े में गृह प्रवेश करते हुए द्वार पर खड़ी सास के पाँव छूने को झुकते हुए रूबी ने अपनी ओर बढ़ता हुआ हाथ देखा। उसने बिना कुछ सोचे सास को सोने की गिन्नियों की थैली पकड़ा दी, थैली ले ली गई, पर रूबी को लगा कि उस हाथ ने रूबी को धक्का दिया, रूबी सोच में पड़ गई कि क्या पार्किन्संस में धक्का देने के भी लक्षण होते हैं।''*[8] ससुराल में मिलने वाली इस उपेक्षा का एक स्त्री के मन को कितनी ठेस पहुँचाता है। यह कहानी सिर्फ रूबी दी की ससुराल की ही नहीं, वरन भारतीय समाज में बहू बनकर जाने वाली लगभग हर स्त्री की यही कहानी है कि जीवन भर अपना सर्वस्व समर्पित करने के बाद भी वह अकेली रह जाती है।

अकेलेपन से जूझती रूबी दी की स्थिति में विवाह के बाद भी कोई परिवर्तन नहीं आता है। अपने शांत स्वभाव के कारण वह सब सहती रहती है, यहाँ तक की उसके खाने-पीने पर भी रूबी की सास द्वारा ताने ही दिए जाते। जब वह कहती है, *''लेकिन बाई मैं तो चाय पीती नहीं, अचानक हवा में सन्नाटा छा गया, चाय नहीं पीती? तो क्या पीती थी वहाँ? रूबी ने कहा दूध तथा रस पी लेती थी, सुन बहू हमारे घर में सब चाय पीते हैं। दूध-रस पीना हो तो अभी अपने बाप के घर चली जा,-कड़कदार स्वर गूँजा।''*[9] रूबी गहरी हताशा से भर गई। वह अपने पति सुधीर से भी कुछ कहती नहीं है। परिणामत: वह मानसिक तथा शारीरिक -रूप से अस्वस्थ हो जाती है। *''डॉ. डेविस रूबी से बात करके उसके अस्वस्थ होने का कारण जानना चाहते है, 'इट वाज वेरी अनफोरचुनेट, कि तुम्हारे पास कोई ऐसा नहीं था- न इधर न उधर जो तुम्हारी तकलीफें सुनता।' अचानक रूबी रोने लगी थी, सुबक-सुबक कर- डाक्टर, डाक्टर, मेरे जीवन में कुछ बहुत बुरा होने वाला है, मिस्टर गुप्ता। योर वाइफ इज 'सीरियसली इल' यदि आपने समय रहते इनका इलाज नहीं करवाया, तो आपको एक दिन बुरी तरह पछताना पड़ेगा।''*[10] तब यह सुनकर सुधीर बहुत घबरा जाता है। वह सोचता है कि वह रूबी के लिए कुछ नहीं कर पाया। इस दौरान रूबी की दो पुत्रियाँ

होती हैं। खुशनुमा माहौल न मिलने के कारण रूबी एनीमिक हो जाती है। गर्भावस्था के दौरान एक स्त्री को स्वस्थ वातावरण मिलना चाहिए, परंतु सामाजिक ताने-बाने में यह बात उतनी जरूरी नहीं लगती है, जितनी जरूरी समझी जानी चाहिए।

सुधीर की स्मृतियों में खोई रूबी अपने जीवन के नए अध्याय में प्रवेश करती है। डॉ. डेविस के इलाज के बाद रूबी फिर से अपने सत्य की खोज करने लगती है और इस बार सुधीर रूबी का साथ देता है। *''सुधीर के अपनी छोटी माँ को बड़ी भाभी के सामने कहे गए शब्द उस सुबह को रोशन कर रहे थे- मैं नहीं जानता कि उसे क्या तकलीफ है इस घर में और क्यों है। मैंने जानने की कभी कोशिश भी नहीं की। पर अब मुझे उसे नया जीवन देना ही होगा। यह उसका अधिकार है और मेरा कर्तव्य भी।''* [11] यदि पुरुष स्त्रियों का सहयोग करे तो समाज में स्त्रियों को अपनी अस्मिता एवं अस्तित्व के लिए संघर्ष कम करना पड़ेगा।

स्वयं को तलाशती रूबी की मुलाकात वासुमणि से होती है। वह उसके साथ 'गुड फ्रेंड्स सोसाइटी' में काम करने लगती है। वह पूरी लगन के साथ अपना काम करती है। *''रूबी को पहली बार पता चला कि उसमें जन्मजात प्रतिभा है कि वह दूसरों के कष्ट को भाँप ले, उन्हें समझ सके और उन्हें शांति, सांत्वना और संबल दे सके। खुद वासुमणि ने किसी क्षण में अपने स्वाभाव के विपरीत जाकर उसे कहा था, तुममें कुछ ऐसा है कि तुम्हारे पास आने वाला हर व्यक्ति राहत महसूस करता है।''* [12] किंतु वहाँ भी रूबी की अपनी कोई पहचान नहीं बन पाती है, वासुमणि का रूख इस कदर बदल गया था कि रूबी उसे प्रतिस्पर्धी नजर आने लगी थी। *''अंत में एक दिन नशीली दवाओं के आदी लोगों के लिए फंड इकट्ठा करने की रूबी की सलाह पर उसने कहा, तुम्हारे दिमाग में पैसा भरा है। तुम सोचती हो कि पैसे की ताकत से तुम सब काम कर सकती हो। उस दिन के बाद से रूबी को किसी ने 'गुड फ्रेंड्स सोसाइटी' में नहीं देखा।''* [13] क्योंकि यहाँ पर भी पुरुषवादी सोच के चलते वासुमणि रूबी से मिलने आए लोगों को उससे मिलने नहीं देता है। इस व्यवहार से रूबी बहुत आहत होती है और उससे अलग होकर अपनी संस्था 'परामर्श' शुरू करती है। वह रूबी गुप्ता से रूबी दी बन जाती है। इस संस्था के द्वारा वह समाज की सताई हुई स्त्रियों के दु:ख-दर्द को दूर करने का प्रयास करती है।

उपन्यास में रूबी दी आत्महत्या के विरुद्ध लड़ती दिखाई देती है, बल्कि वह स्वयं भी कभी आत्महत्या करना चाहती थी, क्योंकि उसे लगने लगा था कि उसका कोई नहीं है जब डॉक्टर सुधीर से कहते हैं- *हाइली सुसाइडल- गंभीर रूप से आत्महत्या की प्रवृत्ति लिए सुनकर सुधीर दंग रह गए थे। बात यहाँ तक पहुँच गई और उन्होंने कभी ध्यान तक नहीं दिया, बेचारी अकेली सहती रही न जाने क्या-क्या।* [14] आत्महत्या किसी भी समस्या का समाधान नहीं है, रूबी भी इस सोच से बाहर निकल कर स्वयं के अस्तित्व के लिए उठ खड़ी होती है और अपनी पहचान बनाती है। आजकल के युवाओं में आत्महत्या की बढ़ती प्रवृत्ति की समस्या को उपन्यास में गंभीर रूप से उठाया गया है। आभा जैन की पुत्री, कल्याणी तथा रूबी की बुआ आदि पात्र आत्महत्या करते हैं। व्यक्ति को परिस्थितियों का सामना डट कर करना चाहिए। आभा जैन के बारे में रूबी सोचती है, *''क्यों की होगी उसकी लड़की ने आत्महत्या? अभी तक आठ बार आभा जैन मिलने के बावजूद नहीं जान पाई हैं। हर बार अपनी मृत लड़की के गुणों का बखान करती रही है, जैसे उसे यह एहसास ही न हो कि उसकी लड़की अब जिंदा नहीं है।''* [15] युवाओं को ऐसी पलायनवादी सोच से बाहर निकालने की आवश्यकता है। उनका सही मार्गदर्शन करके उन्हें ऐसे गलत कदम उठाने से रोका जा सकता है।

पूरे उपन्यास में रूबी स्वयं को तलाशती है, और वह चाहती है कि 'उसकी परामर्श संस्था' में आने वाली हर स्त्री भी आत्मनिर्भर बन सके। वह अपनी वसीयत तैयार करती है, जिसमें वह कादम्बरी को अपना वारिस बनाती है वह कहती है, *''पर मैं कादम्बरी से यह प्रार्थना करती हूँ कि वह सविता को आत्मनिर्भर जिंदगी जी पाने के लिए खुद को मिलने वाले नकद रुपयों में से पच्चीस प्रतिशत रुपए दे, यह कादम्बरी के लिए कोई आदेश नहीं है।''* [16]

निष्कर्ष :

शेष कादम्बरी में उपन्यास में स्त्री मन की स्थिति का बहुत ही संवेदनशील तरीके से चित्रण किया गया है, जिसका हर स्त्री पात्र स्वयं को अकेला महसूस करता है, उसे अपने मन की पीड़ा बाँटने के लिए कोई नहीं मिलता है। उपन्यास की मुख्य पात्र रूबी दी अकेलेपन की अवस्था से जूझ रही है, किंतु वह सशक्त भी है। वह समाज की सताई स्त्रियों की सहायता करती है। उपन्यास में इस समस्या का भी चित्रण हुआ है कि स्त्री यदि पुरुष से अधिक ख्याति पाने लगती है तो यह बात पुरुष प्रधान समाज को अच्छी नहीं लगती है और वह विभिन्न तरीकों से उसे प्रताड़ित करने लगता है। लेखिका ने इसमें इस बात पर बल दिया है कि पारिवारिक तथा सामाजिक हिंसा की शिकार युवतियों की स्थिति सुधारने तथा उनमें आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए सब को मिलकर प्रयास करना चाहिए। उपन्यास में आभा जैन की पुत्री रूबी की बुआ तथा कल्याणी के द्वारा आत्महत्या करना मनुष्य की पलायनवादी प्रवृत्ति को चित्रित करता है।

युवाओं द्वारा आत्महत्या करना वर्तमान परिदृश्य की एक गंभीर समस्या एवं चिंता का विषय है। मनुष्य जब स्वयं को अपमानित एवं हारा हुआ महसूस करता है, तब वह यह सोचता है कि आत्महत्या करने से सारी कठिनाइयाँ समाप्त हो जाएँगी। मनुष्य को कठिनाइयों का सामना करना चाहिए न कि आत्महत्या करनी चाहिए। आत्महत्या किसी भी समस्या का समाधान नहीं है। उपन्यास के सभी पात्र अपनी पहचान के लिए संघर्ष करते दिखाई देते हैं। ❑

संदर्भ सूची :

1. राजेंद्र यादव, हंस पत्रिका, जून 2003, पृष्ठ संख्या–9
2. अलका सरावगी, शेष कादम्बरी, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली–110002, दूसरा संस्करण 2016, पृष्ठ संख्या–67
3. वही, पृष्ठ संख्या–69
4. वही, पृष्ठ संख्या–13
5. वही, पृष्ठ संख्या–105
6. वही, पृष्ठ संख्या–29
7. वही, पृष्ठ संख्या–49
8. वही, पृष्ठ संख्या–75
9. वही, पृष्ठ संख्या–76
10. वही, पृष्ठ संख्या–77
11. वही, पृष्ठ संख्या–105
12. वही, पृष्ठ संख्या–105
13. वही, पृष्ठ संख्या–38
14. वही, पृष्ठ संख्या–89
15. वही, पृष्ठ संख्या–38
16. वही, पृष्ठ संख्या–199

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

डॉ. अंबेडकर के चिंतन में स्त्री विमर्श
(भारत के विशेष संदर्भ में)

राजेश कुमार शाह

शोधार्थी, इतिहास विभाग
डी.ए.वी. (पी.जी.) कॉलेज
देहरादून, उत्तराखंड - 248001
8755651524
rajeshshahxyz@gmail.com

शोध सार :

भारतीय इतिहास में पुरातन काल से लेकर वर्तमान समय तक स्त्री का विशिष्ट स्थान रहा है। महिलाओं से सामाजिक विभेदीकरण के कारण समय-समय पर विदुषी और चिंतकों ने स्त्री अभ्युदय एवं सशक्तिकरण के लिए आवश्यक प्रयास किए, तत्पश्चात कानून बनवाए गए, जिनमें डॉ. अंबेडकर का योगदान उल्लेखनीय है। तद्नुसार महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार मिले और वह समाज की मुख्य धारा में आकर पुरुषों की परिचारक बन सके। अंबेडकर का दृष्टिकोण महिलाओं के हितों एवं उनके अधिकारों के प्रति संवेदनशील था। फलत: उन्होंने महिलाओं की जीविका को परिवर्तित करने वाले लगभग सभी क्षेत्रों- शिक्षा, विवाह, परिवार नियोजन, संपत्ति, तलाक एवं भरण-पोषण आदि को अपने आत्मविश्लेषण का हिस्सा बनाकर स्त्री मुक्ति का आह्वान किया।

संकेत शब्द :

चिंतन, स्त्री विमर्श, विभेदीकरण, सशक्तीकरण, परिवार नियोजन, उत्तराधिकार, गरिमामय जीवन, आत्मविश्लेषण, तलाक।

मूल आलेख :

हमारे पुरातन धर्म ग्रंथों, उपनिषदों, वेदों, स्मृतियों, रामायण एवं महाभारत जैसे ग्रंथों में नारी को समग्र विद्याओं और कलाओं के भीतर दैवीय रूप में प्रदर्शित किया गया है। ब्राह्मण ग्रंथों में उन्हें ब्रह्म (सृजक) तो दूसरी ओर शतपथ ब्राह्मण जैसे वैदिक ग्रंथ में नारी के लिए 'श्री' शब्द का संबोधन किया गया है। बुद्ध ने सदैव महिलाओं को आत्म-सम्मान प्रदान करने एवं उनकी अवस्थिति को श्रेष्ठ बनाने का भगीरथ प्रयास किया। बौद्धिक विकास एवं चारित्रिक दृष्टि से भी वे महिलाओं को हीन तथा अक्षम नहीं समझते थे। यही नहीं, बुद्ध ने स्त्रियों के लिए धर्म की शरण में निमित्त कुमारीत्व की अनिवार्यता नहीं रखी। अपितु विवाहिता, अविवाहिता, वेश्या एवं विधवा सभी महिलाओं के लिए मार्ग प्रशस्त किया। बौद्धकालीन स्त्री की स्वाधीनता का साक्ष्य स्वमुक्ता, ब्राह्मणी भिक्षुणीद्ध के शब्दों

से स्पष्ट बयाँ होता है कि *''कितना मुक्त जीवन है मेरा, और इस मुक्त जीवन के साथ कितना यश मुझे प्राप्त हो रहा है।''*[1]

बौद्धकालीन महिला के समतुल्य कौटिल्य के दौर में भी नारी को समाज में श्रद्धास्पद प्रतिष्ठा प्राप्त थी। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में स्त्रियों के विवाह, पुनर्विवाह एवं उनके आजीविका से संबंधित नियमों का उल्लेख मिलता है। इसके अनंतर कौटिल्य ने विवाह व्यवस्था के लचीलेपन के निमित्त विवाह-विच्छेद के नियम भी वर्णित किए। *''उनका मानना था कि यदि स्त्री या पुरुष अपने वैवाहिक जीवन में सुखप्रद नहीं हैं तो वे एक-दूसरे से सहमतिपूर्वक विवाह संबंधों का परित्याग कर सकते हैं, किंतु इसके लिए पुरुष को अपनी जीवनसाथी को आर्थिक क्षतिपूर्ति देनी होगी तथा यदि स्त्री विवाह परित्याग को प्राथमिकता देती है तो वह अपनी परिसंपत्ति पर कोई दावा नहीं कर सकती है।''*[2]

''उत्तर वैदिककालीन समाज में स्त्रियों की स्थिति का पतन होना प्रारंभ हो गया था। विवाह, धर्म, संपत्ति एवं शिक्षा के ह्रास होने के फलस्वरूप भी स्त्रियों की परिस्थिति दैनंदिन क्षीण होने लगी।''[3] मनु का नजरिया स्त्रियों के प्रति अच्छा नहीं था। मनुस्मृति में मनु ने कहा है कि *''स्त्रियों को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं था, जिसके कारण उनके संस्कार वेद-मंत्रों से नहीं कराए जाते और वेदाध्ययन न होने के कारण वे ज्ञान शून्य भी होती है, अस्तु उनमें असत् का वास होता है।''*[4] आगे वे कहते हैं कि स्त्री की बाल्यावस्था पिता के अधीन, युवावस्था पति के अधिकारिता में एवं पति के मृत्युपरांत पुत्र के प्रतिपाल्यता में होना चाहिए। अतः निर्विवाद कहा जा सकता है कि मनु के समय से ही स्त्रियों की परिस्थिति और उनके अधिकारों में उतरोत्तर ह्रास का दौर प्रारंभ हुआ।

मध्यकालीन भारतीय महिलाओं की सामाजिक स्थिति में न्यूनता देखने को मिलती है। इसी अवनति के कारण इस काल को 'अंधकारमय युग' की संज्ञा प्रदान की गई। भारतीय राजाओं की आपसी कलह और वैमनस्य ने मुसलमान शासकों को यहाँ आने का न्योता दिया तथा मौका पाते ही उन्होंने भारत में अपना आधिपत्य स्थापित किया। इस कालावधि की यह बात प्रमुखता से उल्लेखित है कि *''स्त्री को निरंतर किसी-न-किसी के निरीक्षण में रहना चाहिए। बाल विवाह के साथ ही साथ स्त्रियों को समाज में प्राय: पर्दा प्रथा की रीति ने चारदीवारी की गुलामी में बंद कर दिया था। यही नहीं, शिक्षा से भी उन्हें वंचित कर दिया गया। सती प्रथा के कारण भी महिलाओं की स्थिति अत्यंत पीड़ादायक रही। इस कालखंड में पति को ईश्वर मानना, पतिपरायणता धर्म को निभाना एवं पति के आदेशों का परिपालन करना ही स्त्री के लिए अपरिहार्य माना गया। परिणामस्वरूप मध्यकालीन समाज में स्त्री को जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत पुरुषों के अधीन माना गया।''*[5] इस काल में परिव्याप्त महिलाओं की *''आर्थिक पराधीनता, कुलीन विवाह प्रथा, अंतर्विवाह, बाल विवाह, अशिक्षा जैसी प्रथाओं ने महिलाओं की स्थिति का अध: पतन कर दिया था, जिसके परिणामत: ही मध्यकाल को भारतीय संस्कृति में महिलाओं का 'अंधकार का युग' कहा गया है।''*[6]

19वीं शताब्दी में यूरोपीय विद्वानों के एक विश्लेषण के पश्चात यह माना गया है कि हिंदू महिलाएँ स्वाभावगत रूप से अनुकरणीय तथा अन्य महिलाओं से अधिक आचारवान होती हैं। भारत में अंग्रेजी सत्ता के समय में राजा राममोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, ज्योतिबा फूले आदि ऐसे महान समाज सुधारक हुए, जिन्होंने महिलाओं के अभ्युदय एवं कल्याण के लिए निरंतर संघर्ष किया। *''राजा राममोहन राय के अथक प्रयासों से ही सती प्रथा*

का उन्मूलन हो पाया। ईश्वर चंद्र विद्यासागर के निरंतर प्रयास से विधवाओं की दुर्दशापूर्ण स्थिति में सुधार हेतु विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1856 का अधिनियम आया। लगभग इसी समय रमाबाई ने भी महिलाओं को सामर्थ्यवान बनाने के प्रयास किए।''[7] वर्तमान युग में भी महिलाओं को कई सामाजिक कुरीतियों जैसे कन्यावध, बाल विवाह, पर्दा प्रथा, बहुपत्नी विवाह, विधवा जीवन और अशिक्षा से प्राय: मुक्ति नहीं मिल पाई। तदनुसार स्त्रियों के प्रति उत्पीड़न, अमानवीय प्रथाओं एवं रीति रिवाजों का नियम व्याप्त रहा। कालांतर में इस शोषण के प्रति विकट तीक्ष्ण स्वर उठे और तत्पश्चात उनके उद्धार हेतु निरंतर प्रयास किए गए।

19वीं शताब्दी में पाश्चात्य प्रभाव के कारण एवं भारत के कुछ महान समाज सुधारकों के प्रयासों से सती प्रथा एवं कन्यावध जैसी सामाजिक कुप्रथाओं को कानूनी अमलीजामा पहनाकर समाप्त कर दिया गया। *''ईश्वर चंद्र विद्यासागर की महत्वाकांक्षा से कानूनी तौर पर युवतियों के विवाह की आयु को बढ़ाया गया, जिससे कि वे अपने अस्तित्व और विवाह के वास्तविक अर्थ को पहचान सकें, तथा हिंदू विधवाओं के पुनर्विवाह को भी कानूनी रूप से स्वीकृति प्रदान की गई एवं महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार दिये जाने के सफल प्रयास भी किए गए।''*[8]

डॉ. अंबेडकर का स्त्री विमर्श चिंतन :

पुरातन काल में वैदिक, बौद्ध एवं कौटिल्य कालीन समय का अध्ययन करने के उपरांत भीमराव अंबेडकर इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि तीनों ही काल में राजनीति को छोड़ दें तो बौद्धिक और सामाजिक क्षेत्र में निर्विवाद ही स्त्री की स्थिति श्रेष्ठ थी, किंतु कालांतर में मनु के आविर्भाव से उसकी स्थिति उतरोत्तर क्षीण होती चली गई, जिसे लेकर अंबेडकर बहुत अधिक व्यथित थे। मनुस्मृति से पूर्व भी ये कुरीतियाँ सामाजिक मान्यताओं के रूप में विद्यमान थीं, किंतु मनु ने इन्हें धर्मशास्त्र एवं राज्य विधान का अंग बनाया और तत्पश्चात क्रमश: ये विधान कठोर नियमों में रूपांतरित हो गए। इन्हीं परिस्थितियों ने अंबेडकर को स्त्री विमर्श हेतु उद्वेलित किया। डॉ. अंबेडकर शताब्दियों से पीड़ित एवं शोषित हुई महिलाओं की जीवन शैली को दीप्तिमान बनाने के लिए निरंतर संघर्षरत रहे। प्राय: स्त्रियों की समानता, स्वतंत्रता एवं अधिकारों की प्राप्ति हेतु वे प्रतिपल तटस्थ रहे। *''अंबेडकर एक ऐसे उच्च कोटि के महान समाज सुधारक हुए, जिन्होंने भारत की मूकबधिर नारी समाज को एक क्षमतावान ज्ञानदेवी प्रदान की, जिससे भारतीय नारी समाज के अंधकारमय जीवन में प्रकाशपुंज खिल उठा।''*[9] अपनी पत्नी रमाबाई को लिखे पत्र में अंबेडकर ने अपना विचार व्यक्त किया कि ''प्रिय रामू मैं स्त्री मुक्ति के लिए लड़ने वाला सिपाही हूँ। चाहे मेरा कोई कितना विरोध क्यों न करे, किंतु मैं स्त्रियों को उनके अधिकारों को दिलाने के लिए शरीर से खून की आखिरी बूँद तक लड़ता रहूँगा, लेकिन पीछे नहीं हटूँगा।'' *उनके मन में स्त्री उद्धारक के प्रति कितनी तड़प थी, इसका आकलन सहज ही उनका अपनी पत्नी को लिखे पत्र से स्पष्ट होता है। इस कारण उन्हें स्त्री उद्धारक के पुरोद्धा के रूप में जाना जाता है।''*[10]

अंबेडकर ने महिलाओं की एक सभा को संबोधित करते हुए कहा था कि ''मैं किसी समाज की प्रगति का अनुमान इस बात से लगाता हूँ कि उस समाज की महिलाओं की कितनी प्रगति हुई है।'' *उनकी दृष्टि में किसी भी समाज की उन्नति का मापदंड नारी है, पुरुष नहीं।*[11] अंबेडकर का मानना था कि समाज में क्रांति एवं परिवर्तन लाने के लिए महिला वर्ग को भी निश्चित ही पुरुष वर्ग का सहयोगी बनाना होगा। वे मानते थे कि समाज के आधे अंग को जागृत किए बिना समाज में क्रांति लाना असंभव है। बम्बई में एक महिला सभा को संबोधित करते हुए वे कहते हैं कि ''नारी राष्ट्र की निर्मात्री है, हर नागरिक उसकी गोद में पलकर बढ़ता है। नारी को जागृत किए बिना एक राष्ट्र का विकास असंभव है। इसलिए स्त्री को शिक्षित होकर राष्ट्र की उन्नति में सहयोग करना चाहिए।'' फलत: महिलाओं के लिए उन्होंने निरंतर समृद्धि के पथ पर चलने का आवाहन किया।

स्त्री विमर्श के वाहक डॉ. भीमराव अंबेडकर ने स्वतंत्रता, समानता तथा स्वाभिमान से युक्त जीवन जीने पर जोर देते हुए दो मूल मंत्र दिए– *पहला, शिक्षित बनो, संगठित रहो और संघर्ष करो तथा दूसरा 'अत्त दीपो भव' अर्थात अपना*

दीपक स्वयं बनो।[12] साथ ही अंबेडकर ने प्रश्न उठाया कि ज्ञान और विद्या पर केवल पुरुषों का एकाधिकार क्यों? जबकि *''घर में एक पुरुष पढ़ता है तो केवल वही पढ़ता है और यदि घर में स्त्री पढ़ती है तो पूरा परिवार पढ़ता है।''*[13] शिक्षा की नींव को सशक्त करने के लिए अंबेडकर जाति, लिंग, जन्म स्थान, धर्म आदि के भेदभाव को नकारते हुए 6-14 वर्ष तक के बच्चों को समान, अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा को संविधान के भाग- तीन में वर्णित मूल अधिकारों का हिस्सा बनाना चाहते थे, किंतु तत्कालीन समय में पर्याप्त समर्थन के अभाव में उनका यह प्रयास पूरा न हो सका। भारत सरकार ने 2002 में 86वाँ संविधान संशोधन करके मौलिक अधिकारों में अनुच्छेद 21 (क) जोड़ा, जिसके तहत 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा का प्रावधान कर अंबेडकर के सपने को साकार तो किया, किंतु उनके योगदान को श्रेय दिए बिना। *''अंबेडकर के अनुसार स्त्री जाति को सशक्त बनाने के लिए शिक्षित एवं संगठित होकर अपने न्याय एवं अधिकारों की प्राप्ति के लिए निरंतर संघर्ष करना चाहिए।''*[14]

अंबेडकर ने बाल विवाह का विरोध करते हुए उचित उम्र में महिलाओं के विवाह की पुरजोर वकालत की। विवाह जैसे मुद्दे पर भावी जीवन साथी के चयन में लैंगिक असमानता को दूर करते हुए उन्होंने कहा, *''पत्नी कैसी होनी चाहिए इस बारे में पुरुषों का विचार जाना जाता है वैसे ही पति कैसा हो इस बारे में महिला का विचार जान लेना भी आवश्यक है। स्त्री भी व्यक्ति है और उसे भी वैयक्तिक स्वतंत्रता मिलनी चाहिए।''* [15] इसके अनंतर महिलाओं को भी तलाक का अधिकार प्राप्त हो, इसके लिए उन्होंने पुरजोर वकालत की। परिवार नियोजन का नारा भारत में भले ही स्वतंत्रता के बाद प्रचलित हो, किंतु भीमराव अंबेडकर ने इसकी अहमियत को बहुत पहले ही भाँप लिया था। विशेषत: काफी हद तक यह उनके निजी जीवन के अनुभवों पर आधारित था। *''बच्चे अधिक तथा आय कम संयुक्त रूप से संपूर्ण परिवार के दुख एवं दर्द का कारण बनता है। इसलिए उन्होंने सुझाव दिया कि बच्चे दो ही अच्छे। ''*[16] इसके अलावा परिवार नियोजन के बेहतर क्रियान्वयन में महिलाओं को उनकी भागीदारी से परिचित कराया ताकि बेहतर ढंग से वे पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन कर पायें।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में महिलाओं की दयनीय दशा के लिए डॉ. अंबेडकर नित्य संघर्षरत रहे। शिक्षा, संपत्ति, स्वतंत्रता आदि से भारतीय महिलाओं को वंचित रखा गया था। अंबेडकर ने भारतीय महिलाओं की इस दीन-हीन दशा को देखते हुए न्याय प्राप्ति हेतु 'हिंदू कोड बिल' को संसद में पेश किया, किंतु न्याय के इस दस्तावेज हेतु उन्हें विरोध का सामना करना पड़ा, जिसके फलस्वरूप उन्होंने कानून मंत्री के पद से ही इस्तीफा दे दिया। हिंदू कोड बिल वास्तव में सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए एक सराहनीय प्रयास था। *''सदैव ही उल्लेखनीय रहेगा कि उन्होंने सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए इस दस्तावेज में नाकाम रहने के कारण अपने गौरवान्वित कानून मंत्री के पद को त्याग कर स्वयं को ईमानदार, जागरूक एवं सच्चे योद्धा के रूप में परिलक्षित किया।''* [17] हिंदू कोड बिल लैंगिक भेदभाव पर आधारित पितृ सत्तात्मक ढाँचे से निजात पाने का एक प्रयास है।

प्रारूप तैयार होने के बाद जब हिंदू कोड बिल संसदीय पटल पर चर्चा के लिए रखा गया तो प्रशंसा से अधिक इसका विरोध किया गया। हिंदू कोड बिल के विरोधियों को करारा जवाब देते हुए अंबेडकर ने कहा कि *''हिंदू कोड बिल हिंदू कानून-व्यवस्था में सुधार करके उसे एक निश्चित स्वरूप प्रदान करेगा। यह देश की एकता के लिए अनिवार्य है कि हिंदुओं के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन के स्वरूप को एक ही प्रकार की कानून-व्यवस्था के अनुसार चलाया जाए।''*[18] भीमराव अंबेडकर ने महिलाओं की प्रतिष्ठा को बनाए रखने के लिए 'हिंदू कोड बिल' में इन प्रमुख बातों को समाहित कर यथा- *''जन्मजात अधिकार के सिद्धांत का उन्मूलन, पिता की सम्पत्ति में पुत्रियों को पुत्रों के समान अधिकार, महिलाओं को संपत्ति में संपूर्ण अधिकार एवं तलाक व्यवस्था को सँजोकर 'हिंदू कोड बिल' के आधार पर भारतीय महिला को एक सशक्त महिला बनाने के लिए सराहनीय प्रयास किया।''*[19] भीमराव अंबेडकर सदैव ही स्त्री मुक्ति के समर्थक रहे। उन्होंने समग्र भारतीय महिलाओं के उत्थान के लिए बड़ी बुद्धिमता

के साथ 'हिंदू कोड बिल' की रचना की। महिलाओं की सामाजिक समानता की स्थापना के लिए उन्होंने समाज में स्त्री मुक्ति को प्रधान स्थान प्रदान किया। डॉ. अंबेडकर सदैव ही नारी का आत्मोद्धार, तेजस्विता, स्वाभिमान, स्वावलंबन एवं आत्म सम्मान की भावना को जागृत करना चाहते थे।

निष्कर्ष :

आधुनिकतम स्त्री विमर्श समाज सुधारकों में डॉ. भीमराव अंबेडकर का विशिष्ट स्थान है। डॉ. अंबेडकर सामाजिक प्रगति का आधार स्तंभ स्त्री के अभ्युदय को मानते थे। स्वातंत्र्योत्तर महिला के हक-हकूकों की अवस्थापन के लिए सर्वदा प्रयत्न भारतीय संविधान के अनुरूप किए गए। संविधान की सहायता से डॉ. अंबेडकर को महिला अधिकारों को संरक्षित करने का श्रेय दिया जाता है। नारी मुक्तिवादी अधिकारों एवं उनके गरिमामयी जीवन की रक्षा के लिए संविधान में तो व्यवस्था की ही, साथ ही उन्होंने महिला सशक्तीकरण के लिए एक विशेष दस्तावेज भी तैयार किया, जिसे हम 'हिंदू कोड बिल' के नाम से जानते हैं, जिसके अंतर्गत स्त्रियों को विवाह, दत्तक ग्रहण करने, तलाक एवं उत्तराधिकार इत्यादि विशेष समस्याओं पर स्वनिर्णय लेने का अधिकार प्रदान किया गया। वर्तमान समय में डॉ. अंबेडकर की गरिमामय चिंतनधारा को प्रगतिशील पथ पर ले जाना नई पीढ़ी की बुद्धिमता, दक्षता, क्षमता, कर्तव्य और सक्रियता पर निर्भर करता है कि वे किस प्रकार नारी उन्नति के लिए होने वाले प्रयत्नों में अपनी अहम भूमिका निभाते हैं। परिणामत: अपने समय में किए गए सामाजिक द्वंद्व, स्वतंत्र-समतापूर्ण जीवन शैली और भाईचारायुक्त समाज व्यवस्था की मीमांसा तथा स्त्री विमर्श के लिए किए गए संघर्ष के फलस्वरूप डॉ. अंबेडकर वर्तमान में अपने समय से अधिक प्रासंगिक हो गए हैं। ❑

संदर्भ सूची :

1. अंबेडकर, भीमराव, 'हिंदू नारी उत्थान और पतन', 2009, गौतम बुक सेंटर, दिल्ली, पृ. सं. 15
2. अंबेडकर, बाबासाहेब, 'क्रांति और प्रतिक्रांति, बुद्ध अथवा कार्ल मार्क्स आदि में नारी एवं प्रतिक्रांति', संपूर्ण वाङ्मय, खंड-7, 2013 (तृतीय संस्करण), डॉ. अंबेडकर प्रतिष्ठान, नई दिल्ली, पृ. सं. 335
3. कटारिया, कमलेश, 'नारी जीवन: वैदिक काल से आज तक', 2003, यूनिक ट्रेडर्स जयपुर
4. अंबेडकर, भीमराव, 'हिंदू नारी उत्थान और पतन', 2009, गौतम बुक सेंटर, दिल्ली, पृ. सं. 14
5. सिंह, जे.पी., 'आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन 21 वीं सदी में भारत', 2016, पीएच आई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली, पृ. सं. 275-276
6. महाजन, संजीव, 'समाजशास्त्र का विश्वकोश परिवार का समाजशास्त्र', 2009, अर्जुन पब्लिशर्स हाऊस नई दिल्ली, पृ. सं. 269
7. सिंह, जे.पी., 'आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन 21 वीं सदी में भारत', 2016, पीएच आई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली, पृ. सं. 277
8. कुमार, मनीष, 'भारतीय नारी कलआज और कल', 2006, ग्रेसी बुक्स आजार नगर दिल्ली, पृ. सं. 19
9. मेघवाल, कुसुम, 'भारतीय नारी के उद्धारक डॉ. बी.आर. अंबेडकर', 2005, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. सं. 139
10. गड़कर, राजकुमारी, 'नारी चिंतन: नयी चुनौतियाँ', 2004, अन्नपूर्णा प्रकाशन कानपुर, पृ. सं. 62
11. मेघवाल, कुसुम, 'भारतीय नारी के उद्धारक डॉ. बी.आर. आम्बेडकर', 2005, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं. 81
12. चौधरी, आभालता, 'नारी स्वतंत्रता और डॉ. अंबेडकर', 2010, नटराज प्रकाशन, दिल्ली, पृ. सं. 168
13. अंबेडकर, भीमराव, 'हिंदू नारी का उत्थान एवं पतन', 2009, गौतम बुक सेंटर, दिल्ली, पृ. सं. 14
14. सिंह, ममता, 'डॉ. अंबेडकर और समकालीन भारत में बौद्ध धर्म एवं दर्शन', 2014, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. सं. 149
15. सुमन, मंजू, 'दलित महिलाएँ' 2004, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. सं. 42
16. पुरे, मंजू चंद्रिका 'स्त्रियों के उत्थान में अंबेडकर का योगदान', 2010, नटराज प्रकाशन, दिल्ली, पृ. सं. 142
17. खोबरागाडे, विनोद, 'अंबेडकर सामाजिक न्याय और भारतीय संविधान', 2013, वर्ल्ड फोकस, पृ. सं. 81
18. मेघवाल, कुसुम, 'भारतीय नारी के उद्धारक डॉ. बी.आर. अंबेडकर', 2005, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. सं. 124
19. पूरणमल, 'अंबेडकर और दलितोद्धार आंदोलन', 2009, आविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स जयपुर, पृ.सं. 182

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

गाँधीवाद

उत्तराखण्ड के जनमानस पर गाँधीवादी दर्शन का प्रभाव

कु. नीलम

शोध सार :

गाँधीवादी दर्शन का मुख्य आधार सत्य और अहिंसा है। उन्होंने अपनी पुस्तक ''सत्य के साथ मेरे प्रयोग'' में कहा है कि सत्य ही सर्वोपरि है। सत्य प्रकृति के प्रत्येक जीव में विद्यमान है। सत्य और अहिंसा एक दूसरे के पूरक हैं। सत्य रूपी साध्य की प्राप्ति अहिंसा रूपी साधन से ही हो सकती है। अर्थात् साधन और साध्य के बीच घने सम्बन्ध हैं। साध्य के साथ ही साथ साधन का भी महत्त्व है क्योंकि साधन की प्रकृति से साध्य की प्रकृति का निर्धारण होता है, किसी भी साधन से सत्य की प्राप्ति नहीं हो सकती है अर्थात् हम हिंसा के माध्यम से सत्य को प्राप्त नहीं कर सकते हैं। अत: सत्य रूपी साध्य की प्राप्ति हेतु अहिंसा रूपी साधन का होना आवश्यक है। गाँधी जी का जीवन-दर्शन हमें भारतीय स्वाधीनता संघर्ष, सार्वभौमिक मानवीयता, पर्यावरण संरक्षण, औद्योगीकरण को बढ़ावा न देना आदि कृतित्व से प्राप्त होता है कि किस प्रकार उन्होंने सत्य-अहिंसा की विचारधारा को विश्व के समक्ष परिलक्षित किया है।

बीज शब्द :

सत्य, अहिंसा, गांधीवाद, स्वाधीनता, संघर्ष, मानवीयता, पर्यावरण-संरक्षण, औद्योगीकरण, प्रासंगिकता।

मूल आलेख :

महात्मा गाँधी की विचारधारा को गाँधीवाद के नाम से जाना जाता है। महात्मा उस व्यक्तित्व का नाम है जो असत्य को सत्य से, हिंसा को अहिंसा से, घृणा को प्रेम से तथा अन्धविश्वास को विश्वास से जीतने में विश्वास करते हैं। गाँधी जी के विचार, आदर्श एवं सिद्धांत सम्पूर्ण दुनिया के लिए एक अमूल्य धरोहर के रूप में हैं। गाँधी जी के विचार क्रियात्मक योगदान में जितने उस समय प्रासंगिक थे आज के समय में भी उतने ही प्रासंगिक बने हुए हैं। महात्मा गाँधी ने जनभावना को महत्त्व देकर और परम्परागत राष्ट्रवाद की विचारधारा में सुधार करते हुए इक्कीसवीं सदी के भारत के लिए एक आदर्श प्रस्तुत किया।

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
डी.ए.वी. (पी.जी.) कॉलेज,
देहरादून, उत्तराखंड-248001
7351372891
shah.neelamshah1893@gmail.com

भारत की आम जनता में स्वाभिमान को जगाने, स्वाधीनता प्राप्ति के लिए सामूहिक चेतना का निर्माण करने, भारतीय राष्ट्रीयता के नवउत्थान का शंखनाद

करने का काम जिन लोगों ने किया, उनको प्रेरणा देने का सबसे अधिक कार्य राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी ने किया। गाँधी जी के बारे में यह उक्ति सटीक बैठती है:-

''चल पड़े जिधर दो डग मग में,
चल पड़े कोटि पग उसी ओर।''

गाँधी जी का इस दृष्टि से देश भक्तों की पंक्ति में सबसे ऊँचा स्थान है, इतना होते हुए भी गाँधी जी की देश भक्ति मंजिल ही नहीं बल्कि अनन्त शांति तथा जीव मात्र के प्रति प्रेम भाव की मंजिल तक पहुँचाने के लिए यात्रा का एक पड़ाव भी है।[1]

आजादी के आन्दोलन के दौरान महात्मा गाँधी कुमाऊँ की यात्रा पर आने से लगभग 15 साल पहले ही 1915-16 में हरिद्वार और देहरादून आ चुके थे, तब स्थानीय लोगों ने गाँधी जी को आर्य समाज में बोलते हुए देखा और सुना था। जब कुमाऊँ में स्वतन्त्रता आन्दोलन की अगुवाई करने वाले नेताओं व कार्यकर्ताओं को गाँधी जी के देहरादून व हरिद्वार आने की सूचना मिली तो वे सभी गाँधी जी से मिले और उन्होंने गाँधी जी से कुमाऊँ की यात्रा पर आने का अनुरोध इस आधार पर किया कि उनके आने से कुमाऊँ में स्वतन्त्रता आन्दोलन तेज ही नहीं होगा बल्कि लोगों को अधिक-से-अधिक संख्या में स्वतन्त्रता आन्दोलन के लिए प्रेरित भी करेगा। गाँधी जी ने इन नेताओं को कुमाऊँ की यात्रा पर आने का भरोसा दिया और कुछ समय के बाद वे कुमाऊँ पहुँचे। स्थानीय लोगों ने उनका बहुत ही गर्मजोशी के साथ स्वागत किया था। इस दौरान गाँधी जी लाला गोविन्द लाल साह के ताकुला स्थित मोती भवन में रहे। गाँधी जी के व्याख्यान से प्रभावित अनेक महिलाओं ने स्वतन्त्रता आन्दोलन के लिए अपने जेवर उतारकर उनके चरणों में रख दिये ताकि आन्दोलन को सफलता की ओर ले जाने में किसी भी प्रकार की आर्थिक समस्या सामने न आये।[2] ताकुला (नैनीताल) में गाँधी जी ने महिलाओं को चरखा कातने के लिए प्रेरित ही नहीं किया बल्कि उनको चरखा चलाने का प्रशिक्षण भी दिया, इसके साथ ही गाँधी जी ने लोगों में स्वतन्त्रता आन्दोलन के प्रति जन चेतना भी पैदा की जिस कारण यहाँ का जनमानस गाँधी जी के साथ अधिक-से-अधिक संख्या में जुड़ता गया।

गाँधी जी की कुमाऊँ यात्रा का सबसे अधिक प्रभाव महिलाओं और शिल्पकारों पर पड़ा। अल्मोड़ा में महिलाओं ने दुर्गा देवी पन्त और बच्ची देवी पन्त के नेतृत्व में एक संगठन ही बना डाला और नमक सत्याग्रह में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहन किया। नैनीताल में गाँधी जी के जुलूस में पुरुषों से अधिक महिलाओं की संख्या थी। गाँधी जी के प्रभाव के कारण ही 1930 के आन्दोलन में महिलाओं ने बहुत सक्रियता से भागीदारी निभाई। गाँधी जी के कुमाऊँ प्रवास के कारण सामाजिक छुआछूत में भी कमी आयी और सामाजिक तौर पर अछूतोद्धार आन्दोलन तेज हुआ, इसी वजह से उस समय उन्हें कुमाऊँ से चौबीस हजार रूपये हरिजन कोष के लिए दान के तौर पर मिले थे जो बहुत बड़ी घटना थी।[3]

महात्मा गाँधी जी का जीवन-दर्शन अथवा विचार भारत के साथ-साथ समूचे विश्व के लिए प्रासंगिक है और सदैव रहेंगे। राष्ट्रीय परिदृश्य के उपरान्त जब गाँधी जी का आगमन उत्तराखण्ड राज्य में होता है तो इस तपोभूमि में महात्मा गाँधी जी के प्रति जो यहाँ के जनमानस में श्रद्धा और निष्ठा का भाव था, उससे परिलक्षित होता है कि गाँधी जी का कितना विराट व्यक्तित्व था, इस व्यक्तित्व से प्रेरणा लेकर व उनके साक्षात दर्शन किये बिना भी उनके विचारों, आदर्शों को अपने जीवन में उतार कर पहाड़ के लोग स्वराज्य प्राप्ति की लड़ाई लड़ रहे थे।[4] 1921 ई0 में कुली बेगार की प्रथा से पीड़ित जनता ने किस प्रकार महात्मा गाँधी जी को साक्षी मानकर, उनको अपना नेता मानकर, उनकी अनुपस्थिति के बावजूद भी एक जन संघर्ष को खड़ा किया और अन्तत: इसमें अहिंसा के मार्ग पर चलकर अपने अभियान को जीत के मार्ग पर प्रशस्त किया।[5]

गाँधी जी का व्यक्तित्व अन्तर्राष्ट्रीय था, लेकिन उनके विचारों को व्यवहार में लाने वालों में उत्तराखण्ड राज्य का देश में अग्रणीय स्थान है। उन्होंने भारत में सार्वजनिक जीवन और स्वच्छता जैसी अभियानों की शुरूआत हरिद्वार से ही की थी। इस उत्तराखण्ड की माटी से जब भी महात्मा गाँधी लौटे तो वे नई ऊर्जा, नई उमंग और शक्ति के साथ अपने अभियान में जुटते थे। गाँधी जी को हमेशा सकारात्मक

प्रेरणा यहाँ के वातावरण और जनसमुदाय ने दी। यद्यपि हरिद्वार और ऋषिकेश के आध्यात्मिक पक्ष से वे प्रभावित थे, लेकिन स्वच्छता के प्रति वे उदासीन और दुखी भी हुए।[6]

महात्मा गाँधी जी का दर्शन बहुमुखी है, गाँधी जी के सिद्धान्तों और विचारों से प्रभावित हुए बिना देश–विदेश का कोई क्षेत्र अछूता नहीं है। इसी सन्दर्भ में उत्तराखण्ड राज्य के जनमानस में भी गाँधीवादी विचारधारा का व्यापक प्रभाव देखा जा सकता है। महात्मा गाँधी से प्रभावित होकर उत्तराखण्ड के लोगों ने स्वतन्त्रता आन्दोलन में बढ़–चढ़ कर सहभागिता निभाई है। गाँधी जी की साबरमती से दांडी तक की यात्रा में तीन सत्याग्राही ज्योतिराम काण्डपाल (अल्मोड़ा), भैरवदत्त जोशी (पैठाना), खड़क बहादुर सिंह (देहरादून) उत्तराखण्ड से ही थे। साथ ही गाँधी जी का प्रभाव था कि प्रकृति के सुकुमार कवि सुमित्रानन्दन पन्त ने अपनी शिक्षा अधूरी छोड़ दी और सर्वोदय आन्दोलन में कूद पड़े।

गाँधी जी की प्रेरणा से ही आजादी की लड़ाई के दौरान उत्तराखण्ड में पत्रकारिता और लेखन कार्य से ही लोगों को जागरूक किया गया। उस दौरान गढ़वाल और कुमाऊँ दोनों ही जगह से लेखन कार्य के माध्यम से लोगों को जागरूक किया जाता रहा है, बेशक कोटद्वार, अल्मोड़ा, मसूरी में पत्र–पत्रिकाएं काफी पहले से ही शुरू हो गयी थी, लेकिन बाद के दौर में मीडिया और साहित्य में महात्मा गाँधी के सन्देशों का पूरा प्रभाव रहा। देवभूमि की पत्रकारिता ने आजादी के आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।[7] उत्तराखण्ड में पर्यावरण संरक्षण हेतु यहाँ के पर्यावरणविद्ों पर गाँधीवादी दर्शन का प्रभाव रहा है और विशेषकर पर्वतीय क्षेत्रों में पर्यावरणविद्ों ने गाँधीवादी अहिंसात्मक विचारों को अपनाकर पर्यावरण संरक्षण हेतु विभिन्न सत्याग्रह किये, जिसमें चिपको आन्दोलन से लेकर रक्षा सूत्र आन्दोलन आदि की पूरी एक शृंखला है और इन सभी जनान्दोलनों की विशेषता यह रही है कि यह पूरी तरह से अहिंसा से ओत–प्रोत थे और लोगों ने इन्हें अपनी जीवन शैली का हिस्सा बनाया। प्रसिद्ध पर्यावरणविद् श्री सुन्दरलाल बहुगुणा आजीवन गाँधीवादी तरीकों से पर्यावरण–संरक्षण की लड़ाई लड़ते रहे।[8]

पर्यावरण, डोला पालकी, कुली बेगार आदि जैसे तमाम सामाजिक आन्दोलनों में उत्तराखण्ड ने देश को नई राह दिखाई लेकिन ये सभी आन्दोलन अहिंसा के पथ पर रहे। लोगों ने अनेक कष्ट सहे हैं, लेकिन लक्ष्य को हासिल करने का तरीका उनका अहिंसा का ही रहा।[9] गाँधी जी की अहिंसा प्रवृति को देवभूमि उत्तराखण्ड ने किस तरह अपनाया इसका सुन्दर उदाहरण उत्तराखण्ड राज्य आन्दोलन में मिलता है। एक ऐसा आन्दोलन जिसका कोई नेतृत्व न था, उसमें पहाड़ों की नारियाँ, युवा और बच्चे सड़कों पर उतरे थे। ''आज दो अभी दो, उत्तराखण्ड राज्य दो'' के नारों के साथ आन्दोलन की गूंज पूरी दुनिया में सुनी गयी। यह एक ऐसा आन्दोलन था जिसमें लोग शहीद हुए, यातनाएं सही, पाश्विक क्रूरता को सहा लेकिन कहीं पर भी आन्दोलनकारियों ने हिंसा का कोई रास्ता नहीं अपनाया।

उत्तराखण्ड राज्य का चिपको आन्दोलन (1972–73) विश्वविख्यात है। चमोली जिले के रेणी गाँव की 23 वर्षीय महिला श्रीमती गौरा देवी और उनके साथियों ने पेड़ से चिपककर जल, जंगल और जमीन बचाने का जो सन्देश दिया, उसके महत्त्व को विश्व ने महसूस किया। उसी सन्देश को लेकर आज विश्व के प्रमुख नेता एक मंच पर आकर पर्यावरण संरक्षण की बात कर रहे हैं। इस आन्दोलन को विश्वविख्यात पर्यावरणविद् सुन्दरलाल बहुगुणा और चण्डी प्रसाद भट्ट ने शिखर तक पहुँचाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।[10] कहीं–न–कहीं महात्मा गाँधी की भावना से प्रेरित उत्तराखण्ड के जनमानस ने ऐसे आन्दोलनों का सूत्रपात किया जिसकी अलख आज भी जग रही है।

उत्तराखण्ड में कौसानी की प्राकृतिक सौन्दर्यता से गाँधी जी ओत–प्रोत हुए। कौसानी में गाँधी जी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ''अनासक्ति योग'' को पूरा किया था और उसकी प्रस्तावना भी लिखी। अनासक्ति योग की प्रस्तावना उन्होंने मूल रूप से गुजराती भाषा में लिखी थी, लेकिन बाद में इसका हिन्दी में रूपान्तरण सोमेश्वर पुरोहित ने किया और इसे नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद ने प्रकाशित किया। हिन्दी में प्रकाशित अनासक्ति योग की अब तक लगभग एक लाख से अधिक प्रतियां बिक चुकी

है। कौसानी में पूरे दस दिन व्यतीत करने के बाद गाँधी जी यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य से इतने अभिभूत हुए कि उन्होंने कौसानी को भारत के स्विट्जरलैण्ड की संज्ञा ही दे डाली। तब से कौसानी को प्राकृतिक सौन्दर्य के मामले में भारत का स्विट्जरलैण्ड कहा जाने लगा। आज भी यह सवाल प्रतियोगी परीक्षाओं में अक्सर पूछा जाता है कि भारत का स्विट्जरलैण्ड किसे कहा जाता है? गाँधी जी ने जिस स्थान पर तब अनासक्ति योग की प्रस्तावना लिखी थी उस स्थान पर कौसानी में आज गाँधी स्मारक निधि द्वारा संचालित 'अनासक्ति आश्रम' है।[11] कौसानी में स्थापित उनका यह आश्रम उच्च कोटि की मानव सेवा का प्रतीक है, यहाँ हर साल हजारों पर्यटक पहुँचते हैं। गाँधी जी ने कौसानी के बारे में एक लेख "यंग इण्डिया" में लिखा था कि "हिमालय की स्वास्थ्यवर्धक जलवायु, उसका मनोरम दृश्य, चारों तरफ फैली हुई सुहावनी हरियाली यहाँ आपकी किसी भी अभिलाषा को अपूर्ण नहीं रखती, मैं सोचता हूँ कि इन पर्वतों के दृश्यों तथा जलवायु से बढ़कर होना तो दूर रहा, इसकी बराबरी संसार का कोई और स्थान नहीं कर सकता है।" गाँधी जी आगे लिखते हैं कि अल्मोड़ा आकर मैं इस बात की कल्पना कर सका हूँ कि "हिमालय क्या है? यदि हिमालय न होता तो गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र और सिन्धु जैसी सदावाहिनी भी न होती और भारत सहारा रेगिस्तान बन जाता"। अत: उनका कौसानी प्रवास एक बड़ा सामाजिक सर्वोदय अभियान के तौर पर याद किया जाना चाहिए। अपनी इस यात्रा के दौरान गाँधी जी ने 26 स्थानों पर अपने व्याख्यान दिये और सभी व्याख्यान स्वदेशी, स्वावलम्बन, आत्मशुद्धि, खादी प्रचार और समाज में व्याप्त कुरीतियों को त्यागने से सम्बन्धित थे जिसके लिए गाँधी जी जीवनपर्यन्त संघर्षरत् रहे, इसके साथ ही गाँधी जी औद्योगिकीकरण के प्रति भी चिंतित थे क्योंकि मौजूदा स्वरूप में औद्योगिक समाज लम्बे समय तक क्रियाशील नहीं रह सकता है, इसके लिए जनमानस में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जनचेतना अपेक्षित है और जनसहभागिता से ही पर्यावरण संरक्षण संभव है।

निष्कर्ष :

सार रूप में यही कहा जा सकता है कि आज दुनिया के किसी भी देश में शांति मार्च निकालना हो, अथवा अत्याचार तथा हिंसा का विरोध किया जाना हो, या हिंसा का जवाब अहिंसा से दिया जाना हो, ऐसे सभी अवसरों पर गाँधी जी द्वारा प्रतिपादित अहिंसात्मक तरीकों का ही अनुसरण किया जाता है। अत: यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि गाँधी जी के विचार, दर्शन एवं सिद्धान्त कल भी प्रासंगिक थे और आज भी हैं और तब तक प्रासंगिक रहेंगे, जब तक दुनिया रहेगी। ❑

संदर्भ सूची :

1. https://hindi.Webdunia.com गाँधी की प्रासंगिकता
2. www.kafaltree.com महात्मा गाँधी और कुमाऊँ
3. उपरिवत्।
4. पाण्डे, प्रयाग, 2020, तपोभूमि में गाँधी, श्रीकण्ठ प्रकाशन नैनीताल, देहरादून से मुद्रित, पृ.सं. 23-32
5. पाठक, शेखर, 1987, उत्तराखण्ड में कुली बेगार प्रथा
6. पाण्डे, प्रयाग, 2020 तपोभूमि में गाँधी, श्रीकण्ठ प्रकाशन नैनीताल, देहरादून से मुद्रित पृ.सं. 102-106
7. रावत, अजय, 2021, 'उत्तराखण्ड का समग्र राजनैतिक इतिहास', अंकित प्रकाशन हल्द्वानी
8. नौटियाल, शिवानन्द, 1991, गढ़वाल का वन सम्पदा और पर्यावरण, सुलभ प्रकाशन लखनऊ, पृ.सं. 21-86
9. अन्थवाल, वेणीराम, 2010, उत्तराखण्ड का राजनैतिक एंव सांस्कृतिक इतिहास, सरिता बुक हाउस, लक्ष्मीनगर नई दिल्ली, पृ.सं. 182-193
10. रावत, महेन्द्र सिंह, 2012, उत्तराखण्ड समग्र अध्ययन, अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इंडिया) लिमिटेड पृ0 सं0- 184-185
11. उपरिवत् पृ.सं. 275

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

लोकरंग

असम की मिसिंग (मिरी) जनजाति का परिचय एवं लोककथाएँ

नीलाक्षी पावे

शोधार्थी, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय
गुवाहाटी- 781001, असम
8724092152, 7002391185
nilakshi.pawe007@gmail.com

शोध-सार :

असम राज्य की एक प्रमुख जनजाति है 'मिसिंग' जनजाति। इसे 'मिरी' जनजाति भी कहते हैं। यह उत्तर-पूर्व का एक समृद्ध समुदाय है। मिरी जनजाति की अपनी संस्कृति और परंपराएँ हैं, जो उन्हें अन्य जनजाति से पृथक बनाती हैं। यह उत्तर-पूर्व की एक बहुरंगी जनजाति है, जिसका साहित्य और इतिहास प्रभावशील रहा है। उनके साहित्य में लोक कथाओं का सुंदर समावेश है। कथाओं का सही से अध्ययन करने पर इस जनजाति का पुराना इतिहास अच्छे से समझ पाते हैं। मिरी जनजाति की लोक कथाओं में उनके इतिहास का दर्शन मिलता है। ये लोक कथाएँ विभिन्न विषयों को प्रस्तुत करती हैं, जैसे- प्रकृति, पेड़-पौधे, अंधविश्वास, प्रेम, संस्कृति, सभ्यता आदि। यह जनजाति सदैव अपनी जड़ों से जुड़े रहने के लिए अग्रसर है। इस जनजाति के लोग और उनकी लोक कथाएँ प्रकृति से प्रभावित हैं। उनकी साहित्यिक दृष्टि समृद्ध है तथा उनमें प्राकृतिक गुणवत्ता परिलक्षित होती है।

बीज शब्द :

जनजाति, मिसिंग, मिरी, साहित्य, इतिहास, उत्तर-पूर्व, परिचय, लोक कथाएँ।

प्रस्तावना :

लोक कथाएँ विभिन्न विषयों पर आधारित होती हैं और इसके प्रकार भी अनेक हैं। इसे बचपन में लोग अपनी दादी-नानी व वरिष्ठ लोगों से सुनते हैं। ये कथाएँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही हैं। अपने जन समुदाय का ज्ञान, पहचान, परिवेश, घटना, इतिहास, अपनी मौलिकता, निजी साहित्य-संस्कृति आदि को लोगों तक पहुँचाना लोक कथाओं का उद्देश्य रहा है। लोक कथाएँ पारंपरिक साहित्य है, जो जन समुदाय की संस्कृति और सभ्यता को दर्शाता है। यह ग्राम्य जीवन के ऐतिहासिक, पौराणिक, सामाजिक आदि कथाओं को पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे ले जाता है।

मिसिंग जनजाति को 'मिरी' नाम से भी जाना जाता है। 'मिरी' शब्द का अर्थ होता है 'आदमी'। मिरी जनजाति 'तिब्बती बर्मी समूह' से संबंधित है। कृषि उनका

मूल कार्य है। हालाँकि, समय के साथ यह जनजाति काफी विकसित हो चुकी है। आज सभी क्षेत्रों में इस वर्ग के लोग कार्य कर रहे हैं। मिसिंग जनजाति के संदर्भ में कमल नारायण चौधुरी लिखते हैं कि "It is said that the word Mishing has been derived from the word "Moshing", i.e others belonging to one's own side . The other word "Miri" is used to have been derived from "Miru", i.e the priests who were in alliance with the chief who were the determiners of the welfare of other members of the society" *(ऐसा कहा जाता है कि मिसिंग शब्द की उत्पत्ति 'मोशिंग' शब्द से हुई है जिसका अर्थ होता है 'अपने ही पक्ष के अन्य लोग', दूसरा शब्द 'मिरी', 'मिरू' शब्द से लिया गया है, यह 'पुजारी' होते थे जो मुखिया के साथ संबंधित होते थे। वे समाज के अन्य सदस्यों के कल्याण के निर्धारक थे।)* [1]

विश्लेषण :

मिरी जनजाति का प्राचीन उल्लेख वैष्णव साहित्य में मिलता है। श्रीमंत शंकरदेव के ग्रंथ 'कीर्तन घोषा' और माधवदेव के ग्रंथ 'नाम घोषा' में इसके संदर्भ प्राप्त हुए हैं। मिसिंग जनजाति ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे बसी जनजातियों में प्रमुख है। अभिलेख कहते हैं "As per 1971 census their population was 259551. The projected population as in March 1987 is 416493 (1981 census was not held in Assam). *(1971 की जनगणना के अनुसार उनकी जनसंख्या 259551 थी। मार्च 1987 में इनकी अनुमानित जनसंख्या 416493 है। (1981 की जनगणना असम में नहीं हुई थी)* [2] यह जनजाति मूल रूप से अरुणाचल प्रदेश के पहाड़ी समुदाय 'अबोर', 'मिरी' और 'मिशमी' की शृंखला में आती थी। बाद में यह जनजाति असम में आहोम शासन से पहले मैदानी इलाकों पर आकर ब्रह्मपुत्र और सुवनसिरी जैसे नदियों के क्षेत्रों में निवास करने लगी। मिसिंग जनजाति कब और किस कारण से असम के मैदान में आई, इस प्रश्न के उत्तर में अभी भी स्पष्टता नहीं है। इस संदर्भ में कोई लिखित प्रमाणित अभिलेख मौजूद नहीं है। इसलिए कई प्रश्नों के उत्तर मिलना मुश्किल है। हालाँकि, कुछ तथ्यों से कहा जा सकता है कि मिसिंग जनजाति का पहला समूह 'सुतिया' राजवंश के विघटन के बाद असम के मैदानी क्षेत्र में आया था। दूसरी अन्य जनजातियों की तरह मिसिंग जनजाति भी उन्नीसवीं सदी में ब्रिटिश शासन काल में ध्यान में आई थी। मीरा दास मिसिंग जनजाति के संदर्भ में लिखती हैं कि *''असम के अतिरिक्त अरुणाचल प्रदेश के कुछ भागों में मिसिंग जनजाति के लोग रहते हैं। ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे सदिया, जुनाई, डिब्रूगढ़, सोनारीघाट, दिसांगमुख, मातमरा, माजुली, लोहितमुख, टेकेलिफुटा आदि स्थानों पर मिसिंग लोगों के आवास हैं। इसके अलावा धेमाजी जिले के जोनाई, मुर्कंगसेलेक, लाईमेकुरी, सिलापथार, कुलाजान, ढकुवाखाना, घिलामारा, बगीनादी, नारायणपुर के साथ ही शोणितपुर और शिवसागर जिले में भी मिसिंग लोग निवास करते हैं। आज कामरूप जिले में गुवाहाटी में भी मिसिंग लोग बसने लगे हैं। यहाँ जनजाति पाग्र दाम्बुक, मयिङ सायाङ तेमेरा, समुगुरिया आदि कई शाखाओं में विभक्त है।''* [3]

मिसिंग जनजाति के मुख्य उत्सवों में 'अली आई लिगांग', 'प:राग', 'आम्:राग', 'बोहाग बिहू' आदि हैं। अक्टूबर, सन 1986 से राज्य सरकार ने कई मिसिंग बहुल इलाकों में मिसिंग भाषा को प्राथमिक स्कूलों में शिक्षण का माध्यम स्वीकारा है। पहाड़ों से आई मिसिंग जनजाति असम के मैदानी क्षेत्रों में 11वीं शताब्दी के आसपास से गैर मिरी समूहों के साथ रह रही है। उनका पहनावा, परंपरा, रीति-रिवाज आदि बाकी समूहों से पृथक रहा है। मिसिंग जनजाति का अपना एक विशाल लोक साहित्य है, जिसमें उनकी भावनाएँ, अनुभव, सामाजिक मूल्य, प्रवासी इतिहास आदि प्रमाणिक रूप से अभिव्यक्त होता है। उनके लोक साहित्य को दो भागों में देख पाते हैं :-

1. लोक कथा और 2. लोक गीत :

लोक गीत, लोक कथा, कहावत आदि से बना मिसिंग साहित्य समृद्ध है। लोक नृत्य भी इस समाज का एक अहम हिस्सा है। उनका आधुनिक साहित्य (लिखित) 'मिसिंग एगोग कबांग' (मिसिंग साहित्य संस्था) आंदोलन के बाद से विकसित होना आरंभ हुआ। वर्तमान में मिसिंग

साहित्य तेजी से विकसित हो रहा है और उनका साहित्यिक संगठन हर तरफ से मिसिंग लेखकों को प्रोत्साहित कर साहित्य लेखन, प्रकाशन और प्रचार करने में मदद कर रहा है। मिसिंग लोक कथाओं द्वारा इस जनजाति की उत्पत्ति के इतिहास का अंदाजा लगाया जा सकता है। मिरी जनजाति के अनेक लोक कथाएँ हैं जहाँ उनके पहाड़ों से मैदानी इलाकों में आने का जिक्र मिलता है। इस जनजाति की कुछ लोक कथाएँ निम्नवत् हैं :-

मोयिंग और तुरी

मोयिंग नाम का एक सुंदर जवान लड़का था। वह 'मिनयोंग वंश' से था। दूसरी ओर दामरा गाँव में तुरी नाम की एक सुंदर लड़की रहती थी। उसके पिता ने तय किया था कि तुरी की शादी किसी पहलवान से ही होगी। उस समय कुश्ती का आयोजन कर वर चुनने का प्रचलन था। तुरी के वर के चुनाव के लिए कुश्ती का आयोजन हुआ। यह पता लगने पर मोयिंग दामरा गाँव आया और सबको हराकर तुरी से शादी कर ली। सभी खुश थे और मोयिंग अपनी पत्नी तुरी को लेकर अपने गाँव लौट आया। दामरा गाँव के युवक मोयिंग के इस जीत से खुश नहीं थे और उससे बदला लेना चाहते थे। रिवाज के अनुसार जब मोयिंग तुरी को लेकर दामरा गाँव अपने ससुर के घर आया, तब उनके लिए दामरा गाँव के युवकों ने एक दावत का आयोजन किया। जब मोयिंग दावत में पहुँचा तो दामरा गाँव के युवकों ने उसे पकड़ कर और रस्सी से बाँधकर बाँस के पिंजरे में भरकर नदी में बहा दिया। तुरी इस सदमे को सह न पाी और उसने आत्महत्या कर ली।

यह बात समाज में फैल गई। अब मोयिंग के गाँव वाले दामरा गाँव वालों से बदला लेना चाहते थे। उन्होंने भी दावत का आयोजन किया और दामरा वालों को बुलाया। कहीं से दामरा के युवकों को इस योजना की भनक लग जाती है और वे सिर्फ वृद्ध लोगों को दावत में भेजते हैं। दावत में सबका अच्छी तरह से स्वागत किया गया। खाना-पीना हुआ और जब मेहमान थोड़े नशे की हालत में थे, तभी उनको मारकर टुकड़ों में काट दिया गया। परंतु एक व्यक्ति बच निकला और उसने इस भयानक घटना को वापस जाकर अपने दामरा गाँव में बताया। उस वक्त दामरा गाँव की जनसंख्या मोयिंग के गाँव से ज्यादा थी। जब इस भयानक घटना का दामरा वालों को पता चला, तब वे

बहुत क्रोधित हुए और अपने आस-पास के सभी गाँवों से बदला लेने में मदद माँगी। यह जानकर कि सभी गाँव दामरा गाँव का साथ दे रहे हैं, तो मोयिंग के गाँव वालों ने गाँव से भाग जाने का निर्णय लिया। इस तरह वे नीचे धारा घाटी की ओर आ गए। मोयिंग के गाँव के पास 'डाइन मिरेम' रहते थे। वह वहाँ के एक प्रसिद्ध मुखिया थे, जिनका सभी सम्मान करते थे। मोयिंग के गाँव वालों ने डाइन मिरेम से मदद माँगी। डाइन मिरेम नहीं चाहते थे कि मोयिंग वालों का संपूर्ण नाश हो जाए। इसीलिए उन्होंने गाँव वालों को चले जाने को कहा और स्वयं वहाँ खड़े रहे। गुस्से से आ रहे दामरा गाँव वालों ने डाइन मिरेम को अपने आगे खड़ा देख आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं की और अपने गाँव लौट आए। वहीं मोयिंग वर्ग पहाड़ों से उतर आए और मैदान में अपना एक गाँव बनाया। तभी से वे सभी स्थायी रूप से मैदानी क्षेत्रों में निवास करते आए हैं। मिरी जनजाति के लोक गीतों में आज भी अरुणाचल प्रदेश के पहाड़ों का वर्णन होता है। यह एक याद के रूप में है, क्योंकि कभी वे उन पहाड़ों के निवासी थे।

वृद्ध पति-पत्नी और लोमड़ियाँ

बहुत समय पहले, एक गाँव में वृद्ध जोड़ा रहता था। वे दोनों बहुत खुश थे। एक दिन, बूढ़े पति ने तारों (स्थानीय पौधा) के पौधे लगाने के लिए अपने बगीचे में गड्ढा खोदा और पौधे लगाने शुरू किए। तभी एक लोमड़ वहाँ आता है। बूढ़े व्यक्ति को पौधे लगाते देख उससे बाते करता है। वह लोमड़ व्यक्ति से कहता है कि तारों के पौधे को लगाने का यह सही तरीका नहीं है। लोमड़ कहता है कि तारों के पत्तों को पहले उबालना चाहिए, फिर सादे पत्तों में लपेट कर ही उनको गड्ढों में लगाना चाहिए। इससे भरपूर फसल होती है। लोमड़ व्यक्ति से कहता है कि इससे दूसरे दिन की सुबह बहुत बड़ा पौधा निकलता है। इस पर बूढ़ा व्यक्ति सोचने लगता है। उसने अपनी पत्नी को तारों के पत्तों को उबालने को कहा और उन्हें सादे पत्तों में लपेटकर अपने बगीचे में लगा दिया। उसी रात, चालाक लोमड़ अपने दोस्तों के साथ आता है और तारों के सारे पौधों को खा जाता है। जी भरकर खाने के बाद सभी लोमड़ गड्ढों को ढक कर चले जाते हैं। सुबह होते ही बूढ़ा व्यक्ति पौधों को देखने के लिए गया तो पाया कि सभी गड्ढे खाली थे। उसे समझ में आ गया था कि लोमड़ियों ने धोखा दिया था। उसने लोमड़ियों को सबक सिखाने का फैसला किया। बूढ़ी पत्नी योजना के अनुसार घर के द्वार पर बैठी रोने लगी। उसे रोता देख एक लोमड़ ने उससे रोने का कारण पूछा। बूढ़ी पत्नी ने कहा कि उसका पति मर गया है और उसके शरीर का अंतिम संस्कार करने को कोई नहीं है। लोमड़ बूढ़े पति को मरा देख बहुत खुश हो गया और बूढ़ी पत्नी से चिंता न करने को कहा। लोमड़ अपने दोस्तों के साथ बूढ़े व्यक्ति के शरीर का दावत करना चाहता था। वे सभी एक-एक करके घर के अंदर आते गए। बूढ़ी पत्नी रोने का नाटक करते हुई अंदर जाने वाले लोमड़ियों की संख्या गिनने लगी। गिनती खत्म होते ही उसने बाहर से घर का दरवाजा बंद कर दिया। मरने का नाटक करता हुआ बूढ़ा पति उठ गया और हाथ में एक बड़ी छड़ी उठा ली। उसने लोमड़ियों को हर तरफ से पीटना शुरू किया। सभी लोमड़ चिल्ला-चिल्लाकर भागने लगे। बूढ़े जोड़े ने लोमड़ियों को एक अच्छा सबक सिखाया। वे सब लोमड़ घायल हालत में ही जंगल में भाग गए। अब वे बूढ़े व्यक्ति या उसकी पत्नी को अकेले में पकड़ना चाहते थे। दोनों वृद्ध पति-पत्नी काफी समय तक शांति से रहे। एक दिन, बुढ़िया ने अपने पति से कहा कि वह अपनी बेटी के घर जाना चाहती है जो कि दूसरे गाँव में रहती है। वहाँ उसकी शादी हुई थी। माँ अपनी बेटी के पास जाना चाहती थी, पर बूढ़े व्यक्ति को उसके दूसरे गाँव जाने में लोमड़ियों से खतरा लगता था। बुढ़िया ने कहा कि वह सावधानी से जाएगी। वह अच्छी तरह से बेटी के घर पहुँच जाती है। उसने बेटी के घर बहुत मजे किए, खाया-पिया, पोते-पोतियों से मिली और कुछ दिनों के बाद घर वापस आने का वक्त हुआ। उसने अपनी बेटी से घर जाने के बारे में कहा, पर लोमड़ियों को लेकर चिंतित भी थी। उसकी बेटी ने सुझाव दिया कि वह एक बड़े सूखे हुए लौकी के खोल के अंदर छुपकर घर जाए। बुढ़िया ने वैसे ही जाने की बात सोची और सूखे खोल के अंदर बैठकर निकल गई। जंगल में पहुँचने पर सारे लोमड़ विचित्र खोल को देखकर आश्चर्य में पड़ गए। लोमड़ियों ने खोल को तोड़ दिया और देखा कि अंदर बुढ़िया थी। उसे देख सभी लोमड़ खुश हो गए

और उसे खाने की तैयारी करने लगे। यह देख बुढ़िया कहती है कि मरने से पहले उसे भगवान से कुछ प्रार्थना करनी है। वह प्रार्थना करने के बहाने अपनी आँखें बंद करके जोर से अपने दो पालतू कुत्तों कालू और भालू को बुलाती है। उसका घर जंगल के पास था। दोनों कुत्ते बुढ़िया की आवाज सुन उसके पास आ जाते है। सभी लोमड़ कुत्तों को देख डर के मारे इधर-उधर भागने लगते हैं। उस दिन के बाद लोमड़ियों ने कभी वृद्ध जोड़े को परेशान नहीं किया। वे दोनों खुशी-खुशी सुरक्षित जीवन व्यतीत करते रहे।

गाती पक्षी की कहानी

प्राचीन समय में एक भाई और एक बहन रहते थे। बचपन में ही उनके माता-पिता का देहांत हो गया था। वे दोनों यहाँ-वहाँ घूम-घूमकर बड़े हुए थे। लड़का बड़ा था और लड़की छोटी थी। वे जंगल में फूल, पत्तों और जड़ों में रहते थे। एक दिन दोनों भाई-बहन घूमते हुए एक गाँव जा पहुँचे। गाँव वालों ने उन दोनों के साथ अच्छा व्यवहार किया। यह देख भाई-बहन ने गाँव में ही रहने का फैसला किया और खेती करना सीखने लगे। उस वक्त जमीन की कमी नहीं थी, पर उचित रास्ता न होने के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान जाना मुश्किल होता था। बारिश के वक्त आने-जाने में और तकलीफ होती थी। इसीलिए उन्होंने अपने खेत में ही एक घर बनाया और वहीं रहने लगे। वर्षा ऋतु समय पर आई, यह सोचकर कि जंगली जानवर उनकी फसल को नष्ट न कर दें, बड़ा भाई सुबह ही अपने खेत के घर में चला गया और पूरे दिन वहीं रहा। उसकी बहन खाना बनाकर वहीं ले गई। एक बार, भारी बारिश के कारण गाँव के रास्ते पानी से भर गए और रास्तों पर चलना मुश्किल हो गया। बहन घर का काम करने में लगी थी और काम करते हुए खाना बनाने में देरी हो गई थी। बड़ा भाई भूखा था और खाना न मिलने के कारण बहन पर चिल्लाने लगा। थोड़ी देर के बाद उसने अपनी बहन को एक छोटी गठरी लेकर अपनी ओर आते देखा। छोटी आकार की गठरी देखकर भाई क्रोधित हो गया। बहन जब उसके पास पहुँची तो उसने बिना सोचे-समझे दाव (हथियार) निकाला और बहन के शरीर के दो हिस्से कर दिए। जब उसने जमीन पर पड़ी अपनी बहन का चेहरा देखा तो उसे अपने अपराध का अहसास हुआ। उसके शरीर से खून बहने लगा। यह देख भाई बहुत रोने लगा और खुद को कोसने लगा। उसने अपने अधिक क्रोध के कारण अपनी बहन को खो दिया था। उसने अपनी बहन का अंतिम संस्कार किया, फिर उसे भूख लगी थी तो वह अपनी बहन की लाई हुई पोटली को खोलकर चावल खाने लगा। उसका पेट भर गया, पर चावल खत्म नहीं हुआ। यह देख उसकी बहन की आत्मा एक छोटे से पक्षी का रूप लेकर आती है और उससे कहती है-

''हे भाई, गठरी बाँध ले,
हे भाई, गठरी बाँध ले।''

भाई को बहन की आवाज समझ में आई और फिर वह रोने लगा। उसने बाँहें फैलाकर अपनी बहन से कहा कि उसने अपने क्रोध के कारण अपनी ही बहन को मार दिया। उसे अपनी गलती का अहसास है। अब वह अकेला पड़ गया था। इसीलिए वह उससे माफी माँगता हुआ, उसे पक्षी से मानव रूप में आने को कहता है और कहता है कि वह ऐसी गलती दोबारा नहीं करेगा। पर बहन नहीं मानती है। जब गाँव वालों को भाई की हरकत का पता चला तो उन लोगों ने उसे गाँव से निकाल दिया। ऐसा माना जाता है कि उस दिन के बाद से इस प्रकार के पक्षी का जन्म हुआ। आज भी वह दुखी भाव से गाती है-

''हे भाई, गठरी बाँध ले।''

अबू-तुनतुरुंग

बहुत समय पहले एक गाँव में दो लड़के रहते थे। वे दोनों अपने पिता और सौतेली माँ के संग रहते थे। सौतेली माँ उनसे इनता प्यार तो नहीं करती थी, पर अपने पति के डर से लड़कों के साथ बुरा व्यवहार भी नहीं करती थी। एक दिन, वे सब ताड़ के पत्ते लेने जंगल में गए। दो लड़के एक तरफ गए और उनके माता-पिता अलग दिशा में गए। बहुत देर के बाद जब शाम होने लगी तो दोनों लड़के माता-पिता को बुलाने लगे। लड़के जब माँ-बाप को बुला रहे थे, तब उनको अबू-तुनतुरुंग (राक्षस) उत्तर देता है। उसके बड़े-बड़े कान थे। एक कान को अपना कंबल

बनाता और दूसरे कान को अपने तकिए के रूप में प्रयोग करता है। वह लड़कों के सामने आता है और उनको डरने से मना करता है। अब राक्षस चाहता था कि लड़के उसके साथ उसके घर आएँ और वहाँ रहें। लड़के उनके साथ गए और उसके घर में सोने लगे। आधी रात के वक्त एक लड़का नींद से जाग जाता है। वह अबू-तुनतुरुंग और उसकी पत्नी की बातें सुनता है। वे दोनों लड़कों को मारकर खाने की बात कर रहे थे। वे उनको मारकर पकाने के लिए आग जला रहे थे। यह सब देख कर लड़के ने दूसरे को भी जगाया और जो पत्ते उनके पास थे, उन्हें बिस्तर में अपनी जगह पर रख दिया। फिर दोनों वहाँ से भाग निकले। अबू-तुनतुरुंग ने दोनों लड़कों को सोए हैं, समझकर उनके शरीर को गर्म लोहा लगाकर मारने का प्रयास किया। पत्ते जलने लगे तो अबू-तुनतुरुंग बहुत खुश हुआ। उसे लगा आज स्वादिष्ट भोजन खाने को मिलेगा, पर ऐसा नहीं हुआ। सुबह तक दोनों लड़के बहुत आगे भाग गए थे। अबू-तुनतुरुंग को उनके भागने का पता चल गया और वह उनके पीछे भागा। लड़कों ने दूर से उसे पीछा करते देखा और वे दोनों एक बड़े पेड़ पर चढ़ गए। जब राक्षस ने उनको देखा, उसने लड़कों से पूछा कि वे ऊपर पेड़ पर कैसे चढ़े। लड़कों ने कहा कि अपनी दाव (हथियार) की मदद से वे ऊपर चढ़ पाए। राक्षस को जैसे ही उत्तर मिलता है, वह तुरंत पेड़ में चढ़ने लगता है, पर उसके पैरों में चोट लग जाती है और खून निकलने लगता है। वह अपना ही खून पीने लगा। लड़कों ने हवा और बारिश के देवता से प्रार्थना की कि वह उनकी मदद करे। भगवान ने मदद के रूप में भयानक तूफान को वहाँ पैदा कर दिया। सभी पेड़ जोर से हिलने लगे। मौका देखकर लड़के एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर कूदकर जंगल के किनारे पहुँचे। वहाँ उनको एक जंगली मुर्गा मिलता है। उन्होंने मुर्गे से उनके पद चिन्हों को खरोंचकर छिपा देने को कहा। राक्षस ने जब मुर्गे से पूछा कि क्या वे पैरों के निशान लड़कों के हैं? तो उसने कहा कि ऐसा नहीं है। अब दोनों लड़के एक लकड़ी के पुल तक पहुँच जाते हैं। वहाँ वे एक कठफोड़वे पक्षी से मिले। उन्होंने उससे पुल को चोंच मारकर कमजोर करने के लिए अनुरोध किया। कठफोड़वे को जैसा करने को कहा गया था, उसने वैसा ही किया। जब राक्षस वहाँ पहुँचा तो कठफोड़वे पक्षी ने बताया कि लड़के दूसरे पुल के रास्ते से गए हैं। जब राक्षस पुल के बीच पहुँचा तो पुल टूट गया और राक्षस वहीं गिरकर मर गया। लड़के अच्छी तरह से अपने घर पहुँच गए। बाद में पता चलता है कि इन सब घटनाओं के पीछे लड़कों की सौतेली माँ का हाथ था। जब पिता को पता चला कि यह उसकी पत्नी की योजना थी तो उसने उसे घर से निकाल दिया। फिर पिता और दो लड़के खुशी से रहने लगे। दूसरी तरफ, अबू-तुनतुरुंग की पत्नी ने दुखी मन से अपने पति की बची हड्डियों को जलाया और उसकी राख को बिखेर दिया। उससे कुछ जोंक बने, कुछ मच्छर बने और कुछ बिच्छुओं में बदल गए। यह सब इसीलिए बने ताकि अबू-तुनतुरुंग की तरह इंसान का खून पी सके। इस तरह से माना जाता है कि अबू-तुनतुरुंग से मच्छर, जोंक आदि का जन्म हुआ।

कूकती कबूतर

बहुत समय पहले, पति-पत्नी सूर्य और चंद्रमा, जो दो:नीयी और पो:लो है, उनकी कोई संतान नहीं थी। यह बात उनको दुखी करती थी। संतान प्राप्ति के लिए उन्होंने भगवान से बहुत प्रार्थना की थी। अंत में एक सुंदर लड़के का जन्म हुआ था। माँ अपने बेटे को पाकर इनती खुश थी कि हर वक्त वह उसी के साथ व्यस्त रहती। पूरे दिन उसी की देखभाल करती रहती थी। इन सब में लगी हुई व्यस्तता के कारण वह अपने काम समय पर नहीं पहुँच पाती थी। उनका काम ठीक से नहीं हो पा रहा था। माँ सूर्य का काम होता है कि चारों ओर चक्कर लगाकर सब जगह प्रकाश लाना। पर जब माँ सूर्य अपने बेटे में व्यस्त रहती है तो पृथ्वी का कार्य भूल जाती है। कई जगह अँधेरा छाया रहता है। फिर दूसरी ओर जब वह अपने कार्य में व्यस्त रहती है तो अपने बेटे को वक्त नहीं दे पाती। इसलिए माँ सूर्य 'ऐनसीबीभीऐनगी' (दाई) को खोजने लगी। यह दाई छोटे बच्चों की देखभाल करती है। माँ सूर्य सोचती है कि दाई बेटे की देखभाल करेंगी तो वह बाहर जाकर अपना काम कर पाएगी। पर माँ सूर्य को वह नहीं मिली। अंत में थकान और निराशा के साथ वह घर आ गई। एक बार वह एक पेड़ के नीचे आराम कर रही थी। उसने देखा कि एक कबूतर पेड़ पर बैठी कूक रही है। माँ सूर्य ने कबूतर से पूछा

कि क्या वह उसके बेटे की दाई बनना चाहेगी। पहले तो उसने मना किया। पर बार-बार आग्रह करने पर वह मान गई और माँ सूर्य के घर आ गई। अब कबूतर बच्चे को अपनी पीठ पर बाँधकर रखती थी। बच्चे के माँ-बाप आराम से काम पर जा सकते थे। एक दिन, जब बच्चे को पीठ पर बाँध रही थी, तब बाँधने वाला कपड़ा फिसल के नीचे धरती पर जा गिरता है। माँ सूर्य बच्चे को पकड़ती है और कबूतर को कपड़ा लाने को कहती है। कबूतर धरती पर पहुँच गई और उसे कपड़ा भी मिल गया। वह ऊपर सूर्य तक उड़कर वापस जाने का प्रयास करने लगी। प्रयास करते हुए वह बहुत थक गई थी। कबूतर सूर्य तक वापस नहीं जा पाई और धरती में रह गई। माँ सूर्य ने उसके न आ पाने की बात पर मजाकिया मुँह बनाया और कबूतर के सिर पर थूक दिया। उस थूक का निशान सिर पर देर वक्त तक रहा। माँ सूर्य और उसके बच्चे से वापस न मिल पाने के दुख से कबूतर आज भी कूकती रहती है। इसलिए मिरी जनजाति में लोरी गीत इस प्रकार से गाया जाता है जैसे-

''प्यारे बच्चे, मत रो,
कबूतर अभी तक नहीं उड़ी है,
जब वह उडेगी, तब तुम रोना।''

सींग वाला उल्लू

बहुत समय पहले, दो बहुत करीबी दोस्त रहते थे। एक दिन उन्होंने कुछ मछलियाँ पकड़ने की योजना बनाई। उन्होंने मछलियाँ पकड़ने के लिए एक प्रकार के बाँस के जाल का प्रयोग किया, जिसे 'सेंपा' कहा जाता है। उन्होंने जो मछलियाँ पकड़ी थी, वे संख्या में बहुत कम थीं। उन दोनों को शक हुआ कि इसमें जरूर किसी का हाथ है कि उनको इतनी कम मछलियाँ मिल रही हैं। उनको लगा कि जरूर कोई सुबह के वक्त उनके जाल को देखने आता होगा और मछलियाँ ले जाता होगा। इसलिए दोनों ने तय किया कि जो भी सुबह जल्दी उठेगा, वह जाल आकर देखेगा और फिर दूसरे को भी जगाएगा। दोनों योजना बनाकर अपने-अपने घर चले गए थे। जब दोनों अपनी योजना पर चर्चा कर रहे थे, तब एक यक्ष (मछली खाने वाला) उनकी बातों को सुन लेता है। सुबह होते ही मुर्गे की आवाज से एक मित्र उठ जाता है और अपनी दाव (हथियार) लेकर सेंपा जाल को देखने चला जाता है। चूँकि, मित्र के पास दाव थी, इसलिए यक्ष उसे नुकसान नहीं पहुँचा सकता था। अपने लक्ष्य स्थान तक पहुँचने पर यक्ष ने जहाँ बाँस के घड़े (खालोई) में मछली रखी थी, उसे देखने को कहा। वह मित्र मान गया और अपनी दाव को एक तरफ रखकर सेंपा जाल को देखने लगा। मौका मिलते ही यक्ष ने व्यक्ति पर हमला कर दिया और उसका खून चूसने लगा। दूसरी तरफ, अन्य व्यक्ति जाग गया और अपने मित्र के पहले ही चले जाने की बात पता चलने पर बहुत क्रोधित हुआ था। फिर उसे उसके मित्र के साथ धोखा होने की खबर हो गई थी। वह जाल देखने आ गया। लक्ष्य स्थान पहुँचने पर वह अपने मित्र का सिर कटा शरीर देखकर डर गया। उसका कटा सिर यहाँ-वहाँ घूम रहा था। वह जहाँ जाता उसके मित्र का सिर उसका पीछा करता। उसके डर से वह एक पेड़ पर चढ़ जाता है। इस प्रकार वह एक सींगदार उल्लू पक्षी का रूप लेता है और उसका अस्तित्व स्थापित होता है।

दादाजी अम्पोलुंग

यह कहानी एक महान शिकारी दादाजी अम्पोलुंग की है। वह 'कुली' वंश के पूर्वज थे। वह अपने समय के एक महान बहादुर शिकारी थे। उन्होंने घने जंगलों में जाकर जंगली जानवरों और पक्षियों का शिकार किया था। एक दिन, वह अपने धनुष-बाण से पक्षियों का शिकार कर रहे थे। जिस पक्षी को उन्होंने मारा था, वह दिन के किसी एक समय में ही बाहर आता था। जल्दी ही उन्होंने बहुत सारी पक्षियों का शिकार कर लिया था। उन्हें देखकर मिसिंग जनजाति में प्रसिद्ध 'जो:ग' नाम का जीव दिखाई दिया। यह जो:ग मुल्तया मछली खाते थे। उसने शिकारी से पक्षी प्राप्त करने की बात सोची। नर जो:ग दादाजी अम्पोलुंग के पास पहुँचा। दादाजी अम्पोलुंग आसानी से नहीं मानने वाले व्यक्ति थे। दादाजी ने दाव (हथियार) से प्रहार करने का प्रयास किया। पर जब भी वह प्रहार करता, मादा 'जो:ग' पीछे से आ जाती। इस प्रकार दोनों जो:ग ने मिलकर उनको बहुत परेशान किया। इस सब के बावजूद दादाजी अम्पोलुंग ने मरे पक्षियों को अपने पास ही रखा था। फिर

दादाजी अम्पोलुंग के मन में एक विचार आया। उन्होंने नर जो:ग के पास जो झोला था, उसे ले लिया। उस झोले में असल में सारी शक्तियाँ थीं। झोले के बिना वे जो:ग शक्तिहीन थे। अब वह जो:ग दादाजी अम्पोलुंग का बंदी बन गया था। उसने मानव बनके अम्पोलुंग का अनुचरण करना शुरू किया। नर जो:ग की हालत देखकर मादा जो:ग रोने लगी और अपने पति को मुक्त कर देने के लिए विनती करने लगी। अम्पोलुंग उसकी बात नहीं सुनता है। अंत में वह एक शर्त पर नर जो:ग को छोड़ने को तैयार होता है। वह शर्त यह थी कि वे दोनों अब से कभी उनको परेशान नहीं करेंगे। नर और मादा दोनों जो:ग ने उससे वादा किया कि जब भी दादाजी अम्पोलुंग का नाम सुनाई देगा, वे या उनका पूरा वंश कभी भी उनको परेशान नहीं करेगा। उनकी परछाई तक उनको नहीं दिखाएगा। जो:ग आज भी अपना वादा निभा रहे हैं। आज भी यदि कोई रात को अकेला कोई कहीं भी जाता है और वह 'दादाजी अम्पोलुंग' का नाम लेता है तो जो:ग उन्हें छोड़ देता है। इस प्रकार बुरी आत्मा और जीवों से लोग दूर रह पाते हैं। यह बात आज भी लोग मानते हैं।

निष्कर्ष :

मिसिंग व मिरी पूर्वोत्तर भारत के असम राज्य की एक बहुत ही प्रसिद्ध जनजाति है। उनकी लोक कथाओं में उनका अपना स्थानीय प्रभाव परिलक्षित होता है। यहाँ विभिन्न प्रकार के विषय पाए जाते हैं। लोक कथाओं का प्रचलन बहुत सालों पहले से चलता आ रहा है। इनकी लोक कथाओं द्वारा इस समुदाय की संस्कृति, सभ्यता, इतिहास, परंपरा तथा साहित्य को बेहतर समझ पाते हैं। मिरी जनजाति की उत्पत्ति और उनका प्रवासी इतिहास को बताने वाली उनकी अपनी पारंपरिक कथाएँ हैं। उनकी विविध लोक कथाएँ एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक आई हैं। लोगों को अपनी कहानियों को बताना इस जनजाति की एक अच्छी आदत रही है। रात के वक्त घर के बड़े, जैसे दादा-दादी या नाना-नानी आदि बच्चों को बुलाकर पुरानी लोक कथाएँ सुनाते हैं। इस प्रकार पीढ़ियों के बीच लोक कथाओं की विरासत बनी रहती है। मिरी जनजाति की लोक कथाएँ उनके जीवन दृष्टि को अच्छे से दर्शाती हैं। उनकी लोक कथाओं में प्रकृति के प्रति उनके गहरे प्रेम को देख पाते हैं। यह जनजाति प्रकृति से सदा जुड़ी रहती है।

अत: कहा जा सकता है कि मिरी जनजाति का साहित्याभिव्यक्ति विशेष रूप से लोक कथाओं में ही देखा जाता है। उनके समृद्ध साहित्य का अध्ययन जनजाति के साहित्यिक विकास के लिए आवश्यक है। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. कमल नारायण चौधुरी, Tribal Culture of the North-East (ट्राइबल कल्चर ऑफ दी नॉर्थ-ईस्ट), पुन्थी पुस्तक प्रकाशन (कोलकाता), 2003, पृष्ठ. 151 .
2. बी. ऐन. बरदलै, गी.सी. शर्मा ठाकुर, ऐम. सी. शइकिया, Tribes of Assam. Part-1 (ट्राइब्स ऑफ असम. पार्ट-1), ट्राइबल रिसर्च इंस्टीट्यूट, असम, 1987, पृष्ठ. 112 .
3. डॉ. अनुशब्द, पूर्वोत्तर भारत का जनजातीय साहित्य, वाणी प्रकाशन (नई दिल्ली), 2017, पृष्ठ. 86, 87

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

समन्वय

महादेवी वर्मा और नलिनीबाला देवी के काव्य में रहस्यवाद : एक तुलनात्मक अनुशीलन

सुदर्शिणा दुवरी

सारांश :

छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा और असमीया साहित्य के जोनाकी युग की कवयित्री नलिनीबाला देवी की कविताओं में अभिव्यक्त आध्यात्मिक प्रेमानुभूति ही दोनों कवयित्रियों को एक-दूसरे के निकट ले आती है। दोनों ही कवयित्रियों ने अपनी कविताओं में प्रकृति को साधन रूप में लेकर ईश्वर की कल्पना की है। महादेवी वर्मा और नलिनीबाला देवी ने प्रकृति के माध्यम से अपनी कविताओं में 'प्रिय' की उपस्थिति स्वीकार की है। विवाहित महादेवी वर्मा ने अपने पति से दूर रहकर परमात्मा को ही प्रियतम मान लिया था। वहीं नलिनीबाला देवी ने भी पति की अकाल मृत्यु के बाद परमात्मा को ही प्रियतम के रूप में स्वीकारा है। दोनों ही कवयित्री परमात्मा रूपी प्रिय से अभिन्न होने के लिए मन में प्रबल चाहत रखती हैं। जहाँ महादेवी वर्मा पीड़ा में ही रहकर जीवन जीना चाहती हैं, वहीं नलिनीहबाला देवी मृत्यु को प्राप्त करके अपनी वेदनाओं से संपूर्ण रूप से मुक्त होना चाहती हैं। जीवन की आवेगात्मक अनुभूति महादेवी वर्मा और नलिनीबाला देवी दोनों के काव्य के प्रमुख तत्वों में से एक है। यह अनुभूति किसी एक आयाम तक सीमित नहीं रहती है। इसलिए दोनों ही कवयित्रियों की कविताओं में रहस्यानुभूति के अनेक आयाम दिखाई पड़ते हैं।

बीज शब्द : कविता, रहस्यवाद, अध्यात्म, परमात्मा, वैराग्य।

भूमिका :

हिंदी साहित्य के इतिहास में छायावादी काव्यधारा की प्रमुख कवयित्री महादेवी वर्मा और असमीया साहित्य के इतिहास में रोमांटिक काव्यधारा की प्रमुख कवयित्री नलिनीहाला देवी की कविताओं में रहस्यवादी चिंतन प्रमुख स्वर के रूप में मुखर होता है। महादेवी वर्मा और नलिनीबाला देवी की कविताओं में रहस्यवाद के कुछ तत्व समान प्रतीत होते हैं। जैसे - दोनों कवयित्रियों ने रहस्यवाद का संबंध विशिष्ट अनुभूति माना है तथा रहस्यवाद का क्षेत्र धार्मिक या आध्यात्मिक है और दोनों ही कवयित्रियों के प्रमुख लक्ष्य आत्मा और परमात्मा में ऐक्य स्थापन करना है।

शोधार्थी, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी,
असम-781001
8761063793
sudarkhinadowari@gmail.com

असमीया साहित्य में सन 1889 से 1940 तक के समय को जोनाकी युग या रोमांटिक युगमाना जाता है। सन 1888 में असमीया भाषा एवं साहित्य की उन्नति के लिए 'असमीया भाषा उन्नति साधिनी सभा' नामक संस्था का गठन किया गया। संस्था के मुख पत्रिका के रूप में 'जोनाकी' पत्रिका का प्रकाशन सन 1889 में किया गया। 'जोनाकी' पत्रिका के द्वारा असमीया के पुराने और नए साहित्यकारों को एक मंच मिला। 'जोनाकी' में प्रकाशित असमीया कविता, कहानी, नाटक, व्यंग्यमूलक रचनाओं में 19वीं शदी के बंगाल की नवजागरण तथा अंग्रेजी साहित्य के रोमांटिक आंदोलन का प्रभाव पड़ने लगा, अर्थात जोनाकी पत्रिका के माध्यम से असमीया साहित्य में अंग्रेजी रोमांटिक भावादर्श अपने ढंग से फला-फूला। परिणामस्वरूप असमीया साहित्य नवीन उर्जा के साथ प्रगति के पथ पर अग्रसर हुआ। प्रकृति प्रेम, सौंदर्यप्रेम, व्यक्तिगत प्रेम चेतना, स्वदेशानुभूति, अलौकिकता, रहस्य का अनुसंधान आदि भावों से युक्त काव्यों की रचना होने से असमीया साहित्य में नई धारा की पदार्पण हुआ, जिसे असमीया साहित्य में रोमांटिक युग या जोनाकी युग कहा गया।

असमीया साहित्य के आलोचक डॉ. सत्येन्द्रनाथ शर्मा ने जोनाकी युग के बारे में अपना मंतव्य देते हुए कहा है कि- *''असम में उस तरह के राजनैतिक या दार्शनिक परिवेश का सृष्टि होकर रोमानी भावधारा का उदय नहीं हुआ था। बंग देश में 19वीं शताब्दी में नवजागरण के साथ रोमानी आंदोलन सम्मिलित होकर साहित्य के आवेग को प्राधान्य देकर जो नई प्रवाह बहाकर आया था, उसी के लहरों ने असमीया युवा साहित्यकारों को अनुकूल रूप से प्रभावित किया। परिणामस्वरूप असम के जमीन में स्वाभाविक रूप से उज्जीवित न होने से भी इस रोमानी भावादर्श को असमीया साहित्यकारों ने अपना लिया था।''*[1] असमीया जोनाकी युग में चंद्रकुमार आगरवाला, लक्ष्मीनाथ बेजबरूवा, रघुनाथ चौधुरी, नलिनीबाला देवी आदि साहित्यकारों का नाम प्रमुख रूप से ले सकते हैं।

सन 1918 से सन 1936 तक के समय को हिंदी साहित्य में छायावादी युग कहा जाता है। हिंदी साहित्य के इतिहास में छायावादी साहित्य में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के निरंतर संघर्ष एंव प्रगति के स्थिति विद्यमान है। परिवर्तनशीलता छायावाद की अद्वितीय विशेषता है। एक ओर तो छायावाद द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मक काव्यात्मक स्वरूपों से छूटकारा चाहता था, वहीं दूसरी ओर छायावाद आत्म-निरीक्षण के लिए प्रेरित हुआ। ऐसे में छायावादी काव्य बांग्ला साहित्य एवं पाश्चात्य साहित्य से भी प्रभावित हुआ।

छायावादी काव्यों के विशेषताओं की ओर संकेत करते हुए डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा है कि *''मानवीय दृष्टिकोण के कवि की कल्पना, अनुभूति और चिंतन के भीतर से निकली हुई वैयक्तिक अनुभूतियों के आवेग की स्वत: समुच्छित अभिव्यक्ति, बिना किसी आयाम के और बिना किसी प्रयत्न के स्वयं निकल पड़ा हुआ भाव-स्त्रोत ही छायावादी कविता का प्राण है।''*[2] हिंदी साहित्य में छायावाद युग के प्रमुख चार स्तंभ हैं - जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत और महादेवी वर्मा।

कविता का सीधा संबंध ह्रदय से है, ह्रदय का संबंध चिंतन से है। चिंतन का सीधा संबंध दर्शन से है। दर्शन की प्रवृत्ति ही मनुष्य को बाह्य से अंतर की आत्म-निरीक्षण के ओर ले जाती है। आत्म-निरीक्षण की प्रवृत्ति में स्वानुभूत और अध्यात्म का भावना ही मूलविषय वस्तु है। नलिनीबाला देवी और महादेवी वर्मा की काव्य रचनाएँ इसका उदाहरण हैं। दोनों कवयित्रियों की कविताओं में रहस्यानुभूति का जो भाव है वह वास्तविकता के अति निकट होते हुए भी निर्गुण है।

जिज्ञासा का भावना :

जब किसी वस्तु या विषय का ज्ञान हमें स्पष्ट नहीं होता तो उसके प्रति हमारे जिज्ञासा का भाव उत्पन्न होता है, अर्थात उसे जानने की इच्छा उत्पन्न होती है। बचपन में हमें अक्सर कहा गया है कि 'जिज्ञासा ज्ञान की माता है'। बड़े होकर हमें यह भी पता चलता है कि जिज्ञासा आत्म तत्व से संबंधित है। जब कोई मनुष्य आत्मा और परमात्मा के बारे जानने का कोशिश करता हैं या उत्कंठित होता है तो

उसे आत्मज्ञान प्राप्त होता है। आत्मज्ञान ही मनुष्य को ब्रह्मज्ञान की ओर ले जाता है। यह पूरी प्रक्रिया रहस्यानुभूति के माध्यम से ही होती है। आत्मा और परमात्मा को जानने का पहली पड़ाव ही जिज्ञासा की भावना है। नलिनीबाला देवी और महादेवी वर्मा के काव्यों में परमात्मा को जानने काी उत्कंठा कभी सृष्टि के सृजनकर्ता के रूप में हुआ है तो कभी परमात्मा रूपी प्रिय के रूप में। इस विषय में महादेवी वर्मा कहती हैं –

''कनक से दिन मोती सी रात,
सुनहली सांझ गुलाबी प्रात।
मिटाता रंगता बारम्बार
कौन यह जग का चित्राधार।''[3]

अर्थात कवयित्री जानना चाहती हैं कि इस सुंदर जगत का चित्रकार कौन है, जिन्होंने दिन-रात, सुबह-शाम सभी में अलग-अलग रंग बिखेर दिया है। वहीं नलिनीबाला देवी परमसत्ता को प्रिय के रूप में ढूँढ़ते हुए कहती हैं –

''सपोन पारर तुमि
प्रभु मोर आराध्य परम
मानसर तीरे तीरे
दिया आहि निते दरशन''[4]

अर्थात तुम केवल मेरी स्वप्नों के गहराइयों में आकर मानस के तीर पर हर दिन मुझे दर्शन देते हो फिर भी मैंने तुम्हें परम आराध्य मान लिया है।

अत: हम यह कह सकते हैं कि जिज्ञासा का भाव ही परवर्ती समय में दोनों कवयित्रियों में आस्था के रूप में दिखाई देता है।

दिव्य प्रणयानुभूति :

हिंदी साहित्य के इतिहास में आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक प्रणयानुभूति से संबंधित सारी रचनाएँ मिलती हैं। आदिकाल के कविताओं में राजा का रानी के प्रति प्रणयानुभूति की अभिव्यक्ति हुई थी। भक्तिकाल में तो प्रणयानुभूति संबंधित कविताओं में सूफी काव्य, कबीरदास, सूरदास, मीराबाई आदि उल्लेखनीय हैं। रीतिकाल में बिहारी, घनानंद, रसखान, मतिराम आदि कवियों के काव्य में प्रणयानुभूति का वर्णन हुआ है। वहीं आधुनिक काल की छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा के प्रथम काव्य संग्रह नीहार से लेकर रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत और दीपशिखा के अंतिम गीत तक दिव्य प्रणयानुभूति स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है। परमात्मा के प्रति महादेवी वर्मा की जो प्रणयानुभूति है, वह वासनारहित है। महादेवी वर्मा आगे कहती हैं –

''कैसे कहती हो सपना है
अलि! उस मूक मिलन की बात!
भरे हुए अब तक फूलों में
मेरे आंसू उनके हास!''[5]

अर्थात महादेवी वर्मा भ्रमर को सखी मानते हुए कहती हैं कि 'हे अलि' प्रिय की मिलन सिर्फ स्वप्न नहीं है, भले ही उसमें कोई कथा – वाचन नहीं। यह मिलन शब्दों से परे है, भावों से परे नहीं। परमात्मा रूपी प्रिय के मूक मिलन से सबकुछ पूर्ण हो जाता है। खिलते हुए फूलों को देखो वह अब भी भरे हुए हैं प्रिय के मिलन से। मेरे आँसू में छिपी हँसी को देखो– यह ही तो संदेश है प्रिय के आने और जाने का। मूलत: संयोग और वियोग के जरिए प्रणय की दोनों ही स्थितियों का वर्णन इस पंक्ति में हुआ है।

वहीं पिता के द्वारा घर में ही शिक्षा ग्रहण करने वाली नलिनीबाला देवी ने कभी विद्यालय से शिक्षा प्राप्त नहीं की थी। लेकिन अटूट स्वाध्याय के द्वारा असमीया साहित्य में अपनी एक अलग पहचान बनाई। बांग्ला साहित्य के माध्यम से नलिनीबाला देवी रहस्यानुभूति की ओर प्रभावित हुई थीं। असमीया जोनाकी युग की कवयित्री नलिनीबाला देवी का प्रथम कविता संग्रह 'सन्धिया सुर' से लेकर 'सपोन सुर', 'परशमणि', 'अलकानन्दा' आदि कविता संग्रहों में दिव्य प्रणयानुभूति का वर्णन हुआ है। दिव्य प्रणयानुभूति का मर्मस्पर्शी वर्णन करते हुए नलिनीबाला देवी ने अपनी कविता में लिखती हैं –

''शितानत थका बकूल जोपात
शूनिलो तोमार मात
सार पाइ देखो चन्दन सुबास
आमोल मोलाइ गात''[6]

अर्थात मेरे निकट जो बकूल फूल के पेड़ हैं, वहाँ पर मैंने तुम्हारी आवाज सुनी और जैसे ही तुम्हें देखने के लिए

आँखें खोलीं तो अपने शरीर में चंदन की सुगंध पाई, जो केवल तुम्हारे शरीर से ही निकलती है।

विरहानुभूति :

महादेवी वर्मा और नलिनीबाला देवी की कविताओं में विरहानुभूति का वर्णन हुआ है। हिंदी साहित्य में महादेवी वर्मा को जिस प्रकार से आधुनिक मीराबाई कहा जाता है, उसी प्रकार असमीया साहित्य में नलिनीबाला देवी को भी आधुनिक मीराबाई कह सकते हैं। नलिनीबाला देवी का बचपन बहुत ही सुखद रहा, पर जैसे उम्र बढ़ती गई दु:ख भी उतना ही बढ़ने लगा।

विचलित जीवन को शांत करने के लिए उन्होंने परमात्मा को ही अपने प्रिय के रूप में स्वीकार किया। परमात्मा रूपी प्रिय से न मिल पाने की स्थिति में वह विरहित होकर लिखती हैं –

''जीवनत कोनो दिने
नपरिल तोमाक मनत
आजि एई आवेलिर विदाय परत
गहीन एन्धारे ढका
सीमाहीन सागर पारत
तोमालै परिछे मनत
अ' मोर परम प्रिय
तुमि क'त तुमि क'त क'त ?''[7]

अर्थात जब जीवन आनंद से भरा हुआ था, तब मैंने कभी भी तुमको याद नहीं किया, पर आज अंधकार से ढँके हुए जीवन की इस पूर्व संध्या में सीमाओं से परे सागर के किनारे मुझे तुम्हारी याद आ रही है। कवयित्री अपने प्रियतम को याद करते हुए पूछती हैं कि – हे मेरे परम प्रिय तुम कहाँ हो ?

छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा अपने पूरे जीवन में पति से दूर रहीं। उन्होंने ने भी प्रिय के रूप में परमात्मा को ही स्वीकारा। महादेवी वर्मा की विरहानुभूति इतनी प्रबल थी कि उनकी व्यक्तिगत विरहानुभूति समग्रता को घेर कर जनमानस के सुख का कारण बन जाती है। महादेवी वर्मा ने अपने तमाम दुखों के बीच में ही जीवन के आनंद को तलाशा है। कवयित्री लिखती हैं –

''मेरे बिखरे प्राणों में सारी करुणा ढुलका दो
मेरे छोटी सीमा में अपना अस्तित्व मिटा दो
पर शेष नहीं होगी यह मेरे प्राणों की क्रीड़ा
तुमको पीड़ा में ढूंढ़ा तुममें ढूंढ़ंगी पीड़ा''[8]

परमात्मा का दिव्याभास :

परम सत्ता से न मिल पाने की करुणा या वेदना से ही महादेवी वर्मा और नलिनीबाला देवी बहुत हद तक एक दूसरे की निकट आती हैं। महादेवी वर्मा में जन्मजात वैराग्यमूलक वृत्तियाँ थीं, पारिवारिक संस्कारों ने उन्हें आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर करने में सहायता की, लेकिन नलिनीबाला देवी में जन्मजात वैराग्यमूलक दृष्टि नहीं थी। परिवार से उन्हें आध्यात्मिक ज्ञान तो बचपन से मिला था, पर कम उम्र में वैधव्य, पिता का देहांत, एक के बाद दूसरी संतानों की मृत्यु ने उनके जीवन को इस तरह से झकझोर डाला कि वह धीरे – धीरे वैराग्यमूलक वृत्तियों की ओर अग्रसर होती गईं। आध्यात्मिक ज्ञान और वैराग्यमूलक जीवन उन्हें रहस्यवाद की ओर ले गया। जगत की हर एक वस्तु या विषय को अस्थायी मानते हुए, मानव जीवन की क्षणिकता को स्वीकारते हुए परमात्मा के दिव्याभास के बारे में नलिनीबाला देवी लिखती हैं –

''मानुहर दुचकुर असीम सौंदर्य तृष्णा
सुख आशा हेंपाहर बुकुर
नहय इ मरतर खन्तेकिया जीवनर
सुख आशा परम पदर
रूप तृष्णा चिर सुंदरर''[9]

जीव जगत के हर एक प्राणी के लिए मुत्यु चिरंतन सत्य है। क्षणभंगुर जीवन में कभी सुख तो कभी दुख की धारा बहती रहती है। लेकिन हम अपने संपूर्ण जीवन में हमेशा स्थायित्वता को ही ढूँढ़ते रहते हैं, चाहे वह परिवार के सुख की चिंता हो या निजी आकांक्षाओं को पूर्ण करने की। हम भूल जाते हैं कि हमारे दिन–रात की मेहनत कुछ दिनों के लिए ही है। सच्चाई यही है कि केवल परम सत्ता ही एकमात्र है। महादेवी वर्मा ने भी यही माना है कि ईश्वर ही परम सत्य है और प्राणी तब तक नश्वर है, जब तक वह मृत्यु प्राप्त कर ईश्वर से एकाकार न हो जाए –

"मेरे जीवन की जागृति!
देखो फिर भूल न जाना,
जो वे सपना बन आवे
तुम चिर निद्रा बन जाना"[10]

परमात्मा से मिलन की अभिलाषा :

रहस्यवाद का उद्देश्य ही है आत्मा और परमात्मा के बीच संबंध की जटिलता को रेखांकित करना। आत्मा सबसे पहले परमात्मा को जानने की कोशिश करती है। उसके बाद परमात्मा से दिव्य प्रेम का अभ्युदय होता है। उस दिव्य प्रेम में आत्मा प्रिय से अभिमान भी करती है। वही करुणा और वेदना से संघर्ष भी करती है। करुणा और वेदना के द्वारा आत्मा के अंत:करण में सात्विकता की ज्योति का आविर्भाव होता है। तब परमात्मा रूपी प्रिय से मिलने की अभिलाषा अधिक व्यापक हो जाती है। महादेवी वर्मा लिखती हैं –

"आज कहाँ मेरा अपनापन,
तेरे छिपने का अवगुंठन
मेरा बंधन तेरा साधन
तुम मुझमें अपना सुख देखो,
मैं तुममें अपना दु:ख प्रियतम
टूट गया वह दर्पण निर्मम"[11]

अर्थात परमात्मा रूपी प्रिय से मिलने की अभिलाषा पूर्ण होते ही मार्ग के संपूर्ण अवरोध समाप्त होकर परमात्मा से सारी दूरियाँ समाप्त हो गईं।

प्रकृति में मानवी भावों का आरोप करके नलिनीबाला देवी ने प्रिय से मिलने की अभिलाषा दिखाई है। प्रिय चाहे सगुण हो या निर्गुण, प्रिय से मिलने की अभिलाषा सभी के हृदय में हवाओं की तरह रहती है। कभी यह अभिलाषा हवाओं की तरह हृदय में प्रबल हो उठती है तो कभी शांत-निर्मल होकर हृदय में ही बहती रहती है। यही रूप नलिनीबाला देवी के काव्य में भी ध्वनित हो उठा है। प्रकृति के सूक्ष्मातिसूक्ष्म तत्व को अनुभव करके नलिनीबाला देवीने प्रिय से मिलने के लिए उन्ही तत्वों का प्रयोग किया। कभी सागर किनारे संध्या समय में तो कभी बकुल फूल के निकट या फिर सूर्य की अरुणिमा के साथ प्रिय से मिलन की अभिलाषा दिखाई है –

"पूवतिर शुभ लगनत
अरुणर रङा पोहरत
तोमार लगत मोर
अनन्त मिलन
निते देखा शैवालि वनत"[12]

अर्थात सूर्योदय के शुभ समय में, सूर्य की लालिमा में शेवाली फूलों से सजे वन में हर दिन हमारी अनंत मिलन होता है।

अत: प्रिय से मिलन की अभिलाषा दोनों कवयित्रियों ने सुंदर, सहज ढंग से कविताओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

निष्कर्ष :

महादेवी वर्मा और नलिनीबाला देवी के काव्य में अभिव्यक्त रहस्यानुभूति के कारण उनकी कविताओं में निर्गुण भगवान, अद्वैतवाद, गीता, उपनिषद, उच्च आध्यात्मिक भावना, जिज्ञासाभाव, प्रेमानुभूति, वेदना, करुणा आदि सभी विचार समाहित हैं। प्रकृति को साधन के रूप में दोनों कवयित्रियों ने स्वीकारा है। प्रकृति के सूक्ष्मातिसूक्ष्म तत्व को ग्रहण करके रहस्यानुभूति को प्रकृति के प्रतीकों के रूप में ध्वनित किया, जिसके फलस्वरूप परमात्मा से संयोग और वियोग होने का अहसास होता है। नलिनीबाला देवी के काव्य में जीवन की परिस्थितियों से प्राप्त वैराग्यपूर्ण आध्यात्मिक प्रेमानुभूति है, वहीं महादेवी वर्मा के काव्य में अद्वैतवाद और बौद्धवाद से प्रभावित वैराग्यपूर्ण आध्यात्मिक प्रेमानुभूति है। प्रस्तुत अध्ययन से हमें महादेवी वर्मा और नलिनीबाला में प्रमुख रूप से तीन समरूपता प्राप्त हुई और वह है – ईश्वर के प्रति आस्था, प्रकृति की प्रधानता और जीव की स्वतंत्र सत्ता।

नलिनीबाला देवी और महादेवी वर्मा की कविताओं में जो रहस्यानुभूति है, वह मध्ययुगीन संतों के रहस्यवाद से अलग है। दोनों कवयित्रियों के काव्य में जीवन, जगत और ईश्वर को नए ढंग से देखने की जिज्ञासा विद्यमान है। नलिनीबाला देवी और महादेवी वर्मा की रहस्यानुभूति को अनुभव करते हुए डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के एक कथन को याद कर सकते हैं– *"मनुष्य ने धर्म पर संदेह किया,*

ईश्वर पर संदेह किया, परिपाटी विहीन रसज्ञता पर संदेह किया फिर भी यह युग विश्वास का युग है, क्योंकि मनुष्य ने अपने ऊपर संदेह नहीं किया।''[12] निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि प्रियतम की चितवन ने महादेवी वर्मा को पीड़ा का साम्राज्य दे डाला तो वही परंपरानिष्ठ प्रियतम के अन्वेषण में पूरा जीवन बिताने वाली कवयित्री नलिनीबाला देवी को अपने भीतर ही प्रियतम की आहट मिली। ❑

संदर्भ सूची :

1. सहाय अलख निरंजन, असमिया साहित्य का परिचयात्मक इतिहास,पृष्ठ-168
2. मिश्र श्याम किशोर, छायावाद की परिक्रमा, पृष्ठ-197
3. मधुपुरी.असीम, महादेवी साहित्य का अभिनव मुल्यांकन, पृष्ठ- 85
4. https://mightlearn.com/wp-content/uploads/2022/08.pdf
5. मधुपुरी. असीम, महादेवी साहित्य का अभिनव मूल्यांकन, पृष्ठ- 85-86
6. डेका हाजरिका. करबी, असमिया कविता, पृष्ठ- 155
7. अनाहृत: सन्धियार सूर
8. मिश्र श्याम किशोर, छायावाद की परिक्रमा, पृष्ठ-322
9. तालुकदार. नन्द, कवि आरू कविता, पृष्ठ- 202
10. गुप्त.गणपतिचन्द्र, महादेवी नया मुल्यांकन, पृष्ठ- 186
11. मिश्र श्याम किशोर, छायावाद की परिक्रमा, पृष्ठ- 322
12. देवराज, रोमांटिक साहित्य शास्त्र, पृष्ठ- 3

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विरासत

भारत की संथाल जनजाति : उनकी संस्कृति परंपरा एवं वर्तमान परिदृश्य

शिवेंद्र शांडिल्य

शोधार्थी, लोक प्रशासन एवं लोक नीति
जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय, सांबा
जम्मू एवं कश्मीर-181143
9739965208
0551020.pppa@cujammu.ac.in

दाऊद टुडू

सहायक शिक्षक, उच्चतर माध्यमिक
विद्यालय, ग्राम : घटियारि,
प्रखंड : सुंदरपहाड़ी, गोड्डा (झारखंड)
9835780500
tudud1978@gmail.com

शोध सार :

भारत, एक समृद्ध सांस्कृतिक विरासत वाला देश है, जिसमें अनेक जनजातियों का बसेरा है, जिनमें से प्रत्येक की अपनी अनूठी रीति-रिवाज, परंपराएँ और जीवन शैली हैं। इन जनजातियों में संथाल भारत के बड़े और सबसे प्रमुख स्वदेशी जनजाति समूहों में से एक है। अधिक आबादी के साथ यह झारखंड, पश्चिम बंगाल, ओडिशा और बिहार के पूर्वी राज्यों में निवास करते हैं। इस आलेख का उद्देश्य संथाल जनजातियों की सांस्कृतिक प्रथाओं, परंपराओं और संघर्षों को उजागर करना, उनकी समृद्ध विरासत और आधुनिक भारत में उनके सामने आने वाली चुनौतियों पर प्रकाश डालना है।

बीज शब्द :

आदिवासी, धर्म, संस्कृति, संथाल, परंपरा, पलायन, संथाल, हूल इत्यादि।

मूल आलेख :

संथाल एक कृषक समुदाय है, जो प्रकृति के साथ सद्भाव से रहता है। उसका पारंपरिक व्यवसाय खेती है, और वह धान, मक्का और अन्य फसलों की खेती में कुशल है। वे गाँवों में रहते हैं, जिन्हें 'टोला' कहा जाता है, जो आमतौर पर जंगलों से घिरे होते हैं, जहाँ वे फल, मेवा और औषधीय पौधों जैसे वन उत्पाद इकट्ठा करते हैं। संथाल लोग प्रकृति के प्रति गहरा सम्मान रखते हैं और पर्यावरण के साथ तालमेल बिठाकर रहने में विश्वास करते हैं। भारत के संथाल आदिवासियों की जीवन शैली विशिष्ट है। उनकी बुनियादी जरूरतें जंगल के पेड़-पौधों से पूरी होती हैं। आदिवासी मछली पकड़ने और खेती में भी लगे हुए हैं। इन आदिवासियों के पास पौधे से संगीत उपकरण, चटाई और टोकरियाँ बनाने का शानदार कौशल है। संथाल आदिवासी अलौकिक प्राणियों और पैतृक आत्माओं में विश्वास करते हैं। उनके अनुष्ठानों में मुख्य रूप से बलि चढ़ाना और बोंगा (आत्माओं) का आह्वान शामिल होता है। उनका मानना है कि जंगल, जंगल के जानवरों और इंसानों के बीच गहरा रिश्ता है। यह विश्वास उनकी कई लोक कथाओं में दर्शाया गया है। इनमें संथाल पूर्वजों पिलचू हरम और पिलचू बूढ़ी की कहानी भी लोकप्रिय है।

संथाल आदिवासियों को संगीत और नृत्य भी पसंद है। संथाल संगीत महत्वपूर्ण मायनों में हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत से भिन्न है। उनकी सांस्कृतिक प्रथाएँ उनकी जीववादी मान्यताओं में गहराई से निहित हैं, जहाँ वे सूर्य, चंद्रमा और पूर्वजों सहित विभिन्न आत्माओं की पूजा करते हैं। संथालों में संगीत, नृत्य और कला की एक समृद्ध परंपरा है, जो उनके जीवंत त्योहारों में परिलक्षित होती है, जैसे 'बाहा' त्योहार, जो वसंत के आगमन का जश्न मनाता है। उनकी पारंपरिक पोशाक, जिसे 'साड़ी' और 'धोती' के नाम से जाना जाता है, उनकी सांस्कृतिक पहचान का एक अभिन्न अंग है।

संथाल जनजाति विभिन्न समूहों में है, जिन्हें गोत्र कहा जाता है। इन समूहों के नियम हैं कि सदस्य अपने ही समूह में विवाह नहीं कर सकते। वे केवल किसी भिन्न गोत्र के व्यक्ति से ही विवाह कर सकते हैं। संतान पिता का गोत्र धारण करती है। प्रत्येक गोत्र का एक विशेष प्रतीक होता है, जैसे कोई जानवर, पक्षी या पौधा, जो उनके लिए महत्वपूर्ण होता है। उनका मानना है कि उनके प्रतीक को नुकसान पहुँचाना या खाना गलत है। इससे उन्हें शांतिपूर्वक एक साथ रहने में मदद मिलती है। गोत्र का नाम प्रतीक के नाम पर रखा गया है, और वे शादियों जैसे विशेष आयोजनों के दौरान इसकी पूजा करते हैं। गोत्र प्रणाली इस विचार पर आधारित है कि समूह में हर कोई एक सामान्य पूर्वज से संबंधित है, वास्तविक और पौराणिक दोनों। वे एक-दूसरे को भाई-बहन के रूप में देखते हैं। संथाल जनजाति में कई अलग-अलग गोत्र हैं, जिनमें से प्रत्येक के अपने उप-समूह हैं, जिन्हें खुंट कहा जाता है, जो उनकी धार्मिक मान्यताओं से जुड़े हुए हैं। मुख्यत: 12 संथाल गोत्रों के नाम हैं - हांसदाक, मुर्मू, किसकू , हेमब्रॉम, मरांडी, सोरेन, टुडू, बेसरा, पोड़ीया, बसके, चौडे एवं बेदेया।

संथाल परिवार में सामाजिक संगठन की सबसे छोटी इकाई पति-पत्नी और उनके अविवाहित बच्चे हैं। एक बार शादी करने का सामान्य रूप से संथालों में प्रचलन है। संथाल जनजाति के अधिकांश लोग गाँवों में रहते हैं। इस जनजाति में परिवारों का नेतृत्व आमतौर पर पिता द्वारा किया जाता है और पारिवारिक संपत्ति पर पहला अधिकार बेटों का होता है। जनजाति की महिलाएँ कड़ी मेहनत करती हैं और परिवार की देखभाल और व्यवसाय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। हालाँकि, कुछ ऐसी गतिविधियाँ हैं, जिनमें महिलाओं को भाग लेने की अनुमति नहीं है, जैसे शिकार और कुछ घरेलू कार्य। किसी लड़की की शादी होने से पहले वह अपने पिता की होती है और उससे शादी करने के लिए उसके पिता को 'पोन' नामक भुगतान करना पड़ता है। शादी के बाद वह अपने पति की हो जाती है। संथाल महिलाओं को अक्सर उनके परिवारों में सम्मान दिया जाता है और सलाह दी जाती है। समुदाय में वृद्ध महिलाओं और पुरुषों का सम्मान किया जाता है।

संथाली धर्म में मारंग बुरु या बोंगा को सर्वोच्च देवता के रूप में पूजा की जाती है। हालाँकि, संथाली सबसे ज्यादा विश्वास आत्माओं के दरबार (बोंगा) पर करते हैं, जो दुनिया के विभिन्न पहलुओं को संभालते हैं और जीवन के बुरे प्रभावों से बचाने के लिए इन्हें प्रार्थनाओं और प्रसाद से प्रसन्न किया जाता है। यह आत्माएँ गाँव, घर, पूर्वज और उप-कबीले स्तर पर काम करती हैं; साथ ही बुरी आत्माएँ, जो की बीमारी का कारण बनती हैं और गाँव की सीमाओं, पहाड़ों, पानी, बाघों और जंगल में निवास कर सकती हैं। संथाल गांव की एक विशिष्ट विशेषता गाँव के किनारे पर एक पवित्र उपवन (जिसे 'जाहेर' या 'संथाल' स्थल के नाम से जाना जाता है) है, जहाँ कई आत्माएँ रहती हैं और जहाँ वार्षिक उत्सवों को मनाया जाता है। सबसे महत्वपूर्ण आत्मा मारन बुरू (महान पर्वत) है, जिनका आह्वान प्रसाद चढ़ाने के समय किया जाता है और जिन्होंने पहले संथालों को हरिया बनाने का निर्देश भी दिया था। वार्षिक त्योहारों में कृषि चक्र से जुड़े अनुष्ठानों अथवा जीवन-चक्र अनुष्ठानों जैसे जन्म, विवाह और मृत्यु पर आत्माओं के लिए प्रार्थनाएं होती हैं और प्रसाद के तौर पर जानवरों, आमतौर पर पक्षियों की बलि शामिल होती है। धार्मिक चिकित्सक इलाज में भविष्यवाणी और जादू-टोना करते हैं। समान मान्यताएँ उत्तर-पूर्व और मध्य भारत के अन्य जनजातियों में आम हैं।

ब्रिटिश काल से साहिबगंज, पाकुड़, गोड्डा और दुमका जिले (वर्तमान में झारखंड राज्य के संथाल परगना प्रमंडल

के जिले) को दामिन-ए-कोह के नाम से जाना जाता था। अठारहवीं सदी के उत्तरार्द्ध और उन्नीसवीं सदी की शुरुआत में कटक, दलभूम मानभूम, बाराभूम, छोटानागपुर, पलामू, हजारीबाग, मिदनापुर, बांकुरा और बीरभूम से संथाल बड़ी संख्या में दामिन-ए-कोह में आकर बस गए थे। उत्तर में गंगा और दक्षिण में ब्राह्मणी नदी अथवा उसमें समतल देश से घिरी पहाड़ियाँ हैं, जिनमें उपजाऊ घाटियाँ थीं, जो पहाड़ियों की तलहटी में स्थित घाटियाँ, जलधाराओं द्वारा अच्छी तरह से सिंचित थीं, और अधिकांश भाग में संथालों द्वारा खेती और निवास किया जाता था। बाद वाले तुलनात्मक रूप से हाल के आप्रवासी थे, दामिन-ए-कोह में पहले केवल पहाड़िया लोग रहते थे, जिससे अंग्रेजी शासन पशु-चोर रूप में जानती और डरा करती थी।

दामिन-ए-कोह में 1855 का संथाल हूल या विद्रोह सामान्य तौर पर संथालों के इतिहास में एक मील का पत्थर था। सबसे पहले भारत के अंग्रेजी शासकों का ध्यान संथाल क्षेत्र की ओर आकर्षित किया, जिससे इस संबंध की प्रकृति और संथाल एकजुटता की ताकत और सीमाओं का तुरंत पता चलता है। संथाल गीतों और चर्चाओं में स्मरण किया जाने वाला यह संथाल जीवित सांस्कृतिक विरासत का हिस्सा है और इसलिए निरंतर प्रभाव का है। दामिन-ए-कोह के संथालों के अच्छे पुराने दिन अल्पकालिक थे। यह पहले ही देखा जा चुका है कि कैसे उन्हें जंगल की भूमि पर पुनः दावा करने के लिए उस क्षेत्र में बसने के लिए प्रोत्साहित किया गया था। लेकिन, राजस्व कंपनी की सरकार का मुख्य विचार था और कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं रह सकता था, जहाँ राजस्व एकत्र करने का उज्ज्वल भविष्य हो।

विद्रोह के कई कारण थे। संथाल हूल मुख्य रूप से गैर-आदिवासी आप्रवासियों को भूमि के लगातार नुकसान

को कम करने का एक प्रयास था। संथालों से उनकी जमीन का मालिकाना हक छीना जा रहा था। संथाल अपनी आर्थिक दुर्दशा से मुक्ति पाना चाहते थे। महाजनों या साहूकारों और जमींदारों द्वारा उनका शोषण किया जाता था। व्यक्तिगत और वंशानुगत ऋण, बंधन, भ्रष्टाचार और पुलिस द्वारा जबरन वसूली, जो साहूकारों की मदद कर रहे थे। संथालों के लिए अदालती समाधान की असंभवता, स्वतंत्रता और बढ़ी हुई राजनीतिक शक्ति के लिए उनकी लालसा, एक अक्षम, अनुभवहीन और नील की खेती करने वालों, मवेशियों की चोरी, संताल महिलाओं के साथ बलात्कार, कीमत में असामान्य वृद्धि, भूमि पर नकद में निश्चित भुगतान की ब्रिटिश प्रणाली, महिलाओं सहित संथाल कैदियों के साथ किए जाने वाले दुर्व्यवहार के खिलाफ संथालों की शिकायतों से निपटने में सुस्ती, ब्रिटिश अधिकारियों का खराब भौगोलिक ज्ञान, संथाल हूल के ये कुछ कारण थे। यह भारत के इतिहास में सबसे महान विद्रोहों में से एक था। इस हूल में सिद्धू और कान्हू मुर्मू की वीरता एवं स्वतंत्रता संग्राम में उनका योगदान एक कालातीत गाथा है, जो आने वाली पीढ़ियों को प्रेरित करती है और भारत के समृद्ध और विविध इतिहास पर गर्व की अनुभूति देती है।

प्राकृतिक संसाधनों में समृद्ध होने से विभिन्न खानों, उद्योगों, जल विद्युत परियोजनाओं, सिंचाई और जलाशयों में काफी निवेश आकर्षित हुए हैं। इन सभी ने जनजातीय समुदायों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया है। एक तरफ शहरीकरण और औद्योगिकीकरण के कारण पलायन और दूसरी तरफ ग्रामीण ठहराव ने परिधि में जनजातियों की संपत्ति पर और दबाव डाला है। अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के बावजूद संथालों को आधुनिक भारत में महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना करना पड़ा है। आधुनिक शिक्षा, शहरीकरण और वैश्वीकरण की शुरुआत के कारण उनके पारंपरिक जीवन शैली में गिरावट आई है। कई संथाल रोजगार की तलाश में शहरों की ओर पलायन कर गए हैं, जिससे सांस्कृतिक पहचान और पारंपरिक कौशल खो गए हैं। इसके अलावा संथालों को प्रमुख जाति समूहों के हाथों भेदभाव और हाशिए पर जाने का सामना करना पड़ा है। उन्हें जबरन बेदखली, भूमि कब्जा और मानवाधिकारों के उल्लंघन का शिकार होना पड़ा है, जिससे उनकी सांस्कृतिक पहचान और आत्मसम्मान नष्ट हो गया है।

अब नहीं रह गया संथाल परगना!
बहुत कम बचे रह गए हैं
अपनी भाषा और वेशभूषा में यहाँ के लोग
बाजार की तरफ भागते
सब कुछ गड्डमड्ड हो गया है इन दिनों यहाँ
उखड़ गए हैं बड़े-बड़े पुराने पेड़
और कंक्रीट के पसरते जंगल में
खो गई है इसकी पहचान

निर्मला पुतुल मुर्मू ने अपनी कविता संथाल परगना के पंक्तियों के माध्यम से दर्शाया है कि दूर के गाँवों से निकल कर अपनी जीविका के लिए स्थानीय लोगों को जाने की जरूरत होती है, जिससे उन्हें न सिर्फ अपने जीवन के लिए लड़ना पड़ता है, बल्कि उनकी संस्कृति भी अपनी जगह से गायब होती जा रही है।

कविता की आगे की पंक्तियाँ हैं -

इसकी बेहतरी के लिए
कुकुरमुत्ते की तरह उगी संस्थाओं में
तथाकथित समाज-सेवक हैं
अफसर हैं, चमचे हैं, ठेकेदार हैं, बिचौलिए हैं
और वे सबके सब
हाथों में खुली रंगीन बोतलें लिए
बना रहे हैं राउंड-टेबुल पर योजनाएँ
बोतलों में नशा है
नशे में तैरती
नशे में तैरती
गदरई देहवाली कई-कई आदिवासी लड़कियाँ हैं

मदिरापान से प्रभावित जनसंख्या एवं बिचौलिया के प्रभाव से पीड़ित संथालों की उत्पीड़न की चर्चा हो रही है।

निष्कर्ष :

भारत की संथाल जनजातियाँ एक अद्वितीय जीवन शैली और पारंपरिक प्रथाओं के साथ एक जीवंत और सांस्कृतिक

रूप से समृद्ध समुदाय हैं। हालाँकि, उन्हें आधुनिक भारत में महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिसमें उनकी सांस्कृतिक पहचान का क्षरण, भेदभाव और हाशिए पर जाना शामिल है। संथाल जनजातियों के अधिकारों को पहचानना और उनका सम्मान करना आवश्यक है, जिसमें उनके आत्मनिर्णय, सांस्कृतिक संरक्षण और मानवाधिकारों के उल्लंघन से सुरक्षा का अधिकार भी शामिल है। अथवा इस आदिवासी समुदाय की मूल प्रवृत्ति को संरक्षित करना हमारी सामूहिक जिम्मेदारी है, जो औद्योगीकरण और शहरीकरण के दौर में खोने की खतरे से गुजर रही है। ❑

संदर्भ सूची :

1. आर्चर, डब्लू, जी. : ट्राइबल लॉ एंड जस्टिस, कन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, न्यू दिल्ली, (1984)
2. बोड्डिंग, पी. ओ. : ए संथाल डिक्शनरी, वालुम-1, पार्ट-2, ओलसी(1930)
3. विश्वास, पी. सी. संताल ऑफ दि संथाल परगना, भारतीय आदिम जाति सेवक संघ, दिल्ली (1956)
4. निर्मला पुतुल : नगाड़े की तरह बजते शब्द प्रकाशन: भारतीय ज्ञानपीठ संस्करण : 2005(पृष्ठ 26)
5. उमेश कुमार वर्मा : संथाल, संक्षिप्त मोनोग्राफिक सिरीज, डॉ. रामदयाल मुंडा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान : 2022 (पृ. 12- 13)
6. ई.जी मन : संथालिया और संथल : डॉ. रामदयाल मुंडा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान : 2022 (पृ. 47-48)
7. Dr. Sunil Kumar Singh : History of Santhal Parganas : Crown Publication 2023 (Page 418-419)
8. John Kochuchira TOR : Political History of Santhal Parganas from 1765 to 1872 : Inter India Publication (Page 59,70-71)
9. Clark Prasad and Tuhin A Sinha: Sido Kanhu: The Santhal Hul, Bharat's First War of Independence: Rupa Publication India (2023)ðð
10. Ruchi Ramesh & Sudhir Singh : Emancipations of Tribes and Human Rights in India:Pentagon Press(2023)

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

समाज दर्पण

पंचायती राज संस्थाओं में लैंगिक समानता : उत्तराखण्ड राज्य के विशेष संदर्भ में

दुर्गा प्रसाद
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय, गजरौला,
अमरोहा (उत्तर प्रदेश)-244236
8755664468
durgaprasadbhatt4u@gmail.com

डॉ. प्रियंका सिंह
सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग
श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय, गजरौला,
अमरोहा (उत्तर प्रदेश)-244236
9472255592
priyankasinghchoty@gmail.com

सारांश :

स्त्री मानव की जन्मदात्री ही नहीं बल्कि मानव जीवन का आधार स्तम्भ भी है। स्त्री को गरिमामय जीवन एवं बराबरी का दर्जा प्रदान करके हम एक विकसित और समृद्ध राष्ट्र का निर्माण कर सकते हैं। विश्व की कुल आबादी के लगभग 50 प्रतिशत हिस्से में महिलाएं हैं। अत: आवश्यक हो जाता है कि महिलाओं को वैश्विक निर्वाचन क्षेत्रों में आधा प्रतिनिधित्व देकर उनका राजनीतिक सशक्तिकरण किया जाए, जिससे लैंगिक समानता केवल कपोल कल्पना न रहकर वास्तविक धरातल पर दिखे। भारत ने संविधान के लागू होने के साथ ही महिलाओं को मताधिकार प्रदान कर दिया था। इसके बावजूद भी महिलाओं को हम वो प्रतिनिधित्व प्रदान नहीं कर पाए जिसकी वो हकदार थीं। हालांकि पिछले कुछ वर्षों से समाज में काफी बदलाव आया है। कई राज्य सरकारों ने महिलाओं को 33 प्रतिशत से लेकर 50 प्रतिशत तक आरक्षण देकर उनको मुख्य धारा में लाने का काम किया है। जिसके चलते महिलाओं का पंचायती राज संस्थाओं में प्रतिनिधित्व ब?ा है। उत्तराखण्ड उन राज्यों की श्रेणी में आता है, जहाँ महिलाओं को पंचायती राज संस्थाओं में 50 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया गया है।

प्रस्तुत शोध-पत्र विगत कुछ वर्षों, यथा - 2008, 2014 व 2019 में उत्तराखण्ड में संपन्न हुए पंचायती राज संस्थाओं के चुनावों में महिलाओं की बढ़ती हुई सहभागिता और लैंगिक समानता के आँकलन की दृष्टि से तैयार किया गया है क्योंकि लैंगिक असमानता न सिर्फ महिलाओं के उत्थान की बाधक है, बल्कि समाज की तरक्की में भी रुकावट पैदा करती है।

इसके लिए उत्तराखण्ड की त्रिस्तरीय पंचायती राज संस्थाओं के विगत तीनों चुनावों के परिणामों का अध्ययन किया गया है।

सूचक शब्द :

पंचायती राज, लैंगिक समानता, महिला सशक्तिकरण, महिला प्रतिनिधित्व, सहभागिता, समानता।

प्रस्तावना :

लैंगिक समानता का अर्थ है कि सभी लिंग, चाहे स्त्री हो या पुरुष, बिना किसी भेदभाव के अपनी मनचाही जीवन शैली, अपना मनचाहा करियर और क्षमताएं

अपनाने एवं विकसित करने के लिए पूर्णत: स्वतंत्र हैं। उनके अवसर, अधिकार और समाज तक पहुँच उनके लिंग के आधार पर भिन्न नहीं हैं। लैंगिक समानता का मतलब यह नहीं है कि सभी के साथ बिल्कुल एक जैसा व्यवहार किया जाए।

भारत का संविधान अपने सभी नागरिकों को मौलिक अधिकारों, नीति निदेशक सिद्धांतों और मौलिक कर्तव्यों के माध्यम से सशक्त बनाता है। भारतीय संविधान समानता के अधिकार के तहत लिंग के आधार पर भेदभाव पर रोक लगाता है।[1] देश की स्वतंत्रता के शुरुआती दौर में समाज के कई क्षेत्रों में लैंगिक असमानताएं विद्यमान थीं। महिलाओं को संविधान में बराबरी का दर्जा तो प्राप्त था, लेकिन कई ऐसे क्षेत्र थे जहाँ महिलाओं को पुरुषों की बराबरी का नहीं समझा जाता था। भारत की केंद्र सरकार एवं कई राज्य सरकारों के द्वारा समय-समय लैंगिक असमानता को खत्म करने तथा महिलाओं को सशक्त बनाने की दिशा में कई प्रयास किए गए। महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु एक उल्लेखनीय प्रावधान 1993 के 73 वें और 74 वें संविधान संशोधन अधिनियम हैं। जो ग्रामीण और शहरी स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए कुल निर्वाचित सीटों और अध्यक्षों के पदों का एक-तिहाई सुनिश्चित करते हैं।

भारत सरकार ने देश में महिलाओं की स्थिति को और अधिक मजबूत करने एवं लैंगिक समानता को ब ?ावा देने के उद्देश्य से सितम्बर 2023 में संविधान में 106 वाँ संशोधन करके महिला आरक्षण विधेयक 'नारी शक्ति वंदन अधिनियम-2023' पारित किया। जिसे 20 सितम्बर 2023 को लोकसभा एवं 21 सितम्बर 2023 को राज्यसभा द्वारा पारित किया गया। 28 सितंबर 2023 को राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू की मंजूरी मिलने के पश्चात ये कानून बन गया है। हालांकि ये अधिनियम 2026 में होने वाले परिसीमन के पश्चात ही लागू होगा। इसमें लोकसभा और राज्य विधानसभाओं की कुल सीटों में से एक तिहाई सीटें अर्थात् 33 प्रतिशत सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित करने का प्रावधान है।

महिलाओं के सशक्तिकरण के संबंध में हाल ही में प्रतिशत 20 दिल्ली घोषणा (2023) में भी बात की गई। जिसमें एक अनुभाग लैंगिक समानता और सभी महिलाओं एवं लड़कियों के सशक्तिकरण पर नामित किया गया है। यह प्रारूप महिलाओं और लड़कियों के समग्र विकास में निवेश करने वाले राष्ट्र के गुणक प्रभाव पर प्रकाश डालता है। भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम ने नारी की महत्ता के सम्बन्ध में कहा था कि कोई भी राष्ट्र तभी सशक्त होगा जब उसकी महिला आबादी सशक्त होगी। महिलाओं का सशक्तिकरण ही स्थिर समाज को जन्म देता है, क्योंकि सशक्त महिलाओं से एक अच्छे परिवार, एक अच्छे समाज और आगे चलकर एक अच्छे राष्ट्र का विकास होता है।[2]

हमारे भारतीय राज्य उत्तराखण्ड की त्रिस्तरीय पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई है, जिसके परिणामस्वरूप आज पंचायती राज संस्थाओं के आधे से ज्यादा क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व महिलाओं के हाथों में है। जो एक खुशहाल उत्तराखण्ड के सपने को साकार करता दिखाई दे रहा है। लैंगिक समानता आज के समय की आवश्यकता है। पंचायतों में लैंगिक समानता स्थापित करके हम एक मजबूत राष्ट्र की स्थापना की ओर अग्रसर हैं।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. प्रस्तुत शोध कार्य का उद्देश्य उत्तराखण्ड सरकार के द्वारा पंचायतों में महिलाओं को 50 फीसदी आरक्षण देने से त्रि-स्तरीय पंचायती राज चुनावों में उनकी राजनीतिक सहभागिता में हुई वृद्धि को वर्णित करना।
2. उत्तराखण्ड के पंचायती राज संस्थानों में लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण की दिशा में हुई प्रगति का अध्ययन करना।

अध्ययन क्षेत्र एवं शोध प्रविधि :

प्रस्तुत शोध-पत्र उत्तराखण्ड राज्य में सम्पन्न हुए पिछले तीन पंचायतों के चुनावों (वर्ष - 2008, 2014 एवं 2019) के विश्लेषण पर आधारित है। इसमें उत्तराखण्ड में संपन्न हुए 12 जनपदों (हरिद्वार जनपद को छोड़कर) में त्रि-स्तरीय पंचायती राज चुनावों में लैंगिक समानता, महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता एवं सशक्तिकरण के विस्तार को जानने का प्रयत्न किया गया है। शोध-पत्र को तैयार करने में वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध

पद्धति का प्रयोग किया गया है। आंकड़ों का संग्रह द्वितीयक श्रेणी के स्रोतों, जैसे – पत्र–पत्रिकाएं, पुस्तकें, शोध–पत्र, समाचार पत्र, ऑनलाइन सामग्री एवं राज्य निर्वाचन आयोग उत्तराखण्ड की वेबसाइट आदि से किया गया है।

साहित्य समीक्षा :

अभिनास कुमार प्रसाद[3] ने अपने शोध–पत्र पंचायती राज निकायों में बिहार की महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी में बताया है कि बिहार भारत का जनसंख्या के हिसाब से तीसरा बड़ा राज्य है, लेकिन यहाँ महिलाओं की राजनीति में भागीदारी बहुत कम रही है। बिहार महिलाओं को राजनीतिक हिस्सेदारी देने के मामले में बहुत पिछड़ा राज्य है। ये अपने शोध–पत्र में लिखते हैं कि वर्ष – 1950 से 2001 तक बिहार विधानसभा में महिलाओं का प्रतिनिधित्व मात्र 4.3 प्रतिशत रहा है। बिहार के अब तक के राजनीतिक इतिहास में राबड़ी देवी एक मात्र महिला है जो मुख्यमंत्री रही है। भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में बिहारी महिलाओं ने परदा प्रथा के बावजूद महात्मा गाँधी जी के कुशल नेतृत्व में बढ़–चढ़कर भाग लिया था, लेकिन आजादी के बाद उनके योगदान को भुला दिया गया।

पिछले कुछ वर्षों से बिहार की राज्य सरकार के द्वारा बिहारी महिलाओं के उत्थान एवं लैंगिक समानता को सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न योजनाएं, जैसे – मुख्यमंत्री नारी शक्ति योजना, मुख्यमंत्री कन्या सुरक्षा योजना एवं लैंगिक संसाधन केन्द्र की स्थापना आदि लागू की गई हैं, जिससे धीरे–धीरे लैंगिक समानता में वृद्धि हो रही है। पंचायतों में महिलाओं को उचित प्रतिनिधित्व देने के लिए बिहार सरकार ने वर्ष – 2006 में बिहार पंचायती राज अधिनियम – 2006 बनाया। जिसके तहत बिहारी महिलाओं के लिए पंचायतों में 50 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई। इस कानून के लागू होने से पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की संख्या बड़ी है। जिससे लैंगिक समानता की दिशा में प्रगति हुई है।

गीता तिवारी[4] ने अपने शोध–पत्र पंचायतों में महिला राजनीति ¬ बाधाएं और चुनौतियाँ (उत्तराखण्ड के विशेष सन्दर्भ में) में बताया है कि उत्तराखण्ड की महिलाओं को पंचायतों में 50 प्रतिशत आरक्षण मिलने के बावजूद भी उनकी राजनीतिक सहभागिता में कोई भी परिवर्तन दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है, क्योंकि महिलाओं को कई प्रकार की सामाजिक समस्याओं का सामना करना प ?ता है। कई ऐसे सामाजिक कारक मौजूद हैं जो महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता को प्रभावित करते हैं, जैसे – राजनीतिक जागरूकता का अभाव, घरेलू कार्यों में अत्यधिक व्यस्तता, परिवार के सहयोग का अभाव, राजनीतिक एवं सामाजिक संरक्षण की कमी, रीति–रिवाजों एवं परंपराओं का दबाव, आर्थिक रूप से आत्मनिर्भरता की कमी, निर्णय लेने में स्वतंत्रता का अभाव, समाज का विरोध तथा राजनेताओं का दबाव व अन्य हस्तक्षेप आदि।

संतोष कुमार[5] ने अपने शोध–पत्र पंचायती राज में महिला सशक्तिकरण में बताया है कि किसी भी देश में तब तक सुशासन स्थापित नहीं हो सकता जब तक आधी आबादी को समुचित प्रतिनिधित्व न देकर लैंगिक रूप से समान समाज की स्थापना न की जाए क्योंकि लैंगिक समानता सुशासन की कुंजी होती है। लैंगिक रूप से व्यवस्थित समाज में ही सुशासन स्थापित किया जा सकता है। शोधार्थी अपने शोध–पत्र में लिखते हैं कि महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देने में पंचायती राज संस्थाओं की अहम भूमिका है क्योंकि पंचायती राज संस्थाएं जमीनी स्तर की संस्थाएं हैं। जिनका सीधा संपर्क आम नागरिक से होता है। ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए पंचायती राज एक सशक्त माध्यम है। पंचायती राज के माध्यम से हमारे पुरुष प्रधान समाज में निर्णय की प्रक्रिया में अब महिलाओं का समावेश हो रहा है। हालांकि इसमें अभी काफी सुधार की आवश्यकता है क्योंकि हमारी पुरुष प्रधान मानसिकता अभी भी महिलाओं के मार्ग की बाधा बनी हुई है। पंचायतों में 50 प्रतिशत महिला आरक्षण से अब महिलाओं का धीरे–धीरे राजनीति में समावेश हो रहा है, जो उनके सशक्तिकरण का मार्ग प्रशस्त करता है।

अश्वनी[6] ने अपने शोध–पत्र महिला नेतृत्व और पंचायती राज में बताया है कि उन्होंने पंचायती राज संस्थाओं में महिला नेतृत्व की सहभागिता व सक्रियता का अध्ययन करने के लिए 5 राज्यों (उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, हरियाणा व राजस्थान) में सर्वेक्षण किया। इसके लिए

उन्होंने प्रत्येक राज्य के 2 विकास-खण्डों को चुना और प्रत्येक विकास-खण्ड में 2 ग्राम पंचायतों का चयन किया। शोधार्थी ने अपने अध्ययन में पाया कि पंचायती राज संस्थाओं में महिला नेतृत्व स्वतंत्र, स्वाभाविक और जागरूक नहीं है। अधिकांश पंचायती राज संस्थाओं में महिला सदस्यों के स्थान पर उनका नेतृत्व उनके पति, ससुर, देवर या बेटों के द्वारा किया जा रहा है। फिर चाहे वो ग्राम सभा की खुली बैठक हो या कोई अन्य स्थान, हर जगह महिलाओं की ओर से उनके सम्बन्धी ही भाग ले रहे थे। ज्यादातर ग्राम पंचायतों में यही हाल था। शोधार्थी ने अपने अध्ययन में पाया कि कुछ ऐसे क्षेत्र भी थे जहाँ महिलाओं ने अपना नेतृत्व स्वयं करके कई जनहित के कार्य किए, लेकिन वहाँ भी स्थानीय ग्रामीण समाज और प्रशासन का उनको कोई सहयोग नहीं मिल पा रहा था, जिसके कारण पुरुष उनकी सदस्यता को मोहरा बनाकर पंचायती राज संस्थाओं में अपना वर्चस्व स्थापित करके स्वयं नेतृत्व कर रहे थे।

उत्तराखण्ड के पंचायती राज संस्थानों में लैंगिक समानता :

उत्तराखण्ड राज्य का गठन 9 नवम्बर 2000 को भारतीय गणतंत्र के 27 वें राज्य के रूप में किया गया था। उत्तराखण्ड भारत के उत्तर में स्थित एक हिमालयी राज्य है, जो 9 नवंबर 2000 से 31 दिसंबर 2006 तक उत्तरांचल के नाम से जाना जाता था। 1 जनवरी 2007 से इस राज्य का आधिकारिक नाम बदलकर उत्तराखण्ड किया गया।

इस हिमालयी राज्य की लगभग 70 फीसदी आबादी ग्रामीण है। जो ग्रामीण क्षेत्रों की मुख्यत: घाटियों तथा पर्वतीय ढलानों में निवास करती है। जो मुख्यत: कृषि व्यवसाय पर निर्भर है। वर्ष - 2011 की जनगणना के अनुसार, उत्तराखण्ड राज्य की जनसंख्या 101.16 लाख है। जिसमें 51.54 लाख पुरूष तथा 49.62 लाख महिलाएं हैं। उत्तराखण्ड राज्य का जनसंख्या घनत्व 189 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर एवं लिंगानुपात 963 (प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या) है। 2011 की जनगणना के अनुसार उत्तराखण्ड की साक्षरता दर 79.63 प्रतिशत है। जिसमें पुरूष साक्षरता दर 88.33 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 70.70 प्रतिशत है। राज्य का क्षेत्रफल 53,483 वर्ग किलोमीटर है।

उत्तराखण्ड राज्य में लोकसभा की 5 सीटें (टिहरी गड़वाल, पौड़ी गड़वाल, हरिद्वार, अल्मोड़ा एवं नैनीताल) तथा राज्यसभा की 3 सीटें हैं। उत्तराखण्ड में एक सदनीय विधानमंडल है। यहाँ विधानसभा की 70 सीटें हैं।

उत्तराखण्ड में त्रि-स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को अपनाया गया है। इन तीनों स्तरों को ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत के नाम से जाना जाता है। इन पंचायतों के माध्यम से लोक कल्याण हेतु सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक सुधार किए जाते हैं।

पूर्ववर्ती राज्य उत्तर प्रदेश में ग्राम पंचायतों हेतु उत्तर प्रदेश पंचायती राज अधिनियम - 1947 तथा क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत से सम्बन्धित मामलों के लिए उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत एवं जिला पंचायत अधिनियम - 1961 लागू था। उत्तर प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम - 2000 की धारा 86/87 के अधीन उक्त दोनों अधिनियम उत्तराखण्ड राज्य में कतिपय संशोधनों के साथ वर्ष - 2016 तक लागू रहे। वर्ष - 2016 में उत्तराखण्ड सरकार ने पंचायती राज अधिनियम - 2016 पारित किया, जो 4 अप्रैल 2016 से राज्य में लागू है।[7] अत: वर्तमान समय में पंचायती राज प्रणाली की समस्त व्यवस्थाएं इसी अधिनियम के तहत संचालित होती हैं।

नवगठित उत्तराखण्ड राज्य ने अपने यहाँ स्थानीय ग्रामीण स्वशासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए वर्ष - 2003 में प्रथम पंचायती राज चुनाव सम्पन्न करवाए। ये चुनाव उत्तर प्रदेश पंचायती राज (संशोधन) अधिनियम - 1994 को अपनाकर और उसमें कुछ आंशिक संशोधन करके सम्पन्न करवाए गए। वर्ष-2003 के पंचायत चुनावों में अन्य राज्यों की भाँति उत्तराखण्ड में भी पंचायतों में महिलाओं के लिए एक-तिहाई आरक्षण की व्यवस्था थी। वर्ष - 2008 में भुवन चंद्र खंडूड़ी सरकार ने पंचायती राज अधिनियम में बदलाव करके महिला आरक्षण को ब ?ाकर 50 फीसदी कर दिया। ताकि पंचायती राज संस्थाओं में लैंगिक समानता को कायम किया जाए और महिला सशक्तिकरण को बल मिले।

उत्तराखण्ड राज्य में सम्पन्न हुए पिछले तीन (वर्ष - 2008, 2014 एवं 2019) त्रि-स्तरीय पंचायती राज चुनावों में महिलाओं की स्थिति को आगे तालिकाओं में दर्शाया गया है (हरिद्वार जनपद को छोड़कर)।[8]

तालिका – 01 एवं 02
ग्राम प्रधान के पदों पर महिलाओं की स्थिति

क्रम संख्या	जनपद का नाम	कुल ग्राम पंचायतें			सामान्य वर्ग महिला			अनुसूचित जाति महिला		
		2008	2014	2019	2008	2014	2019	2008	2014	2019
01	उत्तरकाशी	454	504	508	68 + 16	83 + 12	69 + 34	45 + 12	43 + 22	34 + 36
02	टिहरी	979	1038	1035	289 + 71	309 + 53	309 + 91	55 + 19	67 + 24	57 + 45
03	पौड़ी	1208	1212	1174	441 + 46	427 + 44	443 + 66	96 + 11	105 + 18	91 + 54
04	चमोली	601	615	610	205 + 18	202 + 21	209 + 21	55 + 02	53 + 11	43 + 26
05	रुद्रप्रयाग	323	339	336	119 + 07	110 + 19	116 + 22	30	33 + 02	29 + 07
06	देहरादून	403	460	401	51 + 03	65 + 03	54 + 05	30 + 13	32 + 22	34 + 21
07	हरिद्वार	–	–	–	–	–	–	–	–	–
08	अल्मोड़ा	1146	1168	1160	379 + 43	347 + 71	368 + 80	103 + 29	103 + 43	89 + 69
09	बागेश्वर	397	416	407	133 + 03	127 + 09	124 + 22	50 + 03	42 + 17	39 + 14
10	चंपावत	290	313	313	105 + 06	112 + 06	119 + 10	24 + 02	27 + 05	22 + 11
11	नैनीताल	460	511	479	151 + 09	169 + 07	164 + 16	54 + 06	42 + 25	59 + 18
12	पिथौरागढ़	669	690	686	194 + 19	187 + 26	223 + 21	82 + 05	79 + 14	71 + 34
13	यूएस नगर	309	391	376	64 + 01	73	69 + 03	23 + 01	32 + 01	37 + 04
	कुल	**7239**	**7657**	**7485**	**2441**	**2482**	**2658**	**750**	**862**	**944**

तालिका – 01

क्रम संख्या	जनपद का नाम	अनुसूचित जनजाति महिला			अन्य पिछड़ा महिला			कुल महिला		
		2008	2014	2019	2008	2014	2019	2008	2014	2019
01	उत्तरकाशी	02 + 02	00 + 04	01 + 03	55 + 29	72 + 18	65 + 32	229	254	274
02	टिहरी	00	00 + 01	00	31 + 26	39 + 26	41 + 28	491	519	571
03	पौड़ी	01	01	00	12 + 03	09 + 06	04 + 08	610	610	666
04	चमोली	08 + 01	07 + 03	08 + 03	07 + 04	10 + 02	03 + 05	300	309	318
05	रुद्रप्रयाग	00	00	00	05 + 01	04 + 02	02 + 04	162	170	180
06	देहरादून	47 + 21	33 + 39	38 + 35	38 + 01	34 + 03	29 + 02	204	231	218
07	हरिद्वार	–	–	–	–	–	–	–	–	–
08	अल्मोड़ा	01	00 + 01	01	16 + 04	16 + 06	11 + 11	575	587	629
09	बागेश्वर	02	02	02	09	09 + 02	04 + 12	200	208	217
10	चंपावत	01	00	01	09	07 + 01	06 + 04	147	158	173
11	नैनीताल	01	00 + 01	01	10 + 01	10 + 03	14 + 02	232	257	274
12	पिथौरागढ़	09 + 03	11 + 04	13 + 02	21 + 06	28 + 05	23 + 08	339	354	395
13	यूएस नगर	01 + 01	23	23	46	65 + 03	70 + 04	137	197	210
	कुल	**101**	**130**	**131**	**334**	**380**	**392**	**3626**	**3854**	**4125**

तालिका – 02

तालिका – 01 व 02 में वर्ष – 2008, 2014 एवं 2019 के चुनाव में निर्विरोध निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों की संख्या को रेखांकित करके दर्शाया गया है।

✸ स्रोत – राज्य निर्वाचन आयोग उत्तराखण्ड, वर्ष – 2008, 2014 एवं 2019 (हरिद्वार जनपद को छोड़कर)

तालिका – 03 एवं 04

क्षेत्र पंचायत सदस्य के पदों पर महिलाओं की स्थिति

क्रम संख्या	जनपद का नाम	कुल क्षेत्र पंचायत वार्ड			सामान्य वर्ग महिला			अनुसूचित जाति महिला		
		2008	2014	2019	2008	2014	2019	2008	2014	2019
01	उत्तरकाशी	204	206	204	58 + 05	54 + 08	59 + 09	25 + 01	24 + 04	28 + 03
02	टिहरी	350	345	351	130 + 09	123 + 11	133 + 14	27	29 + 03	30 + 06
03	पौड़ी	432	398	372	170 + 02	157 + 04	150 + 13	36 + 05	42	35 + 11
04	चमोली	249	254	246	91	86 + 03	86 + 06	27	28	28 + 02
05	रुद्रप्रयाग	116	118	117	44 + 03	42 + 02	40 + 04	11	11 + 01	11 + 01
06	देहरादून	240	240	220	51	53 + 01	55 + 01	21 + 03	23 + 02	20 + 04
07	हरिद्वार	–	–	–	–	–	–	–	–	–
08	अल्मोड़ा	405	397	391	140 + 06	136 + 03	144 + 12	44 + 04	47 + 04	42 + 15
09	बागेश्वर	120	120	120	38 + 01	36 + 01	39 + 02	16	16 + 02	16 + 04
10	चंपावत	130	134	134	50	45 + 02	50 + 05	12	12 + 03	12 + 04
11	नैनीताल	257	271	266	85 + 03	89 + 04	88 + 07	28 + 06	30 + 05	32 + 06
12	पिथौरागढ़	299	291	290	93 + 03	80 + 11	94 + 10	36 + 03	36 + 04	37 + 08
13	यूएस नगर	273	280	273	76 + 03	81	81 + 04	19 + 02	22 + 02	25 + 01
	कुल	**3075**	**3054**	**2984**	**1061**	**1032**	**1106**	**326**	**350**	**381**

तालिका – 03

क्रम संख्या	जनपद का नाम	अनुसूचित जनजाति महिला			अन्य पिछड़ा वर्ग महिला			कुल महिला		
		2008	2014	2019	2008	2014	2019	2008	2014	2019
01	उत्तरकाशी	02	01 + 01	00 + 02	10 + 02	11 + 01	09 + 03	103	104	113
02	टिहरी	00	00	00	07 + 02	06	09 + 02	175	172	194
03	पौड़ी	00	00	00	04 + 01	06	01 + 02	218	209	212
04	चमोली	03	04	02 + 02	07	05 + 02	03 + 03	128	128	132
05	रुद्रप्रयाग	00	00	00	01 + 02	02 + 01	02	61	59	58
06	देहरादून	28 + 03	20 + 08	18 + 11	14	12 + 01	14	120	120	123
07	हरिद्वार	–	–	–	–	–	–	–	–	–
08	अल्मोड़ा	00	00	00	09 + 01	08 + 02	05 + 04	204	200	222
09	बागेश्वर	01	01	00 + 01	04	03 + 01	03 + 01	60	60	66

10	चंपावत	00	00	00	04	04 + 01	02 + 03	66	67	76
11	नैनीताल	01	01	01	07	08 + 01	09	130	138	143
12	पिथौरागढ़	05	06	06 + 02	11	08 + 02	10 + 04	151	147	171
13	यूएस नगर	17	14	19	20	19 + 02	23	137	140	153
	कुल	**60**	**56**	**64**	**106**	**106**	**112**	**1553**	**1544**	**1663**

तालिका – 04

✸ तालिका – 03 व 04 में वर्ष – 2008, 2014 एवं 2019 के चुनाव में निर्विरोध निर्वाचित महिला क्षेत्र पंचायत सदस्यों की संख्या को रेखांकित करके दर्शाया गया है।

स्रोत – राज्य निर्वाचन आयोग उत्तराखण्ड, वर्ष – 2008, 2014 एवं 2019 (हरिद्वार जनपद को छोड़कर)

तालिका – 05 एवं 06

जिला पंचायत सदस्य के पदों पर महिलाओं की स्थिति

क्रम संख्या	**जनपद का नाम**	**कुल जिला पंचायत वार्ड**			**सामान्य वर्ग महिला**			**अनुसूचित जाति महिला**		
		2008	**2014**	**2019**	**2008**	**2014**	**2019**	**2008**	**2014**	**2019**
01	उत्तरकाशी	23	25	25	07	08	08	03	03	03
02	टिहरी	45	45	45	16	16	16 + 01	04	04	04
03	पौड़ी	49	42	38	20	17	14	04	04	04
04	चमोली	27	27	26	09	09	09	04	03	03
05	रुद्रप्रयाग	19	18	18	08	06	07	02	02	03
06	देहरादून	33	43	30	09	13	07	03	00	03
07	हरिद्वार	–	–	–	–	–	–	–	–	–
08	अल्मोड़ा	48	48	45	17	17	15 + 01	06	05 + 01	06
09	बागेश्वर	19	20	19	06	06	06	03	03	03
10	चंपावत	15	15	15	05	05	05	02	02	02
11	नैनीताल	26	31	27	09	11	08 + 01	03	04	04
12	पिथौरागढ़	35	33	33	12	08 + 01	08 + 01	05	06	06
13	यूएस नगर	32	42	35	10	11	12	02	04	03
	कुल	**371**	**389**	**356**	**128**	**128**	**119**	**41**	**41**	**44**

तालिका – 05

क्रम संख्या	**जनपद का नाम**	**अनुसूचित जनजाति महिला**			**अन्य पिछड़ा वर्ग महिला**			**कुल महिला**		
		2008	**2014**	**2019**	**2008**	**2014**	**2019**	**2008**	**2014**	**2019**
01	उत्तरकाशी	00	00	00	02	02	02	12	13	13
02	टिहरी	00	00	00	03	03	03	23	23	24
03	पौड़ी	00	00	00	01	01	00 + 01	25	22	19
04	चमोली	00	01	01	01	01	01	14	14	14

05	रुद्रप्रयाग	00	00	00	01	01	01	11	09	11
06	देहरादून	03	06	05	02	03	03	17	22	18
07	हरिद्वार	–	–	–	–	–	–	–	–	–
08	अल्मोड़ा	00	00	00	01	01	02	24	24	24
09	बागेश्वर	00	00	00	01	01	01	10	10	10
10	चंपावत	00	00	00	01	01	01	08	08	08
11	नैनीताल	00	00	00	01	01	01	13	16	14
12	पिथौरागढ़	01	00	01	01	02	02	19	17	18
13	यूएस नगर	02	03	02	02	03	02	16	21	19
	कुल	**06**	**10**	**09**	**17**	**20**	**20**	**192**	**199**	**192**

तालिका – 06

✸ तालिका – 05 व 06 में वर्ष – 2008, 2014 एवं 2019 के चुनाव में निर्विरोध निर्वाचित महिला जिला पंचायत सदस्यों की संख्या को रेखांकित करके दर्शाया गया है।

स्रोत – राज्य निर्वाचन आयोग उत्तराखण्ड, वर्ष – 2008, 2014 एवं 2019 (हरिद्वार जनपद को छोड़कर)

आंकड़ों का विश्लेषण एवं सरकार के द्वारा प्रदान किए गए महिला आरक्षण का प्रभाव

तालिका – 01 और 02 का विश्लेषण

1. तालिका – 01 व 02 का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि कुल निर्वाचित ग्राम प्रधानों में वर्ष – 2008 में 50.08 प्रतिशत, वर्ष – 2014 में 50.33 प्रतिशत एवं वर्ष – 2019 में 55.11 प्रतिशत महिलाएं ग्राम प्रधान के रूप में निर्वाचित हुईं। आंकड़ों से ज्ञात होता है कि वर्ष – 2008 की अपेक्षा वर्ष – 2014 में निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों की संख्या 0.25 प्रतिशत ज्यादा थी एवं वर्ष – 2014 की अपेक्षा वर्ष – 2019 में निर्वाचित महिलाओं का प्रतिशत 4.78 प्रतिशत ज्यादा रहा।

2. आंकड़ों के अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ कि वर्ष – 2008 में 448, वर्ष – 2014 में 575 एवं वर्ष – 2019 के चुनाव में 893 महिलाएं निर्विरोध ग्राम प्रधान निर्वाचित हुईं। जो कुल निर्वाचित महिलाओं का क्रमश: 12.35 प्रतिशत, 14.91 प्रतिशत एवं 21.64 प्रतिशत था।

सरकार के द्वारा पंचायतों में महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था का प्रभाव पिछले तीनों पंचायत चुनावों में दृष्टिगोचर होता है। प्रत्येक चुनाव में 50 प्रतिशत से अधिक महिलाएं निर्वाचित हुई हैं, जो महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक अच्छी पहल कही जा सकती है। साथ ही लैंगिक समानता को बल मिला है। साथ ही प्रत्येक चुनाव में पिछले चुनाव की अपेक्षा महिलाओं की संख्या में वृद्धि हुई है, जो कि आंक ?ों के अध्ययन से स्पष्ट होता है। शोधार्थी को अपने अध्ययन में यह भी ज्ञात हुआ कि कुछ ऐसे निर्वाचन क्षेत्र भी थे, जहाँ अनारक्षित सीट (पुरूष एवं महिला दोनों के लिए) पर महिलाएं पुरुषों को हराकर निर्वाचित हुई हैं।

तालिका – 03 व 04 का विश्लेषण

1. तालिका – 03 व 04 का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि कुल निर्वाचित क्षेत्र पंचायत सदस्यों में वर्ष – 2008 में 50.50 प्रतिशत, वर्ष – 2014 में 50.55 प्रतिशत एवं वर्ष – 2019 में 55.73 प्रतिशत महिलाएं क्षेत्र पंचायत सदस्य के रूप में निर्वाचित हुईं। आंकड़ों से ज्ञात होता है कि वर्ष – 2008 की अपेक्षा वर्ष – 2014 में निर्वाचित महिला क्षेत्र पंचायत सदस्यों की संख्या 0.05 प्रतिशत ज्यादा थी एवं वर्ष – 2014 की अपेक्षा वर्ष – 2019 में निर्वाचित महिलाओं का प्रतिशत 5.18 प्रतिशत ज्यादा रहा।

2. आंकड़ों के अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ कि वर्ष – 2008 में 70 महिलाएं, वर्ष – 2014 में 105 महिलाएं एवं वर्ष – 2019 के चुनाव में 192 महिलाएं निर्विरोध क्षेत्र पंचायत सदस्य के रूप में निर्वाचित हुईं।

क्षेत्र पंचायत जैसे बड़े स्तर के चुनाव में इतनी तादात में महिलाओं का निर्विरोध चुना जाना इस बात का संकेत है कि महिलाएं सशक्त हो रही हैं और समाज में धीरे-धीरे महिलाओं का वर्चस्व स्थापित हो रहा है। अब हमारा पुरुष प्रधान समाज अपनी रूढ़िवादी मानसिकता से बाहर आ रहा है। जो एक अच्छे भविष्य की ओर संकेत करता है।

तालिका - 05 व 06 का विश्लेषण

1. तालिका - 05 व 06 के अध्ययन से ज्ञात होता है कि कुल निर्वाचित जिला पंचायत सदस्यों में वर्ष - 2008, वर्ष - 2014 एवं वर्ष - 2019 में महिलाओं का प्रतिशत क्रमशः 51.75, 51.15 एवं 53.93 था।

2. यदि निर्विरोध रूप से निर्वाचित महिलाओं की बात करें तो वर्ष - 2008 के पंचायती राज चुनाव में निर्विरोध निर्वाचित महिलाओं का प्रतिशत शून्य रहा। वर्ष - 2014 के चुनाव में एक महिला अनारक्षित सीट पर पिथौराग ? जनपद से तथा एक महिला अनुसूचित जाति की सीट पर अल्मोड़ा जनपद से चुनी गई, जबकि वर्ष - 2019 के चुनाव में पाँच महिलाएं निर्विरोध निर्वाचित होने में सफल रहीं, जिसमें चार महिलाएं अनारक्षित वर्ग की सीट से टिहरी, अल्मोड़ा, नैनीताल एवं पिथौरागढ़ जनपद से चुनी गई तथा एक महिला पौड़ी जनपद से अन्य पिछड़ा वर्ग से निर्वाचित हुई।

निष्कर्ष एवं सुझाव :

उत्तराखण्ड सरकार के प्रयासों से महिलाओं को मिले 50 प्रतिशत आरक्षण के सकारात्मक प्रभाव देखने को मिल रहे हैं। त्रि-स्तरीय पंचायती राज संस्थाओं में 50 प्रतिशत से अधिक महिला सदस्य हैं। आधी से अधिक सीटों का नेतृत्व महिलाओं के हाथ में होना इस बात का संकेत है कि हम महिला सशक्तिकरण की दिशा में कारगर तरीके से आगे बढ़ रहे हैं। पंचायतों में महिलाओं के प्रवेश से लैंगिक समानता को बल मिला है और महिलाओं का निर्णय प्रक्रिया में समावेश हुआ है। सरकार की 50 प्रतिशत आरक्षण की पहल ने महिलाओं को जागरूक किया है और उनको मुख्यधारा में आने के लिए प्रेरित किया है। लेकिन हमें इसके दूसरे पहलुओं पर भी ध्यान आकर्षित करने की आवश्यकता है। विभिन्न शोध ग्रंथों के अध्ययन एवं व्यक्तिगत अनुभवों से ज्ञात होता है कि आज भी हमारे देश की महिलाएं कई समस्याओं से गुजर रही हैं। महिलाओं

का नेतृत्व सिर्फ आरक्षण का परिणाम नहीं होना चाहिए, बल्कि महिला नेतृत्व स्वाभाविक होना चाहिए। साथ ही उनको कार्य स्थल पर निर्णय प्रक्रिया में स्वतंत्र होना चाहिए। उनके ऊपर किसी भी तरह का दबाव न हो, तभी हम सरकार की महिला सशक्तिकरण और लैंगिक समानता की पहल को सफल बना सकते हैं। कई ऐसे प्रमुख कारक हैं, जो महिलाओं के स्वाभाविक नेतृत्व को प्रभावित करते हैं -

1. चुनाव के समय नामांकन से लेकर परिणाम आने तक की अधिकांश रणनीति में महिला सदस्यों के परिवारों के पुरुष हस्तक्षेप करते हैं। जो महिलाओं की स्वतंत्र पहचान एवं योग्यता पर एक बड़ा प्रश्न चिह्न है।

2. पंचायतों की मीटिंग में महिला उम्मीदवारों के स्थान पर उनके घर के पुरुष प्रतिभाग करते हैं। जिससे महिलाओं की जागरूकता और स्वाभाविक नेतृत्व क्षमता प्रभावित होती है।

3. ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएं कई पारिवारिक जिम्मेदारियों से बंधी रहती है। ये घरेलू जिम्मेदारियाँ महिलाओं के विकास में बाधक सिद्ध होती हैं।

4. पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव में आए दिन अब ये देखने को मिल रहा है कि सरकार के कई विधायक, मंत्री अथवा सांसद हस्तक्षेप करने लगे हैं। ये लोग अपनी पसंद के उम्मीदवार को चुनावी मैदान में उतारते हैं और उसका समर्थन करते हैं, जिससे चुनावी प्रक्रिया में कई योग्य महिला उम्मीदवार पिछड़ जाती है। विधायकों, मंत्रियों अथवा सांसदों का हस्तक्षेप योग्य महिला उम्मीदवारों के निर्वाचन में बाधक सिद्ध होता है।[9]

अत: हमारे समाज को महिलाओं के स्वतंत्र निर्वाचन में आने वाली बाधाओं को दूर करने का प्रयास करना चाहिए, जिससे सरकार के महिला सशक्तिकरण एवं लैंगिक समानता की पहल को वास्तविक अर्थों में साकार किया जा सके। ❑

संदर्भ सूची :

(1) Uttarakhand Open University, 'Gender, School and Society', BED IV- PE 5, ISBN : 13 - 978-93-85740-88-6

(2) राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (NCERT), नारी शक्ति वंदन, महिला सशक्तिकरण - प्रगति एवं विकास का मार्ग, फरवरी 2024, कोड - 3.6 एम, पृ. 3-7

(3) प्रसाद अभिनास कुमार, पंचायती राज निकायों में बिहार की महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी, JETIR, February 2023, Volume 10, Issue 2, ISSN : 2349-5162, पृ. 3-6

(4) तिवारी गीता, पंचायतों में महिला राजनीति : बाधाएं और चुनौतियाँ (उत्तराखण्ड के विशेष सन्दर्भ में), Volume 3, Issue 6, September 2018, Eectronic ISSN 2455-0817, पृ. 222-224

(5) कुमार संतोष, पंचायती राज में महिला सशक्तिकरण, International Journal of Political Science and Governance, Print ISSN - 2664-6021, पृ. 25-27

(6) अश्वनी, महिला नेतृत्व और पंचायती राज, RJPP, Volume 14, No. 1, 2016, ISSN (P) - 0976-3635, (E) : 2454-3411, पृ. 4-9

(7) सरकारी गजट उत्तराखण्ड, उत्तराखण्ड पंचायती राज अधिनियम - 2016, उत्तराखण्ड सरकार द्वारा प्रकाशित, प्रकाशन वर्ष - 2016

(8) राज्य निर्वाचन आयोग उत्तराखण्ड, वेबसाइट - https://sec.uk.gov.in/pages/view/xx-local-bodies-elections

(9) आर्य मीना, पंचायती राज संस्थाएं एवं महिला सशक्तिकरण - उत्तराखण्ड के विशेष संदर्भ में, Journal of Acharya Narendra Dev Research Institute, ISSN : 0976-3287, पृ. 115-116

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

अवलोकन

भारत-विभाजन की त्रासदी और हिंदी उपन्यास 'तमस' व 'देश की हत्या'

अभिषेक उपाध्याय

पीएच.डी. शोधार्थी, हिंदी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय
हैदराबाद, तेलंगाना-500046
8989824933
abhishek39abhishek@gmail.com

शोध सार :

15 अगस्त 1947 ई. को जब भारत अंग्रेजी शासन से मुक्त होकर एक स्वाधीन राष्ट्र बना तब अंग्रेजी षड्यंत्र, राजनीतिक स्वार्थ एवं सांप्रदायिक दुर्भावना के कारण भारत-विभाजन जैसी त्रासद व करुण घटना भी घटित होती है, जिसमें लाखों लोग मारे जाते हैं एवं करोड़ों की संख्या में लोग अपनी मातृभूमि से विस्थापित हो दर-दर भटकने को मजबूर हो जाते हैं। इस विभाजन ने न केवल भारत के भूगोल एवं जनता को विभाजित किया अपितु यहाँ के लोगों की साझा संस्कृति, इतिहासबोध एवं समन्वित सोच को भी विभाजित कर दिया; जिसके दूरगामी नकारात्मक परिणामों का सामना स्वाधीनता के इतने वर्षों बाद आज भी भारतीय प्रायद्वीप अपने समाज तथा सीमाओं पर कर रहा है। भारत-विभाजन की त्रासदी के विभिन्न पक्षों का चित्रण हिन्दी कथा-साहित्य में अनेक रचनाकारों ने किया है; इस शोधपत्र में भारत-विभाजन पर आधारित हिन्दी के दो उपन्यासों 'तमस' एवं 'देश की हत्या' के माध्यम से भारत-विभाजन की त्रासदी व विभीषिका का अनुशीलन किया गया है।

बीज शब्द :

भारत-विभाजन, सांप्रदायिकता, दंगे, हिंसा, शरणार्थी, हिन्दू, सिख, मुस्लिम, बँटवारा, त्रासदी, विभीषिका, ब्रिटिश, मानवता, भाईचारा।

मूल आलेख :

15 अगस्त सन् 1947 - इस तिथि को भारत देश ब्रिटिश राज से आजाद हुआ था, इस दिन को भारत स्वतंत्रता दिवस के रूप में प्रतिवर्ष मनाता है। यह दिन निश्चित रूप से भारत के लिए हर्षोल्लास का दिन है, किन्तु हर्षोल्लास की उमंग में अक्सर देशवासी इस तथ्य को भूल जाते हैं कि भारत को स्वतंत्रता के साथ-साथ देश-विभाजन का नासूर भी मिला था, जिसने हमारे देश को हिंदुस्तान और पाकिस्तान नामक दो देशों में बाँट दिया। यह बँटवारा विश्व-इतिहास में एक त्रासदी के रूप में याद किया जाता है। त्रासदी इसीलिए, क्योंकि यह विभाजन शान्तिपूर्ण ढंग से नहीं हुआ बल्कि इससे उत्पन्न सांप्रदायिक आग ने

लाखों-करोड़ों लोगों के जीवन को विभिन्न स्तरों पर स्वाहा कर दिया था। साहित्यकार प्रियंवद आँकड़े बताते हुए लिखते हैं कि *'विभाजन के शिकार 1 करोड़ 60 लाख मनुष्य हुए जो अपने घरों से बेघर हो गए। उनमें से लगभग 15 लाख तो उसमें जन्मी हिंसा में ही मारे गए।'* [1] इस सांप्रदायिक वैमनस्य की आग में हिन्दू व सिख एक तरफ तो वहीं दूसरी तरफ मुस्लिम थे। विभाजनजनित सांप्रदायिक दंगों ने मानवता को शर्मसार कर दिया था; इसमें हत्या, बलात्कार, धर्मांतरण, लूट, शोषण, स्त्रियों का अपहरण, बच्चों की हत्याएँ इत्यादि अमानवीय कृत्य हुए। विभाजन पर कार्य करने वाली उर्वशी बुटालिया के अनुसार *लगभग 75,000-1,00,000 स्त्रियों का अपहरण हुआ था।*[2] साम्प्रदायिक हत्याओं के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए इतिहासकार यास्मीन खान लिखती हैं कि *'ये हत्याएं बर्बरता की परिचायक तो थी हीं, लेकिन एक हिसाब से आधुनिक भी थीं। वे विशृंखल व योजनाबद्ध दोनों थीं। एक पूरा गाँव धारदार हथियारों से काट डाला जाता था या किसी खलिहान में कैद कर सबको जिंदा जला दिया जाता था या फिर लोगों को कतार में खड़ा कर गोलियों से भून दिया जाता था। बच्चे, बूढ़े व बीमार तक को नहीं बख्शा गया गया था। धार्मिक उत्पीड़न व धर्मांतरण के साथ ही खुलेआम लूटपाट की घटनाएं जारी थीं।*[3] इसके अलावा विभाजनकाल में हुए विस्थापन के स्तर की एक झलक माउंटबेटन के तत्कालीन प्रेस-अटैची एलन कैंपबेल के बयान से मिलती है, वे लिखते हैं कि *'निष्क्रमणार्थियों के काफिले का पीछा करते हुए हम रावी पार बहुत दूर तक विस्थापितों के इस प्रवाह के साथ लगभग पचास मील आगे तक गए, किंतु इसका कोई छोर न मिला। हमने अनुमान लगाया कि इस काफिले के एक सिरे से दूसरे सिरे तक उड़ने में पंद्रह मिनट से भी अधिक लगे जबकि हमारे विमान की गति लगभग एक सौ अस्सी मील प्रति घंटा थी। इस प्रकार यह काफिला कम-से-कम पैंतालीस मील लंबा रहा होगा।'*[4] इससे विस्थापन की त्रासदी की भयावहता को समझा जा सकता है। भारत-विभाजन की इस भयंकर विभीषिका की स्मृति में विभाजन के चौहत्तरवें वर्ष 2021 में भारत सरकार ने 14 अगस्त की तिथि को 'विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस' के रूप में मान्यता दी है।

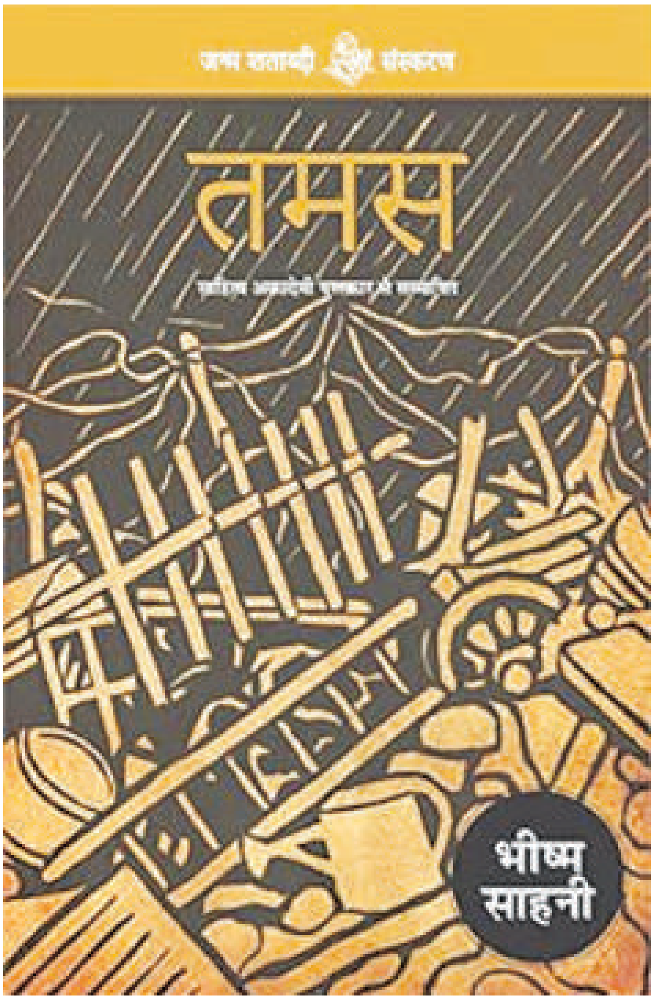

हिन्दी साहित्य में ऐसे कई उपन्यास हैं जिनमें भारत-विभाजन के दौर की त्रासदी एवं विभाजनजनित शरणार्थी-समस्या तथा सांप्रदायिक हिंसा का संवेदनशील चित्रण मिलता है; ऐसे उपन्यासों में महत्वपूर्ण स्थान रखने वाले कुछ उपन्यास इस प्रकार हैं - 'और इंसान मर गया' -

रामानन्द सागर (1948), 'देश की हत्या' – गुरुदत्त (1954), 'धर्मपुत्र' – आ. चतुरसेन शास्त्री (1954), 'तट के बंधन'– विष्णु प्रभाकर (1955), 'झूठा सच' – यशपाल (भाग एक–1958; भाग दो–1960), 'सत्ती मैया का चौरा' – भैरवप्रसाद गुप्त (1959), 'लौटे हुए मुसाफिर (1961)', 'कितने पाकिस्तान (2000)' – कमलेश्वर, 'काला जल' – गुलशेर खान 'शानी' (1965), 'आधा गाँव' – डॉ. राही मासूम रजा (1966), 'तमस% – भीष्म साहनी (1973), 'जिंदा मुहावरे'– नासिरा शर्मा (1993), 'वाह कैम्प' – द्रोणवीर कोहली (1998), 'गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिंदुस्तान' – कृष्णा सोबती (2017), 'रिनाला खुर्द' – ईशमधु तलवार (2019)। इन उपन्यासों में 'देश की हत्या' एवं 'तमस'; इन दो उपन्यासों के माध्यम से भारत–विभाजन की त्रासदी को समझने व रेखांकित करने का प्रयत्न इस शोधपत्र में किया गया है।

गुरुदत्त का 'देश की हत्या' (1954) उपन्यास मुख्यत: पंजाब और दिल्ली क्षेत्र की विभाजनकालीन घटनाओं का बहुत सूक्ष्म ढंग से कथात्मक चित्रण करता है। इसकी कथा का घटनाकाल 15 दिसम्बर 1946 से 10 फरवरी 1948 तक का है। इस उपन्यास की दो प्रमुख विशेषताएँ हैं; एक तो यह कि इसमें तत्कालीन विभीषिका से प्रताड़ित हिन्दू समाज के दुख व कष्टों का चित्रण प्रधानता से है और इसकी दूसरी विशेषता तत्कालीन राजनीतिक परिदृश्य का हिन्दू नजरिए से प्रस्तुतिकरण है, जिसे मुखरता से दर्शाया गया है। रचनाकार गुरुदत्त पहले गांधीवाद के समर्थक थे, किन्तु धीरे–धीरे उनका गाँधीवाद से मोहभंग होता है और वे भारतीयतासम्पन्न राष्ट्रवादी विचारों के समर्थक बन जाते हैं, और यह इस उपन्यास में दिखता भी है। प्रस्तुत उपन्यास का कथानक विभाजन–पूर्व लाहौर के दो सम्पन्न परिवारों से संबंधित है। चेतनानंद नामक युवक उपन्यास का नायक है, जो मूलत: कांग्रेसी था, परन्तु बाद में हिंदुओं पर बढ़ते हुए अत्याचारों से उसमें परिवर्तन हो जाता है और वह आर.एस.एस. का प्रचारक बन जाता है। दूसरा परिवार बैरिस्टर केवलनारायण का है, जो जायदाद बचाने के लिये पाकिस्तान में रहकर धर्म परिवर्तन करना चुन लेता है, यद्यपि उसकी पत्नी व एक पुत्री धर्म–परिवर्तन के विरुद्ध अपने प्रयत्न करते हैं; परन्तु इसके बावजूद यह परिवार बिखर जाता है और इसे विभाजन की विभीषिका का सामना करना पड़ता है। इनके अलावा कर्मसिंह नामक सिक्ख पात्र के परिवार का संघर्ष, स्वयंसेवक रामचन्द्र का समाजहित हेतु समर्पित जीवन तथा नलिनी उर्फ नीना और राधा जैसे स्त्री पात्रों के माध्यम से विभाजनकाल में स्त्रियों के संघर्ष व त्रासदी को भी उपन्यास में चित्रित किया गया है। उपन्यास में कुछ पात्र गाँधीजी को विभाजन के लिए जिम्मेदार मानते हैं अत: जगदेवसिंह, गाँधी जी की हत्या करने हेतु उद्यत हो जाता है, किंतु उसके कुछ करने से पूर्व ही गाँधीजी की हत्या कर दी जाती है। इस उपन्यास में पाकिस्तानी पंजाब में हुई हिंसा का चित्रण कुछ इस प्रकार हुआ है – *'...मुस्लिम नेशनल–गार्ड्स के वॉलिंटियरों ने हिंदुओं पर आक्रमण करने आरंभ कर दिए। इसके अतिरिक्त नगर के बाहर सुनसान सड़कों पर मुसलमान अकेले चलते–फिरते हिन्दू और सिक्खों के पेटों में छुरे घोंपने लगे।... मुस्लिम पुलिस और दूसरे मुसलमान अफसर इस विद्रोह में सहायक बन बैठे...मुख्य–मुख्य हिन्दू मुहल्लों पर आक्रमण किए गए और उनको जला कर राख का ढेर कर दिया गया।... हिन्दू भेड़–बकरियों की भांति मारे जाने लगे। हिंदू लड़कियों से बलात्कार किया जाने लगा और हिंदुओं का धन–दौलत लूटा जाने लगा।'* [5] इसमें हिन्दू दलों द्वारा भी हिंसा किए जाने का चित्रण है किन्तु अधिकांशत: हिन्दुओं की हिंसा को आत्मरक्षात्मक तथा केवल हमलावरों के विरुद्ध अर्थात उनके निर्दोष परिवारजनों को बिना क्षति पहुँचाए की गई हिंसा का चित्रण है। इस उपन्यास में विभाजनकाल की सांप्रदायिक आग के बीच प्रथम स्वतन्त्रता दिवस का जश्न मनाने की विडंबनात्मक स्थिति पर कुछ इस तरह प्रकाश डाला है – *'इस समारोह में लोगों का उत्साह भंग न हो, इसलिए प्रथम अगस्त से लाहौर तथा अन्य निकटवर्ती स्थानों में हो रहे कत्लेआम का समाचार भारत में प्रकाशित होने से रोक दिया। जब लाहौर की सड़क हिंदुओं के रक्त से रंगी जा रही थीं, जब ट्रेनों पर आने वाले हिंदुओं को ट्रेनें रोक–रोककर*

कत्ल किया जा रहा था तथा उनको लूटकर उनकी स्त्रियों का अपहरण किया जा रहा था और जब पंजाब के हिंदुओं के सहस्त्रों परिवारों में मातम छाया हुआ था, उस समय दिल्ली और भारत के अन्य नगरों में झंडियाँ, फानूस, जुलूस, जलसे, भाषण और राग-रंग मनाया जा रहा था। पाकिस्तान से भारत सरकार बधाइयाँ ले और दे रही थी।...क्या इस उत्सव को कुछ महीनों अथवा दिनों के लिए स्थगित नहीं किया जा सकता था? जो अनर्थ और अत्याचार देश के एक भाग में हो रहा है, उसकी उपस्थिति में यह आनन्द नाद अस्वाभाविक और घावों पर नमक छिड़कने वाला नहीं है क्या?...यह क्या शिशिर में वसंत मनाया जा रहा है? [6] सांप्रदायिक घटनाओं के अतिरिक्त इस उपन्यास में तत्कालीन विभिन्न राजनीतिक शक्तियों की नीतियों पर भी विचार किया गया है। गांधीजी की हिन्दू-मुस्लिम एकता के तरीकों पर प्रश्नचिह्न लगाने के अलावा विभाजन उपरांत पाकिस्तान को पचपन करो? रुपये दिलाने हेतु किए गए उनके अनशन पर भी कुछ इस तरह विचार किया गया है - *'किसी हिसाब में भारत को पाकिस्तान का पचपन करोड़ रूपया देना बनता है। भारत सरकार ने इन्कार कर दिया है। श्री पटेल जो भारत के गृहमंत्री हैं, इस विषय में अपने कलकत्ता के व्याख्यान में कह चुके हैं कि जिसके विरुद्ध भारत की सेना लड़ रही है, उस सरकार को भारत किसी प्रकार भी धन देना नहीं चाहता। भारत सरकार को यह संदेह है कि इस धन से पाकिस्तान दारू-बारूद और गोलियां खरीदेगा, जो कश्मीर में लड़ रहे भारत के सिपाहियों पर चलाई जाएँगी। इस रुपए के दिलवाने के लिए महात्मा गांधी अनिश्चितकाल के लिए भूख हड़ताल कर बैठे हैं। पंडित श्रीधर ने पूछा, 'हमारा देश इतना दे देने की सामर्थ्य रखता है।'...सामर्थ्य का प्रश्न नहीं। यह तो रुपये के प्रयोग का प्रश्न है। आज जब पाकिस्तान भारत पर आक्रमण किए हुए है, एक पैसा भी उसको देना उचित नहीं है।...अन्याय का कारण यह है कि एक व्यक्ति राज्य के निर्णय को, बिना युक्ति दिए और बिना लोगों को समझाए बदलना चाहता है। यह प्रजातंत्र-पद्धति के विरुद्ध है। महात्मा गांधी से प्रेम के वश सरकार के कर्ता-धर्ता अपना निर्णय बदल लेंगे और यह एक प्रकार से अन्याय का राज्य स्थापित करना होगा। जब न्याय का राज्य नहीं रहता तो संसार में अंधकार छा जाता है।* [7] लेखक ने उपन्यास की भूमिका में स्पष्ट रूप से लिखा है कि महात्मा गाँधी जी की हिन्दू-मुस्लिम एकता की विधि दूषित थी और उक्त लक्ष्य (राष्ट्र-उन्नति) के विरुद्ध बैठी थी। उपन्यास में पाकिस्तान-निर्माण से संबद्ध मुस्लिम नेशनल गार्ड्स की हिंसक गतिविधियों, लाहौर के सांप्रदायिक दंगे, रेडक्लिफ द्वारा विभाजन-रेखा का निर्णय, पुलिस-प्रशासन का पक्षपात, अमृतसर के साम्प्रदायिक दंगे, गाँधी-हत्या आदि अनेक ऐतिहासिक घटनाओं का जीवंत कथात्मक चित्रण हुआ है।

'तमस' में 1947 के मार्च-अप्रैल में रावलपिंडी व आसपास हुए भीषण साम्प्रदायिक दंगों के पाँच दिनों की कहानी है, जिसके षड्यंत्र व घटनाक्रम को भीष्म साहनी ने सिलसिलेवार ढंग से चित्रित किया है। दंगों के पश्चात बनी कांग्रेस की रिलीज कमेटी में भीष्म साहनी ने स्वयं काम भी किया है, जिससे 'तमस' में उनका लेखन प्रामाणिक व जीवंत हो उठा है। उपन्यास में हिन्दू, सिख, मुस्लिम, अंग्रेज, कांग्रेसी, मुस्लिम लीगी, हिंदुत्ववादी, कम्युनिस्ट आदि सभी प्रकार के पात्रों के माध्यम से उपन्यासकार ने तत्कालीन भारत का राजनीतिक-सामाजिक चित्र उकेरने की कोशिश की है। उपन्यास में अंग्रेजों की 'फूट डालो, राज करो' की नीति का नमूना अंग्रेज अधिकारी रिचर्ड के माध्यम से देखा जा सकता है। रिचर्ड का भारत के प्रति रवैया इसी बात से पता चल जाता है, जब 103 गाँव जल जाने की बात जानकर भी वह बिलकुल भावुक नहीं होता अपितु तर्क देता है कि - *'यह मेरा देश नहीं है। न ही ये मेरे देश के लोग हैं।'*[8] उपन्यास में परोक्ष रूप से यह बात भी सामने आती है कि यह रिचर्ड ही था, जिसने मुराद अली के माध्यम से और मुराद अली ने नत्थू व कालू के माध्यम से सूअर मरवाकर मस्जिद की सीढ़ियों पर फेंकवाया था और यही घटना दंगों की मूल वजह थी। इसके अलावा उपन्यास में विभाजन व इसके दुष्प्रभावों से न बच पाने के राजनीतिक व सामाजिक कारणों की ओर संकेत किया गया है; जैसे कांग्रेस पार्टी के सदस्यों का देश से अधिक स्वयं के

स्वार्थों को प्राथमिकता देना; मुस्लिम लीग व कुछ हिन्दू संगठनों की कट्टरता इत्यादि। वैसे तो कम्युनिस्टों को उपन्यास में प्राय: दंगे रोकने का प्रयत्न करते हुए, विरुद्ध दलों में सुलह कराते हुए; गरीबों, मजदूरों का ध्यान रखते हुए ही दर्शाया गया है। फिर भी कहीं-कहीं कम्युनिस्ट कामरेड देवदत्त की असंवेदनशीलता के दर्शन भी होते हैं, जैसे, पार्टी – ऑफिस जाते समय रास्ते में जब अधमरी हालात में कश्मीरी पड़ा हुआ था तब देवदत्त को पार्टी –ऑफिस पहुँचना कश्मीरी को बचाने से अधिक आवश्यक लगा और वो उसे उसी हालत में छोडकर चला गया; वह सोचता है – *'यह वक्त इस आदमी को बचाने की कोशिश करने का या लाश ठिकाने लगाने का नहीं था। न ही हिन्दू की लाश के दर्शन करने का था। यह वक्त पार्टी-ऑफिस में पहुँचने का था।*[9] इसके अलावा अपने माता-पिता के प्रति भी देवदत्त का रवैया असंवेदनशील प्रतीत होता है। उपन्यास में जिस तरह मुस्लिमों ने 'अल्लाह-हो-अकबर' को हिंसा का नारा बनाया उसी तरह हिंदुओं ने 'हर-हर-हर महादेव' के नारे लगाकर हिंसा की। लेखक का यह कथन प्रधानजी के अविश्वास व संदेह-दृष्टि को उजागर करता है – *'बीस बरस यहाँ रहते हो गए थे, इन लोगों से उन्हें कभी शिकायत नहीं हुई थी, पर आखिर थे तो मुसलमान।...इन मुसल्लों का एतवार नहीं किया जा सकता।'* [10] सांप्रदायिकता इतनी कि मात्र पन्द्रह वर्षीय रणवीर के बालमन में सांप्रदायिकता का विष घोला जाता है। रणवीर एक हलवाई को जख्मी करता है, उसका मित्र इन्द्र एक इत्र बेचने वाले मुस्लिम के पेट में चाकू घोंप देता है। सिख और मुसलमान भी एक-दूसरे में सदियों पुराने दुश्मन देख रहे थे – *'तुर्कों के जेहन में भी यही था कि वे अपने पुराने दुश्मन सिखों पर हमला बोल रहे हैं और सिखों के जेहन में भी वे दो सौ साल पहले के तुर्क थे, जिनके साथ खालसा लोहा लिया करता था। यह लड़ाई ऐतिहासिक लड़ाइयों की श्रृंखला में एक कड़ी ही थी। लड़नेवालों के पाँव बीसवीं सदी में थे, सिर मध्ययुग में।*[11] मंदिर और मस्जिद को भी दंगों का अंग बना लिया जाता है। 'तमस' के अंत में अमन कमेटी के गठन के लिए जब सभी दल के प्रतिनिधि एक साथ, एक जगह इकट्ठा होते हैं, तब वहाँ के एक चपरासी द्वारा दूसरे चपरासी को कहा गया कथन दृष्टव्य है- *'हम जाहिल लोग लड़ते हैं, समझदार, खानदानी लोग नहीं लड़ते। यहाँ सभी आए हैं, हिन्दू भी, सिख भी, मुसलमान भी; मगर कैसे प्यार-मुहब्बत से बातें कर रहे हैं... ।*[12] अत: यह कहा जा सकता है कि राजनीति द्वारा राजनीति के शीर्ष पर बैठे लोगों का वो नुकसान कभी नहीं होता जो आम जनता का होता है। वे लड़वाते हैं, लड़ते नहीं; वे दंगे करवाते हैं, करते नहीं; और 'तमस' इस बात को पुष्ट करता है। 'तमस' में देश की स्वतंत्रता के संदर्भ में आया एक मजदूर का कथन भी उल्लेखनीय है – *'बाबू ने कहा आजादी आने वाली है। मैंने कहा, आए आजादी, पर हमें क्या ? हम पहले भी बोझा ढोते हैं, आजादी के बाद भी बोझा ढोएँगे।*[13] 'तमस' व भीष्म साहनी के संदर्भ में कृष्णा सोबती लिखती हैं कि *'भीष्म खुद उस तूफान की चपेट में थे, जिसे बँटवारे का नाम दिया जाता है। ...'तमस' इस बात का सबूत है कि एक ईमानदार लेखक कि तरह भीष्म उस भोगे हुए दर्द को, दूरियों में से छानते चले गए होंगे। और आखिरकार बँटवारे का यह ब्यौरा पेश कर सके, जो अपने सुथरे शिल्प और प्रस्तुतीकरण में महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय रहेगा।*[14] डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे लिखते हैं कि *'सांप्रदायिक वातावरण में आम आदमी की स्थिति की भयावहता, प्रस्थापित वर्ग का पाखंडपन और षड्यंत्रकारी वृत्ती का पर्दाफाश उन्होंने किया है। सम्पूर्ण समस्या के लिए कारणीभूत रूप में उन्होंने अकेले आर्थिक कारण को ही नहीं उभरा है – और यही इस उपन्यास की उपलब्धि है।'*[15] इस तरह यह कहा जा सकता है कि भारत-विभाजन के दौर की राजनीति व सांप्रदायिकता का यथार्थपरक चित्रण प्रस्तुत करने में 'तमस' ने न्याय किया है।

निष्कर्ष :

भारत-विभाजन, इतिहास का एक ऐसा काला अध्याय है, जिसने न सिर्फ भारत जैसे एक विशाल राष्ट्र को भौगोलिक रूप से बाँट दिया अपितु इस बँटवारे ने भारतीय संस्कृति, साझा विरासत तथा भाईचारे की भावना को बाँट

दिया। विभाजनकाल की सांप्रदायिक हिंसा की घटनाएँ इतनी अमानवीय व बर्बर हैं कि मानवता से विश्वास ही डगमगा जाता है। ब्रिटिश सत्ता के षड्यंत्र को भारतीय समझ नहीं पाए, जिससे कि वे जाते-जाते भी भारतीय जनता को आपस में ही लड़ाकर भारत को कमजोर करने में सफल हुए। भारत-विभाजन की इस त्रासदी के विभिन्न पक्षों का अनेक हिन्दी उपन्यासों में मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है, जिनमें से गुरुदत्त का 'देश की हत्या' और भीष्म साहनी का 'तमस' प्रमुख उपन्यास हैं। 'देश की हत्या' में जहाँ एक ओर विभाजनकालीन हिन्दूओं के कष्टों, संघर्षों तथा गांधीवाद की आलोचना की प्रधानता है वहीं दूसरी ओर 'तमस' विभाजन के अनेक पक्षों को लेकर चलता है, जिसमें शहरी, तथा ग्रामीण साम्प्रदायिकता के साथ-साथ तत्कालीन राजनीति की लगभग सभी विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व भी है। विभाजन की त्रासदी और विभीषिका के मर्म को समझने में दोनों ही उपन्यासों ने न्याय किया है। ❑

संदर्भ सूची :

1. प्रियंवद, भारत विभाजन की अंत:कथा, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2008, पृ. 24
2. बुटालिया, उर्वशी, खामोशी के उस पार, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृ. 219
3. खान, यास्मीन, विभाजन : भारत और पाकिस्तान का उदय, अनु. सरोज कुमार, पेंगुइन रैंडम हाउस, गुड़गाँव, 2022, पृ. xxvi
4. जान्सन, एलन कैंपबेल, भारत-विभाजन की कहानी, अनु. रनवीर सक्सेना, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, 1960, पृ. 130
5. गुरुदत्त, देश की हत्या, हिन्दी साहित्य सदन, नई दिल्ली, सं. 2015 (प्र.सं.1954), पृ. 81
6. वही, पृ.198-199
7. वही, पृ. 236-237
8. साहनी, भीष्म, तमस, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2017, (प्र.सं.1973) पृ. 131
9. वही, पृ.82
10. वही, पृ.68
11. वही, पृ.122
12. वही, पृ. 140
13. वही, पृ.58
14. सोबती, कृष्णा, हम हशमत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1989, पृ. 29
15. रणसुभे, सूर्यनारायण देश-विभाजन और हिन्दी कथा-साहित्य, विकास प्रकाशन, कानपुर, 2021, पृ. 120

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অসমীয়া সমাজৰ দাপোন – নামঘৰ

ড° মঞ্জুমণি শইকীয়া

সহায়ক অধ্যাপিকা
লক্ষীমপুৰ বাণিজ্য মহাবিদ্যালয়
লখিমপুৰ, অসম, পিন - ৭৮৭০০১
৬০০৩৭৯৬৯৮১
ratneswar78@gmail.com

০.০১. প্ৰস্তাৱনা ঃ

প্ৰাগঐতিহাসিক কালৰ পৰাই অসমত নানা জাতি-জনজাতিয়ে বাস কৰি আহিছে। বিভিন্ন জনজাতিৰ মাজত বিভিন্নধৰণৰ বিশ্বাস, ৰীতি-নীতি আদিও পৰম্পৰাগতভাৱে চলি আহিছে। প্ৰায় চতুৰ্দশ শতিকাৰ শেষভাগত অসমত ধৰ্মৰ নামত খিয়লা-খিয়লি, সামাজিক ভেদাভেদ, ৰাজনৈতিক যুঁজ-বাগৰ আদি ঘোৰ আন্ধাৰে আৱৰি ধৰিছিল। কালিকাপুৰাণ, যোগিনীতন্ত্ৰ আদিৰ মদ্য-মাংস আদিৰ বিধানে সমাজত বিশৃংখলতাৰ সৃষ্টি কৰিছিল, য'ত বৌদ্ধধৰ্মৰ হীনযান, মহাযান, ব্ৰজযান, তান্ত্ৰিক আদিয়েও ধৰ্মৰ নামত অৰ্ধমৰ ইন্ধন যোগাইছিল। বিভিন্নধৰণৰ কু-প্ৰথাই গ্ৰাস কৰি থকাৰ সময়তে ইউৰোপৰ জ্ঞানৰ নৱজন্ম, ভাৰতবৰ্ষৰ নৱবৈষ্ণৱ ধৰ্ম নামৰ বিশ্বজনীন তথা সৰ্ব ভাৰতীয় আন্দোলনৰ লগতে মহৎপুৰুষ শংকৰদেৱে অসম প্ৰান্তত কৈৰতাজ ধৰ্মৰ প্ৰাৰ্দুভাৱ আৰু শাক্ত ধৰ্মৰ প্ৰবলতাক বাধা দি “নৱবৈষ্ণৱ” ধৰ্মৰ প্ৰচাৰ কৰিলে, য'ত ভক্তিয়ে প্ৰাধান্যতা লাভ কৰিলে। জাতি - বৰ্ণৰ ভেদাভেদ আঁতৰাই কীৰ্ত্তন আৰু ভক্তিত সমান অধিকাৰৰ কথা ঘোষণা কৰি একাগ্ৰতা আৰু আন্তৰিকতাৰে কৃষ্ণৰ চৰণ চিন্তি তেওঁৰ গুণ কীৰ্ত্তন আৰু শ্ৰৱণৰ দ্বাৰা ভক্তিৰ সহজ- সৰল আদৰ্শৰে সকলোকে একে আসনত বহুৱালে। শংকৰদেৱে কৃষ্ণ ভক্তিৰ জৰিয়তে অসমৰ সংস্কৃতিক আৰ্যীকৰণ কৰি ভাৰতীয় ৰূপ দিয়াৰ চেষ্টা কৰে।

গীত, নাট, ভাওনা, নামঘৰ, সত্ৰ আদিক মাধ্যম হিচাপে লৈ শংকৰদেৱে সাহিত্য-সংস্কৃতিক শ্ৰৱণ আৰু কীৰ্ত্তনৰ জৰিয়তে ‘একশৰণ নামধৰ্মৰ’ বাণী সমাজত বিলাই দিয়াৰ এক ক্ৰান্তিকাৰী অভিযান আৰম্ভ কৰে। সংস্কাৰবাদী অভিযানক বিস্তাৰিত কৰিবৰ বাবে পাহাৰ-ভৈয়াম, উচ্চ-নীচ,জাতি-জনগোষ্ঠীৰ মাজত সমন্বয়ৰ সাঁকো গঢ়িবৰ বাবে গুৰুজনাই অসমীয়া সমাজলৈ আগবঢ়োৱা অনবদ্য উপহাৰ হ'ল ‘নামঘৰ’। গুৰুজনাই বৰদোৱাতে প্ৰথমে নামঘৰ প্ৰতিষ্ঠা কৰে, যি গাংমৌ, ধুৱাহাটলৈ বিস্তাৰিত হৈ নামনিৰ কাপলা চুনপোৰা, গনককুছি, কুমাৰকুছি, কাকতকুটা, পাটবাউসী আদিৰ মাজেদি আগবাঢ়ি অসমৰ পশ্চিম সীমাৰে গৈ ৰামৰায়কুটি, কোচবিহাৰৰ ফুলগুৰি, ভেলামধুপুৰকো স্পৰ্শ কৰেগৈ। ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ মূল কেন্দ্ৰস্থল হিচাপে গুৰুজনাই নামঘৰক এক সুকীয়া মাত্ৰা প্ৰদান কৰে। অসমৰ গাঁৱে-গাঁৱে, চুকে-কোণে এই নামঘৰবোৰ থাপিত হৈ অসমীয়া সংস্কৃতিৰ কলা আৰু ধৰ্ম প্ৰচাৰত সহায় কৰিবলৈ ধৰিলে। নামঘৰ প্ৰতিষ্ঠা হোৱাৰ পূৰ্বতে অসমত নানান মঠ-মন্দিৰ, দেৱালয়, শক্তিপীঠ আদিত বিভিন্ন পূজা-অৰ্চনাৰ

প্ৰচলন আছিল। এইসমূহ অনুষ্ঠানত উচ্চবৰ্ণৰ লোকৰহে প্ৰাধ্যানতা আছিল, সংকীৰ্ণ সামাজিক আচাৰ -অনুষ্ঠান আদিয়ে সৰহ সংখ্যক লোকক ধৰ্মৰ প্ৰকৃত মাদকতাৰ পৰা বঞ্চিত কৰিছিল, গুৰুজনাই নামঘৰৰ জৰিয়তে পূজা-অৰ্চনাৰ প্ৰচলিত ব্যৱস্থাক মঠ-মন্দিৰৰ ঠেক গণ্ডীৰ পৰা বাহিৰলৈ উলিয়াই আনি সাৰ্বজনীনতা প্ৰদান কৰে।

০.০২. আলোচনাৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্যে ঃ

অসমীয়া সমাজ-সংস্কৃতি, সভ্যতা, ৰীতি-নীতি, জীৱন-প্ৰণালীৰ সকলো দিশতেই গুৰুজনাৰ আদৰ্শই পথৰ সন্ধান দি আহিছে। গুৰুজনাৰ অৱদানক বাদ দি অসমীয়া সংস্কৃতিৰ কথা ভাৱিবই নোৱাৰি। প্ৰস্তুত আলোচনাত যুগ-যুগ ধৰি অসমীয়া সমাজ জীৱনত নামঘৰে কি দৰে এক পৰিশোধিত আৰু সংস্কাৰমুখী জীৱন অতিবাহিত কৰিবলৈ সমাজ-ব্যৱস্থাত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰি আহিছে, সেই বিষয়ে আলোচনা কৰা হ'ব।

০.০.৩. আলোচনাৰ পৰিসৰ ঃ

এই আলোচনা প্ৰধানকৈ পুথিভঁৰাল কেন্দ্ৰিক যদিও চাক্ষুষ অভিজ্ঞতাৰ সহায় লোৱা হৈছে। আলোচনাত বিশেষভাৱে বিশ্লেষণাত্মক আৰু বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে। আলোচনাৰ পৰিসৰৰ সীমাবদ্ধতাৰ বাবে আলোচনাৰ দিশৰ ক্ষেত্ৰটো সীমাবদ্ধতা গ্ৰহণ কৰি নামঘৰৰ সৈতে নিহিত পৰমাৰ্থিক তত্ব, জাতীয় নাটশালা হিচাপে অসমীয়া সমাজলৈ নামঘৰৰ অৱদান , সাম্যবাদী চিন্তাৰ প্ৰতীক হিচাপে নামঘৰৰ অৱিহণা, স্বায়ত্বশাসন ব্যৱস্থাৰ প্ৰথম ভেঁটিৰূপে নামঘৰৰ ভূমিকা আদি দিশ সামৰিলৈ ভাৰতবৰ্ষৰ অন্যৰাজ্যৰ তুলনাত অসমীয়া সমাজ জীৱনত থকা অসাধাৰণ বিশেষতা কিছুমানো আলোচ্য পৰিসৰৰ অংগীভূত হ'ব।

০.০.৪. মূল আলোচনা ঃ

নামঘৰ অসমীয়া সমাজৰ অবিচ্ছেদ্য অংগ। গাঁৱৰ সামাজিক, সাংস্কৃতিক ৰাজনৈতিক, ধাৰ্মিক আদি সকলোধৰণৰ লাগতিয়াল আলোচনাৰ কেন্দ্ৰ হ'ল নামঘৰ, যি অকল গুৰুজনাৰ তিথি মহোৎসৱ, জন্মাষ্টমী, ভাওনা সভাহেই নহয়, প্ৰয়োজন অনুসৰি গাঁৱৰ অনান্য সমস্যাবোৰৰ সমাধান, শিক্ষাৰ আহিলা, আৰু গ্ৰাম্য শাসন ব্যৱস্থাৰ মূল আধাৰ হিচাবে পৰিগনিত হবলৈ ধৰে। নামঘৰ সৃষ্টিৰ বিষয়ে অসমীয়া ভাষা সাহিত্যৰ সমালোচক বানীকান্ত কাকতিদেৱে কৈছে- Literature was not only expression of this new life Regional satras (Monastreries) were established as the Centre of New consciousness and the allegiance of the mind and Soul was given them. This regional institutions framed moral laws and Controlled the activities of Society. As miniature replica of the satras, village Namghars were built and the Namghars combined the functions of village parliament, a village court, a village school and a village church, These instiltutions served as sheet anchors to Assamese Socity in the midst of Continually shifting political circumstance, (the Mother Goddess Kamakhya, Dr. BanikantaKakati, publication Board Assam 1989. P.82)

(সাহিত্য কেৱল নৱজীৱনৰ প্ৰকাশ নাছিল। নৱচেতনাৰ প্ৰচাৰৰ কেন্দ্ৰস্থল হিচাপে স্থানীয় সত্ৰ বিলাক প্ৰতিষ্ঠা কৰা হৈছিল আৰু সেইবিলাকত মন আৰু আত্মাৰ ভক্তি নিবেদন কৰা হৈছিল। এই স্থানীয় অনুষ্ঠানে সমাজৰ নৈতিক বিধান আৰু সামাজিক কৰ্মৰাজি নিয়ন্ত্ৰণ কৰিছিল। গাঁৱে-গাঁৱে নামঘৰবোৰ সজা হৈছিল। নামঘৰবোৰে গ্ৰাম্য সদন, গ্ৰাম্য আদালত, গ্ৰাম্য পজ্ঞাশালী আৰু গ্ৰাম্য উপাসনা গৃহৰ ভূমিকা পালন কৰিছিল। দেশৰ পৰিবৰ্ত্তিত ৰাজনৈতিক পৰিস্থিতিৰ মাজতো এই অনুস্থানবোৰে প্ৰধান আশ্ৰয়ৰ ভূমিকা লৈছিল।

০.০.৫. নামঘৰ আৰু পৰামাৰ্থিক তত্ত্ব ঃ

নামঘৰৰ স্থাপত্যৰ লগত বহুতো পৰামাৰ্থিক কথা নিহিত হৈ আছে। নামঘৰ নিৰ্মাণ পদ্ধতিৰ বিষয়ে কোনো এটি নিৰ্দিষ্ট আৰ্হিৰ বিষয়ে ক'তো উল্লেখ নাই। ঠাইভেদে সামান্য তাৰতম্য থাকিলেও সামগ্ৰীক ভাৱে অসমৰ সকলো ঠাইতে মিল পোৱা যায় । নামঘৰ নিৰ্মাণ কৰোতে পশ্চিমৰ পৰা সোমোৱা পথত কৰ্মাকৃতিৰে জিৰণী চ'ৰা নিৰ্মাণ কৰা হয়। প্ৰতি চৰতিত তিনিখলপাকৈ ফুলচৰতি দিয়া হয়। মুধচত সৰুকৈ নামঘৰৰ আৰ্হিত আন এক প্ৰতীক চিহ্ন দিয়ে। পূৱৰ মুধচক সংযোগ কৰি উত্তৰা-দক্ষিণাকৈ মণিকূট নিৰ্মাণ কৰে। মণিকূটত পশ্চিম মুৱাকৈ মাজ ভাগত সিংহাসন স্থাপন কৰা হয়। নামঘৰৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যত - উজনি অসমত স্থানীয় আৰ্হি আৰু নামনি অসমত বংগীয় মূল দেখা যায়। কৰ্মৰূপত নামঘৰৰ অৰ্ধগোলাকাৰ ভেঁটিখুটা, চৰতি, ৰুৱা, কামি, চাল, খেৰ আদি ৰূপত মহাদেউ, থিয়ৰূপত পুৰুষ অৰ্থাৎ সৃষ্টিকৰ্ত্তাৰ লগত সংযোগ, আনন্দৰূপত পদুম বা কলচি ধাৰণ কৰে। নামঘৰক কল্পতৰু বৃক্ষৰ আখ্যা দিয়া হয়। কল্পতৰুৰ চৈধ্যতা বৃহৎ শাখাই হৈছে নামঘৰৰ চৈধ্যতা খুটা। ভাগৱত ব্যক্ত কৰি জ্ঞান-বিজ্ঞানৰ

তৰংগ, ৰহস্য জ্ঞান প্ৰকাশক চৈতন্যময় আদি নিৰঞ্জনৰ শক্তিয়েই হ'ল লাইখুটা। নামঘৰৰ তিনিখন চাল সত্ব, ৰজ, আৰু তম গুণৰ প্ৰতীক।

ঈশ্বৰ পুৰুষৰ কীৰ্ত্তন মঙ্গলাচৰণ হোৱা নামঘৰক পৰম পবিত্ৰ ক্ষেত্ৰ বুলি ধৰা হয়। ধৰ্মীয় আদৰ্শ আৰু তত্বক বাদ দি নামঘৰৰ বিষয়ে চৰ্চা কৰাতো অসম্ভৱ। গুৰুজনাৰ ৰচিত কীৰ্তনৰ 'ধ্যানবৰ্ণন 'অধ্যায়ৰ আৰম্ভণিতে বৈকুণ্ঠ তুল্য নামঘৰৰ আৰ্হিৰ বিৰৰণত উল্লেখ আছে যে —

হেন বৈকুণ্ঠৰ মাজত পাছে
উচ্ছিত ৰত্ন মন্দিৰেক আছে। (১৪৯)
বৈদুৰ্য স্তম্ভ স্ফতিকৰ বাৰ।
মাণিক্য, কপাট, হীৰাৰ দ্বাৰ।।
কাটিলা জিঞ্জিৰি সুৰ্ণাৱলী।
বিচিত্ৰ মণি মৰকত স্থলী।। (১৫০)
পদ্মৰাগ ৰত্নে লগাইলা চৌতি।
কৌটি সূৰ্য যেন প্ৰখৰ জ্যৌতি।।
বিচিত্ৰ চন্দ্ৰতাপ আছে টানি।
আঁৰিলা মুৰাৰী মুকুতা মণি। (১৫১)
হেন মন্দিৰে ৰত্ন সিংহাসনে।
আছন্ত বহি প্ৰভু নাৰায়ণে।।
চৌপাশে সেৰে পাৰিষদ যত।
মৌক্তিক ছত্ৰধৰি ওপৰত।। (১৫২)

ধ্যান বৰ্ণনা অনুসৰিয়েই নামঘৰৰ মণিকূট ভাগ নিৰ্মাণ কৰি মাজভাগত সিংহাসন স্থাপন কৰা হয়। মণিকূট হৈছে নামঘৰৰ হৃৎপিণ্ড আৰু আধ্যাত্মিক চিন্তা-চেতনাৰ যাদুঘৰ। মণিকূটৰ মাজ ভাগত কাঠেৰে নিৰ্মিত আসন বা থাপনাই হৈছে গুৰু আসন। গুৰু আসন তিনি প্ৰকাৰৰ- সিংহাসন, গৰুড়াসন আৰু ম'ৰাসন। ৰাজহুৱা নামঘৰত সিংহাসনহে প্ৰতিষ্ঠা কৰা হয়। তিনিখলপৰ পৰা সাত খলপিয়াকৈ সিংহাসন সজা হয়। খলপাসমুহত শ্ৰীকৃষ্ণৰ লীলাসমূহ হেঙুল -হাইতালেৰে সুন্দৰকৈ অংকন কৰা হয়। সিংহাসনৰ সাতোটা খলপাই সপ্তবৈকুণ্ঠ-স্বেতবিলাস, শান্তনুবিলাস, পুৰণবিলাস, পংকজবিলাস, কনকদন্ত , সনাতন আৰু গোলোকৰ প্ৰতীক। চাৰিকোণীয়া সিংহাসনৰ প্ৰতিটো কোণত একোটা সিংহৰ প্ৰতীক থাকে। এই সিংহৰ অৱয়ৰ বন্য সিংহতকৈ বেলেগ । এই সিংহই আঁঠুলৈ থকা হাতীক আগভৰি দুখনেৰে হেঁচি ৰাখে। হাতী হ'ল শ্ৰীমদ্ভাগৱতপুৰাণৰ গজেন্দ্ৰৰ প্ৰতীক। হাতী বিষয়-বাসনাৰো প্ৰতীক। একেবাৰে তলত থকা কুৰ্ম অৰ্থাৎ কাছ হৈছে ধৈৰ্য, সংযম আৰু সহিষ্ণুতাৰ প্ৰতীক। কাছই যেনেকৈ খোলাটোৰ ভিতৰত অংগবোৰ সুমুৱাই ৰাখিব পাৰে, সেইদৰে ভক্তইও ৰিপুসমূহ দমন কৰিব পাৰে। ভক্তৰ হৃদয়ত পাপ আৰু বিষয়-বাসনা নাথাকে। সিংহই যেনেকৈ বিষয়-বাসনাৰ প্ৰতীক গজেন্দ্ৰক দমন কৰি থাকে, ঠিক তেনেকৈ নামেও ভকতৰ পাপ আৰু বিষয়-বাসনাক অৱদমিত কৰি ৰাখে। সিংহাসনৰ একেবাৰে ওপৰৰ খলপাত সৰু ঘৰটোক 'আমহী' ঘৰ বোলা হয়। সেই সৰু ঘৰটোৰ ভিতৰতে চৈতন্য মুৰ্তি ঈশ্বৰৰ ৰূপ হিচাপে গুৰুজনাৰ ৰচিত বিশেষ পুথি গুণমালা বা ভাগৱত প্ৰতিষ্ঠা কৰা হয়। গুণমালা বা ভাগৱত প্ৰতিষ্ঠাৰ লগে লগেই ঘৰটো প্ৰাণৱন্ত হৈ উঠে আৰু আসনখনি গুৰু আসনৰূপে পৰিগনিত হয়।

০.০.৬. জাতীয় নাটশাল ঃ

নামঘৰ অসমীয়া জাতীয় নাটশাল। শংকৰদেৱৰ সৰ্বোত্তম সৃষ্টি অংকীয়া ভাওনাই নামঘৰৰ মাধ্যমেৰে অসমীয়া সমাজত অভিনয়ৰ পৰা আহাৰ্য্যলৈ, সংগীত- নৃত্যৰ পৰা বাদ্য-যন্ত্ৰ নিৰ্মাণ আৰু অন্যান্য দিশ সামৰি এক নতুন কৰ্মযজ্ঞৰ আৰম্ভ কৰে। ভাওনাৰ মাজত শাস্ত্ৰীয় আৰু লৌকিক সৌন্দৰ্য্যৰ লগতে ভক্তি আদৰ্শৰ মূল দিশো প্ৰতিফলিত কৰা হয়। ভাওনাৰ মাজেদি শংকৰদেৱে সেই সময়ৰ ৰাজনৈতিক সংঘাতপূৰ্ণ অৱস্থা, বৰ্ণাশ্ৰমৰ সংস্কাৰৰ পৰা উৎপন্ন হোৱা বিভেদ নীতি আৰু ব্যভিচাৰৰ পৰা সাধাৰণ মানুহৰ জীৱনক উলিয়াই আনি সমতা আৰু মৰ্য্যদা ভিত্তিক পথ নিৰ্মাণ কৰি নামঘৰৰ মজিয়াত ঐশ্বৰিক চেতনাৰ দ্বাৰা এক পৰিশীলিত জীৱনবোধ সঞ্চাৰিত কৰিছিল। অভিনয়ৰ দ্বাৰা ল'ৰা-ছোৱালীৰ ৰসানুভূতি, কল্পনাশক্তি, স্মৰণশক্তি আৰু স্বৰসাধন হয়। সেইবাবে ইউৰূপ, আমেৰিকা আদিত 'Theatre of Education for children' আদি স্থাপন কৰা হৈছে। নামঘৰ আৰু ভাওনাই অসমীয়া গাঁৱলীয়া সমাজক এনে শিক্ষাকে যুগে যুগে দি আহিছে।

০.০.৭. সাম্যবাদৰ প্ৰতীক ঃ

কুৰি শতিকাৰ কালমাক্সৰ সাম্যবাদী চিন্তাৰাজিক মহাপুৰুষ শংকৰদেৱে পাঁচশ বছৰৰ আগতেই অসমত ঘোষণা কৰিছিল। সাম্যবাদী শংকৰদেৱৰ প্ৰধান স্তম্ভ আছিল নামঘৰ। নামঘৰৰ মজিয়া ভক্তি অৰ্চনাৰ পুণ্য ঠাই আৰু আনফালে সামাজিক ন্যায়ৰো কেন্দ্ৰস্থল। নামঘৰৰ দুৱাৰ সকলোৰে বাবেই মুক্ত। গাৰোৰ গোবিন্দ, নগাৰ নৰোত্তম, মিছিমৰ পৰমানন্দ, কৈৱত্তৰ পূৰ্ণানন্দ, বনিয়াৰ হৰিধন,, কলিতাৰ গোপাল,

মুছলমানৰ ছান্দসাই আৰু অনেকে একেলগে নামঘৰৰ মজিয়াত কুহিলাৰ আসনত বহি হাতচাপৰি বজাই পৰম-পুৰুষ কৃষ্ণৰ গুণ-কীৰ্তন আৰু মত বিনিময় কৰিবলৈ সুবিধা পাইছিল। সকলো সম্প্ৰদায়ৰ মানুহে নামঘৰত প্ৰৱেশ কৰিব পাৰে। যোগ্য সকলো বৰ্ণৰ মানুহে ভাওনাত ভাও লব পাৰে , সূত্ৰধাৰ হৈ নাচিব পাৰে, নাম-লগোৱা হৈ নাম দিব পাৰে, গায়ন হৈ খোল-মৃদংগ বজাব পাৰে। ধনী-দুখীয়া, উচ্চ- নীচৰ পাৰ্থক্য নাৰাখি শংকৰদেৱে ধৰ্মক সৰ্বসাধাৰণ মাজলৈ নামঘৰ আৰু সত্ৰ অনুষ্ঠানৰ জৰিয়তে টানি আনিবলৈ সক্ষম হৈছিল।

০.০.৭. নামঘৰ আৰু গণতান্ত্ৰিক মুল্য ঃ

নামঘৰ গণতান্ত্ৰিক চিন্তাধাৰাৰ মূৰ্ত প্ৰতীক। নামঘৰক গ্ৰামীন শাসনৰ মুল আধাৰ স্বৰূপ বুলি ক'ব পাৰি। ভাৰতীয় স্বায়ত্ব শাসনৰ প্ৰথম স্তৰ ৰূপে যেতিয়া মূল প্ৰদেশবোৰক চীফ কমিশ্যনৰ শাসনৰ পৰা গৱৰ্ণৰ শাসনলৈ নিয়াৰ প্ৰস্তুতি চলোৱা হৈছিল। সেই সময়ত অসমক সেই মৰ্য্যদাৰ পৰা বঞ্চিত কৰিব বিচৰা হৈছিল। সেই সময়ত অসমৰ বাবে মৰ্য্যদাৰ তৰ্ক কৰোতে দাঙি ধৰা যুক্তিৰ মূল ভেটি নামঘৰেই আছিল। প্ৰতিনিধি সকলে দাবি কৰিছিল "ভাৰতৰ আন-আন প্ৰদেশবোৰৰ সামাজিক আৰু সাংস্কৃতিক অৱস্থাৰ তুলনাত অসম পিছপৰা যে নহয়েই ই নিশ্চিত ভাৱে সেইবোৰতকৈ আগবঢ়া। আজি অসমত ৰাজনৈতিক স্বায়ত্ব শাসনৰ সামান্য সুবিধা এটা দিয়াত আপোনালোকে কেৰো ঘেহোঁ কৰিছে, কিন্তু অসমে যোৱা ৪৫০ বছৰ নামঘৰ আৰু সত্ৰ অনুষ্ঠান আদিৰ যোগেদি নিজ স্বায়ত্ব শাসন অতি সুচাৰু ৰূপে আজিলৈকে চলাই আছে।"

এইদৰে নামঘৰ অসমীয়াৰ গ্ৰাম্য সদন। নামঘৰক অসমীয়া মানুহে ভয় আৰু শ্ৰদ্ধা কৰে। দোষৰ ক্ষমা বিচাৰি নামঘৰত তামোল-পাণ বন্তি আৰু শৰাই আগবঢ়াই ৰাইজৰ ওচৰত আঠু লৈ দোষীয়ে ক্ষমা বিচাৰে আৰু নামঘৰত গঞা ৰাইজে বিচাৰ কৰি ভৱিষ্যতলৈ দোষ নকৰাৰ শপত লৈ অ' হৰি, অ' ৰাম" কৈ আশীৰ্বাদ আৰু ক্ষমা প্ৰদান কৰে।

০.০.৮. নামঘৰ আৰু শিষ্টাচাৰ ঃ

অসমীয়া জনসাধাৰণৰ মাজত ভাৰতত আন ৰাজ্যৰ তুলনাত কিছুমান অসাধাৰণ বিশেষতা দেখা যায়। আখৰ চিনি নোপোৱা অসমীয়া গাঁওবাসীয়ে কথাই কথাই কীৰ্ত্তন, দশম, ঘোষা, ভাগৱতৰ উদাহৰণ দিব পাৰে, সুৰ লগাই পদ গাব পাৰে। শাস্ত্ৰীয় সংগীতৰ প্ৰশিক্ষণ নোলোৱাকৈ শ্যাম, কল্যান, আশোৱাৰী, কৌ আদি বিভিন্ন শাস্ত্ৰীয় ৰাগ দি বৰগীত গাব পাৰে, গীত মাতৰ লগতে খোল, তাল, মৃদংগ বজাব পাবে, ভাওনাত সৰু ধেমালি, বৰ ধেমালী, ন ধেমালি আদি শাস্ত্ৰীয় সুৰ বজাব পাৰে। আনৰ গাত ভৰি লাগিলে সেৱা জনাই অসমীয়া মানুহে ক্ষমা খোজে। অসমীয়া মহিলাই ৰন্ধন শালত সোমোৱা যোগ্য বোৱাৰীক নীতি সদাচাৰ শিকাই হে পাকঘৰত কাম কৰিবলৈ দিয়ে। সাজপাৰ, কথা-বতৰা সকলোতে অসমীয়া সমাজৰ মাৰ্জিত ৰুচিবোধ। এই সকলোবোৰ ধৰ্মীয় বিশ্বাস আৰু সত্ৰ, নামঘৰ আদিৰ দ্বাৰাহে সম্ভৱপৰ হৈছে।

উপসংহাৰ ঃ

ভাৰতৰ অন্যতম ৰাজ্য অসম প্ৰদেশক মধ্যযুগৰ ভক্তি আন্দোলনৰ মূল হোতা শংকৰ-মাধৱৰ যুগান্তকাৰী অৱদান, সাহিত্য, সংস্কৃতি, গীত, নাট, সত্ৰ, নামঘৰ আদি অনুস্থানে যিদৰে ধৰ্ম, বিশ্বাস, শ্ৰদ্ধা আৰু আনন্দেৰে আধাৰিত কৰি পূৰ্ণ কৰিছিল, সেই নিৰবিচিন্ন ধাৰা আজিও অসমীয়া সমাজ জীৱনৰ মাজেদি প্ৰৱাহিত হৈ আছে, যিবোৰক বাদ দিলে অসমীয়া জাতীয় অস্তিত্বই শূণ্য হৈ পৰিব। দয়া, ক্ষমা, প্ৰেম আদি স্বৰ্গীয় সম্পদেৰে পৰিপূৰ্ণ নামঘৰ অসমীয়া জাতিৰ মেৰুদণ্ড সদৃশ। আজিৰ যুৱ-উশৃংখলতাৰ দিনত যুৱ সমাজক স্থিৰ কৰিবলৈ নামঘৰ, ভয়, ভক্তি আৰু ধৰ্মীয় বিশ্বাসৰ অতি প্ৰয়োজন। ❑

প্ৰসংগ পুথি ঃ

১। শ্ৰীশ্ৰী মাধবদেৱ সম্পাদক- তিলক দাস
২। যুগনায়ক সংকৰদেৱ - ডিম্বেশ্বৰ নেওগ
৩। চিন্তামনি আলোচনী- সম্পাদক- প্ৰভাত চন্দ্ৰ দাস
৪। ৭ম বছৰ ৪ৰ্থ আৰু ৫ম সংখ্যা
৫। একাদশ বছৰ প্ৰথম সংখ্যা
৬। ভিন্নজনৰ দৃষ্টিত সত্ৰৰ উৎপত্তি আৰু বিচ্যুতি- প্ৰভাত চন্দ্ৰ দাস
৭। নামঘৰ- নিৰ্মল চন্দ্ৰ বৰা
(প্ৰবন্ধ) খবৰ, ২৮ নবেম্বৰ' ২০০৭
৮। সচ্চিদানন্দ- শ্ৰীমন্তশঙ্কৰদেৱ সংঘৰ ৯১সংখ্যক বাৰ্ষিক অধিবেশনৰ স্মৃতিগ্ৰন্থ

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোকত ৰামধেনু যুগৰ নাৰী গল্পকাৰৰ চুটি গল্প ঃ এক অধ্যয়ন

(নিৰুপমা বৰগোহাঞি আৰু মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ গল্পৰ বিশেষ উল্লিখনসহ)

ড° অম্বেশ্বৰ গগৈ

সহযোগী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয় (গুৱাহাটী), অসম
০৯৮৫৪০-৭৪৭৭১
ambeswar@gmail.com

ড° বি ডি নিশা

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
পানীগাঁও ওমপ্ৰকাশ দিনোদীয়া
মহাবিদ্যালয়, লখিমপুৰ, অসম
৯১৯১০১৮০৬৪২৬
bdnishabaruah@gmail.com

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

সাম্প্ৰতিক সময়ত সাহিত্য সমালোচনাৰ ক্ষেত্ৰখনত জন্মলাভ কৰা এক সাহিত্যিক মতবাদ হ'ল ইক'ফেমিনিজম। ইংৰাজী Ecofeminism শব্দটোৰ অসমীয়া পৰিভাষা হ'ল পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ বা পৰিৱেশ বিষয়ক নাৰীবাদ। মূলতঃ পৰিৱেশ আৰু নাৰীৰ মাজৰ যোগসূত্ৰ সম্পৰ্কে এই অৱধাৰণাৰ মাজেৰে আলোচনা কৰা হয়। 'পৰিৱেশ সম্বন্ধীয় নাৰীবাদ' বিষয়ক কথাষাৰ নাৰীবাদতকৈ অধিক ব্যাপক। এই ব্যাপক বিষয়টোৰ অন্তৰ্গত আন এটি গুৰুত্বপূৰ্ণ বিষয় হ'ল— নাৰীবাদ। এই সম্পৰ্কত মালাদেৱী বৰগোহাঁয়ে তেখেতৰ 'ইক'ফেমিনিজম' শীৰ্ষক নিবন্ধত কৈছে— 'নাৰীবাদে বিশ্বত নাৰী বিষয়ক সকলো আলাচনাকে ইক'ফেমিনিষ্ট বিষয়টোৰ আয়ত্তৰ ভিতৰলৈ আনিবলৈ প্ৰয়াস কৰে। (২৫)

বিংশ শতিকাৰ যাঠি-সত্তৰৰ দশকত বিকাশ লাভ কৰা নাৰী আৰু পৰিৱেশ সম্বন্ধীয় এই অৱধাৰণাক বুজাবলৈ ফ্ৰান্সৰ নাৰীবাদী লেখক ফ্ৰাঁচোৱা ডি'উবন (Francoise d'Eaubonne)-এ 'Ecofeminism' শব্দটো তেওঁৰ ১৯৭৪ চনত প্ৰকাশিত *Feminism or Death* শীৰ্ষক গ্ৰন্থত পোনপ্ৰথমে ব্যৱহাৰ কৰিছিল। (Merchant 193) ফ্ৰাঁচোৱা ডি'উবনৰ পৰৱৰ্তী সময়ত Institute of Social Ecology-এ Ecofeminism শব্দটো ইংৰাজী ভাষাত প্ৰয়োগ কৰে। এই সংস্থাৰ অধীনতে ১৯৭৬ চনত পাশ্চাত্যত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ (Ecofeminism) শীৰ্ষক পাঠ্যক্ৰম আৰম্ভ হয়। এই পাঠ্যক্ৰম নাৰীবাদৰ হোত্ৰী নেষ্ট্ৰা কিং (Ynestra King)ৰ তত্ত্বাৱধানত পৰিচালিত হৈছিল। (Banja 16) নেষ্ট্ৰা কিং (Ynestra King)ৰ লগতে এই আন্দোলনৰ বিকাশত সহায় কৰা অন্যান্য পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ দাৰ্শনিক তথা সমালোচকসকল হ'ল— ৰ'জ মেৰী ৰেডফৰ্ট ৰুথৰ (Rose Mary Redfort Ruether), ইবোন গিবাৰা (Ivone Gebara), বন্দনা শিৱা (Vandana Shiva), চুচান গ্ৰিফিন (Susan Griffin), চান আই লী পাৰ্ক (Sun Ai Lee-Park), গ্ৰেটা গাৰ্ড (Greta Gaard), কৰন জে বাৰেন (Karen J Waren), আণ্টি স্মিথ (Anti Smith) আদিয়ে।

পাশ্চাত্যত বিকাশ লাভ কৰা এই আন্দোলনৰ প্ৰভাৱ ভাৰতবৰ্ষতো পৰিছিল। ভাৰতীয় প্ৰেক্ষাপটত এই আন্দোলনৰ বিকাশত পৰিবেশ বিষয়ক আন্দোলনসমূহৰ প্ৰভাৱ মনকৰিবলগীয়া। এই প্ৰসংগত বিষ্ণই আন্দোলন (Bishnoi Movement,

1643); চিপকো আন্দোলন (Chipko Movement, 1973) বিশেষভাৱে উল্লেখনীয়। ভাৰতবৰ্ষৰ ৰাজস্থান, উত্তৰাখণ্ড আৰু অন্ধ্ৰপ্ৰদেশত হোৱা বিষ্ণই, এণ্টি এৰেক আৰু চিপকো আন্দোলনৰ মাজেৰে বিকাশৰ নামত প্ৰকৃতিৰ ওপৰত ধ্বংসলীলা চলাবলৈ উদ্যত হোৱা পুৰুষসকলক নাৰীসকলে বাধা আৰোপ কৰিছিল। তেওঁলোকে প্ৰকৃতিক এক জীৱন্ত সত্তাৰূপে স্বীকাৰ কৰি আত্ম বলিদানেৰে প্ৰকৃতিক ৰক্ষণাবেক্ষণ দিবলৈ কৰা প্ৰচেষ্টাই ইক'ফেমিনিজম আন্দোলনটোৰ বিকাশত সহায় কৰিছিল। ভাৰতবৰ্ষত এই আন্দোলনৰ বিকাশত বন্দনা শিৱাই বিশেষ অৰিহণা যোগাইছিল। ১৯৯৩ চনৰ মাৰিয়া মাইচ (Maria Mies)-ৰ লগত বন্দনা শিৱাই যুটীয়াভাৱে প্ৰকাশ কৰা *Ecofeminism* শীৰ্ষক গ্ৰন্থখন পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ সম্পৰ্কীয় উল্লেখনীয় ৰচনা। পৰৱৰ্তী সময়ত বন্দনা শিৱাৰ পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ সম্পৰ্কীয় চিন্তা-চেতনা পাশ্চাত্যৰ দেশসমূহতো বহুলভাৱে চৰ্চিত হয়।

পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ সম্পৰ্কে মেৰি মেল'ৰ (Mary Mellore)-এ মন্তব্য আগবঢ়াইছে যে, পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ হ'ল এনে এক আন্দোলন য'ত প্ৰকৃতি জগতত মানুহে চলোৱা শোষণ আৰু অপকৰ্ম আৰু নাৰীক পৰাধীন কৰি ৰাখিবলৈ কৰা উৎপীড়নৰ মাজত যোগসূত্ৰ বিচাৰ কৰা হয়। (1) আন এগৰাকী পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ দাৰ্শনিক কৰণ জে ৱাৰেনৰ মতে, পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ প্ৰকৃতি আৰু নাৰীৰ ওপৰত পুৰুষৰ আধিপত্য তথা প্ৰকৃতি আৰু স্ত্ৰীৰ মাজৰ লিংগগত সম্বন্ধৰ অধ্যয়ন কৰা নীতিশাস্ত্ৰ। প্ৰকৃততে স্ত্ৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ কেন্দ্ৰবিন্দুত প্ৰতিষ্ঠিত এক বৌদ্ধিক অধ্যয়নেই হ'ল ইক'ফেমিনিজম। (Banja 14) ন'ৱেল ষ্টাৰজিন (Noel Sturgeon)-ৰ মতে, পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ হ'ল এনে এক আন্দোলন য'ত পৰিৱেশবাদ (Environmentalism) আৰু নাৰীবাদ (Feminism)-ৰ মাজত যোগসূত্ৰ স্থাপন কৰা হয়। বহল অৰ্থত এই তত্ত্বৰ জৰিয়তে লিংগ, জাতি আৰু বৰ্ণগত বৈষম্যৰ ভাৱধাৰাৰ লগত পৰিৱেশৰ ওপৰত চলা অৱদমন আৰু উৎপীড়নৰ মাজৰ সম্পৰ্ক বিচাৰ কৰে। (23)

পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ পাৰিভাষিক অৰ্থ আৰু ইয়াৰ সংজ্ঞালৈ মন কৰিলে দেখা যায় যে, ই হৈছে এনে এটা ধাৰণা, যি ধাৰণা অনুসৰি নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ মাজত এক সাদৃশ্য বিচাৰ কৰা হয়। সৃষ্টিৰ পাতনিৰে পৰা প্ৰকৃতিক ইয়াৰ উৰ্বৰতা শক্তিৰ বাবে স্ত্ৰী (লিংগৰ ক্ষেত্ৰত) ৰূপে গণ্য কৰা হয়। নাৰী আৰু প্ৰকৃতি দুয়ো জন্মদাত্ৰী কিয়নো এগৰাকী মাতৃয়ে যিদৰে নিজৰ সন্তানক মাতৃ দুগ্ধ পান কৰাই ডাঙৰ দীঘল কৰে একেদৰেই প্ৰকৃতিয়েও জীৱন ধাৰণৰ সকলো আহিলাৰ যোগান ধৰি মানৱ জাতিক প্ৰতিপালন কৰি আহিছে। প্ৰকৃতি আৰু মানুহৰ জীৱন ওতপ্ৰোতভাৱে জড়িত সেয়ে প্ৰকৃতি আৰু নাৰী দুয়ো লালন-পালনৰ ক্ষেত্ৰত সমতুল্য। কিন্তু প্ৰকৃতি জন্মদাত্ৰী হ'লেও মানুহে প্ৰকৃতি জগতৰ ওপৰত নানা হেঁচা প্ৰয়োগ কৰি অবাধ লুণ্ঠন চলাই আহিছে যিদৰে পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাত নাৰীৰ ওপৰতো নানা মানসিক শাৰীৰিক হেঁচা প্ৰয়োগ কৰি আহিছে।

ইক'ফেমিনিষ্টসকলৰ মতে প্ৰকৃতিৰ শোষণ আৰু নাৰী দমনৰ মাজত আৰম্ভণিৰে পৰা যোগসূত্ৰ আছে। অন্য কথাত ক'বলৈ হ'লে পুৰুষ প্ৰধান সমাজে নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ ওপৰত চলোৱা লুণ্ঠন বা অৱদমিত কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা মানসিকতা একেটা মুদ্ৰাৰে ইপিঠি-সিপিঠি। পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোচনাত আন এক মনকৰিবলগীয়া দিশ হ'ল লিংগ বৈষম্য অৰ্থাৎ সমালোচকসকলৰ মতে নাৰী আৰু পুৰুষ দুয়ো এক ব্যক্তিসত্তা। স্বতন্ত্ৰ ব্যক্তিসত্তা ৰূপে নাৰী-পুৰুষ উভয়ৰে সামাজিক, ৰাজনৈতিক ক্ষেত্ৰত সম-অধিকাৰ থকা উচিত।পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদে এই দিশসমূহকে মূল ৰূপে গ্ৰহণ কৰি সাহিত্যত ইয়াৰ প্ৰতিফলন সম্পৰ্কে বিচাৰ কৰে।

নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ বৰ্ণনা পৃথিৱীৰ প্ৰত্যেক সাহিত্যতে পোৱা যায়। পৌৰাণিক ভাৰতীয় সাহিত্য, আধুনিক সাহিত্যৰ প্ৰায়বোৰ উপাদানতে নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ বৰ্ণনা আছে। এইক্ষেত্ৰত অসমীয়া সাহিত্যও ব্যতিক্ৰম নহয়। বিশেষকৈ আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ প্ৰায়বোৰ উপাদানতে নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ বৰ্ণনা প্ৰচুৰ পৰিমাণে দেখা যায়। নাৰী আৰু প্ৰকৃতি সম্পৰ্কীয় চিন্তা-চেতনাই অসমীয়া গল্প সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনত বিশেষভাৱে প্ৰকাশিত হৈছে। জোনাকী যুগ, আৱাহন যুগৰ গল্পকাৰসকলৰ গল্পত এনে চেতনা সহজলভ্য যদিও বিংশ শতিকাৰ মাজভাগত প্ৰকাশ পোৱা ৰামধেনু (১৯৫০) আলোচনীৰ গল্পকাৰসকলৰ গল্পত নাৰী সম্পৰ্কীয় চিন্তা-চেতনাই আৰু অধিক ব্যাপকতা লাভ কৰে। ৰামধেনু আলোচনীৰ জৰিয়তে আত্মপ্ৰকাশ কৰা পুৰুষ গল্পকাৰসকলৰ তুলনাত নাৰী গল্পকাৰসকলৰ গল্পত এনে চিন্তাৰ প্ৰকাশ আছিল অধিক। এই প্ৰসঙ্গত নিৰুপমা বৰগোহাঞি আৰু মামণি ৰয়চম গোস্বামীৰ নাম বিশেষভাৱে উল্লেখনীয়।

নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ— খিৰিকী কাষৰ গছ, এনগ্ৰপলজিৰ সপোনৰ পিছত, মদাৰ গছ, আকাশলৈ দূৰ নহয়, ঢেঁকীৰ সৰগ, মোৰ নাম কমলিনী কলিতা; মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ— ৰিণিকি ৰিণিকি দেখিছোঁ যমুনা, ভুল ঠিকনা, সংস্কাৰ গল্পত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ অধ্যয়নৰ ভিতৰুৱা দিশসমূহৰ প্ৰকাশ দেখিবলৈ পোৱা যায়।

০.১ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোকত ৰামধেনু যুগৰ নাৰী গল্পকাৰৰ চুটিগল্প ঃ এক অধ্যয়ন শীৰ্ষক অধ্যয়নৰ মূল উদ্দেশ্য হ'ল—

১। ৰামধেনু যুগৰ নাৰী গল্পকাৰসকলৰ গল্পত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ প্ৰয়োগৰ স্বৰূপ নিৰ্ণয় কৰা।

২। আলোচিত গল্পকাৰসকলৰ গল্পৰ বিভিন্ন দিশ (কাহিনী, চৰিত্ৰ, সংলাপ)ত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদে কেনেদৰে গুৰুত্ব লাভ কৰিছে তাৰ বিচাৰ কৰা।

০.২ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোকত ৰামধেনু যুগৰ নাৰী গল্পকাৰৰ চুটিগল্প ঃ এক অধ্যয়ন শীৰ্ষক আলোচনাত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ এক পৰিচয়মূলক বৰ্ণনা দাঙি ধৰি ৰামধেনু যুগৰ নাৰী গল্পকাৰ ক্ৰমে নিৰুপমা বৰগোহাঞি, মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ গল্পসমূহত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ ধাৰণাৰ প্ৰয়োগ আৰু প্ৰতিফলন সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হৈছে।

০.৩ অধ্যয়নৰ উৎস আৰু পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখনৰ আলোচনাৰ সহায় হোৱাকৈ মুখ্য উৎসৰূপে নিৰুপমা বৰগোহাঞি আৰু মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ গল্পসমূহৰ লগতে মূল বিষয়ৰ লগত সম্পৰ্কযুক্ত গৱেষণাগ্ৰন্থৰ সহায় লোৱা হৈছে । ইয়াৰ উপৰি পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ সম্পৰ্কীয় তাত্ত্বিক গ্ৰন্থৰ মুখ্য উৎসৰূপে সহায় লোৱা হ'ব। গৌণ উৎসৰূপে দুয়োগৰাকী গল্পকাৰৰ গল্প বিষয়ক সমালোচনা গ্ৰন্থ, আলোচনী, প্ৰবন্ধ আদিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

গৱেষণা পত্ৰখনৰ তাত্ত্বিক আধাৰৰূপে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ তত্ত্বক গ্ৰহণ কৰা হৈছে আৰু পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰিবলৈ বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.০ মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

১.০.১ পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোকত ৰামধেনু যুগৰ নাৰী গল্পকাৰৰ চুটিগল্প ঃ

১.০.১.১ ৰামধেনু যুগৰ নাৰী গল্পকাৰ ঃ

অসমীয়া চুটিগল্প সাহিত্যলৈ ৰামধেনু (১৯৫০) আলোচনীৰ অৱদান যথেষ্ট। ৰামধেনুৰ আধুনিকতাবাদী আন্দোলনৰ বাহক আছিল চুটি গল্প সাহিত্য। ৰামধেনুৱে এদল নতুন প্ৰতিশ্ৰুতবদ্ধ গল্পকাৰৰ জন্ম দিছিল আৰু বৰ্তমানৰ অসমীয়া চুটিগল্পৰ ধাৰাটোক প্ৰতিষ্ঠা কৰি ভৱিষ্যতৰ বাবে প্ৰসাৰিত কৰিছিল। ৰামধেনুৰ মাধ্যমেৰে বহুতো নাৰী গল্পকাৰে আত্মপ্ৰকাশ কৰিছিল।তেওঁলোকৰ ভিতৰত নিৰুপমা বৰগোহাঞি, মামণি ৰয়ছম গোস্বামী, স্নেহ দেৱী, অনিমা দত্ত ভঁৰালী, প্ৰবীণা শইকীয়া, প্ৰীতি ভট্টাচাৰ্য, নিৰ্মলপ্ৰভা বৰদলৈ, দীপালী বৰা, চপলা দাস, কুসুম বৰা, বীণা দেৱী আদি অন্যতম।

১.০.১.১.১ গল্পকাৰ নিৰুপমা বৰগোহাঞি ঃ

ৰামধেনু আলোচনীত গল্প চৰ্চাৰে জনপ্ৰিয় হৈ পৰা নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ প্ৰকাশিত গল্প সংকলন হ'ল— *অনেক আকাশ, জলছবি, শূন্যতাৰ কাব্য, জননীৰ সন্ধানত এজন ডেকা মানুহ, ইপাৰ সিপাৰ, প্ৰেমৰ বাবে স্বপ্নৰ বাবে, খিৰিকী কাষৰ গছ, সপোনৰ পিছত, আকাশলৈ দূৰ নহয়*। ১৯৪৪ চনত *শান্ত ছোৱালীজনী তাই* গল্পৰে আত্মপ্ৰকাশ কৰা বৰগোহাঞিয়ে *ৰামধেনুৰ* পাতত নীলিমা দেৱী ছদ্মনামেৰে ৭ টা গল্প লিখিছিল। সেই গল্পসমূহ হ'ল— *তেন্টালাচ* (ৰামধেনু ষষ্ঠ বছৰ, দ্বিতীয় সংখ্যা), *প্ৰতিবিম্ব* (ষষ্ঠা বছৰ, পঞ্চম/ষষ্ঠ সংখ্যা), *মৃত্যুঞ্জয়* (সপ্তম বছৰ, দ্বিতীয় সংখ্যা), *মিডাছৰ ট্ৰেজেদী* (অষ্টম বছৰ, প্ৰথম সংখ্যা), *জীৱন জীয়াই থাকে* (নৱম বছৰ, নৱম সংখ্যা), *আৱিষ্কাৰ* (দশম বছৰ, ষষ্ঠ সংখ্যা) আদি। *ৰামধেনুত* প্ৰকাশ পোৱা তেওঁৰ অন্যান্য গল্পসমূহ হ'ল— *পেহীদেউ* (দশম বছৰ, দ্বিতীয় সংখ্যা), *চ্যুতি* (দশম বছৰ, দশম সংখ্যা), *জন্ম* (দ্বাদশ বছৰ, তৃতীয় সংখ্যা), *দ্বিতীয় মৃত্যু* (দ্বাদশ বছৰ, দ্বাদশ সংখ্যা) আদি।

নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ সুদীৰ্ঘ গল্প ৰচনা কালছোৱাত কেইবাটাও স্তৰ অতিক্ৰম কৰা দেখিবলৈ পোৱা যায়। প্ৰতিটো স্তৰে তেওঁৰ চিন্তা-চেতনা আৰু সৃষ্টিশীলতাৰ উত্তৰণৰ দিশটো সুস্পষ্ট কৰি তোলে। প্ৰথমাৱস্থাত নাৰীকেন্দ্ৰিক অনেক সমস্যা সংকটে তেওঁক বিচলিত কৰিছিল। পুৰুষ শাসিত সমাজ

ব্যৱস্থাত নাৰী নিগ্ৰহ, নাৰীৰ প্ৰতি অমানৱীয় দৃষ্টিভংগী বিবাহিত নাৰী জীৱন যন্ত্ৰণা আদিয়েই গল্পবোৰৰ মুখ্য বিষয় আছিল। নাৰী মুক্তিৰ চেতনাই তেওঁক প্ৰগতিশীল নাৰীবাদী লেখিকাৰূপে প্ৰতিষ্ঠা কৰিছিল, পৰৱৰ্তী সময়ত তেওঁৰ গল্পৰ বিশালতাৰ দিশলৈ গতি কৰে। (বৰুৱা ২৭২)

১.০.১.১.১ গল্পকাৰ মামণি ৰয়ছম গোস্বামী ঃ

ৰামধেনুৰ শেষৰ স্তৰত গল্পকাৰৰূপে আত্মপ্ৰকাশ কৰা মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ প্ৰকাশিত গল্প সংকলনসমূহ হ'ল— চিনাকি মৰম (১৯৬২), কইনা (১৯৬৬), হৃদয় এক নদীৰ নাম (১৯৯০), মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ প্ৰিয় গল্প (১৯৯৮)।

ৰামধেনুত প্ৰকাশিত তেওঁৰ গল্প মাত্ৰ এটা। সেইটো হ'ল— বীজাণু (পঞ্চদশ বছৰ, দশম সংখ্যা)। মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ গল্পত গভীৰ জীৱনবোধ অনুভৱ কৰা যায়, যি জীৱনবোধৰ লগত জীৱনৰ নিবিড়তম কাৰুণ্য নিহিত হৈ থাকে, ইমান গভীৰ জীৱনবোধ অসমীয়া চুটিগল্পত ৰয়ছম গোস্বামীৰ গল্পতেই পোৱা যায় (বৰুৱা ২৮৩)।পুৰুষ শাসিত সমাজ ব্যৱস্থাত নাৰী নিগ্ৰহ, নাৰীৰ প্ৰতি অমানৱীয় দৃষ্টিভংগী বিবাহিত নাৰী জীৱন যন্ত্ৰণা আদি মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ গল্পত দেখিবলৈ পোৱা যায়।

১.০.২ নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ গল্পত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ ঃ

ৰামধেনু যুগৰ প্ৰতিষ্ঠিত গল্পকাৰ নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ গল্প সম্পৰ্কে প্ৰহ্লাদ কুমাৰ বৰুৱাই কৈছে— 'পুৰুষ শাসিত সমাজ ব্যৱস্থাত নাৰী নিগ্ৰহ, নাৰীৰ প্ৰতি অমানবীয় দৃষ্টিভংগী বিবাহিত নাৰী জীৱন যন্ত্ৰণা আদিয়েই বৰগোহাঞিৰ গল্পৰ মুখ্য বিষয় আছিল।' (বৰুৱা ২৯২) নাৰী জীৱনৰ দুখ দুৰ্দশাক মুখ্য বিষয়ৰূপেলৈ গল্প ৰচনা কৰা বৰগোহাঞিৰ খিৰিকী কাষৰ গছ, মদাৰ গছ, এনথ্ৰ'পলজিৰ সপোনৰ পিছত, আকাশলৈ দূৰ নহয় শীৰ্ষক গল্পত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ প্ৰকাশ মনকৰিবলগীয়া।

১.০.২.১ বৰগোহাঞিৰ খিৰিকী কাষৰ গছ গল্পটোত সাৰ্থকভাৱে নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ ওপৰত পুৰুষ প্ৰধান সমাজে কৰা শোষণৰ চিত্ৰ অংকন কৰিছে। ইক'ফেমিনিজমৰ ধাৰণা অনুসৰি পুৰুষ শাসিত সমাজত কেৱল উন্নয়নৰ নামত প্ৰকৃতিক ধ্বংস কৰে আৰু ভোগৰ সামগ্ৰীৰূপে ৰূপে গণ্য কৰে, একেদৰেই নাৰীকো এক পণ্য সামগ্ৰীৰ দৰেই ব্যৱহাৰ কৰে। প্ৰকৃতি আৰু নাৰীৰ ওপৰত চলা শোষণ, দমন, উৎপীড়নৰ চিত্ৰ গল্পটোত দৃশ্যায়িত হৈছে।

গল্পটোৰ কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰ বিভা। তাইৰ শোৱাকোঠাৰ খিৰিকীৰ কাষত থকা মদাৰ গছডালৰ লগত এক আত্মিক সম্পৰ্ক গঢ় লৈ উঠিছিল। বিভাৰ দেউতাকে তাইৰ শোৱনিকোঠাতো তাইৰ বাবে সৰু হ'ব বুলি অনুমান কৰি তাইক ঘৰৰ আন এটা ডাঙৰ কোঠালীলৈ আহিবলৈ কৈছে। দেউতাকৰ কথাত তাই অমান্তি হৈ কোঠাতো এৰি নহাৰ অন্য অজুহাত দেখুৱাইছে যদিও ইয়াৰ অন্তৰালত কিন্তু বিভাৰ শোৱা কোঠাৰ পূব ফালৰ খিৰিকী কাষৰ মদাৰ গছজোপাহে যে লুকাই আছে সেই কথা এনেদৰে বৰ্ণনা কৰিছে— 'বিভাই দেউতাকক নক'লে যে গছডালৰ বাবেও তাই সেই কোঠালিটো এৰি যোৱাৰ কল্পনা কৰিব নোৱাৰে। পূব ফালৰ খিৰিকীখনৰ সিফালেই গছডাল।' (১৪৯)। গল্পটোত মদাৰ গছজোপা আৰু বিভাৰ সম্পৰ্ক কালিদাসৰ শকুন্তলা আৰু আশ্ৰমৰ প্ৰকৃতিৰ লগত তুলনা কৰি কৈছে, 'বিয়া হৈ যোৱা পিছত গছডাল এৰি যোৱা বিষয়ত বিভাৰ অৱস্থা শকুন্তলাৰ দৰেই হৈছিল।' (১৫০)

শিশু কালৰে পৰা বিভাৰ অকলশৰীয়া জীৱনৰ এক এৰাব নোৱাৰা অংগ হ'ল খিৰিকী কাষৰ মদাৰ গছজোপা। ঋতু অনুযায়ী গছজোপালৈ অহা পৰিৱৰ্তন, বিভিন্ন চৰাইৰ আগমন, চৰাইৰ কাকলিয়ে বিভাক গছজোপাৰ লগত আৰু অধিক একাত্ম কৰি তোলে। তাই যিকোনো বিনিময়ত গছডাল হেৰুৱাব নোখোজে। তাই এণ্ডাৰছনৰ 'দ্য ফাৰ ট্ৰী' গল্পটো পঢ়ি উঠি নিজেই নিজকে আশ্বাস দিছে এনেদৰে— ভাগ্যে মোৰ খিৰিকী কাষৰ গছডাল ফাৰ্ বা আন তেনে কোনো লাগতিয়াল গছ নহয়, ভগৱনাক ধন্যবাদ যে ভাগ্যে মোৰ গছডাল হ'ল গুৰুতো নলগা গোসাঁইতো নলগা এডাল সামান্য মদাৰ গছ। নহ'লে যে গছ-গছনি নিৰ্বিচাৰে ধ্বংস কৰা অদূৰদৰ্শী মানুহে এণ্ডাৰছনৰ ফাৰ গছডালৰ দৰে মোৰো এই মদাৰ গছডাল কাটি পেলালেহেঁতেনে... (১৫২)

গল্পটোৰ মদাৰ গছডাল সম্পৰ্কত বিভাৰ মন্তব্যৰ পৰা এই কথাই প্ৰতীয়মান হয় যে পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজত মানুহৰ চাহিদাৰ বাবে ব্যৱহৃত হোৱা প্ৰাকৃতিক উপাদানক মানুহে নিৰ্বিচাৰে ধ্বংস কৰে।

পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ দাৰ্শনিক কৰণ জে ৱাৰেণৰ মতে, পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদে নাৰীৰ ওপৰত পুৰুষৰ আধিপত্যৰ বিষয়ে আলোচনা কৰে। (বনজা ১৪) খিৰিকী কাষৰ গছ গল্পত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ এই দিশৰ প্ৰতিফলন দেখা গৈছে

লগতে পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাত নাৰীৰ ওপৰত চলা শোষণ-দমনৰ চিত্ৰও গল্পটোত প্ৰকাশ পাইছে। বিভাই পুৰুষ চালিত সমাজখনৰ চিৰাচৰিত নিয়ম বিবাহেই নাৰীৰ একমাত্ৰ উপায় বোলা কথাষাৰকে স্বীকাৰ কৰি লৈ কোনো প্ৰতিবাদ নকৰাকৈয়ে মাক-দেউতাৰ পছন্দ অনুসাৰে প্ৰদীপৰ লগত বিয়াত বহিছে। বিয়াৰ পাছত বিভায়ে তথাকথিত পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ শোষণৰ বলি হৈছে। পুৰুষৰ পৰাধীন হৈ বৈবাহিক জীৱন কটাব লগীয়া হৈছে আৰু অতীতৰ স্বাধীন জীৱনৰ মাধুৰী সুঁৱৰি আত্ম বিভোৰ হৈছে। গল্পটোত কৈছে—কিমান মৰমৰ অতীত, অতীত মানেই তাইৰ কোঠালিটো... খিৰিকী কাষৰ গছডাল, অতীত মানেই নিঃসংগতা, অতীত মানেই স্বাধীনতা আৰু তাই নিজে গঢ়ি লোৱা সাম্ৰাজ্যখনত আপোন ইচ্ছাৰ পৰিচালনাত অবাধ, মুক্ত, আনন্দময় বিচৰণ। (১৫৪) আকৌ 'অতীতৰ সেই নিঃসংগ স্বাধীন জীৱন কিমান মধুময় আছিল। কিতাপ আছে, সংগীত আছে, কবিতা আছে— মাক-দেউতাকৰ হিয়া উজাৰি চলা মৰম আছে (১৫১) বুলি স্বাধীন অতীতটোক সুঁৱৰিছে। বিভাৰ স্বামী প্ৰদীপ দত্ত পৰম্পৰাগত পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজখনৰ প্ৰতিনিধি। উচ্চ শিক্ষাৰে শিক্ষিত প্ৰদীপৰ মন মগজু পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ পুৰুষকেন্দ্ৰিক চিন্তা চেতনাৰ পৰা মুক্ত নহয়। বিয়াৰ পিছত সেয়ে বিভাক হঠাৎ উষ্মা দেখুৱাই কৈছে —অ' এই সস্তীয়া হিন্দী চিনেমাখন চোৱাৰ তোমাৰ মন নাই। নাথাকিবইতো। তুমি হ'লা পণ্ডিতনী মানুহ। এই চিনেমা-টিনেমাবোৰ তোমাৰ আৰু ভাল লাগিবনে। হাজাৰ কিতাপ পঢ়ি নেদেখুওৱা কিয়, ছোৱালীৰ যি চুটি বুদ্ধি চুটি বুদ্ধিয়ে, আমাৰ লগত ফেৰ মাৰিবলৈ নাহিবা বুজিছা? এগালমান কিতাপ আনি দিলে নিশ্চয় মুখত হাঁহি ওলালহেঁতেন। পিছে মাইকী মানুহৰ সংসাৰ চলাবলৈ কিতাপ পঢ়াৰ কোনো দৰকাৰ নাই বুজিছা, আমাৰ মাই পাঠশালাৰ দেওনাটো পাৰ হোৱা নাছিল, কিন্তু দেউতাক তেওঁ যিমান সুখী কৰিছিল তোমালোকৰ দৰে পণ্ডিতনীবোৰ কল্পনাও কৰিব নোৱাৰিবা। (বৰগোহাঞি ১৫৬) গল্পটোত দিয়া এনে বৰ্ণনাৰ মাজেৰে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ মূল বিষয় লিংগগত বৈষম্যৰ প্ৰকাশ হৈছে।

মানুহ হিচাপে সকলোৰে ব্যক্তিসত্তাৰ গুৰুত্ব আছে। পুৰুষ সত্তা আৰু নাৰী সত্তা বুলি কোনো ভিন্ন সত্তা নাই। দুয়োটিয়েই একে মানৱ সত্তা। (শৰ্মা ১) এক জীৱন্ত সত্তাৰূপে নাৰী-পুৰুষ উভয়েই সমান বা সমঅধিকাৰৰ যোগ্য, তেনেস্থলত 'আমাৰ লগত ফেৰ মাৰিবলৈ নাহিবা' অৰ্থাৎ পুৰুষৰ লগত সমানে খোজ দিব খোজা, নিজৰ স্বাধীনতাৰ প্ৰতি সচেতন বিভাক কোৱা এনে কথাই নাৰীৰ ওপৰত পুৰুষে কৰা অৱদমন আৰু পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ লিংগ বৈষম্যৰ ইঙ্গিত বহন কৰে। নাৰীয়েও পুৰুষৰ দৰে জীৱনৰ পৰিপূৰ্ণতা বিচাৰে। নাৰীৰ জীৱনৰ পূৰ্ণতা কেৱল বিবাহ, স্বামীৰ সেৱা বা সন্তান উৎপাদনতে নহয়। নাৰীৰ জীৱনত পৰিপূৰ্ণতাও পুৰুষৰ দৰেই। (শৰ্মা ৩-৪) কিয়নো নাৰীৰো এটা নিজস্ব মন থাকে, নিজস্ব ৰুচি-অভিৰুচি থাকে। বিভাৰো কিতাপ পঢ়াতো তেনে এক ৰুচিয়েই, কিন্তু তাইৰ ভাল লগা কামবোৰ নকৰিবলৈ বাধ্য কৰোৱাৰ মাজেৰে পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজে নাৰীৰ স্বাধীনতা খৰ্ব কৰাৰ কথাকেই প্ৰকাশ কৰিছে। বিভাৰ জীৱন পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ শোষণ, উৎপীড়নত প্ৰায় নিঃশেষ হৈ গৈছে। পুৰুষ প্ৰধান সমাজ ব্যৱস্থাত এক জীৱন্ত সত্তা হোৱা স্বত্বেও বিভা উপেক্ষিতা হৈ ৰৈছে। গল্পটোত কৈছে— 'বিয়াৰ দুবছৰৰ পিছত এটা চৰকাৰী আঁচনিত প্ৰদীপ জাৰ্মানীলৈ গ'ল। তাৰ এবছৰৰ পিছত খবৰ আহিল যে প্ৰদীপ আৰু উভতি নাহে, তাতেই তেওঁ জীৱনৰ দ্বিতীয় চাকৰি আৰু দ্বিতীয় পত্নী লৈ নিগাজিকৈ বসবাস কৰিবলৈ লৈছে।' (১৫৭) পুৰুষ প্ৰধান সমাজত নাৰী কেৱল যেন এক পণ্য সামগ্ৰীহে যাৰ যেতিয়াই ইচ্ছা হয় তেতিয়াই সি ব্যৱহাৰ কৰিব পাৰে আৰু ইচ্ছা কৰিলেই পৰিত্যাগ কৰিব পাৰে। গল্পটোৰ কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰ বিভাও স্বামী প্ৰদীপৰ বাবে এক পণ্য সামগ্ৰী সদৃশ সেয়েহে কোনো কাৰণ নোহোৱাকৈয়ে প্ৰদীপে বিভাক ত্যাগ কৰিছে। বিবাহোত্তৰ কালত নিজৰ সকলো ভাললগাক বিসৰ্জন দি প্ৰদীপক সুখী কৰিবলৈ আপ্ৰাণ চেষ্টা কৰা বিভাক ত্যাগ কৰি দ্বিতীয় বিবাহ কৰিছে।

স্বামীৰ দ্বাৰা উপেক্ষিতা বিভা পুনৰ মাক-দেউতাকৰ ঘৰলৈ ঘূৰি আহিছে। ঘৰলৈ আহি তাই কোঠাৰ খিৰিকীখন খুলি তাইৰ আপোন মদাৰ গছজোপা নেদেখি চিঞৰি উঠিছে। বিভাৰ প্ৰশ্নত নবৌৱেকে অতি সহজকৈ উত্তৰ দিছে— 'শইকীয়াহঁতে গছডাল কাটি পেলালে। মদাৰ গছ একো কামত নালাগে নহয়। এতিয়া তেওঁলোকে তাত এটা কটেজ বান্ধি... সেইটো ভাড়া দিব।' (১৫৮) পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ বাবে যিদৰে নাৰী এক পণ্য সামগ্ৰী, যাৰ ওপৰত অবাধে নিজৰ অধিকাৰ সাব্যস্ত কৰে একে দৰেই প্ৰকৃতিৰ ওপৰতো পুৰুষশাসিত সমাজে যুগ যুগ ধৰি নিজৰ অধিকাৰ সাব্যস্ত কৰে আৰু প্ৰকৃতিক শোষণ কৰে। পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰে আন এক প্ৰতিনিধি স্বৰূপ শইকীয়াৰ আৰ্থিক উন্নয়নৰ স্বাৰ্থত শোষণৰ

বলি হ'ব লগা হ'ল প্ৰকৃতিৰ উপাদান, এক জীৱন্ত সত্তা সেই মদাৰ গছজোপা।

খিৰিকী কাষৰ গছ গল্পটোত গল্পকাৰে সুন্দৰকৈ মদাৰজোপা আৰু বিভাৰ একাত্ম সম্পৰ্কৰ মাজেৰে নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ আৱেগিক সম্পৰ্কৰ প্ৰকাশ কৰিছে। একেদৰে পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাত বিভা গুৰুতো নলগা গোসাঁইতো নলগা মদাৰৰ দৰেই প্ৰদীপৰ ওচৰত উপেক্ষিতা হৈ ৰৈছে আৰু শইকীয়াৰ দৰে স্বাৰ্থান্বেষী লোকৰ শোষণৰ বলি হৈছে মদাৰ জোপা। গল্পটোত বিভা আৰু মদাৰ জোপাৰ শেষ পৰিণতিৰ মাজেৰে গল্পকাৰে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ অধ্যয়নৰ মূল বিষয় নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ মাজৰ ৰহস্যময় যোগসূত্ৰ (কাল্পনিক), পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাত নাৰী আৰু প্ৰকৃতি দুয়ো কেনেদৰে শোষণ, দমন আৰু উৎপীড়নৰ বলি হৈছে আৰু এক পণ্য সামগ্ৰী ৰূপে ব্যৱহৃত হৈছে সেই দিশসমূহৰ প্ৰতিফলন কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। (গগৈ ৫৫)

১.০.২.২ নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ আন এটা গল্প *এনথ্ৰ'পলজিৰ সপোনৰ পিছত* গল্পত পুৰুষ প্ৰধান সমাজে নাৰীৰ ওপৰত চলোৱা নিৰ্যাতনৰ বৰ্ণনা দিছে। পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ নাৰীবাদৰ পৰা ভিন্ন নহয় অৰ্থাৎ নাৰীবাদে যিদৰে পুৰুষপ্ৰধান সমাজে নাৰীৰ ওপৰত চলোৱা অন্যায়, উৎপীড়নৰ কথা কয় আৰু বিৰোধিতা কৰে সেইদৰে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ অধ্যয়নৰ মূল হ'ল পুৰুষ প্ৰধান সমাজে নাৰীৰ ওপৰত চলোৱা অত্যাচাৰ উৎপীড়ন আদিৰ বৰ্ণনা (খানম ৭২)। এই প্ৰসঙ্গত মালাদেৱী বৰগোহাঁইয়ে তেখেতৰ ইক'ফেমিনিজম শীৰ্ষক প্ৰবন্ধত উল্লেখ কৰিছে যে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদে নাৰীবাদৰ যি সাতটা ধাৰা আছে আৰু এই ধাৰাসমূহে আলোচনা কৰা নাৰী বিষয়ক সকলো আলোচনাকে অধ্যয়নৰ অন্তৰ্ভুক্ত কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰে। (গোহাঁই ৫৩) *এনথ্ৰপলজিৰ সপোনৰ পিছত* গল্পটোত প্ৰকাশ পোৱা পুৰুষ প্ৰধান সমাজে নাৰীৰ ওপৰত চলোৱা শাৰিৰীক উৎপীড়নৰ বৰ্ণনাকো পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আধাৰত আলোচনা কৰিব পৰা যায়।

এনথ্ৰ'পলজিৰ সপোনৰ পিছত গল্পটোত উমাৰ নবৌয়েকৰ চৰিত্ৰটোৰ মাজেৰে পিতৃ প্ৰধান সমাজত কেনেদৰে এগৰাকী নাৰীয়ে নিজৰ সকলো ইচ্ছা আকাংক্ষাক আনৰ বাবে জলাঞ্জলি দিবলগীয়া হৈছে, সকলো নীৰবে সহ্য কৰাৰ পিছতো স্বামীৰ উৎপীড়নৰ বলি হ'বলগা হৈছে তাৰ বৰ্ণনা পোৱা গৈছে। উমাৰ নবৌৰেক এগৰাকী সহজ-সৰল গাঁৱলীয়া তিৰোতা। যি সময়ত তেওঁৰ সমবয়সীয়া ল'ৰাবোৰে খেলি সময় কটাইছে সেই সময়তে পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ পুৰাতন ৰীতি অনুসৰি উমাৰ বৌৰেক বিয়া হৈছে। বিবাহৰ আগতে শোষিত হৈছে পিতৃ আৰু পৰিয়ালৰ দ্বাৰা আৰু বিবাহোত্তৰ কালত স্বামী আৰু স্বামীৰ পৰিয়ালৰ দ্বাৰা। পুৰুষপ্ৰধান সমাজৰ প্ৰতিনিধি অভয় দায়ে তেওঁৰ সৰু সৰু কথাতে, বিনা দোষতে গাত হাত উঠাইছে। গল্পটোত পিতৃপ্ৰধান সমাজত নাৰীয়ে এনেদৰে সন্মুখীন হোৱা অত্যাচাৰৰ বৰ্ণনা দিছে এনেদৰে—

...স্বামীৰ ভালপোৱাৰ সুযোগ দিনতো কেতিয়াবা ঘটে অৱশ্যে, যদিও অইন ৰূপেদি। পথাৰত কাম কৰি অৱশ হৈ আহি দুপৰীয়া বা গধূলি যেতিয়া ঘৈণীয়েকৰ দোষৰ বৰ্ণনা শুনিব লগা হয়, ভোক-ভাগৰে মন-মেজাজ গৰম হৈ থকা স্বামীয়ে আৰু নিজকে সংযত কৰিব নোৱাৰে অৰ্ধাঙ্গিনীৰ ওপৰত কোবৰ জাউৰি তোলে। (২৮)

পিতৃপ্ৰধান সমাজৰ এনে মানসিকতাৰ পৰা উমাৰ বৌৰেকেও সাৰি যোৱা নাই। ৰাতি-দিন কাম কৰি আনৰ সুখৰ বাবে নিজৰ দুখ-ভাগৰ সকলো জলাঞ্জলি দিয়া নবৌয়েকেও গিৰিয়েকৰ শাৰীৰিক অত্যাচাৰৰ বলি হৈছে বিনা দোষতে—

... বাৰু বৌ তোমাক মাৰেনে? তোমাকতো দেখিছো দিন-ৰাতি সমানে কাম কৰি আছাই— বৌৱে হাঁহে। কত দিন মাৰ খালো। ... তাৰ পিছত এদিন নিজ চকুৰেই দেখিছিল বৌৰ কথাৰ সত্যতা... গোহালিৰ আগফালে মাটিৰ উধানত বৰ থালীটোত ধান সিজাই থকা বৌক পাছফালৰ পৰা গোৰ এটা মাৰি দিলেগৈ। (২৮-২৯)

পুৰুষ প্ৰধান সমাজে নাৰীক সমমৰ্যাদা দিব নোখোজে। নাৰীৰো যে এটা মন আছে, তেওঁৰো যে চখ থাকিব পাৰে সেই কথা তেওঁলোকে মানি ল'ব নোখোজে। যাৰ বাবে সকলো সময়তে নাৰীৰ জীৱনৰ ওপৰত হস্তক্ষেপ কৰে, দমন উৎপীড়ন চলায়। উমাৰ বৌৰেকৰ ওপৰতো অভয়দাই এনে উৎপীড়ন অব্যাহত ৰাখিছিল। উমাৰ বন্ধু প্ৰীতিৰ লগত কথা পাতি সময় নষ্ট কৰাৰ অপৰাধত স্বামীৰ আলপৈচানত অৱহেলা কৰাৰ দোষত উমাৰ বৌৰেকক উমাৰ ককায়েকে চুলিত ধৰি টানি আনিছিল। গল্পটোত ইয়াৰ বৰ্ণনা দিছে এনেদৰে—সৰিয়হৰ তেল পেৰি আহি চাহ এটোপা হাতত লৈ গুৰলৈ বাট চাই বহুত সময় থকাতো বৌক আমাৰ ঘৰৰ পৰা ওলাই অহা নেদেখিলে, খঙে তাৰ মূৰৰ চুলি পালেগৈ। একেকোবেই বহাৰ পৰা উঠি প্ৰীতিৰ লগত হাঁহিমুখে ওৰণি

নোহোৱাকৈ কথা পাতি থকা বৌক চুলিত ধৰি টানি আনিছিল। (৩৬) উমাৰ ককায়েক অৰ্থাৎ পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ প্ৰতিনিধি অভয় দায়ে পত্নীৰ প্ৰতি কৰা এনে ব্যৱহাৰে নাৰীৰ জীৱনৰ অধিকাৰ খৰ্ব কৰিছে। এক কথাত গল্পটোত লিংগগত বৈষম্যই ভুমুকি মাৰিছে। পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ নাৰীৰ ওপৰত চলোৱা এনে অন্যায়ৰ প্ৰতিবাদত উমাই কৈছে— 'নতুন জীৱনৰ, যৌৱনৰ পোহৰত উদ্ভাসিত কৰি তুলিম, তেতিয়া আৰু প্ৰেম নাম শুনি আচৰিত হৈ চাই থাকিবলগীয়া নহ'ব।' (৩৯) উমাৰ এনে বক্তব্যৰ মাজেৰে এই কথা প্ৰতীয়মান হয় যে প্ৰত্যেক নাৰীৰে এক নিজস্ব সত্তা আছে প্ৰত্যেকৰে নিজৰ জীৱনটো নিজৰ মতে জীয়াই থকাৰ অধিকাৰ আছে। গল্পটোৰ এনেবোৰ দিশৰ উল্লেখৰ মাজতে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ প্ৰকাশ হৈছে।

১.০.২.৩ *মদাৰ গছ* শীৰ্ষক গল্পটোত গল্পকাৰে প্ৰতিভা নামৰ এগৰাকী আত্মসচেতন ছোৱালীৰ জীৱনৰ ঘটনাৰ অংকন কৰিছে। গল্পৰ বক্তা অৰ্থাৎ কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰ হ'ল প্ৰতিভা। প্ৰতিভা তেওঁৰ পোচাকী নাম, ঘৰুৱা নাম পুতু। গল্পটোত প্ৰতিভাই নিজৰ নামটোক অৰ্থাৎ নাৰীসত্তাৰ অস্তিত্বক স্বাধীনভাৱে জীয়াই ৰাখিবলৈ কৰা প্ৰয়াসক পিতৃপ্ৰধান সমাজে ভৰিৰে মোহাৰি ধূলিস্যাৎ কৰি পেলাইছে। প্ৰতিভা কাহানিও প্ৰতিভা হ'ব নোৱাৰিলে, তাই সকলোৰে মাজত জীয়াই ৰ'ল পুতু হৈ। গল্পটোত প্ৰতিভাৰ ওপৰত পুৰুষ প্ৰধান সমাজে কৰা শোষণৰ ছবিখন আৰু বস্তুবাদী পুৰুষপ্ৰধান সমাজৰ তুলাচনীত মূল্যহীন বুলি পৰিগণিত মদাৰ গছজোপাৰ সাদৃশ্য গল্পকাৰে অংকন কৰিছে। নিজৰ ঘৰখনতে কেৱল নাৰী হোৱা বাবেই প্ৰতিভা যিদৰে অৱহেলিত একেদৰেই প্ৰকৃতিৰ এক জীৱন্ত উপাদান হৈও মদাৰ গছডাল মানুহৰ উপকাৰত নাহে বাবেই অৱহেলিত। গল্পটোত গল্পকাৰে প্ৰতিভা আৰু মদাৰ গছডালৰ মাজত এক কাল্পনিক যোগসূত্ৰ অংকন কৰিছে। গল্পটোত প্ৰকাশ পোৱা এনেবোৰ দিশৰ মাজতে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ অধ্যয়নৰ দিশসমূহৰ প্ৰতিফলন হৈছে।

পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোচনাৰ এক মূখ্য বিষয় হ'ল লিংগ বৈষম্য। (Sturgeon 23) গল্পটোৰ কেন্দ্ৰীয় নাৰী চৰিত্ৰ প্ৰতিভা কেনেদৰে লিঙ্গ বৈষম্যৰ বলি হৈছে তাৰ বৰ্ণনা গল্পকাৰে দাঙি ধৰিছে —মই মা-দেউতাৰ বাবে সাধাৰণ পুতুৱে হৈ ৰ'লো। কোনোদিন প্ৰতিভা হ'ব নোৱাৰিলোঁ, নামটোতে মোৰ প্ৰতিভা লুকাই থাকিল— আমাৰ ঘৰত কোনো ধৰণৰ বাহিৰা কিতাপ-পত্ৰ নাই, কেৱল ইংৰাজী দৈনিক কাকত এখনেহে বাহিৰৰ জগতৰ খবৰৰ লগতে কিছু জ্ঞান-বিজ্ঞানৰ বতৰাও লৈ আহে। অসমীয়া বাতৰি-কাকত নেৰাখি ইংৰাজী ৰখাৰ কাৰণ হ'ল— 'সোণটিয়ে ইংৰাজী শিকিব পাৰিব।' সোণটি মোৰ সৰু ভাইটি, সি ইংৰাজী পঢ়িব পৰা হোৱাত তাৰ বিষয়ে সেইদৰে ভবা হ'ল, কিন্তু মই যেতিয় স্কুলত ইংৰাজী শিকিলো তেতিয়াতো মোৰ কথা তেনেকৈ কোনেও নেভাবিলে। অৱশ্যে শৈলেন বৰা অৰ্থাৎ মোৰ সৰু ভাই সোণটিৰ পঢ়া-শুনাৰ মূল্য মোতকৈ বহুত বেছি। হ'বই মই ছোৱালী, মই পুতু, মোৰ ভাই সোণটিৰ শৈলেন নামটো তাৰ মৃত্যুৰ দিনলৈকে প্ৰচলিত হৈ থাকিব— স্কুলত কলেজত, চাকৰি জীৱনত, ৰাজহুৱা জীৱনত সকলোতে। কিন্তু মোৰ প্ৰতিভা নামটো স্কুল-কলেজৰ পিছতে হয়তো চিৰদিনলৈ হেৰাই যাব...। (৫৭৯)

প্ৰতিভা আৰু শৈলেন, দুয়ো এক ব্যক্তিসত্তা হোৱা স্বত্বেও পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজত পুৰুষৰ প্ৰতিনিধি শৈলেন অৰ্থাৎ প্ৰতিভাৰ ভায়েক সোণটিৰ শিক্ষাৰ প্ৰতিহে মাক-দেউতাক অধিক সজাগ হৈছে। প্ৰতিভাও যে এক মানৱসত্তা, তাইৰো যে জীৱনত কিবা হাবিয়াস আছে সেই কথাই মাক-দেউতাকৰ চিন্তাত গুৰুত্ব পোৱা নাই। গল্পটোত প্ৰকাশ পোৱা এই দিশসমূহৰ মাজত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোচ্য বিষয় নাৰীৰ ওপৰত পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ আধিপত্য, নাৰী স্বাধীনতা খৰ্ব কৰা দিশটোৰ প্ৰতিফলন হৈছে।

প্ৰতিভা আৰু তাইৰ ঘৰৰ পিছফালে থকা মদাৰ গছজোপাৰ মাজত এক যোগসূত্ৰ গল্পকাৰে অংকন কৰিছে। বৈষয়িক চিন্তাৰে পুষ্ট পুৰুষপ্ৰধান সমাজে মদাৰ মানুহৰ বাবে অকাৰ্যকৰী বুলিয়েই, এক জীৱন্ত সত্তা হোৱা স্বত্বেও চিৰকাল অৱহেলাৰ চকুৰে চাইছে। মদাৰ গছজোপাক গুৰুতো নেলাগে গোসাঁইতো নেলাগে বুলি তাৰ মূল্য দিব নোখোজে। একেদৰেই প্ৰতিভাকো পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ প্ৰতিনিধি স্বৰূপ তাইৰ দেউতাকে তাইৰ লুকাই থকা প্ৰতিভাক ধূলিৰে মোহাৰি নস্যাৎ কৰিছে। প্ৰতিভাই নিজকে আনৰ পৰা ব্যতিক্ৰম বুলি গণ্য কৰি অৰ্থাৎ নিজৰ আত্মপৰিচয় গঢ়ি তোলাৰ হাবিয়াসেৰে তাই মদাৰ গছডালক কেন্দ্ৰ কৰিয়েই এখন ৰচনা লেখি কোনোবা কাকত-আলোচনীলৈ পঠিয়াবলৈ আশা পুহি ৰাখিছে। কিন্তু দোভাগ ৰাতি জীয়েকৰ সেই মদাৰ গছ সম্পৰ্কীয় প্ৰবন্ধটো দেখি উৎফুল্লিত হোৱাৰ বিপৰীতে প্ৰতিভাক এক প্ৰকাৰৰ ভীতিৰে দমন কৰাৰ প্ৰয়াস কৰিছে—

...প্ৰবন্ধ এটা লিখিছিল ? কাৰ মূৰটো কৰিবলৈ দোভাগ ৰাতিলৈ লাইট খৰচ কৰি, কাগজ খৰচ কৰি এই আজে-বাজে লেখা লিখি মৰিছ? নাজাননে লাইটৰ কিমান বিল উঠে? দেউতাই খঙত একো নাই হৈ ইয়াৰ পিছত গাৰ জোৰেৰে মোৰ লেখাটো ফালি ছিৰাছিৰ কৰিলে আৰু সকীয়ালে— 'নিজৰ পাঠ্যপুথি নপঢ়ি আজে-বাজে কিতাপ পঢ়ি আমাৰ এওঁ লেখক হ'বলৈ ওলাইছে। চাওঁ আজিৰ পৰা কেনেকৈ লাইট খৰচ কৰি, কাগজ খৰচ কৰি লেখক হ'বলৈ যাব। হাত ছিঙি পেলাম, চাবি....(৫৮২)

পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ নাৰীৰ ওপৰত চলোৱা এনে অৱদমন, শোষণৰ বলি হোৱা প্ৰতিভাই নিজৰ লগত মদাৰ গছজোপাৰ সাদৃশ্য বিচাৰি পাইছে। গল্পটোত কৈছে—মোৰ মদাৰ গছডাললৈ মনত পৰি গ'ল। কিন্তু এতিয়া আন্ধাৰত সেইডাল মোৰ চকুৰ পৰা অদৃশ্য হৈ আছে— ইয়াৰ পিছত দিনৰ ভাগতো সেইডাল অদৃশ্য হৈ ৰ'ব নেকি, অন্ততঃ মানসিকভাৱে? মই মদাৰৰ ক্ষেত্ৰত নান্দনিক সৌন্দৰ্যৰ বিচাৰ কৰি তাক মূল্যৱান কৰি তুলিব খুজিছিলোঁ, কিন্তু আমাৰ দেশত মদাৰ গছ সঁচায়ে এক অতি মূল্যহীন গছ...। গতিকে এইখন দেশত পুতু প্ৰতিভা হ'বলৈ ওলোৱাটোও একে প্ৰহসনৰে কথা। মই প্ৰতিভা হ'ব খুজিলে সেই মদাৰ গছেই হ'ম— অকাৰ্যকৰী ফলহীন। (৫৮২) গল্পটোত প্ৰতিভাৰ এনে বক্তব্যৰে পুৰুষপ্ৰধান সমাজত নাৰী জীৱনৰ অস্তিত্বহীন দিশটোক প্ৰতিফলন কৰিছে। মদাৰ গছ গল্পত গল্পকাৰে খুব সফলভাৱে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোচ্য বিষয় নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ মাজৰ যোগসূত্ৰ অংকন কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে।

১.০.২.৪ নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ *আকাশলৈ দূৰ নহয়* শীৰ্ষক গল্পটোত গল্পকাৰে গীতিমা, প্ৰতিমা আৰু মুক্তি— তিনিটা নাৰী চৰিত্ৰৰ জীৱনৰ কাহিনী অংকন কৰিছে। গল্পটোৰ দুটা নাৰী চৰিত্ৰ ক্ৰমে প্ৰতিমা আৰু মুক্তি পুৰুষ শাসিত সমাজ ব্যৱস্থাৰ প্ৰতিনিধি এজন পুৰুষৰ দ্বাৰা অৱহেলিত আৰু শোষিত হৈছে আৰু দুয়োকে এক পণ্য সামগ্ৰীৰ দৰে ব্যৱহাৰ কৰিছে, ঠিক তেনেদৰেই যিদৰে মানুহে প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি অসচেতনতা বা উদাসীনতাৰ দৃষ্টিভংগী পোষণ কৰে।

গল্পটোৰ পুৰুষ চৰিত্ৰ ৰূপম বৰুৱা হ'ল তথাকথিত পুৰুষপ্ৰধান সমাজ ব্যৱস্থাৰ এক প্ৰতিনিধি। যাৰ ওচৰত নাৰী সত্তাৰ কোনো মূল্য নাই। তেওঁৰ বাবে নাৰী কেৱল এক যৌন সত্তা অৰ্থাৎ ভোগৰ সামগ্ৰী। তেওঁ সমান্তৰালভাৱে দুগৰাকী নাৰীৰ ওপৰত শোষণ আৰু উৎপীড়ন চলাইছে। এহাতে তেওঁৰ পত্নী প্ৰতিমা আৰু আনহাতে ঘৰুৱা পৰিচাৰিকা মুক্তিৰ ওপৰত। প্ৰতিমা উপেক্ষিতা হৈ ৰৈছে পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ প্ৰতিনিধি ৰূপম বৰুৱাৰ ওচৰত আৰু ৰূপম বৰুৱাৰে উৎপীড়নৰ বলি হৈছে মুক্তি। ৰূপম বৰুৱাৰ নাৰীৰ ওপৰত চলা এনে অন্যায়ৰ বিষয়ে বৰ্ণনা কৰিছে এনেদৰে—মানুহজন কালিও তেন্তে মুক্তিৰ ওচৰলৈ গৈছিল। ...জানি শুনিও তই কেনেকৈ সহ্য কৰি আছ বাইদেউ? মুক্তিয়েও বা কেনেকৈ সহ্য কৰি আছে? ...মুক্তিৰ কোনো দোষ নাই অ' মিন্টি। প্ৰথমদিনা তাই আহি মোৰ ওচৰত খুবকৈ কন্দাকটা কৰিছিল। কিন্তু ঘৰৰ ওচৰতে ইমান বেছি দৰমহা পোৱা চাকৰি তাইনো সহজতে ক'ত পাব? তাইক এওঁনো কিয় ইমান বেছি দৰমহা দিছে পিছতহে আচল কাৰণটো বুজিলো... মোৰ আৰু মুক্তিৰ অৱস্থাৰ ভিতৰত আচলতে একো প্ৰভেদ নাই অ' মিন্টি। মতা মানুহটোৰ ওচৰত আমাৰ প্ৰধান মূল্য আমাৰ দেহ দুটাৰহে। সকলো মতা মানুহৰ ওচৰতে তিৰোতাৰ বোধহয় এইটোৱে প্ৰধান মূল্য। (৫৯৬-৫৯৭) গল্পটোত দুয়োগৰাকী নাৰী কিদৰে পুৰুষশাসিত সমাজ ব্যৱস্থাত মাত্ৰ এটি ভোগৰ সামগ্ৰী হৈ ৰৈছে আৰু শোষিত হৈছে সেই কথা সুন্দৰকৈ প্ৰকাশ কৰিছে। গল্পটোত প্ৰকাশ হোৱা এনে দিশৰ মাজতে গল্পকাৰে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ মূল পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজে নাৰীক দুৰ্বল বুলি গণ্য কৰি কৰা শোষণ, দমন আৰু উৎপীড়নৰ দিশটো ফুটি উঠিছে।

নাৰীবাদী সমালোচকসকলে বিশ্বাস কৰে যে নাৰী শিক্ষা আৰু স্বাৱলম্বিতাইহে নাৰীৰ ওপৰত পুৰুষৰ প্ৰভূত্ব নোহোৱা কৰিব সেয়েহে তেওঁলোকে নাৰীৰ শিক্ষা আৰু স্বাধীনতাৰ পোষকতা কৰে। (দেৱী ১৭৯) *আকাশলৈ দূৰ নহয়* গল্পটোত নাৰীবাদী চেতনাৰ এনে দিশ প্ৰতিমাৰ মাজেৰে প্ৰকাশ হৈছে। পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ দ্বাৰা উপেক্ষিতা হৈ ৰোৱা প্ৰতিমা আধুনিক শিক্ষাৰে শিক্ষিত আৰু স্বাৱলম্বী নোহোৱাৰ বাবেই স্বামীৰ অত্যাচাৰ বিনা প্ৰতিবাদেৰে মূৰ পাতি ল'ব লগা হৈছে। কিন্তু প্ৰতিমাই ভনীয়েক গীতিমাক পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ প্ৰভূত্ব নাৰীৰ ওপৰত নোহোৱা কৰিবলৈ উচ্চশিক্ষাৰে শিক্ষিত হৈ স্বাৱলম্বী হোৱাৰ বাট প্ৰশস্ত কৰিবলৈ কৈছে। প্ৰতিমাই গীতিমাক উদ্দেশ্যি কৈছে— তোৰ যেন মোৰ দৰে অৱস্থা নহয়, ভগৱানে নকৰক — তোৰো মোৰ দৰে দানৱ এজনৰ লগত যেন বিয়া নহয়।

যদি হয়ো তই যেন এনেকৈ অপমান সহ্য কৰি নাথাক। নাথাক নহয় নহয় মিণ্টি? তইতো বহুত পঢ়িছ, লাগিলে আৰু পঢ়িবি, তাৰপিছত চাকৰি কৰি নিজৰ ভৰিত থিয় দিব পাৰিবি। তেতিয়াতো কাকো গ্ৰাহ্য কৰাৰে দৰকাৰ নহ'ব — নহয় মিণ্টি। (৫৯৭)

১.০.২.৫ নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ *ঢেঁকীৰ সৰগ* গল্পটোও পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আধাৰত আলোচনা কৰিব পৰা যায়। বৰগোহাঞিৰ গল্পৰ নাৰী চৰিত্ৰবোৰৰ অংকন অতি বাস্তৱধৰ্মী আৰু জীৱন্ত। তেওঁ পৰম্পৰাগত পিতৃতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাত নাৰীৰ অৱস্থিতিগত সমস্যা, সংঘাত আৰু প্ৰান্তীয় স্থিতিক সহজ-সৰল ভাষাক সাৱলীল বয়ন ৰীতিৰ উপস্থাপন কৰি অসমীয়া সাহিত্যৰ 'নাৰী-সত্তা-চেতনাৰ' ধাৰাটোক গতি প্ৰদান কৰাত বিশেষ ভূমিকা পালন কৰিছে। (কন্দলী ২২) বৰগোহাঞিৰ ঢেঁকীৰ সৰগ গল্পটোও এই ক্ষেত্ৰত ব্যতিক্ৰম নহয়।

ঢেঁকীৰ সৰগ গল্পটোৰ কাহিনীভাগ ৰচিত হৈছে স্মৃতি চৰিত্ৰটোক কেন্দ্ৰ কৰি। স্মৃতি চৰিত্ৰটোক সমাজৰ দ্বাৰা শোষিত নাৰীৰ প্ৰতিনিধি। জীৱনৰ তেইশটা বছৰ অতিক্ৰম কৰা ঘৰখনত তাইৰ কাৰণে অকণো আহৰি নাছিল, ঘৰখনৰ সকলোৰে জঞ্জাল মাৰোঁতেই তাইৰ সময়বোৰ অতিবাহিত হৈছিল। গল্পটোত এই সম্পৰ্কে উল্লেখ কৰিছে— 'অষ্ট প্ৰহৰক চকৰিৰ দৰে ঘূৰি তাই য'ত কাম কৰিব লাগে, এইবাৰ সেই বলদৰ ঘানিৰ পৰা তাই চিৰদিনলৈ মুক্তি পাব। এইবাৰ তাই নিজাকৈ এখন ঘৰ পাব য'ত তাইও নিজৰ মতামত খটুৱাৰ অধিকাৰ পাব, য'ত অন্ত হ'ব তাইৰ এই অন্তহীন কৰ্মময় জীৱন' (৩০) গল্পকাৰে উল্লেখ কৰা এনে বক্তব্যৰ মাজেৰে স্মৃতি যে পিতৃতান্ত্ৰিক সমাজৰ দ্বাৰা নিষ্পেষিত এগৰাকী নাৰী সেই কথা প্ৰতীয়মান হৈছে। পঢ়াত কিছু পৰিমাণে দুৰ্বল হোৱা বাবে স্মৃতি ঘৰখনৰ দ্বাৰা উপেক্ষিতা। একমাত্ৰ দুৰ্বল হোৱা বাবেই পুৰুষপ্ৰধান সমাজে স্মৃতিৰ জীৱনৰ ওপৰত শোষণ চলাইছে আৰু তাইৰ অধিকাৰ খৰ্ব কৰিছে। গল্পটোত প্ৰকাশিত এনেবোৰ দিশৰ মাজতে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোচ্য বিষয় পুৰুষপ্ৰধান সমাজত নাৰীক দুৰ্বল বুলি গণ্য কৰি নাৰীৰ ওপৰত চলোৱা শোষণ, উৎপীড়নৰ চিত্ৰ প্ৰতিফলিত হৈছে।

পুৰুষপ্ৰধান সমাজত নাৰী স্বাধীনতা খৰ্ব হোৱাৰ লগতে পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজত নাৰী জীৱনৰ দুৰ্দশা যে অপৰিৱৰ্তনীয় সেই দিশৰ প্ৰতিফলন স্মৃতি চৰিত্ৰৰ মাজেৰে হৈছে। বিবাহৰ পাছত এক স্বাধীন জীৱনৰ সপোন দেখা স্মৃতিৰ সকলো সপোন চূড়মাৰ হৈছে। স্মৃতিৰ নিষ্পেষিত জীৱন উন্মোচিত হৈছে ভনীয়েক নীতিলৈ লিখা চিঠিৰ উত্তৰত। স্বামীগৃহত স্মৃতি এটা মানৱ সত্তাৰ পৰা যন্ত্ৰলৈ ৰূপান্তৰিত হৈছে। স্মৃতি পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ শোষণৰ এনেদৰে বলি হৈছে যে তাইৰ ভনীয়েকে তাইলৈ লিখা ব্যক্তিগত চিঠিকেইখন অকলশৰে পঢ়াৰ অধিকাৰো তাই হেৰুৱাই পেলাইছে। গল্পটোত কৈছে— '....চিঠিত যেন এইবোৰ ঘৰুৱা কথা একো নিলিখ — মোৰ চিঠি সকলোৱে পঢ়ে নহয় ইয়াত। আয়ে কয় মই এতিয়া এওঁলোকৰ ঘৰৰ বোৱাৰী যেতিয়া মোৰ চিঠিও বেলেগ প্ৰাইভেট হৈ থাকিব নাপায়। (৩৬)

ঢেঁকীৰ সৰগ গল্পৰ আন এটি চৰিত্ৰ স্মৃতিৰ স্বামীও তথাকথিত পুৰুষপ্ৰধান সমাজৰ এক প্ৰতিনিধি। তেওঁ নাৰীক এক মানৱ সত্তাৰূপে গণ্য কৰাৰ বিপৰীতে এক যৌনসত্তাৰূপেহে গণ্য কৰে। উচ্চ শিক্ষাৰে শিক্ষিত হোৱা স্বত্বেও তেওঁৰ মন-মগজু পুৰুষপ্ৰধান সমাজৰ চিন্তা চেতনাৰ পৰা মুক্ত নহয়। স্মৃতিৰ উচ্চশিক্ষা গ্ৰহণৰ প্ৰসঙ্গত সেয়েহে কৈছে— 'ছোৱালীৰ বিদ্যাৰ কি দৰকাৰ ঘৰ ধৰিব পৰা হ'লে, ৰূপ থাকিলেই হ'ল। (৩৭) উক্ত বক্তব্যৰ মাজেৰে গল্পটোত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোচ্য বিষয় লিংগ বৈষম্যৰ প্ৰকাশ হৈছে। নাৰী আৰু পুৰুষ উভয়েই এক মানৱসত্তা। নাৰীয়েও পুৰুষৰ দৰে জীৱনৰ পৰিপূৰ্ণতা বিচাৰে। নাৰীৰ জীৱনৰ পৰিপূৰ্ণতা কেৱল বিবাহ, স্বামীৰ সেৱা বা সন্তান উৎপাদনতে নহয়। নাৰীৰ জীৱনৰ পৰিপূৰ্ণতাও পুৰুষৰ দৰেই (শৰ্মা ৩-৪) গল্পটোত নাৰীবাদৰ এই মূল বক্তব্যৰ প্ৰকাশ হৈছে স্মৃতিয়ে চিঠিৰ জৰিয়তে নীতিক দিয়াক পৰামৰ্শৰ মাজেৰে। নীতিক উদ্দেশ্যি কৈছে— 'নীতি ভালকৈ পঢ়া-শুনা কৰ, নিজৰ ভৰিত থিয় দি চাকৰি-বাকৰি কৰি খোৱাই ভাল। বিয়াটো একো ডাঙৰ কথা নহয় অ'।' (৩৬)

এনেদৰেই স্মৃতিৰ ওপৰত পুৰুষপ্ৰধান সমাজে চলোৱা শোষণ, ব্যক্তিগত স্বাধীনতা নিঃশেষ কৰা, লিংগ বৈষম্যৰ প্ৰকাশৰ লগতে নাৰী শিক্ষা আৰু নাৰী স্বাৱলম্বিতা সম্পৰ্কে কৰা স্মৃতিৰ বক্তব্যৰ মাজতে গল্পটোত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদী অধ্যয়নৰ দিশসমূহ প্ৰকাশ হৈছে।

১.০.৩ মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ গল্পত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ ঃ

ৰামধেনু যুগৰ আন এগৰাকী গল্পকাৰ মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ গল্পত পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ বলি হোৱা নাৰী জীৱনৰ গাঁথা শুনিবলৈ পোৱা যায়। তেখেতৰ গল্পত প্ৰকাশ পোৱা পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজে নাৰীৰ ওপৰত চলোৱা নিৰ্যাতনৰ মাজতে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ মূল বিষয়বস্তুৰ প্ৰতিফলন হৈছে। তেখেতৰ এনে গল্পসমূহ হ'ল— *ৰিণিক ৰিণিকি দেখিছোঁ যমুনা, ভুল ঠিকনা, সংস্কাৰ।*

১.০.৩.১ মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ *ৰিণিকি ৰিণিকি দেখিছোঁ যমুনা* গল্পটোত আইমানো নামৰ নাৰী চৰিত্ৰটোৰ জীৱনৰ বৰ্ণনা দিয়া হৈছে। পিতৃপ্ৰধান সমাজ ব্যৱস্থাত আইমানোৰ জীৱনো উপেক্ষিত হৈ ৰৈছে। সৰুৰে পৰা তাই তাইৰ নিজস্বতাখিনিক অৰ্থাৎ নিজৰ ভাললগা বেয়া লগাক আনৰ ইচ্ছাৰ ওচৰত নিঃশেষ কৰি আহিছে। পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ অনুসৰি নাৰীও এক মানৱসত্তা, নাৰীয়েও পুৰুষৰ দৰে জীৱনৰ পৰিপূৰ্ণতা বিচাৰে। নাৰীৰ জীৱনৰ পৰিপূৰ্ণতা কেৱল বিবাহ, স্বামীৰ আলপৈচান ধৰা, সন্তান উৎপাদনতে নহয়। ভগৱান সৃষ্ট জীৱ হিচাপে মানুহ কেতিয়াও মানুহৰ দাস হ'ব নোৱাৰে। গতিকে নাৰীও আন কাৰো অধীন হ'ব নোৱাৰে বা নহয়। (দেৱী ১৭৯) গল্পটোত আইমানোৰ পিতৃ প্ৰধান সমাজৰ ওচৰত অৱদমিত জীৱনৰ বৰ্ণনা দিছে এনেদৰে— 'মায়ে কৈছে তুমি সজাত বন্দী হোৱা ভাটৌহু তুমি মাথো আনৰ কথা আওৱাব পাৰা' (২৫২)। যিদৰে মানুহে প্ৰকৃতিৰ উপাদানক নিজৰ চখ পূৰণৰ বাবে মুকলি আকাশৰ পৰা ধৰি আনি সজাত বন্দী কৰি তাৰ অধিকাৰ খৰ্ব কৰে একেদৰেই নাৰীৰ জীৱনটোৰ অধিকাৰখিনিও পৰিয়ালৰ সদস্যসকলৰ দ্বাৰাই খৰ্ব হয়। পুৰুষপ্ৰধান সমাজত নাৰী জীৱনৰ এনে অস্তিত্বহীন দিশটোৰ কথা উল্লেখ কৰিছে— এইখন পৃথিৱীত মোৰ নিজত্ব প্ৰকাশৰ কণমাত্ৰ সমল নাই। মই কোন পথেৰে যাব লাগিব সেইবোৰ চব মোক আনে কৈ দিব; ঠিকেই মই সজাৰ ভাটৌহু মোৰ পথ শৈশৱত কৈ দিব মোৰ মা-দেউতাই, যৌৱনত মোৰ স্বামীয়ে আৰু প্ৰৌঢ় বয়সত পৌত্ৰ-পৌত্ৰীয়ে। এনেকৈয়ে...প্ৰায়বোৰে...ছোৱালীয়ে জীৱন অতিবাহিত কৰিছে... (২৫৫)

গল্পটোত আইমানোকে সজাত বন্দী ভাটৌৰ লগত তুলনা কৰি গল্পকাৰে পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আলোচনাৰ মূল দিশ নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ মাজত যোগসূত্ৰ স্থাপন কৰাৰ প্ৰয়াস কৰিছে। লগতে প্ৰকৃতি আৰু নাৰী দুয়োকে যে পুৰুষপ্ৰধান সমাজে দুৰ্বল বুলি গণ্য কৰি অনাধিকাৰ অধিকাৰ সাব্যস্ত কৰে সেই দিশটোৰো প্ৰকাশ কৰিছে। এনেদৰেই গল্পটোত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ প্ৰকাশ ঘটিছে।

১.০.৩.২ মামণি ৰয়চম গোস্বামীৰ *ভুল ঠিকনা* শীৰ্ষক গল্পটোত পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ শোষণৰ বলি হোৱা দুগৰাকী নাৰীক জীৱনৰ কৰুণ গাঁথা বৰ্ণনা কৰিছে। গল্পটোত পুৰুষে নাৰীক দুৰ্বল বুলি গণ্য কৰি নাৰীৰ ওপৰত চলোৱা উৎপীড়ণৰ মাজতে গল্পটোত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ প্ৰকাশ হৈছে।

গল্পটোৰ অন্যতম নাৰী চৰিত্ৰ হ'ল লীলাৱতী। স্কুলৰপৰা আহি থকা বাটত যোগিনী জানলৈ বনভোজ খাবলৈ অহা এদল ছাত্ৰ আৰু কেইজনমান ব্যৱসায়ীৰ কামনাৰ বলি হৈছিল তাই। পুৰুষপ্ৰধান সমাজৰ প্ৰতিনিধি নিৰ্মলহঁতে লীলাৱতীৰ জীৱনৰ সকলো ৰং মচি দিছিল নিমিষতে। পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ চিন্তা-চেতনাত লীলাৱতী কেৱল মাত্ৰ এক ভোগৰ সামগ্ৰীলৈ পৰিণত হৈছে। নিৰ্মলহঁতে তাইক কেৱল এক যৌনসত্তাৰূপেহে গণ্য কৰিছে। গল্পটোত নিষ্পেষিত নাৰীৰ বিপৰীতে এক প্ৰতিবাদী নাৰীসত্তাৰো অংকন কৰিছে। গল্পটোৰ অন্যতম নাৰী চৰিত্ৰ নিৰ্মলৰ পত্নী মোহিনীয়ে লীলাৱতীৰ জীৱনৰ সকলো কথা গম পোৱাৰ পিছত পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ বিৰুদ্ধে থিয় দিছে। পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ পৰম্পৰাগত চিন্তা-চেতনা অনুসৰি এজন পুৰুষে নিজৰ ইচ্ছাৰে যৌন সংগী সলাব পাৰে। ইয়াৰ বিপৰীতে নাৰী সদায় পতি পৰায়ণা হোৱাটো কামনা কৰে সেয়া লাগিলে স্বামীৰ জীৱিত বা মৃত অৱস্থাতেই নহওক কিয়। মোহিনীয়ে সমাজৰ এনে পৰম্পৰাগত চিন্তাৰ বিপৰীতে গৈ নিজ ইচ্ছাৰে এজন অচিনাকি ভদ্ৰলোকক নিজৰ সকলো অৰ্পণ কৰিছে। গল্পটোত কৈছে - ... মোহিনী কোঠাটোত নাই। ক'ত গ'ল ? ক'ত গ'ল?... হিয়াই যেন নিজৰ চকুকে বিশ্বাস কৰিব নোৱাৰিলে... কোন আছে? কোন আছে? সেইটো কোঠাতহু... হিয়াৰ অন্তৰাত্মা কঁপি উঠিল... নাকৰ তলত মোছ থকা ব্ৰেকবাছ কৰা চুলি আৰু ফুলাম ছাৰ্ট পিন্ধা সেই মানুহজন? (৩৩৪) মোহিনীৰ এনে কাৰ্যৰ মাজেৰে আলেকজেণ্ডাৰ কল'ণ্টাইৰ কথিত নাৰীয়ে ইচ্ছা কৰিলে যৌন সংগী পৰিৱৰ্তন কৰিব পাৰিব প্ৰসংগৰে যেন প্ৰতিফলন হৈছে। (পাঠক ১৫৫)

১.০.৩.৩ মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ *সংস্কাৰ* গল্পত প্ৰকাশ পোৱা নাৰী বিষয়ক চেতনাৰ পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ আধাৰত আলোচনা কৰিব পৰা যায়। গল্পটোৰ কেন্দ্ৰীয় নাৰী চৰিত্ৰ

দময়ন্তী এগৰাকী ব্ৰাহ্মণ বিধৱা। পুৰুষ প্ৰধান সমাজে বিধৱাৰ বাবে নিৰ্ধাৰণ কৰা নীতি-নিয়মৰ ওচৰত এক প্ৰকাৰে হাৰ মানি দময়ন্তীয়ে জীৱন আৰু জীৱিকাৰ বাবে অসৎ পথে পৰিচালিত হ'বলৈ বাধ্য হৈছে। দময়ন্তীয়ে সংসাৰখনৰ দায়িত্ব পালন কৰিব নোৱাৰি শেষত দেহদান কৰিবলৈও কুণ্ঠাবোধ কৰা নাই। দময়ন্তীৰ এনে অৱস্থাত দায়ী একমাত্ৰ পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থা। এক কথাত দময়ন্তী পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাৰ শোষণৰ বলি হৈছে। গল্পটোত তাইৰ দুৰাৱস্থাৰ বৰ্ণনা দিছে- একো উপায় নাছিল। পেটৰ ভোকত ছাটি-ফুটি কৰি মৰিছিলোঁ। আগে অধিকাৰিণী গোসাঁনীয়ে চিৰা ভাজিব মাতিছিল। আজিকালি মই চিৰা ভাজিলে হেনো চুৱা নাযায়। আগে লগুণ কাটিব দিছিল, আজিকালি এই খণ্ডৰ বামুণে লগুণ কাটিব নিদিয়া হৈছে। আধি খাই থকা মানুহমখাও অদুৰৰ দৰে হৈছে। মোৰ মূৰৰ ওপৰত চাল নোহোৱাৰ কথা সিহঁতে জানে। বামুণৰ বিধবা বুলিতো আৰু দয়া-মমতা নাই। সাতপখলিৰ মানুহে ধান দিব এৰিছেই। এই অসুৰহঁতৰ লগত ক'ত যুঁজো? সাতপখলিৰ দুই পুৰা মাটিৰ পাঁচ মোন ধান আজি পৰ্যন্ত কোনেও দিব অহা নাই। সেই মাটিৰ খাজনা আজি তিনি বছৰেও দিব পৰা নাই...। এই নিলাম হয় এই নিলাম হয়। এই অৱস্থাত মই আপী দুটা লৈ কৰো কি? (৩৪২)

গল্পটোৰ অন্যতম পুৰুষ চৰিত্ৰ পীতাম্বৰ মহাজন কৃষ্ণকান্ত পুৰোহিত আদি লোকৰ বাবে নাৰী কেৱল এক যৌনসত্তাহে। সন্তান জন্ম দিব নোৱাৰা বাবেই পীতাম্বৰ মহাজনে নিজ পত্নী থকাৰ পিছতো দময়ন্তীৰ কাষ চাপিছে। এককথাত পীতাম্বৰ মহাজনৰ পত্নী পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ দ্বাৰা উপেক্ষিতা হৈ ৰৈছে। পীতাম্বৰৰ চকুত দময়ন্তীও মাথোন এক যৌনসত্তাহে। একমাত্ৰ সন্তান লাভৰ লালসাতহে সি দময়ন্তীৰ কাষ চাপিছে।

গল্পটোত দময়ন্তীৰ মাজেৰে এক প্ৰতিবাদী নাৰীসত্তাৰ প্ৰকাশ ঘটিছে। পেটৰ তাড়ণাত দময়ন্তীয়ে পীতাম্বৰ মহাজনক দেহদান কৰিলেও কেৱল এটা সন্তানৰ আশাত তাইৰ কাষ চপা পীতাম্বৰৰ সন্তানক জন্ম দিবলৈ অস্বীকাৰ কৰিছে। গল্পটোত কৈছে— তাই নষ্ট কৰি পেলাইছেহু শূদিৰীয়াৰ বীজ তাই নকঢ়িয়ায়।...তাই নষ্ট কৰি পেলাইছে। তোমাৰ সন্তান তাই নষ্ট কৰি পেলাইছে, পীতাম্বৰ...পীতাম্বৰ। (৩৪৭) গল্পটোৰ এনে বক্তব্যৰ মাজতে দময়ন্তীৰ প্ৰতিবাদী সত্তাৰ প্ৰতিফলন দেখা গৈছে। গল্পটোত দুৰ্বল হোৱা বাবেই দময়ন্তী পুৰুষ প্ৰধান সমাজৰ বলি হৈ নিজৰ সমস্ত ত্যাগ কৰিবলৈ বাধ্য হোৱা, শেষত দময়ন্তীৰ পীতাম্বৰৰ মহাজনৰ সন্তান নষ্ট কৰি পেলোৱা সিদ্ধান্তৰ মাজেৰে নাৰীৰ প্ৰতিবাদী সত্তাৰ প্ৰকাশ হৈছে। গল্পটোত প্ৰকাশ পোৱা এনে নাৰী বিষয়ক চিন্তা-চেতনাৰ মাজতে গল্পটোত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ প্ৰকাশ ঘটিছে।

২.০ উপসংহাৰ ঃ

এনেদৰেই ৰামধেনু যুগৰ নাৰী গল্পকাৰ নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ চুটিগল্পত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ অধ্যয়নৰ দিশ নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ মাজৰ কাল্পনিক যোগসূত্ৰ স্থাপন, পুৰুষ প্ৰধান সমাজে নাৰী আৰু প্ৰকৃতিৰ ওপৰত চলোৱা শোষণ, দমন আৰু উৎপীড়নৰ চিত্ৰ, নাৰীৰ প্ৰতিবাদী সত্তাৰ প্ৰকাশ ঘটিছে। অন্যহাতে

মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ গল্পত পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদৰ অধ্যয়নৰ ভিতৰুৱা নাৰী স্বাধীনতা, পুৰুষ প্ৰধান সমাজে নাৰীৰ ওপৰত চলোৱা নিৰ্যাতনৰ চিত্ৰখন চিত্ৰিত হোৱাৰ লগতে নাৰীৰ প্ৰতিবাদী সত্তাৰ প্ৰতিফলনো গল্পসমূহত স্পষ্ট ৰূপত প্ৰকাশ হোৱা দেখিবলৈ পোৱা গৈছে। ❑

প্ৰসংগ সূচী ঃ

১। বৰগোহাঁই মালাদেৱী, 'ইক'ফেমিনিজম' *প্ৰান্তিক,* সপ্তত্ৰিংশ বছৰ, সপ্তম সংখ্যা, মাৰ্চ, ২০১৮, পৃষ্ঠা-২৫

২। Marchant Carolyn, *Redical Ecology : The Search For a livable World*, II Edition,2005, Routledge, NewYork, p.193

৩। Banja K., *Ecofeminism*, 2013, Bani Prakashan, p.16

৪। Mellor Marry, *Feminism & Ecology,* 1997, New York University Press, 1997, p.1

৫। Banja K., *Ecofeminism*, 2013, Bani Prakashan, p.14

৬। Sturgeon Noel, *Ecofeminist Natures*, 1997, Routledge, NewYork, p.23

৭। বৰুৱা প্র াদ কুমাৰ, *অসমীয়া চুটিগল্পৰ অধ্যয়ন,* বনলতা, ২০১২, পৃষ্ঠা-২৭২

৮। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-২৯২

৯। বৰগোহাঞি নিৰুপমা, *স্বনিৰ্বাচিত ২৫ টা গল্প,* অসম প্লাবলিচিং কোম্পানী লিমিটেড, ২০১৪, পৃষ্ঠা-১৪৯

১০। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-১৫০

১১। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-১৫২
১২। কে. বন্‌জা, *ইক'ফেমিনিজম,* বাণী প্ৰকাশ, পৃ- ১৪
১৩। বৰগোহাঞি নিৰুপমা, *স্বনিৰ্বাচিত ২৫ টা গল্প,* অসম প্লাবলিচিং কোম্পানী লিমিটেড, ২০১৪, পৃষ্ঠা-১৫৪
১৪। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-১৫১
১৫। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-১৫৬
১৬। শৰ্মা গোৱিন্দ প্ৰসাদ, *নাৰীবাদ আৰু অসমীয়া উপন্যাস,* অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ২০০৭, পৃষ্ঠা-১
১৭। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-৩-৪
১৮। বৰগোহাঞি নিৰুপমা, *স্বনিৰ্বাচিত ২৫ টা গল্প,* অসম প্লাবলিচিং কোম্পানী লিমিটেড, ২০১৪, পৃষ্ঠা-১৫৭
১৯। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-১৫৮
২০)।গগৈ অম্বেশ্বৰ, পাৰিপাৰ্শ্বিক নাৰীবাদ আৰু নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ এটি গল্প, *সাতসৰী,* পঞ্চদশ বছৰ, নৱম সংখ্যা, মে-জুন, ২০২০, পৃষ্ঠা-৫৫
২১। খানম ৰাশিদা আখতাৰ, *নাৰীবাদ ও দাৰ্শনিক প্ৰেক্ষাপট,* সাহিত্যিক, ২০০৫, বাংলাবাজাৰ, ঢাকা, পৃষ্ঠা-৭২
২২। গোহাঁই মালাদেৱী, ইক'ফেমিনিজম, *প্ৰান্তিক,* সপ্তবিংশ বছৰ সপ্তম সংখ্যা, মাৰ্চ ২০১৮, পৃষ্ঠ-৫৩
২৩। বৰগোহাঞি নিৰুপমা, *স্বনিৰ্বাচিত ২৫ টা গল্প,* অসম প্লাবলিচিং কোম্পানী লিমিটেড, ২০১৪, পৃষ্ঠা-২৮
২৪। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-২৮-২৯
২৫। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-৩৬
২৬। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-৩৯
২৭। Sturgeon, Noel, *Ecofeminist Natures*, 1997, Routledge, NewYork, p.23
২৮। *নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ গল্প সমগ্ৰ,* জ্যোতি প্ৰকাশন, ২০০৬ চন, পৃষ্ঠা-৫৭৯
২৯। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-৫৯৬-৯৭
৩০। দেৱী মীৰা, নাৰীবাদী আন্দোলন আৰু অসমীয়া মহিলা ঔপন্যাসিকা, *অসমীয়া সাহিত্য বুৰঞ্জী ষষ্ঠ খণ্ড;* হোমেন বৰগোহাঞি (সম্পা.), গুৱাহাটী; আনন্দৰাম বৰুৱা ভাষা-কলা সংস্কৃতি সংস্থা, পৃষ্ঠা-১৭৯
৩১। *নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ গল্প সমগ্ৰ* , জ্যোতি প্ৰকাশন, ২০০৬ চন, পৃষ্ঠা-৫৯৭
৩২। কগুলী মৌচুমী, নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ ৰামধেনু পৰ্বৰ গল্প,*গৰীয়সী,* হৰেকৃষ্ণ ডেকা (সম্পা.), গুৱাহাটী, মাৰ্চ ২০০৮, পৃষ্ঠা-২২
৩৩। বৰগোহাঞি নিৰুপমা,*এটা হাতীৰ অপমৃত্যু,* নম্ৰতা প্ৰকাশন ২০০২, পৃষ্ঠা-৩০
৩৪। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-৩৬
৩৫। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-৩৭
৩৬। শৰ্মা গোবিন্দ প্ৰসাদ, *নাৰীবাদী অসমীয়া উপন্যাস,* অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ২০০৭, পৃষ্ঠা-৩-৪
৩৭। বৰগোহাঞি নিৰুপমা, *এটা হাতীৰ অপমৃত্যু,* নম্ৰতা প্ৰকাশন ২০০২, পৃষ্ঠা-৩৬
৩৮। *নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ গল্প সমগ্ৰ* , জ্যোতি প্ৰকাশন, ২০০৬ চন, পৃষ্ঠা-৫৩৬
৩৯। দেৱী মীৰা, নাৰীবাদী আন্দোলন আৰু অসমীয়া মহিলা ঔপন্যাসিকা,*অসমীয়া সাহিত্য বুৰঞ্জী ষষ্ঠ খণ্ড,*হোমেন বৰগোহাঞি (সম্পা.), গুৱাহাটী; আনন্দৰাম বৰুৱা ভাষা-কলা সংস্কৃতি সংস্থা, পৃষ্ঠা ১৭৯
৪০। ভৰালী হেমন্ত কুমাৰ (সম্পা), *মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ গল্প সমগ্ৰ,* বনলতা, ২০১১, পৃষ্ঠা-২৫২
৪১। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-২৫৫
৪২। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-৩৩৪
৪৩। পাঠক জয়ন্ত , *অসমীয়া চুটিগল্পত নাৰী এটি অধ্যয়ন,* পৃষ্ঠা-১৫৫
৪৪। ভৰালী হেমন্ত কুমাৰ(সম্পা), *মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ গল্প সমগ্ৰ,* বনলতা, ২০১১, পৃষ্ঠা-৩৪২
৪৫। উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃষ্ঠা-৩৪৭

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

য়েছে দৰজে ঠংচিৰ ‘মিছিং’ উপন্যাসত অৰুণাচল প্ৰদেশৰ চেৰদুকপেন জনগোষ্ঠীৰ লোক-জীৱন ঃ এটি অধ্যয়ন

ড° পুণ্য লতা গোহাঁই

সহকাৰী অধ্যাপিকা, অসমীয়া বিভাগ
ডঃ বিৰিঞ্চি কুমাৰ বৰুৱা মহাবিদ্যালয়
ন-গাঁৱ, অসম-৭৮২১৪১
৮৬৩৮৫৩৪০৫০
punyagohain11@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

সাহিত্য হ’ল সমাজ-সভ্যতা-সংস্কৃতিৰ দলিলস্বৰূপ। সাহিত্যই এখন সমাজক সুস্থিৰ, সু-শৃঙ্খলিত কৰি ৰখাৰ লগতে সাংস্কৃতিক সমন্বয় সাধনতো গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। ঠিক তেনেকৈ লোক-জীৱনৰ লোকাচাৰসমূহে মানুহক আধ্যাত্মিকভাৱে সবল আৰু শক্তিশালী কৰি ৰাখে। অৱশ্যে ভাৰতবৰ্ষৰদৰে বহুভাষী, বৰ্ণিল সংস্কৃতি আৰু ভিন্ন ধৰ্মাৱলম্বী দেশত আধুনিক একক সাহিত্য বা বিশ্ব সাহিত্যৰ ধাৰণাত কিছু বৈপৰীত্য আৰু বৈচিত্ৰ্য নথকা নহয়। ঠিক সেইদৰে ভাৰতৰ উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ বিভিন্ন ৰাজ্যত স্বকীয় ভাষা-সাহিত্য-সংস্কৃতি, ধৰ্ম আছে। এনে স্বকীয়তাৰে তেওঁলোক চহকী হৈ আছে। অসমৰ দাতিকাঁষৰীয়া প্ৰায়বোৰ ৰাজ্যৰে নিজস্ব মাতৃভাষা থকাৰ পিছতো সেই ৰাজ্যসমূহৰ জনজাতীয় লেখকসকলে অসমীয়া ভাষাত সাহিত্য চৰ্চা কৰি অসমীয়া সাহিত্যক সমৃদ্ধ কৰিছে। এনেদৰে কৰা সাহিত্য চৰ্চাই ভাষা-সংস্কৃতিৰ আদান-প্ৰদানেৰে সমাজ-জীৱনৰ বিভিন্ন দিশক প্ৰসাৰিত কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। সেয়েহে বহুভাষিক দেশ বা ৰাজ্যত এনেবোৰ সাহিত্য চৰ্চা হোৱা দুয়োখন ৰাজ্যৰ, দুয়োটা ভাষাৰ, দুয়োটা জাতিৰ বাবেই শুভ লক্ষণ। নিজস্ব ভাষাৰ বিপৰীতে অসমীয়া ভাষাত সাহিত্য চৰ্চা কৰা তেনে এজন জনজাতীয় সাহিত্যিক হ’ল য়েছে দৰজে ঠংচি। ঠংচিদেৰৰ জন্ম হৈছিল ১৯৫২ চনত অৰুণাচল প্ৰদেশৰ পশ্চিম কামে জিলাৰ জগং (জী) নামে গাঁৱত। জন্মগতভাৱে তেওঁ চেৰদুকপেন ফৈদৰ লোক। অৰুণাচল প্ৰদেশৰ অন্যান্য জনগোষ্ঠীসমূহৰদৰে চেৰদুকপেন জনগোষ্ঠীটো হ’ল স্বকীয় ধৰ্ম -ভাষা-সংস্কৃতিৰে জীয়াই থকা জাতি। সেই চেৰদুকপেন জনগোষ্ঠীৰে এজন লেখক হিচাপে ঠংচিদেৰৰ বিভিন্ন লেখনিত চেৰদুকপেন জনগোষ্ঠীৰ জীৱন-ধাৰণ প্ৰণালী, অৰ্থনৈতিক, ৰাজনৈতিক, সামাজিক, লোক-সাংস্কৃতিক দিশবোৰ নিখুঁটৰূপত প্ৰতিফলিত হৈছে। তেওঁৰ ৰচিত বিভিন্ন উপন্যাস, গল্প, কবিতা, আত্মজীৱনী আদিত অৰুণাচল প্ৰদেশৰ নানা সাংস্কৃতিক-ভাষিক সমলে স্থান দখল কৰিছে। তেনে এক স্বকীয় বৈশিষ্ট্যৰে চেৰদুকপেন জনগোষ্ঠীৰ লোক-জীৱনক লৈ ৰচনা কৰা এখন উপন্যাস হ’ল ‘মিছিং’। দেখা গৈছে যে, উপন্যাসখনৰ নামকৰণতে জনগোষ্ঠীয় ভাষিক, সাংস্কৃতিক আৰু লোক-সামাজিক বৈশিষ্ট্য নিৰ্হিত হৈ আছে। তদুপৰি উপন্যাসখনৰ মূল বিষয় মৃত্যু সম্পৰ্কীয় প্ৰচলিত লোক-বিশ্বাস আৰু লোক-প্ৰথা । মৃত্যুৰ লগত জড়িত বিভিন্ন ৰীতি-নীতি, পৰম্পৰা, লোক-বিশ্বাস আৰু মৃত্যুক কেন্দ্ৰ কৰি গঢ় লোৱা সামাজিক

সমস্যা, ইয়াৰ পৰিণতি আদি অনেক লোক কাহিনীৰে উপন্যাসখনি সমৃদ্ধ হৈ আছে। সেয়েহে এনেবোৰ সাংস্কৃতিক বিশেষত্বলৈ লক্ষ্য কৰি 'মিছিং' উপন্যাসখনিক অধ্যয়নৰ বাবে নিৰ্বাচন কৰা হৈছে। বিষয়টি অধ্যয়নৰ বাবে 'মিছিং' উপন্যাসখনিক মুখ্য সমলৰূপে গ্ৰহণ কৰা হৈছে লগতে গৌণ সমলৰূপে আন গ্ৰন্থৰো সহায় লোৱা হৈছে। এনে আলোচনাই অসমৰ সীমান্তৱৰ্তী ৰাজ্য অৰুণাচল প্ৰদেশৰ জনগোষ্ঠীসমূহৰ জীৱন অন্বেষণ কৰি অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যৰ ভঁৰাল চহকী কৰাৰ পথ প্ৰশস্ত কৰিব বুলি আশাবাদী।

বীজ শব্দ ঃ

চেৰদুকপেন, লোক-জীৱন, মৃত্যু লোকাচাৰ, লোক-বিশ্বাস।

অৱতৰণিকা ঃ

অসমীয়া ভাষাত মননশীল বা সৃষ্টিধৰ্মী সাহিত্য চৰ্চা কৰা বহুকেইজন জনগোষ্ঠীয় লেখক আছে। তাৰ ভিতৰত - মিচিং, বড়ো, ৰাভা, নেপালী আদি বহু জনগোষ্ঠীয় লেখকে অসমৰ ৰাজ্যিক ভাষা অসমীয়াত সাহিত্য চৰ্চা কৰি এফালে স্বকীয় ভাষা-ধৰ্ম, সংস্কৃতি তথা সমাজ জীৱনক প্ৰতিফলিত কৰি বিশ্বদৰবাৰলৈ যোৱাত প্ৰথম খোজ দিছে । আনফালে ভাষিক অন্তৰায় দূৰ কৰি অসমীয়া ভাষা, সাহিত্যক সমৃদ্ধ কৰিছে। য়েচে দৰজে ঠংচিয়ে ৰচনা কৰা প্ৰায়বোৰ সাহিত্যৰ পটভূমিয়েই হ'ল তেওঁলোকৰ জাতীয় জীৱন। সাহিত্য অধ্যয়নে যদি মানুহৰ মন-মগজুক বিচাৰ-বিবেচনা কৰিবপৰা জ্ঞান-প্ৰদান কৰে; তেন্তে এনে কাৰণতে অন্য জাতি-জনজাতিৰ লোক-জীৱন, সমাজ, অৰ্থনৈতিক, ৰাজনৈতিক অৱস্থানৰ বিষয়ে অৱগত হ'বৰ বাবে এনেবোৰ জনগোষ্ঠীয় মূল্যৱান সাহিত্য চৰ্চা হোৱাটো প্ৰয়োজন। কিয়নো সম্প্ৰীতি আৰু সমন্বয় সাধনৰ উত্তম পন্থাৰূপে সাহিত্যই যোগসূত্ৰ স্থাপন কৰে।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

য়েচে দৰজে ঠংচিৰ প্ৰায়বোৰ উপন্যাসৰ পটভূমি আৰু বিষয়বস্তু হ'ল অসমৰ দাঁতিকাষৰীয়া ৰাজ্য অৰুণাচল প্ৰদেশৰ গ্ৰাম্য সমাজ জীৱন আৰু লোক-কথা বা কাহিনী, লোক-বিশ্বাস, লোক-সাংস্কৃতিক সমল । তেওঁৰ উপন্যাস অধ্যয়নৰ জৰিয়তে উক্ত জনগোষ্ঠীৰ সমাজ জীৱন বা লোক-জীৱনক অধ্যয়ন কৰি চোৱাৰ উদ্দেশ্যৰে বিষয়টি নিৰ্বাচন কৰা হৈছে।

গুৰুত্ব আৰু তাৎপৰ্য ঃ

লোক-জীৱন আৰু লোক-সমাজখন হ'ল জাতীয় অস্তিত্বৰ পৰিচায়ক। আধুনিক সমাজ নিৰ্মাণৰো ভেটি হ'ল লোক-সমাজখন। কাৰণ লোক-সমাজ জীৱনক প্ৰতিনিধিত্ব কৰা লোক-সমাজৰ পৰম্পৰা, ৰীতি-নীতি, লোকাচাৰ আদি সংস্কাৰবোৰ যেতিয়া সৃষ্টিশীল সাহিত্যত আত্ম প্ৰতিষ্ঠিত হয়, তেতিয়া সেই জাতিৰ অতীত ইতিহাস কাললৈ সংৰক্ষিত হয়। সময় পৰিৱৰ্তনশীল। সেয়েহে লোকসমাজৰ মূল্যৱান সম্পদ লোক-কথা, লোক-বিশ্বাস আদিবোৰ লুপ্ত হোৱাৰ আগতেই ইয়াক আলোচনা কৰাৰ স্থল আছে। তদুপৰি জনজাতীয় সৰলতা, সততা, উদাৰতা, আধ্যাত্মিকতা আদি দিশবোৰ প্ৰকাশত ৱেলাকজীৱনৰ লোকাচাৰৰ যথেষ্ট গুৰুত্ব আৰু তাৎপৰ্য আছে।

অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

য়েচে দৰজে ঠংচিৰ সাহিত্য ৰচনাৰ পৰিসৰ ব্যাপক। তেওঁ ইতিমধ্যে বহুকেইখন উপন্যাস ৰচনা কৰিছে। কিন্তু সকলোখিনি উপন্যাসৰ আলোচনা একেটা অধ্যয়নতে সামৰিব নোৱাৰি। সেয়েহে পৰিসৰৰ ব্যাপকতালৈ লক্ষ্য কৰি কেৱল 'মিছিং' উপন্যাসখনিহে এই অধ্যয়নত সামৰি লোৱা হৈছে।

পূৰ্বসূৰীৰ কীৰ্তি ঃ

য়েচে দৰজে ঠংচিৰ দুই এখন উপন্যাসৰ আলোচনা হৈছে যদিও সকলো উপন্যাসৰেই প্ৰণালীবদ্ধ আলোচনা হোৱা নাই। আলোচ্য 'মিছিং' উপন্যাসখনিৰ সম্পৰ্কেও পূৰ্ব প্ৰকাশিত গৱেষণামূলক কোনো অধ্যয়ন দৃষ্টি-গোচৰ হোৱা নাই। অৱশ্যে তেওঁৰ ৰচিত উপন্যাস সৰ্ম্পকে সামগ্ৰিকভাৱে আলোচনা পোৱা যায়।

অধ্যয়নয়ৰ পদ্ধতি ঃ

বিষয়টি আলোচনাৰ বাবে বৰ্ণনামূলক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে । বিষয়টি অধ্যয়নত তথ্য সংগ্ৰহৰ বাবে 'মিছিং' উপন্যাসখনিক মুখ্য সমল হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

য়েছে দৰজে ঠংচিৰ চমু পৰিচয় ঃ

অৰুণাচলী লেখক হৈয়ো অসমীয়া ভাষাত নিজ ৰাজ্যৰ পটভূমিত সাহিত্য চৰ্চা কৰি এফালে স্বজাতি আৰু স্ব-ৰাজ্যৰ সামাজিক-সাংস্কৃতি পৰম্পৰাক বিশ্ব দৰবাৰলৈ লৈ যোৱাৰ প্ৰয়াস আনফালে অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যক চহকী কৰাত অৱদান আগবঢ়োৱা ঠংচিদেৰ একাধাৰে গল্পকাৰ, কবি, ঔপন্যাসিক। স্কুলীয়া দিনৰে পৰা সাহিত্য চৰ্চা কৰা

ঠংচিয়ে ‘জোনবাই’ নামৰ কবিতাৰে সাহিত্যিক জীৱনৰ পাতনি মেলে। তেওঁ বিভিন্ন আলোচনী যেনে— প্ৰান্তিক, গৰীয়সী, সংগম, মনোৰঞ্জন আদিত গল্প লিখিছিল। ঠংচিয়ে শিক্ষা জীৱনৰ আৰম্ভ কৰে ৰূপাৰ জী গাঁৱৰ প্ৰাথমিক বিদ্যালয়ত। পিছত ক্ৰমে বোমডিলা চৰকাৰী উচ্চতৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ত শিক্ষা গ্ৰহণ কৰি কটন মহাবিদ্যালয়ৰপৰা অসমীয়াত অনাৰ্চসহ স্নাতক ডিগ্ৰী লাভ কৰে। তাৰ পিছত গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়ৰ পৰা অসমীয়া ভাষাত স্নাতকোত্তৰ ডিগ্ৰী অৰ্জন কৰে আৰু ১৯৭৭ চনত অৰুণাচল প্ৰদেশৰ অসামৰিক সেৱাত যোগদান কৰে আৰু ১৯৯২ চনত ভাৰতীয় প্ৰশাসনিক সেৱালৈ পদোন্নতি লাভ কৰে। ১৯৯৩ চনৰ পৰা টাৱাং, নামনি সোৱণশিৰি, চাংলাং, লোহিত আৰু পূৱ কামেং জিলাৰ উপায়ুক্ত হিচাপে সেৱা আগবঢ়াই অৰুণাচল প্ৰদেশ চৰকাৰৰ পৰ্যটন আৰু সাংস্কৃতিক পৰিক্ৰমা নগৰ উন্নয়ন, গৃহ নিৰ্মাণ আৰু পৰিকল্পনা আদি বিভাগৰ সচিব পদত কাৰ্যনিৰ্বাহ কৰিছিল। তেওঁৰ ৰচিত সাহিত্য কৰ্মসমূহ হ’ল ক্ৰমে— কামেং সীমান্তৰ সাধু গ্ৰন্থ, চনম আৰু লিঙঝিক, মই পুনৰ জনম লম, মৌন ওঁঠ মুখৰ হৃদয় (২০০১), বিষ কন্যাৰ দেশত, শৰ কটা মানুহ (২০০৪), মিছিং (২০১৪) উপন্যাস; পাপৰ পুখুৰী, বাঁহৰ ফুলৰ গোন্ধ, ধাৰ আৰু অন্যান্য গল্প (২০২১), অন্য এখন প্ৰতিযোগীতা আদি গল্প সংকলন; ধুনীয়া মানুহৰ ধুনীয়া দেশত (২০২১), হাঁহি আৰু চকুলোঁৰ শৈশৱ, এক আত্মজীৱনী আদি আত্মজীৱনীমূলক ৰচনা।তেওঁ আচাৰ্য শান্তিদেৱৰ বৌধিচৰ্যাৱতাৰ (বৌদ্ধকাব্য) অসমীয়ালৈ অনুবাদ কৰে। তদুপৰি প্ৰৱাসত মুক্ত জীৱন পুণ্যাত্মা দলাই লামাৰ দ্বিতীয় আত্মজীৱনী অসমীয়ালৈ অনুবাদ কৰিছে। জেনেৰেল জে জে সিংৰ সৈনিকৰ প্ৰিয় সেনাপতি এক আত্মজীৱনীখন অসমীয়ালৈ অনুবাদ কৰি তেওঁ অসমীয়া অনুবাদ সাহিত্যৰ জগতখনো চহকী কৰিছে।

বৰ্তমানলৈকে তেওঁ সাহিত্য অকাডেমি বঁটা (২০০৫), ভাষা ভাৰতী সাহিত্য পুৰস্কাৰ, অসম সাহিত্য সভাৰ বিষ্ণু ৰাভা বঁটা, অসম উপত্যকা সাহিত্য বঁটা (২০১৭), ভূপেন হাজৰিকা ৰাষ্ট্ৰীয় বঁটা (২০১৭), ভাৰত চৰকাৰে সাহিত্য আৰু শিক্ষা ক্ষেত্ৰত তেওঁৰ অৱদানৰ বাবে ২০২০ চনত পদ্মশ্ৰী সন্মান প্ৰদান কৰে।

চেৰদুকপেন জনগোষ্ঠীৰ চমু পৰিচয় ঃ

চেৰদুকপেন জনগোষ্ঠী হৈছে অৰুণাচল প্ৰদেশৰ এটি সৰু জনগোষ্ঠী। তেওঁলোক ভাল খেতিয়ক আৰু বেপাৰ-বাণিজ্যত বিশেষভাৱে পাৰ্গত। ধৰ্মীয়ভাৱে তেওঁলোক অদৃশ্য শক্তিৰ উপাসক যদিও মহামায়া বৌদ্ধ ধৰ্ম (Mahayana Buddhism) আৰু জনগোষ্ঠীয় Magical religious ত বিশ্বাস কৰে। তেওঁলোক পশ্চিম কামেং জিলাৰ ৰূপা, চেৰগাঁও আৰু জি-গাঁও অঞ্চলত বসবাস কৰে। তেওঁলোকৰ জনসংখ্যা তিনি হাজাৰমান হ’ব। এওঁলোক ভোট-মোঙ্গোল গোষ্ঠীৰ অন্তৰ্গত। সেইফালৰ পৰা তেওঁলোকৰ ভাষাও ভোটবৰ্মী শাখাৰ ভাষা। অৱশ্যে তেওঁলোকৰ মাজত অসমীয়াকে ধৰি বহুকেইটা উপভাষাৰ প্ৰচলন আছে।[১] এওঁলোক মৃদু আৰু সম্ভ্ৰান্ত। চেৰদুকপেনসকল দেখাত শুৱনি, উজ্জ্বল, স্বাস্থ্যৱান আৰু ওখ-পাখ, স্বভাৱত শান্ত, ধীৰ-স্থিৰ, আকৰ্ষণীয় আৰু বিশ্বাসযোগ্য।[২] এওঁলোকে টাৱাঙৰ লামাসকলকে গুৰু বুলি মানে। সামাজিকভাৱে ৰজাই প্ৰধান। ৰজাৰ পদ বংশানুক্ৰমে চলে। এওঁলোকে খোৱা-লোৱা, জন্ম, মৃত্যু, বিবাহত বহুতো বাধা-নিষেধ মানি চলে। সমাজত শ্ৰেণীবিভাজন মানি চলে। এওঁলোকৰ দুটা শ্ৰেণী হ’ল থং আৰু চাও। বিশ্বাস অনুসৰি থংসকল লাছাৰ ৰজাৰ জাপাং বুৰা নামৰ তৃতীয় পুত্ৰৰপৰা উদ্ভুত আৰু চাওসকল ভাৰী বা বহতীয়া মানুহ। এই দুই শ্ৰেণীৰ মাজত বিয়া-বাৰু নচলে।[৩] উচ্চ বংশোদ্ভৱ জাতি চেৰদুকপেনসকলৰ

মাজত সামাজিক পূজা-পাৰ্বনৰ কাম কৰিবলৈ ‘জিজি’ নামৰ একশ্ৰেণী পুৰোহিত আছে। তেওঁলোকে অলৌকিক শক্তিৰ পৰা ৰক্ষা পৰিবৰ বাবে জিজিৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰে।[৪] চেৰদুকপেনসকলৰ মাজত লেভিৰেট, পলুৱাই নিয়া, বলেৰে ধৰি নিয়া আৰু সামাজিক প্ৰথাৰে পতা প্ৰায় চাৰিপ্ৰকাৰৰ বিবাহৰ প্ৰচলন আছে। তেওঁলোকৰ মাজত স্বামী সম্বন্ধীয় প্ৰথাৰে নিজ বংশৰ ভিতৰত আৰু আন-বংশৰ মানুহৰ লগত বিবাহ পতাৰ দস্তুৰ আছে। মাকৰ ককাই-ভাইৰ পুতেকৰ সৈতে বা পেহীয়েকৰ জীয়েকৰ বিবাহ সমৰ্থন কৰে।[৫] দেখা গৈছে যে চেৰদুকপেনসকল সামাজিক, সাংস্কৃতিক আৰু অৰ্থনৈতিকভাৱে স্বতন্ত্ৰ জাতি। সেই জাতিৰে এজন দক্ষ প্ৰশাসনিক বিষয়া য়েছে দৰজে ঠংচিয়ে তেওঁলোকৰ জনগোষ্ঠীৰ পটভূমিত ৰচনা কৰা এখনি জনগোষ্ঠীয় জীৱনভিত্তিক উপন্যাস হ’ল ‘মিছিং’।

উপন্যাসখনিৰ পটভূমি ঃ

আদিম কালৰে পৰা পৃথিৱীৰ বিভিন্ন স্থানত বিভিন্ন জনগোটৰ মাজত নানা দেৱতা-অপদেৱতা, ভূত-প্ৰেত, ডাইনী, যখিনী, উপকাৰী-অপকাৰী দেৱ-দেৱীকলৈ নানা জনশ্ৰুতি প্ৰচলন হৈ আহিছে। এনে জনশ্ৰুতিক কেন্দ্ৰ কৰি পৃথিৱীৰ বিভিন্ন ভাষাত সাধুকথা, গল্প, উপন্যাস, নাটক কবিতা আদি ৰচিত হৈছে। এই ক্ষেত্ৰত মোঁপাচা, চমাৰচেট মম, আলেকজেণ্ডাৰ পুস্কিন, ডি. এচ. লৰেন্স, এডগাৰ এলেন পো, যোচেফ কনৰাড, এলডাচ হাক্সলি, আৰ্থাৰ কনান ডয়াল (পাতনি, মিচিং) আদিৰ নাম উল্লেখ কৰিব পাৰি। উত্তৰ-পূৰ ভাৰতৰ ৰাজ্যসমূহত বসবাস কৰি থকা জনজাতিসকলৰ মাজতো এনেবোৰ ভূত-প্ৰেত, যাদু-মন্ত্ৰৰ বিশ্বাস অনেক আছে। ভাৰতৰ অন্যান্য ভাষাতো এই শ্ৰেণী ভৌতিক ৰচনা পিচ পৰি থকা নাই। অসমৰ ক্ষেত্ৰত ৰঞ্জু হাজৰিকাৰ উপন্যাসমূহ উল্লেখযোগ্য। উত্তৰ-পূৰ্বৰ বিভিন্ন জনজাতীয় ভাষাত এই শ্ৰেণী সাহিত্য আছে যদিও সি আলোচনালৈ অহা নাই। এই দিশত য়েচে দৰজে ঠংচিৰ এখন উল্লেখযোগ্য উপন্যাস হ’ল ‘মিছিং’। উপন্যাসখনিৰ পটভূমি হ’ল অৰুণাচল প্ৰদেশৰ চেৰদুক্পেন জনগোষ্ঠীৰ মাজত প্ৰচলিত অতি ভৌতিক ৰহস্যময় লোক-কাহিনীৰ ওপৰত প্ৰতিস্থিত লোক-বিশ্বাস।লেখকে জন্ম গ্ৰহণ কৰা চেৰদুকপেন সমাজত ভূত-প্ৰেতাত্মাক লৈ প্ৰচলিত সামাজিক ৰীতি-নীতি, আচাৰ-বিধি আৰু বিশ্বাস-অন্ধবিশ্বাৰ আলমত উপন্যাসখনি ৰচনা কৰিছে। উপন্যাসখনি সম্পৰ্কে ঔপন্যাসিকে পাতনিত এনেদৰে উল্লেখ কৰিছে— গভীৰ ৰাতি জুইশালৰ চাৰিওফালে বহি সৰুতে যেতিয়া আমি ডাঙৰ মানুহৰ আড্ডা শুনিবলৈ বহি যাওঁ তেতিয়া হয় চিকাৰৰ লোমহৰ্ষক অভিযান কাহিনী বা দেহৰ নোম শিহঁৰিত কৰি যোৱা ভূত প্ৰেতৰ কাহিনী শুনিবলৈ পাইছিলোঁ। পুৰোহিতৰ হতুৱাই ভূত খেদোৱা কাৰ্যৰ প্ৰত্যক্ষদৰ্শী হোৱাৰ সুযোগ লাভ কৰিছিলোঁ। আজিকালি গাঁৱত গ’লে আড্ডাত আলোচিত হয় ৰাজনীতিৰ কথা, ক্ৰিকেটত কোনে কিমান ৰাণ কৰিলে বা উইকেট ল’লে, বলিউড বা হলিউডৰ কোন অভিনেতা বা অভিনেত্ৰীৰ কাৰ লগত হলি-গলি আদি কথা। কিন্তু তাৰ মাজতে এতিয়াও কেতিয়াবা চিকাৰৰ কথা, কেতিয়াবা ভূত বা প্ৰেতাত্মাৰ সৈতে হোৱা সাক্ষাৎতৰ কাহিনী ওলায়। তেনেকৈ শুনা কিছুমান ঘটনা বা কাহিনীক থুপাই উপন্যাস এখন লিখিবলৈ আৰম্ভ কৰিছিলোঁ বিশেষকৈ বিস্ময়ত ধাৰাবাহিকভাবে প্ৰকাশ কৰিবলৈ দিম বুলি।’ ইয়াৰ পৰাই অনুমান কৰিব পাৰি যে, উপন্যাসৰ বিষয়বস্তু সৃষ্টি হৈছে ঔপন্যাসিকে জীৱনৰ বিভিন্ন ক্ষণত শুনা গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূত-প্ৰেত আদি অশৰীৰি আত্মাৰ কাহিনীক লৈ।

উপন্যাসখনিৰ নামকৰণ ঃ

উপন্যাসৰ নামকৰণলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে, ‘মিছিং’ হ’ল এটা চেৰদুকপেন ভাষাৰ শব্দ। ইয়াৰ অৰ্থ হ’ল ‘আত্মা’। তেওঁলোকে বিশ্বাস কৰে যে, কোনো লোকৰ মৃত্যুৰ বাতৰি বা মৃত্যুৰ আগতেই মিছিং দেখা দিয়ে। এই মিছিংৰ দ্বাৰা আগতীয়াকৈ ঘটিব লগা ঘটনাৰ উমান পোৱা যায়। সেইফালৰ পৰা উপন্যাসখনিৰ মূল চৰিত্ৰ সিং খৰ্কাইভাৰৰ সৈতে ঔপন্যাসিকে যি কাহিনী উপস্থাপন কৰিছে । সেইয়া প্ৰকৃততে সিং খকাইভাৰৰ মিছিংৰ দ্বাৰাহে কৰা হৈছে। উপন্যাসখনিৰ মূল চৰিত্ৰ সিং খকাইভাৰে কেইবাবাৰো মিছিং দেখা পোৱা কথা ঔপন্যাসিকৰ আগত ব্যক্ত কৰিছে। তদুপৰি উপন্যাসৰ আৰম্ভণিৰপৰা শেষলৈকে মিছিংৰ সৈতেই ঘটনা-প্ৰতিঘটনাৰ উপস্থাপনলৈ চাই , সৰু-বৰ কথাবস্তুৰে সজ্জিত উপন্যাসখনিৰ মূল অভিব্যক্তি প্ৰকাশত নামকৰণ সফল হৈছে বুলিব পাৰি।

য়েচে দৰজে ঠংচিৰ উপন্যাসৰ বিশেষত্ব ঃ

অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যত আন ঔপন্যাসিকৰ তুলনাত ঠংচিদেৱৰ উপন্যাসৰ ভাষা সহজ-সৰল। অৱশ্যে হিন্দী, ইংৰাজী আৰু জনগোষ্ঠীয় ভাষাৰ শব্দ প্ৰয়োগে তেওঁৰ ৰচনাক গাম্ভীৰ্যতা প্ৰদান কৰিছে। বৰ্ণনাশৈলী আমনিদায়ক নহ’লেও ঠাই বিশেষে কিছুপৰিমাণে দীঘল হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। উপস্থাপনত কথোপকথন ৰীতিত চুটি-চুটি বাক্য প্ৰয়োগ মন কৰিবলগীয়া। চৰিত্ৰ সৃষ্টিত তেওঁ সিদ্ধহস্ত। চৰিত্ৰৰ

মনোজগত বিশ্লেষণতো ঔপন্যাসিক গৰাকীয়ে গুৰুত্ব প্ৰদান কৰিছে। যিমান পাৰি পৰিৱেশ-পৰিস্থিতিক সাৱলীলভাৱে উপস্থাপন কৰাৰ প্ৰয়াস লক্ষ্য কৰা যায়। ঠংচিৰ উপন্যাসৰ এটি ঘাই বিশেষত্ব হ'ল জনগোষ্ঠীয় সমাজ জীৱন। তেওঁৰ প্ৰায়বোৰ উপন্যাসতে স্বকীয় জনগোষ্ঠীৰ জীৱন-ধাৰাৰ বাস্তৱ দিশ এটিৰ উমান পোৱা যায়। সেইফালৰ পৰা তেওঁৰ উপন্যাস ৰচনাৰ মূল উদ্দেশ্য সফল হোৱা যেন অনুভৱ হয়।

উপন্যাসৰ কাহিনী ঃ

উপন্যাসৰ কাহিনী আৰম্ভ হৈছে ঔপন্যাসিকে ব্যৱসায় সংক্ৰান্তত গুৱাহাটীলৈ আহোঁতে হোটেলৰ কোঠাত অস্বাভাৱিকভাৱে মণিপুৰী সিং খকাইভাৰক লগ পোৱাৰ জৰিয়তে। কাহিনী অনুসৰি সিং খকাইভাৰ আছিল এসময়ত তেওঁৰ পিতৃ টোপগে মহাজনৰ বিশ্বাসী খকাইভাৰ। কিন্তু এদিন এই বিশ্বাসী সিং খকাইভাৰে তেওঁলোকৰ অৰুণাচলৰ ঘৰৰ পৰা পৰিয়ালসহ পলাই গুচি আহিছিল। যাক বিচাৰি টোপগে মহাজনে তেজপুৰলৈকে আহিছিল। কিন্তু সিং খকাইভাৰৰ কোনো সুং-সূত্ৰ নাপালে। সিং খকাইভাৰ টোপগে মহাজনৰ অতি বিশ্বস্ত খকাইভাৰ আছিল। সেয়ে নিজৰ বন্ধুৱেকৰ জীয়েকৰ লগত সিং খকাইভাৰৰ বিয়া পাতি দিছিল। কিন্তু সেই সিং খকাইভাৰেই টোপগে মহাজনক বিশ্বাসঘাটকতা কৰি পলাই গ'ল। সেই সিং খকাইভাৰেই টোপগে মহাজনৰ মৃত্যুৰ ইমান দিনৰ পিছত আজি হঠাৎ টোপগে মহাজনৰ পুত্ৰক গুৱাহাটীৰ হোটেলত লগ ধৰি তেওঁ টোপগে মহাজনৰ ঘৰৰ পৰা পলাই অহাৰ ৰহস্য ব্যক্ত কৰিবলৈ আহিছে। সিং খকাইভাৰৰ এনে আকস্মিক আগমনে ঔপন্যাসিকৰ মনত বহু প্ৰশ্নৰ জন্ম দিছে। সেয়ে দুয়োৰে মাজত হোৱা প্ৰশ্ন-উত্তৰৰ কথোপকথনত প্ৰসঙ্গক্ৰমে ঔপন্যাসিকে মণিপুৰী সিং খকাইভাৰৰ মুখেৰে তেওঁ অতীতত সৈন্যবাহিনীত খকাইভাৰৰ কাম কৰি থাকোতে যুদ্ধভূমিত ষড়যন্ত্ৰ কৰা কমাণ্ডেণ্ট এজনক হত্যা কৰি পলাই আহি কিদৰে টোপগে মহাজনক ল'গ পাইছিল, মহাজনৰ ঘৰত খকাইভাৰ হৈ থাকোঁতে মিলিটেৰীয়ে তেওঁক বিচাৰি অহা আৰু টোপগে মহাজনৰ কৃপাত কুঞ্জ সিং নামেৰে তেওঁ বিপদৰ পৰা ৰক্ষা পৰা কাহিনী ব্যক্ত কৰিছে। তেওঁ মহাজনৰ ঘৰৰ পুৰণি চেভৰলত ৱান টোনাৰ গাড়ীখনৰ খকাইভাৰ হিচাপে কাম কৰি থাকোঁতে ৰাতি নেফা আদি বিভিন্ন ঠাইলৈ গাড়ীৰে যাব লগা হৈছিল। এদিন ১৯৭১ চনৰ ১ জানুৱাৰীৰ ৰাতি তেওঁ ৰূপাৰ তানজিনৰ কো-অপাৰেটিভৰ চাউল কঢ়িয়া ই আনোতে ছোঁলোপাম গাঁৱৰ ফিৰোং জলপ্ৰপাতৰ কাষত এজনী তিৰোতাৰ মিছিং দেখা পাইছিল আৰু এমাহ পাছত ঘটা ঘটনাত সেইৰাতি দেখা মিছিংৰ প্ৰকৃত তিৰোতা গৰাকীৰ মৃত্যু হৈছিল। এনেদৰে সেই কালত সিং খকাইভাৰে বিভিন্ন কামত অন্য দূৰ ঠাইলৈ অহা-যোৱা কৰোঁতে ৰাতি থাকিব লগা হোৱা গৃহস্থনীৰ সৈতে তেওঁৰ অবৈধভাৱে প্ৰেম কৰিছে। ফলস্বৰূপে টোপগে মহাজনে আপত্তি শুনিছে। কিন্তু মহাজনৰ বলিষ্ঠ যুক্তিৰ বাবে সিং হাত হাৰিছে। তেওঁ শিৰ্ষ হৈও চেৰদুকপেন সমাজৰ সৈতে মিলি গৈছিল। ফলস্বৰূপে তেওঁ চেৰদুকপেনসকলৰ সকলো ৰীতি-নীতি, পৰম্পৰাৰ সৈতে চিনাকী হৈ পৰিছিল। কিন্তু চেৰদুকপেনসকলৰ মাজত প্ৰচলিত ভূত-প্ৰেত সম্পৰ্কীয় কোনো কোনো লোক-বিশ্বাস তেওঁ মানিব পৰা নাছিল। কিন্তু তেওঁ যেতিয়া তেনে বাস্তৱতাক প্ৰত্যক্ষ কৰি অভিজ্ঞ হৈ উঠিছিল; তেতিয়া মৃত্যুৰ ভয়ত পলাই গৈছিল। কিন্তু টোপগে মহাজনক বিশ্বাসঘাটকতা কৰা বুলি তেওঁ গোটেই জীৱন অনুসূচনাত ভুগি থাকিল। সেয়ে কেঞ্চাৰ ৰোগী সিং খকাইভাৰে মৃত্যুৰ আগতে হোটেললৈ আহি ঔপন্যাসিকৰ আগত জীৱনত কৰা ভুলৰ আত্মগ্লানি ব্যক্ত কৰি জীৱনৰ সত্য উদ্‌ঘাটন কৰিছে। ইফালে যি কামৰ বাবে ঔপন্যাসিক গুৱাহাটীলৈ আহিছিল; সেই কাম নোহোৱাত ঔপন্যাসিকে সিং খকাইভাৰে কোৱা বশিষ্ঠ আশ্ৰম চাবলৈ যাওঁতে **টোপগে ঠংদোক মটৰ ৱৰ্কচ** দেখা পাই গাড়ীৰ পৰা নামি গৈ সোধ-পোছ কৰাত গেৰেজৰ প্ৰকৃত মালিক মাইপাক সিং উৰফে ৰাধা বিনোদ সিং বা কুঞ্জ সিংৰ প্ৰকৃত পৰিচয় লাভ কৰিছে আৰু তেওঁ যে বৰ্তমান ভেলোৰত চিকিৎসা কৰি আছেগৈ, সেই কথা জানিব পাৰি ঔপন্যাসিক অৰ্থাৎ আবু ঠংদোকে বুজি উঠিছে যে, তেওঁ দুটা দিনে হোটেলৰ কোঠাত যিজন সিং খকাইভাৰৰ লগত কথা পাতি আছিল, সেইয়া সিং খকাইভাৰৰ মিছিংহে আছিল। এই কথা আবু ঠংদোকে সিং খকাইভাৰৰ পুত্ৰ, পত্নীৰ আগত ব্যক্ত কৰাত তেওঁলোকে বিশ্বাস কৰিব পৰা নাই। শেষত সিং খকাইভাৰৰ সৈতে লগ হওঁতে খকাইভাৰে যিখিনি কথা আবু অৰ্থাৎ ঔপন্যাসিকক কৈছে; সেই একেখিনি কথাই তেওঁৰ মিছিংৰ পৰা ইতিমধ্যে জানিব পাৰিছে বুলি জনোৱাত টোপগে মহাজনে সিং খকাইভাৰক থ'বলৈ দিয়া সোণৰ বুদ্ধ মূৰ্তিটো আবুৰ হাতত গতাই দিছে আৰু সিং খকাইভাৰৰ মৃত্যু হৈছে। উপন্যাসখনিৰ মূল কাহিনী সিং খকাইভাৰ আৰু তেওঁ প্ৰত্যক্ষ কৰা চেৰদুকপেন সমাজখনক কেন্দ্ৰ কৰি গঢ় লৈছে। সেয়ে উপন্যাসৰ বিভিন্ন স্থানত বহুকেইটা উপকাহিনী সংযোগ কৰিছে। উপন্যাসখনিক কেইটামান বিশেষ শিৰোনামত

বিভাজন কৰিছে। প্ৰত্যেকটো শিৰোনামৰ অন্তৰালত একোটিকৈ কাহিনী জড়িত হৈ আছে। সেইবোৰ হ'ল— হোটেলত সিং খকাইভাৰৰ অৰ্বিভাৱ, পলাতক সৈনিক, ফিৰোং জলপ্ৰপাতৰ কাষত এজনী মিছিং, এমাহ পাছৰ ঘটনা, সিং খৰুইভাৰৰ অবৈধ প্ৰেমিকা, দোঁ-ইচিঙৰ স'তে এক গধূলি, সিং খকাইভাৰৰ পলায়নৰ আচল কাৰণ, সেই অভিশপ্ত দিনটো, একে ঘৰৰ দুটাৰ মৃত্যু, টোপগে ঠংদোক মটৰ ৰৰ্কচত, টোপগে লজলৈ, কথাচহকী মিছেচ সিঙৰ স'তে, টোপগে ঠংদোক ল'জত এটা গধূলি, গৌৰ খুড়ীৰ মৃত্যু, সিং খকাইভাৰৰ স'তে শেষ সাক্ষাৎ আদি পোন্ধৰ (১৫) টা খণ্ডত উপন্যাসখনি সমাপ্ত হৈছে। প্ৰতিটো কাহিনীয়েই এটাৰ সৈতে আনটোৰ সম্পৰ্ক আছে। অৱশ্যে দুই-এটা উপ-ঘটনা বা কাহিনী নক'লেও উপন্যাসৰ মূল কাহিনী উপস্থাপনত ত্ৰুটি নহ'লহেঁতেন। দোঁ-ইচিং আৰু ঝি-ঝিৰ মাজত হোৱা দ্বন্দ্বৰ বৰ্ণনা কিছু দীঘলীয়া হৈছে। উপন্যাসখনিৰ শেষফালে সিং খকাইভাৰৰ পৰিয়ালৰ সৈতে হোৱা কথোপকথন আৰু বৰ্ণনা কিছু সংকোচন কৰাৰ স্থল আছিল। উপন্যাসখনৰ প্ৰথমফালে সিং খকাইভাৰৰ প্ৰতি লেখকৰ দৃষ্টিভঙ্গী সহজ নাছিল। কিন্তু সিং খৰুইভাৰৰ মিছিঙে কোৱা কথাবোৰেই প্ৰকৃত সিং খকাইভাৰেও কোৱা আৰু সোণৰ বুদ্ধ মূৰ্ত্তিটো ঔপন্যাসিকক গতাই দি সকলো সত্য ব্যক্ত কৰাত সিং খকাইভাৰৰ প্ৰতি ঔপন্যাসিকৰ দৃষ্টিভঙ্গী সলনি হোৱা দেখা গৈছে।

উপন্যাসৰ চৰিত্ৰ ঃ

যেছে দৰজে ঠংচিয়ে 'মিছিং' উপন্যাসখনিত অনেক চৰিত্ৰৰ উপস্থাপন কৰিছে যদিও সকলো চৰিত্ৰই গুৰুত্বপূৰ্ণ স্থান পোৱা নাই। উপন্যাসখনিৰ বিভিন্ন চৰিত্ৰসমূহ হ'ল— লাল বাহাদুৰ চেত্ৰী, দাৱাৰ মাক, মায়া, কুঞ্জসিং খৰুইভাৰ, নৰকিশোৰ সিং, আনু, মিছেচ সিঙ, মাইপাক সিং, বিদ্যাৰাণী দেৱী, গৌৰ খুডী, ডাঃ কৃষ্ণ বিনোদ সিং, হোটেল বয়, আবু ঠংগো, টোপগে টংগো আদি।

উপন্যাসখনিত ভূত-প্ৰেত, মিছিং আৰু বেজ-বেজালি সম্পৰ্কীয় লোক-বিশ্বাস ঃ

'মিছিং' উপন্যাসখনিৰ বিষয়বস্তু বা কাহিনী হৈছে ভূত-প্ৰেত সম্পৰ্কীয় লোক-বিশ্বাস। উপন্যাসখনৰ নামকৰণ 'মিছিং' অৰ্থাৎ মৃত্যুৰ আগতে মানুহৰ দেহৰ পৰা ওলাই ঘুৰি ফুৰা প্ৰেতাত্মা হ'ল লোক-বিশ্বাসৰ ভিত্তিত গঢ় লোৱা একপ্ৰকাৰৰ অদৃশ্য অপশক্তি। চেৰদুকপেন জনজাতিৰ মাজত মিছিঙকলৈ বহু জনশ্ৰুতি প্ৰচলন আছে। তেওঁলোকে বিশ্বাস কৰে যে— মৃত্যুৰ আগতে মানুহৰ আত্মা কেতিয়াবা দেহৰপৰা ওলাই গৈ য'ত-ত'ত মানুহক ভয় খুৱাই ঘূৰি ফুৰে। এই মিছিং সকলো মানুহেই দেখা নাপায়। মিছিংটোৱে নিজকে যিজন মানুহৰ আগত দেখুৱাব বিচাৰে সেই জনেহে কেৱল মিছিং দেখা পাই বুলি বিশ্বাস কৰে। চেৰদুকপেন জনজাতিসকলে বিশ্বাস কৰে যে, যিবোৰ মানুহৰ আত্মা দুৰ্বল তেনে লোকে মিছিঙৰ প্ৰেতাত্মাক দেখা পায়। প্ৰচলিত বিশ্বাস অনুসৰি মানুহৰ চকুৰ আগত এবাৰ কোনো বেমাৰী বা কিবা দুৰ্ঘটনাত মৰিবলগীয়া মানুহৰ মিছিঙে দেখা দিলে; সেই মানুহজন বৰ বেছি দিনলৈ জীয়াই নাথাকে বুলি বিশ্বাস কৰে। মানুহজনৰ আয়ুস বৰ বেছি এমাহ বা দুমাহ হয়। উপন্যাসত বৰ্ণিত কাহিনী অনুসৰি টোপগে মহাজনৰ ঘৰত অজ্ঞাত বাস কৰি থকা পলাতক সৈনিক ৰাধা বিনোদ সিং ওৰফে কুঞ্জ সিং খৰুইভাৱে কেইবাবাৰো বস্তিৰ বেলেগ বেলেগ লোকৰ মিছিং দেখিছিল। আনকি টোপগে মহাজনক বিশ্বাসঘাটকতা কৰি পলাই যোৱাৰ অন্যতম কাৰণো আছিল মিছিং সম্পৰ্কে দেখা সপোন। এদিন সিং খকাইভাৱে ফিৰোং জলপ্ৰপাতৰ কাষৰ হাবিতলীয়া ৰাস্তাৰে গৈ থকা বিকৃত চেহেৰাৰ তিৰোতা এজনী লগ পাইছিল। তাই কেতিয়া গাড়ীত উঠিল, কেতিয়া নামি গৈছিল সিং খকাইভাৱে কোনো উমান পোৱানাছিল। ইয়াৰ কিছুদিনৰ পিছত তানজিন গাঁৱত পতা ৰাং পূজালৈ টোপগে মহাজনৰ গাড়ীৰে যোৱা দাৱাৰ মাকৰ মূৰত গছ পৰি মৃত্যু হৈছিল সেই ফিৰোং জলপ্ৰপাতৰ কাষত। সিং খৰুইভাৱে কিছুদিন পূৰ্বে দেখা তিৰোতা গৰাকীৰ মুখৰ অৱয়ৱৰ দৰেই দাৱাৰ মাকৰ মুখখনো ভয়ঙ্কৰ হৈ উঠিছিল। তেওঁ দেখা তিৰোতা গৰাকী যে দাৱাৰ মাকৰ মিছিং আছিল, পিছতহে সিং খকাইভাৱে বুজি উঠিছিল।

চেৰদুকপেন জনজাতিসকলে মিছিঙক যিদৰে বিশ্বাস কৰে; ঠিক সেইদৰে দোঁ-ইচিঙকো তেওঁলোকে বিশ্বাস কৰে। দোঁ অৰ্থাৎ ভূতে পোৱাৰ ফলত মানুহ মৰে বুলি বিশ্বাস কৰে। তেওঁলোকৰ মতে দোঁ ইচিঙে মানুহ খায়। এই সম্পৰ্কে উপন্যাসখনিত বৰ্ণনা কৰিছে— তোমালোকৰ মানুহৰদৰে ময়ো মৰাৰ আগত মিছিং হৈ ঘূৰি ফুৰিম, মোৰ প্ৰাণ কোনোৱা দোঁ-ইচিঙে খাই পেলোৱাৰ পাছত মোৰো মৃত্যু ঘটিব। মই খাটাং কৈ ক'ব পাৰো (মি.,পৃ. ৩৭)। চেৰদুকপেন সমাজে বিশ্বাস কৰে যে, লাৰজা ৰাংপু, চুংখিত আদি পাহাৰত বাস কৰা ইষ্ট দেৱতাসকলৰ প্ৰতিনিধি হৈছে দোঁ খেদা ঝি-ঝিসকল। যিজন লোকৰ ওপৰত কোনোবা ইষ্ট দেৱতাৰ কৃপাদৃষ্টি পৰে

সিয়েই ঝি-ঝি হ'বলৈ বাধ্য হয়। এই ঝি ঝি সকলৰ অপাৰ শক্তি থাকে। সেয়েহে ইষ্ট দেৱতাই লম্ভাৰ লগে লগে ঝি-ঝিজন অসাধাৰণ মানুহ হৈ উঠে। দেৱতা লম্ভা ঝি-ঝিয়ে কেনেদৰে দোঁ-ইচিঙ খেদে আৰু ভৱিষ্যৎবাণী কৰিব পাৰে, তাৰ সুন্দৰ বৰ্ণনা উপন্যাসত প্ৰায় তিনি পৃষ্ঠা জুৰি দিছে—অলপ দূৰ গৈয়েই বুঢ়াই অশৰীৰী দোঁ-ইচিঙক দেখা পালে। সেই সময়ত আলিবাট চোলিং কৰিবৰ বাবে শিলগুটি পাৰি আছিল আৰু বুঢ়াৰ ভৰিত কোনো জোতা নাছিল। কিন্তু জোঙা শিল পাৰি থোৱা গ্ৰেভেল আলিবাটত বুঢ়াই এনেদৰে দৌৰিবলৈ ধৰিলে যেন এশ মিটাৰ দৌৰৰ প্ৰতিযোগিতাতহে ভাগ লৈছে। আমি জোতা পিন্ধি থকা ডেকা মানুহবিলাকেও বুঢ়াৰ সমানে দৌৰিব পৰা নাছিলো। তেনেদৰে প্ৰায় আধা কিলোমিটাৰমান দৌৰাৰ পাছত বুঢ়া-বাটৰ মাজতে বহি পৰিল। তাত বুঢ়াই দেও লগা দেহাৰে বহাৰ পৰা আধা ফুটমান ওপৰলৈ জাঁপ মাৰি মাৰি নেপালী ভাষাত ভৱিষ্যৎ বাণী কৰিবলৈ ধৰিলে। ... কিন্তু পিছত গম পালো ঝি-ঝিজনে নেপালী ভাষা নাজানেই (মি., পৃ. ৪২)। ইয়াৰপৰাই চেৰদুকপেনসকলৰ মাজত প্ৰচলিত দোঁ-ইচিঙ আৰু ঝি ঝিৰ মহত্বৰ কথা অনুমান কৰিব পাৰি। চেৰদুকপেনসকলৰ মাজত ঝি-ঝিৰ উপৰিও আন একশ্ৰেণীৰ পুৰোহিত আছে। তেওঁলোকক 'ৰাউমাত' বুলি কয়। তেওঁলোকৰ সমাজত ৰাউমাতসকলক অদৃশ্য জগত আৰু দৃশ্যমান জগতৰ মাজৰ যোগসূত্ৰৰ মাধ্যমৰূপে জ্ঞান কৰে। তেওঁলোকৰ সমাজত কোনো ব্যক্তিৰ বেমাৰ-আজাৰ হ'লে প্ৰথমে কোনো ভূত-প্ৰেত আদিয়ে লম্ভা বুলি সেই অপদেৱতাক সন্তুষ্ট কৰিবলৈ ঝি-ঝিৰ দ্বাৰা পূজা-পাতল কৰে। এনে পূজাৰ পিছতো বেমাৰ ভাল নহ'লে তেনে অপদেৱতাই বন্দী কৰি ৰখা বেমাৰী মানুহৰ আত্মাক মুক্ত কৰিবলৈ 'ৰাউমাত' সকলৰ সহায় লোৱা লয়।

চেৰদুকপেনসকলৰ সমাজৰ বিভিন্ন পূজা-পাতলৰ প্ৰচলন আছে। তাৰ ভিতৰত ভূত-প্ৰেত খেদোৱা এটি পূজা হ'ল 'দোঁ তিনবা' পূজা। দোঁ তিনবা অৰ্থাৎ ঘৰৰ বা গাঁৱৰপৰা ভূত খেদি পঠিয়াবলৈ কৰা পূজা। এই পূজা দুই ধৰণে কৰা হয়। এটা নিয়ম অনুসৰি লামাবিলাকৰ হতুৱাই বৌদ্ধ তান্ত্ৰিক পুথি পঢ়ি অহিংসাৰ পথেৰে ভূত বিলাকক তোষামোদ কৰি বা বুজাই-বঢ়াই বিদায় দিয়া হয়। আনটো নিয়ম অনুসৰি আদিম ধৰ্মৰ বিধি অনুসৰি ঝি ঝি অৰ্থাৎ পুৰোহিতৰ হতুৱাই মাকৈ, যৱ আদি শস্যৰ গুটিত মন্ত্ৰ ফুঁকি লৈ তাক দোঁ বা ভূতৰ ওপৰত অস্ত্ৰৰূপে ছটিয়াই ভূতক খেদি খেদি মাৰি পেলোৱা হয় নতুবা ঘৰ আৰু গাঁৱৰপৰা বাহিৰ কৰি দিয়া হয় (মি., পৃ. ৪০)। সকলো চেৰদুকপেনলোকেই এনে কাম নকৰে। বৌদ্ধ ধৰ্মৰ লামাসকলে ভূতক মাৰি নেপেলায়, কোনো গালি-গালাজ নকৰি মৰমেৰে বিদায় দিয়া বাবে এনে দোঁ ইচিঙে ঘৰ বা গাঁৱৰ কাৰো প্ৰাণ ল'বলৈ দুনাই ঘূৰি নাহে বুলি বিশ্বাস কৰে। কিন্তু ভূত খেদাৰ সময়ত তাৰ পদ শব্দ শুনিবলৈ পায়। এনেদৰে ভূত খেদা পূজাকে দোঁ তিনবা বুলি কোৱা হয়। চেৰদুকপেন সমাজত বেমাৰী ব্যক্তিৰ আত্মাক অপদেৱতাৰ পৰা মুক্ত কৰিবলৈ এবিধ পূজা কৰা নিয়ম আছে। যি পূজাৰ বৰ্ণনা উপন্যাসত এনেদৰে দিছে—ৰাউমাতৰ দ্বাৰা পূজা কৰিবলৈ এখন সৰু মঞ্চ তৈয়াৰ কৰা হয়। তিনিওফালে ৰঙীণ কাপোৰ আঁৰি তাত তৰোৱাল, দামী মণি আদি আঁৰি দিয়া হয়। মঞ্চৰ ভিতৰখনো না না বিধ পূজাৰ সামগ্ৰী দি সজাই তোলা হয়। মঞ্চৰ মজিয়াখন ভালদৰে চাফ-চিকুণ কৰি কাৰ্পেট পাৰি তাৰ ওপৰত চাউলেৰে স্বস্তিকৰ ছবি আঁকি সেই ছবিৰ ওপৰত পাতল অসমীয়া গামোচা এখন পাৰি দিয়া হয়। ৰাউমাতক গা ধুৱাই এড়ী চাদৰ গাত মেৰিয়াই মূৰত এডোখৰ ঘিউ দি গামোচাৰ ওপৰত বহাই দিয়া হয়। তাৰ পাছতে ৰাউমাতে নিজৰ ইষ্ট দেৱতাক মাতি প্ৰাৰ্থনা জনায়। নিজৰ সমস্ত সাঙ্গো-পাঙ্গো লৈ ৰাউমাতৰ দেহত ইষ্টদেৱতা প্ৰৱেশ কৰাৰ লগে লগে ৰাউমাত ৰেডিঅ'ৰ দৰে এটা মাধ্যম হৈ পৰে। ইষ্টদেৱতাই বেমাৰী মানুহৰ আত্মাক উদ্ধাৰ কৰিবৰ বাবে এক অদৃশ্য জগতত যাত্ৰা আৰম্ভ কৰি দিয়ে আৰু সেয়া আমি সাধাৰণ মানুহবোৰে ৰেডিঅ'ত নাটক শুনাৰ দৰে বহি বহি শুনি থাকিব পাৰোঁ। কেতিয়াবা মানুহ মৰাৰ পাছত মৰা মানুহৰ আত্মাক বিচাৰি কিবাকিবি সুধিবলৈ ৰাউমাতৰ সহায় লোৱা হয়। বৰ ৰোমাঞ্চকৰ ইষ্টদেৱতাসকলৰ সেই যাত্ৰা। তেনে যাত্ৰাত তেওঁলোকে বাটত অন্য ইষ্টদেৱতাসকলক লগ পায়, সিহঁতৰ লগত কথা-বতৰা পাতে, কেতিয়াবা তৰ্কা-তৰ্কি হয়, কোনো কোনো ঠাইত মৃত ব্যক্তিসকলৰ আত্মাক লগ পায়। উদ্দেশ্য সিদ্ধি হোৱাৰ পাছত ৰাউমাতৰ দেহৰপৰা ইষ্টদেৱতাই বিদায় লয় আৰু শুই উঠাৰদৰে ৰাউমাতে নিজৰ চেতনা ওভতাই পায়। আচৰিতভাৱে ৰাউমাতে যিমানে লম্ফ-জম্ফ কৰি নাথাকক কিয় তেওঁৰ মূৰত লগাই থোৱা ঘিঁউৰ টুকুৰা গলি বাগৰি নাযায়। গামোচাৰ তলত আঁকি থোৱা স্বস্তিকটোও চেপেটা লাগি অন্য ৰূপ নলয়, একো পৰিৱৰ্তন নোহোৱাকৈ থাকে (মি.,পৃ.৪৪)। উপন্যাসখনিত প্ৰসঙ্গক্ৰমে মণিপুৰীসকলৰ মাজত চলা কীৰ্তন কৰা কথাৰো উল্লেখ পাওঁ।

চেৰদুকপেন সকলৰ মাজত পালিত আন এক উৎসৱ হ'ল চোচ্‌ক উৎসৱ। এই উৎসৱ তিনিদিন ধৰি পালন কৰে। উৎসৱৰ প্ৰথম দিনা গাঁৱৰ মূল গোম্পাৰ পৰা ধৰ্মীয় শোভাযাত্ৰা হয়। সিদিনা যাত্ৰাৰ আগে-আগে ঢোলৰ ছেৱেত 'কেংপা' দুজন নাচি-বাগি যায়। তেওঁলোকে মূৰত লাওখোলাৰ মুখা, নাঙঠ দেহত কঙ্কালত ৰেখা, কঁকালত কাঠেৰে নিৰ্মিত দীঘল লিঙ্গ, দুয়ো অশ্লীল অঙ্গী-ভঙ্গী কৰি লামাসকলৰ আগে আগে গৈ আছিল। লামাসকলৰ পাছত পিঠিত নানা দেৱ-দেৱীৰ মূৰ্তি, ধৰ্মপুথি আদি লৈ গাঁৱৰ জীয়ৰীসকল, ধৰ্মধ্বজা লৈ ডেকা-বুঢ়া আৰু গাঁৱৰ অনান্য মানুহসকল যায় (মি.,পৃ.৫৬) । সেইদিনা গোটেই দিন গাঁৱৰ চাৰিওফালে সিঁচৰতি হৈ থকা মঠ-মন্দিৰ বিলাকত ধৰ্মীয় শোভাযাত্ৰাৰে প্ৰদক্ষিণ কৰাৰ পাছত গধূলি মূল গোম্পাত শোভাযাত্ৰা কৰি মানুহবিলাক ঘৰাঘৰি যায়। এই উৎসৱৰ দ্বিতীয় দিনা ৰাতিপুৱাৰেপৰা গোম্পাত পৰম্পাৰাগতভাৱে চলি অহা আজিলামু নৃত্য আৰম্ভ হয়। এই নৃত্য নাটক দিনটোয়াকৈ চলি থাকে। এই নৃত্য-নাটকৰ কাহিনী, সংলাপ আৰু গীত যুগ যুগ ধৰি তেওঁলোকৰ মাজত প্ৰচলন হৈ আছে যদিও প্ৰতি বছৰে আনন্দ-উল্লাহেৰে গাঁৱৰ বুঢ়া মেথাসকলে চাহ, লাউপানী খাই আনন্দ উপভোগ কৰে। ই একপ্ৰকাৰৰ ধৰ্মীয় উৎসৱ বুলিব পাৰি।

উপন্যাসখনিত দ্বন্দ্ব ঃ

দৰজে ঠংচিৰ 'মিছিং' উপন্যাসখনিত বাস্তৱ সমাজ আৰু অদৃশ্য শক্তি দোঁ-ইচিঙৰ মাজত দ্বন্দ্ব দেখুৱাইছে। আনফালে সতিনীৰ মাজত দ্বন্দ্বৰ সূত্ৰপাত হৈছে। সৈন্য বাহিনীত উচ্চ খাপৰ বিষয়া আৰু শ্ৰেণী বৈষম্যৰে তলতীয়া কৰ্মচাৰীৰ মাজত হোৱা দ্বন্দ্বক উপস্থাপন কৰিছে। তাৰ বৰ্ণনা উপন্যাসত এনেদৰে পোৱা গৈছে— আমাৰ ওপৰৱালা বহুতো অফিচাৰ বাহিৰত দেখাত বৰ কঠোৰ অথচ উদাৰ, পক্ষপাতিত্ব শূণ্য, ন্যায়ৰ প্ৰতি সদায় সজাগ যেন লাগিছিল যদিও ভিতৰি ভিতৰি আছিল অতি নীচ, জঘন্য ধৰণৰ। জাত-পাত, উচ্চ-নীচ, ভাষা-ভাষী, নিজৰ ঠাইৰ মানুহ, অন্য ঠাইৰ মানুহ আদি কথা লৈ ব্যস্ত থকা মানুহ।... যুদ্ধভূমিতো আমাৰ সেই কামণ্ডেন্টজনৰ কাপুৰুষালি আৰু তাৰ লগতে যুদ্ধত নিজৰ জাত-পাতৰ মানুহক, নিজৰ ঠাইৰে একে ভাষাৰ মানুহক ৰক্ষা কৰিবৰ বাবে কেনেকৈ আমাৰদৰে অন্য জাতি, অন্য ভাষা, অন্য প্ৰদেশৰ মানুহক বলি দিব তেওঁ তাৰ বাবে ষড়যন্ত্ৰ ৰচনা কাৰ দেখি মই ধৈৰ্য্য হেৰুৱাই পেলালোঁ। যুদ্ধভূমিত মই শত্ৰুক বধ কৰাৰ চলেৰে আমাৰ সেই ধূৰ্ত কমাণ্ডেন্টজনৰ প্ৰাণ ল'লো (মি.,পৃ. ১০-১১)। ইয়াৰোপৰি উপন্যাসখনিত পাক-ভাৰত যুদ্ধ ক্ষেত্ৰৰ বৰ্ণনাৰ মাজেৰে দুই দেশৰ দ্বন্দ্বাত্মক ছবি এখনো তুলি ধৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে। আনফালে জনগোষ্ঠীয় সমাজৰ নীতি-নিয়মৰ বিৰুদ্ধে যোৱা টোপগে মহাজন আৰু গাঁৱৰ আন লোকৰ মাজত সৃষ্টি হোৱা দ্বন্দ্বক পৰোক্ষভাৱে উপস্থাপন কৰিছে। টোপগে মহাজন সমাজৰ মুখীয়াল, প্ৰভাৱশালী মানুহ। সেয়ে পোনপটীয়াকৈ ইয়াৰ বৰ্হি প্ৰকাশ নহ'লেও আঁৰে আঁৰে চেপা উত্তেজনা আৰু তেওঁৰ বিৰুদ্ধে আলোচিত হোৱা কথাবোৰ আবুৰ মুখেৰে প্ৰকাশ কৰাই এই দ্বন্দ্বৰ সাক্ষ্য দিছে- আমাৰ এই দুৰ্যোগৰ সময়ত গাঁৱৰ মানুহে, সমাজৰ মানুহে সন্মুখত সহানূভূতি দেখুৱাই আমাক সহায়-সহযোগিতা আগবঢ়ালেও আমাৰ পিঠিত এওঁলোকে সকলোৱে আমাক নানা ক্ষুৰধাৰ ভাষাৰে সমালোচনা কৰি আছে। 'কিনো কৈ আছে সিহঁতে?' 'কৈ আছে দুৰ্ঘটনাত পতিত মাহীমাৰ মৃতদেহ ঘৰত আনি সুমুৱাব নালাগিছিল। কৈ আছে দুৰ্ঘটনাত পতিত হোৱা মাহীমাৰ শ্ৰাদ্ধ ইমান ধুমধামেৰে স্বাভাৱিক মৃত্যু হোৱা মানুহৰদৰে কৰিব নালাগিছিল (মি.,পৃ.৬০)।' উপন্যাসখনিত সতিনীৰ মাজৰ দ্বন্দ্ব গৌৰ খুড়ীৰ গাত লম্ভা চেনাৰ আত্মা আৰু কাৰমাৰ মাজৰ কাজিয়াৰ জৰিয়তে দেখিবলৈ পোৱা গৈছে— ঠিক ঠিক, মই ঠিকেই জানিছো, তুমি মোৰ বিৰুদ্ধে ভিনদেউক কথা লগাইছা, মোৰ মিছা-মিছি বদনাম ৰচি ফুৰিছা, বাইদেউ হৈ তুমি মোক চকু পাৰি চাব নোৱাৰা, মই নাথাকিলে মোৰ ল'ৰা-ছোৱালীবিলাকক খাবলৈ ভালদৰে নিদিয়া, ঠিকেই বাইদেউ হৈয়ো তুমি যে মোৰ সতিনী (মি.,পৃ.৮৬)। এই দ্বন্দ্ব অধিক স্পষ্ট হৈ উঠিছে আন এক উক্তিৰ মাজেৰে— ঘৰৰ আটাইতকৈ সৰু বাবে তেওঁক 'চান' অৰ্থাৎ কনিষ্ঠজনী বুলি মাতিছিল। সেই সৰু মাহীয়েই এদিন মাক বিশ্বাসঘাতকটা কৰিলে। তেওঁ ভনীৰ পৰা মাৰ সতিনী হৈ পৰিল। সেই তেতিয়াৰে পৰা মা আৰু মাহী মাক মই কথাই কথাই তৰ্ক-বিতৰ্ক কৰা দেখিছোঁ। সোণৰদৰে সৰু সুখী আমাৰ সংসাৰ এক যুদ্ধভূমিলৈ ৰূপান্তৰিত হোৱা দেখিছোঁ (মি.,পৃ.৮৭)। উপন্যাসখনিত আওপকীয়াকৈ চেৰদুকপেনসকলৰ জনসংখ্যা কমি অহাত তেওঁলোকৰ জাতিৰ, বংশৰ অস্তিত্ব ৰক্ষাৰ প্ৰতিও ভাবুকি অহাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। ইয়ো এক প্ৰকাৰৰ জাতীয় সংঘাত। উপন্যাসত থকা এছোৱা বৰ্ণনাই সম্ভাৱনীয় জাতীয় দ্বন্দ্বৰ উমান দিয়ে— আমাৰ জনজাতি শেষ হোৱাৰ পথত গৈ আছে। মই আমাৰ জনজাতিৰ সংখ্যাৰ লগত অন্য জাতি বা জনজাতিৰ সংখ্যাৰ তুলনা কৰি আতংকিত হৈ পৰোঁ। আমি এই পৃথিৱীৰ পৰা নিঃচিহ্ন হোৱাৰ পথত। আমাৰ জনজাতিৰ

সংখ্যা বঢ়াবলৈ হ'লে অন্য জনজাতিৰ দৰে আমি বহু বিবাহ কৰি সন্তানৰ সংখ্যা বঢ়াব লাগিব (মি.,পৃ.৬১)। চেৰদুকপেনসকলৰ মাজত প্ৰথমা পত্নী জীৱিত অৱস্থাত দ্বিতীয় বিবাহ কৰোৱা নিয়ম নাই। কিন্তু টোপগে মহাজনে দ্বিতীয় বিবাহ কৰিছিল। এই দ্বিতীয় বিবাহৰ অন্তৰালত অন্য উদ্দেশ্য থাকিলেও ঔপন্যাসিকে ক্ষীণকৈ হ'লেও জাতীয় দ্বন্দ্বক ৰেখাপাত কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে— অধিক সন্তান উৎপাদন কৰি আমাৰ জন-জাতিক নিঃচিহ্ন হোৱাৰ পৰা ৰক্ষা কৰা। তুমিও মোৰদৰে একাধিক পত্নী গ্ৰহণ কৰিব লাগিব যাতে অকল আমাৰ জনজাতিয়েই নহয়, মোৰ বংশও বৃদ্ধি হয় (মি.,পৃ. ৬১)। উপন্যাসখনিত সমাজ ব্যৱস্থাৰ পৰিৱৰ্তনে মানুহক কেনেদৰে স্বাৰ্থপৰ কৰি তোলে? আৰু ফলস্বৰূপে নৈতিক মূল্যবোধৰ অৱক্ষয়ে মানুহক কেনে স্তৰলৈ লৈ যাব পাৰে, তাৰ উদাহৰণ সুন্দৰ ৰূপত পোৱা গৈছে— মই এটা কথা বুজি উঠিলোঁ। মাহীমাৰ মৃত্যুত যিমান মানুহ আমাৰ ঘৰত গোট খাইছিল সেয়া কেৱল দেউতাক দেখুৱাবৰ বাবে আছিল, দেউতাৰ পৰা যাতে ভৱিষ্যতেও অনুগ্ৰহ পাই থাকে, তাৰ বাবে সেয়া তোষামোদ আছিল। দেউতাৰ মৃত্যুৰ পাছত তাৰ প্ৰয়োজনীয়তা নাইকিয়া হৈ গৈছিল। আচলতে দেউতাক মানুহবিলাকে ভালপোৱা নাছিল, দেউতাৰ ধন-সম্পত্তি দেখি, দেউতাৰ প্ৰতিপত্তি দেখি মানুহবিলাক ঈৰ্ষাত ভুগিছিল, হিংসাত জ্বলিছিল। গতিকে দেউতাৰ মৃত্যু আছিল সিহঁতৰ বাবে আটাইতকৈ কাংক্ষিত বস্তু (মি.,পৃ.৫৫)। উপন্যাসখনিত থকা এনেবোৰ উক্তিয়ে সমাজ বাস্তৱতাৰ অন্তৰভাগত চলি থকা দ্বন্দ্বক তুলি ধৰিছে।

উপন্যাসখনিৰ কোনো কোনো ঠাইত সমাজৰ ৰীতি-নীতি পৰিৱৰ্তন কৰা বৌদ্ধিক চিন্তাৰ উদ্ৰেক দেখা গৈছে— মোতকৈ তোমাৰ জ্ঞান, বিবেচনা শক্তি বহুত। সেই কাৰণে মই তোমাৰপৰা জানিব বিচাৰিছোঁ, তোমাৰ যে মাহী আৰু অন্য মানুহবিলাক দুৰ্ঘটনাত মৰিল সেইটো তেওঁলোকৰ দোষনে? (মি.,পৃ. ৬২) । উপন্যাসখনিৰ আন এঠাইত দাৱাৰ মাকৰ মৃত্যু হোৱা ঘটনাত জড়িত হোৱা আবুৰ মনৰ পৰিৱৰ্তনৰ জড়িয়তে সমাজৰ অন্ধবিশ্বাসক পৰিৱৰ্তন কৰাৰ প্ৰচেষ্টা দেখিবলৈ পাওঁ— এনে এক পৰিস্থিতিত হঠাৎ মোৰ মনত এক নতুন চেতনা জাগ্ৰত হৈ উঠিল। মোৰ মনলৈ আহিল মই গাঁৱৰ এজন শিক্ষিত ডেকা এনে অৱস্থাত গাঁৱৰ অন্য মানুহৰদৰে পুৰণিকলীয়া অন্ধ বিশ্বাসত আতঙ্কগ্ৰস্ত হৈ থাকিলে নহ'ব, দুৰ্ঘটনাগ্ৰস্ত মানুহৰ উদ্ধাৰ কাৰ্যত মই নামি যাব লাগিব। আমাৰ গাড়ী দুৰ্ঘটনাগ্ৰস্ত হৈছে তাৰ বাবে নহয়, এনেকুৱা পৰিস্থিতিত আমাৰদৰে শিক্ষিত মানুহে আগভাগ লৈ কামত নালাগিলে আৰু কোনে কৰিব সেই কাৰণে (মি.,পৃ. ৫৭)। এনে চিন্তা প্ৰকৃততে ন-পুৰণিৰ মাজৰ দ্বন্দ্ব বুলিব পাৰি।

মৃত্যু সম্পৰ্কীয় লোক-বিশ্বাস আৰু লোকাচাৰ ঃ

চেৰদুকপেন সমাজত কোনো লোকৰ অপমৃত্যু হ'লে বহুখিনি বাধা-বিঘিনি মানি চলিব লাগে। তেনে লোকাচাৰৰ ভিতৰত অস্বাভাৱিক মৃত্যু সমাজৰ বাবে ত্ৰাসৰ কাৰণ বুলি ভাবে। সেয়েহে এনে দুৰ্ঘটনা ঘটা ঠাইলৈ মানুহ যাব নাপায় আৰু অস্বাভাৱিকভাৱে মৃত্যু হোৱা মৃতদেহো চাব নাপায় বুলি তেওঁলোকে বিশ্বাস কৰে। তেওঁলোকে অস্বাভাৱিকভাৱে মৃত্যু হোৱা লোকৰ মৃতদেহ ঘৰলৈ বা গাঁৱৰ ভিতৰলৈ সুমুৱাব নাপায় বুলি বিশ্বাস কৰে। এনেদৰে অঘটন হোৱা মৃত ব্যক্তিৰ লগত একেলগে থকা লোকসকলে পূজা-পাতল নকৰাকৈ আন মানুহৰ কাষ চাপিব নিদিয়ে। কাৰণ তেনে লোকৰ দেহা অশুচি হৈ থাকে বুলি বিশ্বাস কৰে। সেয়ে তেওঁলোকৰ মানুহে অঘটন হোৱা ঠাইলৈ নাযায়। উপন্যাসখনিত এই সম্পৰ্কে উল্লেখ পাওঁ—'গতিকে টোপগে মহাজনে মানুহ পঠিয়াই, কামত লগাই বাটৰ দুই মূৰে চোৰাতৰ পাত ৰাখি তাৰ ওপৰখন শিলেৰে জাপি ঠাইখন কৰ্দন দিলে। মানুহে চোৰাত পাতৰ ওপৰত জাপি থোৱা শিল দেখিলেই গম পাব সেইফালে যোৱাটো উচিত নহয় (মি.,পৃ.২৭)। সেয়ে গছ পৰি মৃত্যু হোৱা দাৱাৰ মাকৰ ক্ষেত্ৰতো একেই নিয়ম পালন কৰা হৈছে। এনেদৰে কোনো লোকৰ মৃত্যু হ'লে খিক্ চিজিৰ দ্বাৰা খিক্ চাবা পূজা কৰা নিয়ম প্ৰচলন আছে।

চেৰদুকপেন সমাজে পালন কৰা মৃত্যুৰ সৈতে জড়িত এটি পূজা হ'ল খিক্ চাবা পূজা। তেওঁলোকৰ সমাজত যেতিয়া আওমৰণে কোনো লোকৰ মৃত্যু হ'য়, তেতিয়া খিক্ চিজিৰ (পুৰোহিত)ৰ দ্বাৰা খিক্ চাবা পূজা দুৰ্ঘটনা স্থলীতে অনুষ্ঠিত কৰে। এই পূজা খিক্ চিজিসকলে অপদেৱতা কেন আঁতৰাবৰ বাবে কৰে। পূজাৰ বাবে স্থলীৰ ওচৰতে সাজি লোৱা ফানথিং হিং অৰ্থাৎ সকলোকে কেন অপদেৱতাৰ পৰা আত্মশুদ্ধি কৰিবলৈ বিশেষ কাঠ আৰু খেৰ দি নিৰ্মিত তোৰণত কুকুৰা মাৰি মাজত ওলোমাই ৰাখে আৰু সেই তোৰণৰ তলেৰে উপস্থিত থকা সকলোকে প্ৰদক্ষিণ কৰিবলৈ অনুমতি দি মূৰত খেৰৰ জুমুঠিৰে মন্ত্ৰ মাতি জাৰি দিয়ে। এনেদৰে পূজা কৰাৰ পিছতহে মৃতদেহ নি দূৰৈত পোতা হয়। যি ঠাইত ঘটনা সংঘটিত হয় সেই ঠাইৰ মানুহৰ ঘৰতো মন্ত্ৰ মাটি পৱিত্ৰ হোৱাৰ নিয়ম আছে। ঠিক একেদৰে যিখন গাঁৱৰ লোক এনেদৰে মৃত্যু হয় সেই গাঁৱলৈ সোমোৱা বাটটো ফানথিং

হিং নিমার্ণ কৰি গাঁৱৰ মানুহকো কেন্ অপদেৱতাৰ পৰা মুক্ত কৰিবৰ বাবে খিক্ চিজিসকলে এটা দিন মন্ত্র গাই ফানথিঙৰ ভিতৰ-বাহিৰ কৰি তিনিবাৰ প্রদক্ষিণ কৰা মানুহবিলাকক মূৰত খেৰৰ জুমুঠিৰে মাৰি মাৰি বিশুদ্ধকৰণ কৰে। এনেদৰে মৃত্যু হোৱা লোকৰ ক্রিয়া-কর্ম লামাৰ দ্বাৰাই সম্পন্ন কৰা হয়। চেৰদুকপেনসকলৰ মাজত প্রচলিত ৰাং পূজাৰ বিষয়ে ঔপন্যাসখনিত সুন্দৰ বৰ্ণনা পোৱা গৈছে। এই পূজাক বিশেষকৈ ধৰ্মীয় পূজা বুলিব পাৰি। ইয়াত বয়সস্থ লোকসকলেহে বেছিকৈ অংশ গ্রহণ কৰে। এক প্রকাৰৰ বৌদ্ধ ধৰ্মাৱলম্বী মন্পা চেৰদুকপেন জনজাতি ভক্ত দল বুলিব পাৰি। ৰাং পূজাত নামজ্বলা জাতিস্মৰ লামা ৰিমপোচে আহে ভক্তক আৰ্শীবাদ দিবলৈ। এই পূজাত যিসকল লোকৰ বয়স হৈছে বা ইহ সংসাৰৰ পৰা বিদায় লোৱাৰ সময় সমাগত হয়, তেনে লোকে জীৱনত পোৱা দুখ আৰু যন্ত্রণাৰ পৰা পৰিত্রাণ পাবলৈ মৃত্যুৰ পাছত স্বৰ্গৰ বাট বিচাৰি উলিয়াবলৈ সমৰ্থ হোৱাকৈ আত্মাই শক্তি আৰু বিদ্য দৃষ্টি লাভ কৰিবলৈ ডাঙৰ ডাঙৰ লামা ৰিমপোচেসকলৰ চাৰাং লয় (মি.,পৃ.২২)। সেয়ে এই পূজালৈ যাওঁতে গা-পা ধুই চাফ চিকুন হৈ যোৱাটো নিয়ম। উপন্যাসখনিত দাৱাৰ বিধৱা মাকৰ ক্ষেত্রত এই নিয়ম পালন কৰাৰ প্রসঙ্গ উল্লেখ কৰিছে।

পৃথিৱীৰ সকলো মানৱ জাতিৰ মাজত স্বকীয়ৰূপত মৃত্যু সম্পৰ্কীয় লোকাচাৰ পালনৰ নিয়ম আছে। অৰুণাচল প্রদেশৰ চেৰদুকপেন সমাজত মৃত্যুৰ সৈতে জড়িত কিছু স্বকীয় লোকাচাৰ মানি চলে। মিছিং উপন্যাসখনিত তেওঁলোকৰ মৃতকৰ অন্ত্যেষ্টিক্রিয়া কৰা ৰীতিৰ সম্পৰ্কে এনেদৰে বৰ্ণনা পোৱা গৈছে—সেই কাৰণেই মই তোমাৰ মাহীমাৰ অন্ত্যেষ্টিক্রিয়া স্বাভাৱিকভাৱে মৃত্যু হোৱা মানুহৰদৰে কৰিছোঁ। তেওঁৰ মৃতদেহ আনি পৱিত্র ঘৰত সুমুৱাইছো, তাইৰ প্রতি যিমান সন্মান প্রদর্শন কৰিব লাগে কৰিছোঁ, তেওঁক ঘৰৰ পৰা কাঠৰ ঘোঁৰাত উঠাই বিদায় দিছোঁ, শ্রাদ্ধ আমাৰ বাৰদোচোঁ (মৃত আত্মাক বিদায় দিয়া ধৰ্মপুথি) মতে কৰিছোঁ, যাতে আত্মাই সঠিক পথ পায়। অকল তাইৰেই নে, এই শ্রাদ্ধত মই দুৰ্ঘটনাত পতিত সকলো মানুহৰ আত্মাৰ সদ্গতিৰ বাবে বৰদোচোঁ পঢ়াইছোঁ, তোমাৰ মাহীমাৰ স'তে চকু মুদা কণমানি মোৰ ছোৱালীজনীৰ পৰা আৰম্ভ কৰি সকলোৰে বাবে। উনপঞ্চাছদিনীয়া শ্রাদ্ধ শেষ হ'ব দিয়ক, মই গোটেই অঞ্চলৰ মতা মানুহবিলাকক মাতি আনি বুজাম, দুৰ্ঘটনাত পতিত মানুহবিলাকৰ আত্মাৰ সদ্গতিৰ কাৰণে আমি একে ধৰণৰ পূজা-পাতল কৰিব লাগিব। একে শ্রদ্ধা, একে সন্মানেৰে সিহঁতৰ মৃতদেহ বিলাকৰো সৎকাৰ কৰিব লাগিব (মি.,পৃ.৩২)। উপন্যাসখনিত থকা এনে বৰ্ণনাই সেই সময়ৰ চেৰদুকপেন সমাজৰ পুৰণিকলীয়া ৰীতি-নীতি, সমাজৰ বান্ধোন, আৰু যিকোনো সিদ্ধান্ত গ্রহণৰ প্রসংগত পুৰুষৰ সক্রিয় ভূমিকাৰ কথাই স্পষ্ট কৰে।

চেৰদুকপেন সমাজত কোনো লোকৰ মৃত্যু হ'লে শ্রাদ্ধ-সকাম আদি গাঁৱৰ গোম্পাত ধমুধামেৰে অনুষ্ঠিত কৰা নিয়ম আছে। কিন্তু কেও কিছু নোহোৱা মানুহক ৰাইজে পুতি থৈ কাম শেষ কৰে। চেৰদুকপেন সকলৰ মাজত কোনো লোকৰ দুৰ্ঘটনাত পতিত হৈ যেনে— গাঁৱৰপৰা দূৰত হাবিত চিকাৰলৈ যাওঁতে বা নদীত মাছ মাৰিবলৈ যাওঁতে মৃত্যু হ'লে, তেনে লোকৰ মৃতদেহ ঘৰলৈ অনাৰ নিয়ম নাই। কিন্তু ইয়াৰ বিপৰীতে তেনে লোকক আত্মীয়ই ঘৰলৈ আনিলে গাঁৱৰ বাবেই অমঙ্গল বুলি বিবেচনা কৰে। উপন্যাসখনিত টোপগে মহাজনে গাঁৱৰ পুৰণিকলীয়া নিয়ম ভঙ্গ কৰি দ্বিতীয় পত্নীৰ মৃতদেহ ঘৰলৈ আনিছিল। ইয়াৰ পৰিনামো তেওঁলোকে ভোগ কৰিব লগা হৈছিল। ঔপন্যাসিকৰ পিতৃ টোপগে মহাজনে একে পিতৃ-মাতৃৰ ঔৰসজাত দুই ভাই-ভনীক বিয়া পাতিছিল। সেই অনুসৰি ঔপন্যাসিকৰ মাহীমাকৰ অপমৃত্যুৰ পিছত মৃতদেহ ঘৰত সুমুৱাইছিল। তেওঁলোকে অপমৃত্যু হোৱা মৃত ব্যক্তি বহু বছৰলৈ নৰকত পচি থাকে বুলি বিশ্বাস কৰে। সেই আত্মাই এবাৰ আবুৰ ঘৰলৈ অহা গৌৰ খুড়ীৰ গাত লম্ভি লৈ আবুৰ মাকৰ লগত কাজিয়া কৰিছিল। তাৰ বৰ্ণনা উপন্যাসত এনেদৰে পোৱা গৈছে— 'চান তুমি আকৌ বলকিবলৈ লৈছা। বেচেৰী নিৰীহ গৌৰ খুড়ীৰ গাত লম্ভি তুমি আকৌ কিবা কিবি কৰি মোক কষ্ট দিবলৈ আহিছা? মাৰ কথাৰ পৰা মই বুজি উঠিলোঁ গৌৰ খুড়ীৰ গাত মোৰ মাহীমাৰ প্রেতাত্মাই লম্ভিছে। মাৰ উত্তৰ শুনি গৌৰ খুড়ীৰ মুখেদি মাহীমায়ে কবলৈ ধৰিলে — 'কিয় নক'ম? মোক মৰিলে বুলি ভাবিছে নেকি?' 'অতো, তুমি কোন কাহানিবাই মৰিলা। ভিনদেউক মই কৈছিলোৱেই, তোমাৰ মৰা শ ঘৰলৈ আনিব নালাগে বুলি। অকল মই কিয়, সকলোৱে কৈছিল তেখেতক, তোমাৰ দুৰ্ঘটনাত পতিত হৈ কেন লগা মৃতদেহটো পৱিত্র ঘৰত নোসোমাবলৈ কৈছিল (মি.,পৃ. ৮৭)। চেৰদুকপেন সমাজত শ সৎকাৰ কৰা নিয়মৰ স্বকীয়তা আছে। কোনো লোকৰ মৃত্যু হ'লে ওচৰ-পাঁজৰ, মিটিৰ-কুটুম্ব মানুহবোৰ ঘৰলৈ আহি শ্রদ্ধাঞ্জলি দিয়াৰ নিয়ম আছে। দুদিনলৈ শটো ঘৰৰ ভিতৰত

ৰাখি থৈ পিছত মৃতদেহ নদীৰ পাৰত খৰি দিয়াৰ প্ৰথা আছে। শিশু হ'লে পুতি থোৱাহে নিয়ম। তেওঁলোকৰ সমাজত তিনিদিনীয়া, পাঁচদিনীয়া, সাতদিনীয়া, চৈধ্যদিনীয়া, একৈশদিনীয়া আৰু ঊনপঞ্চাছদিনীয়া শ্ৰাদ্ধ কাৰ্য পালন কৰা প্ৰথা আছে। চেৰদুকপেনসকলে সাতদিনীয়াতে শ্ৰাদ্ধৰ আচল (মূল) কামবিলাক শেষ কৰে। উনচল্লিশ দিনীয়াত দহা কাৰ্যহে কৰে। অৱশ্যে এই ক্ষেত্ৰত স্বাভাৱিক মৃত্যু আৰু অস্বাভাৱিক মৃত্যুৰ সৈতে জড়িত কিছু লোকাচাৰ পালনত পাৰ্থক্য আছে।

মৃত্যু লোকাচাৰৰ দৰে কোনো শুভ কাৰ্যৰ বাবে যাত্ৰা কৰা বেলিকাও চেৰদুকপেনসকলে কিছু লোকাচাৰ পালন কৰে। তাৰ উদাহৰণ উপন্যাসত এনেদৰে পোৱা গৈছে— ছোঁলোপাম গাঁৱত গাড়ী ৰখোৱা হ'ল। তাতে গাড়ীত একেলগে যোৱা পুৰোহিত এজনে চুংখিত আৰু অন্যান্য দেৱ-দেৱীক পূজা দিলে। যাত্ৰা যেন মঙ্গলময় হয় তাৰ বাবে ভূত-প্ৰেত, ডাকিনী-যখিনী সকলোকে প্ৰাৰ্থনা জনাই সৰু সৰু গছৰ ডালত বগা সৰু সৰু পতাকা লগাই অৰ্পন কৰিলে। পূজা শেষ কৰি পুনৰ যাত্ৰা আৰম্ভ হ'ল (মি.,পৃ. ২৪)। এনেবোৰ বৰ্ণনাই চেৰদুকপেনসকলৰ আধ্যাত্মিক দিশৰ আভাস দিয়ে।

উপন্যাসখনিত সাজপাৰৰ বৰ্ণনা ঃ

সাজ-পাৰ হ'ল এটা জাতিৰ জাতীয় পৰিচয়। সাজ-পাৰে জাতীয় অস্তিত্ব ধৰি ৰাখে বুলিলেও বঢ়াই কেৱা নহ'ব। ঠংচিদেৱে 'মিছিং' উপন্যাসখনিত চেৰদুকপেনসকলৰ সাজ-পাৰৰ বৰ্ণনা এনেদৰে দিছে —'তাইৰ গাত থকা ৰঙা চোলাটোও নতুন আৰু ৰঙ-চঙীয়া ফুলবছা আছিল।' 'তাই তাৰমানে লিদিক আৰান পিন্ধি আছিল? (মি.,পৃ.১৮)। উপন্যাসখনিৰ আন এঠাইত ৰাং পূজাৰ বাবে যোৱা বুঢ়া-বুঢ়ীসকলে পৰিধান কৰা সাজপাৰৰ প্ৰসঙ্গত চেৰদুকপেন পুৰুষ-মহিলাই পিন্ধা সাজপাৰৰ উল্লেখ এনেদৰে পোৱা গৈছে— তাৰ পাছত যাবৰ দিনা ডাঙৰ-ডাঙৰ উৎসৱ অনুষ্ঠান হ'লে পিন্ধিবৰ বাবে সাঁচি ৰখা নিজৰ নিজৰ একমাত্ৰ ভাল কাপোৰৰ সাজযোৰ পিন্ধি ওলাল। মতা মানুহবিলাকৰ গাত এড়ী চাদৰৰ চাপে, কঁকালত ফুলাম এড়ী কাপোৰৰ মখাক টঙালি, মূৰত পোজো টুপী। মহিলাবিলাকৰ দেহত এড়ী কাপোৰেৰে চিলাই লোৱা দীঘল হলৌ চিংকা, চিংকাৰ কঁকালৰ তলত জাপ কৰি ৰখা জাপ ধৰিবলৈ বন্ধা ফুলাম টঙালি মখাক আৰু ওপৰত হাত দীঘল ফুলাম এড়ী চাদৰৰ চোলা লিদিক আৰান (মি.,পৃ.২২-২৩)। মহিলাই পিন্ধা পোছাকৰ বৰ্ণনা এনেদৰে পোৱা যায়— তাইৰ গাত নতুন সাজ-পাৰ, ৰঙৰ ৰঙা লিদিক-আৰান, তাৰ ভিতৰত এড়ী কাপোৰৰ চিংকু (মি.পৃ.২৬)।

উপন্যাসখনিত উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ বিভিন্ন ঠাইৰ নাম আৰু যাতায়ত ব্যৱস্থাৰ আভাস ঃ

উপন্যাসখনিত উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ বিভিন্ন ঠাইৰ নাম, যাতায়ত ব্যৱস্থাৰ উপৰিও ঠায়ে ঠায়ে যুদ্ধৰ প্ৰসঙ্গ উল্লেখ কৰিছে। অসম তথা অৰুণাচল প্ৰদেশৰ বিভিন্ন ঠাইৰ নাম উল্লেখে উপন্যাসখনিৰ পাঠ গ্ৰহণত সুকীয়া ৰস প্ৰদান কৰিছে। উল্লেখ থকা ঠাইবোৰ হ'ল— তেজপুৰ, ৰঙাপাৰ, গুৱাহাটীৰ কামাখ্যা মন্দিৰ, শুক্লেশ্বৰ মন্দিৰ, বশিষ্ঠ আশ্ৰম, সন্ধ্যা-ললিতা-কান্তা জুৰি, গণেশ মন্দিৰ, উত্তৰ গুৱাহাটীত দৌল-গোবিন্দ আৰু হাজোৰ হয়গ্ৰীৱ মন্দিৰ দৰ্শনৰ প্ৰসঙ্গই বাস্তৱত পটভূমিক তুলি ধৰিছে। পল্টন বজাৰ আদি ঠাইৰ উল্লেখে পাঠকৰ মনত চিনাকী পৰিৱেশৰ প্ৰতি আকৰ্ষণ বৃদ্ধি কৰাত সহায় কৰিছে। আনফালে অৰুণাচলৰ বিভিন্ন স্থানৰ নাম উল্লেখ থকাৰ লগতে উপন্যাসত সেই সময়ৰ যাতায়ত ব্যৱস্থাৰ বৰ্ণনা এনেদৰে দিছে—-পাছিঘাটৰপৰা মুৰ্কংচেলেকলৈ যোৱা বাছ দুখন ইতিমধ্যে ৰাওনা হৈ গ'ল। দুই এখন প্ৰাইভেট ট্ৰাক যি চলে সেই বিলাকৰ কোনো টাইমিং নাই। চাৰি বজাত মুৰ্কংচেলেকৰপৰা ৰাওনা হোৱা ট্ৰেইনখন আজি ধৰিব পৰাতো ভাবিব নোৱাৰা কথা।... মোৰ তেতিয়াৰ পৰম বন্ধু দৰ গম্বু আৰু মই সেইদিনাই পাছিঘাট এৰি আহি মুৰ্কংচেলেকত পেচেঞ্জাৰ ৰেলখন ধৰিছিলোঁ। ৰাতিটো ট্ৰেইনত ভ্ৰমণ কৰি ৰাতিপুৱা ৰঙাপাৰা জংচনত নামি তাৰপৰা বাছত উঠি গধূলি সময়ত ৰূপাত নামিলোঁ (মি.,পৃ. ৬৫)। উপন্যাসত সেই সময়ৰ অৰুণাচল প্ৰদেশৰ দুৰ্গম ৰাস্তা-ঘাট, বাট-পথৰ আভাস, গাড়ী-মটৰ অসুবিধা আদি বিষয়বোৰ নিখুঁটকৈ তুলি ধৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। উপন্যাসৰ আন এঠাইত সেই সময়ৰ যাতায়াত ব্যৱস্থাৰ আভাস এনেদৰে দিছে— সেই সময়ত ৰূপা-কলাকটাং ৰাস্তাটো কেঁচা আছিল। বৰ বেয়া ৰাস্তা আছিল। বিশেষকৈ ৰূপাৰপৰা ছোঁলোপামলৈ মাটি আছিল ৰঙা। ছিলঙৰ ৰাস্তাৰ মাটিৰ দৰে। অলপ বৰষুণ দিলেই মাটিবিলাক একেবাৰে পিচল হৈ পৰিছিল আৰু গাড়ী চলাবলৈ বৰ মুস্কিল হৈ পৰিছিল (মি.,পৃ.১৭)। উপন্যাসৰ ঠায়ে-ঠায়ে ১৯৬২ চনৰ চীনা-ভাৰতৰ যুদ্ধ, ১৯৬৫ চনত ভাৰত পাকিস্তানৰ যুদ্ধ, দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধ, ১৯৭১ চনত বাংলাদেশত পাকিস্তানৰ সতে হোৱা যুদ্ধ প্ৰসঙ্গ উপস্থাপন কৰিছে। উপন্যাসখনিত গুৱাহটী বিশ্ববিদ্যালয়ৰ আৰ চি চি আৰু অসম টাইপ হোষ্টেল, নৃতত্ত্ব বিভাগ, ৰসায়ন বিজ্ঞান বিভাগ, পদাৰ্থ বিজ্ঞান বিভাগ,

জালুকবাৰীৰ কৃষ্ণচূড়া গছ আদিৰ উল্লেখে বাস্তৱতাৰ ছাঁয়া ছবি সৃষ্টি কৰিছে।

উপন্যাসখনিত ভাষিক উপাদান ঃ

'মিছিং' উপন্যাসখনিৰ আৰম্ভণিৰপৰা শেষলৈকে চালে দেখা যায় যে, উপন্যাসখনিত তেনেই সহজ-সৰল ভাষা ব্যৱহাৰ কৰিছে যদিও বিভিন্ন ঠাইৰ নাম, মানুহৰ নাম, অঞ্চল, পূজা-পাৰ্বন, নদ-নদী আদিবোৰ স্বকীয় ভাষাত মান্যতা দিছে। তেনে ভাষাৰে পুষ্ট ঠাইৰ নাম হ'ল— তানজিন, মোৰচিং, ৰূপা, ছোঁলোপাম, জোময়ামবাও, চেৰগাঁও, দোমখা-মোৰচিং, মান্দলাফুদুং মুক্তো, জীগাঁও, লিংবাকতা, জাংগু পাহাৰ, থোংৰে গাঁও, চেৰ গাঁও, লাৰজা ৰাংপু, চুংখিত থিক খোং (এৰা ঘৰৰ চুবুৰী) আদি অৰুণাচল প্ৰদেশৰ বিবিন্ন গাঁৱৰ নামে সেই অঞ্চলৰ অস্তিত্ব বহন কৰিছে। ঠিক একেদৰে উপন্যাসখনিত বিভিন্ন পূজা-পাতল, দেব-দেৱতাৰ নাম স্বকীয় ভাষাত ব্যৱহাৰ কৰিছে—ৰাং পূজা, চাৰাং (আৰ্শীবাদ, মি.,পৃ.২২), চুংখতি দেৱতা, খিক্ চাবা পূজা, কেন (অমঙ্গলীয়া শক্তি যাৰ বাবে দুৰ্ঘটনা বা অস্বাভাৱিক মৃত্যু হয়), ফান থিং হিং, দোঁ-ইচিং, গোম্পা (ৰাজহুৱা প্ৰাৰ্থনা গৃহ) আদি শব্দবোৰে জাতিৰ সাংস্কৃতিক স্বাক্ষৰ বহন কৰি আছে। উপন্যাসখনিত বাটপথৰ নাম— ৰূপা কলাকটাং ৰাস্তা, মিছিং নদী; মানুহৰ নাম; যেনে—চাংলেকি (মি.,পৃ.২০), দাৰা, চাৰাং, দৰজে (মি.,পৃ.২৪), ৰিমপোচে, খিক্চিজি, উচু-লা-বোখান (ভৰি নোহোৱা ককা), দোজে, চাইলা, কাচিংপা, কাৰমা লামা, চাং দৰজে মেগেজি, পেম্বা, কাৰমা, দৰ গম্বুৰ, মাইপাক সিং, ইবোমচা সিং, চান্দু, টোপগে ঠংদোক, আবু ঠংদোক আদি শব্দবোৰে জনগোষ্ঠীয় ভাষিক সচেতনতাক তুলি ধৰিছে। ঠিক তেনেদৰে নদীৰ নাম— ফিৰোং জলপ্ৰপাত (মি.পৃ. ১৪); গীত-মাত যেনে— প্ৰেমৰ গীত 'আয় নোং য়ো য়ো (মি.,পৃ.২৩), বৰদোচোঁ পাঠ আদি; খাদ্যাভাস-আৰাক আদি শব্দৰ উপৰিও, ঝোঁ (ঘৰৰ ওপৰ মহলা), ঠং (চেৰদুকপেন সকলৰ উচ্চ সম্প্ৰদায়। ছাওঁসকলে উচ্চ সম্প্ৰদায়ক কৰা সম্বোধন), মি (ঠংৰ স্ত্ৰী লিঙ্গ), জি'ই জিকপা (গাত প্ৰেতাত্মা লম্ভা), ছাওঁ (চেৰদুকপেন সকলৰ নিম্ন সম্প্ৰদায়), চান (কনিষ্ঠজনী), কৰ্দন (আৰদ্ধকৰা) আদি চেৰদুকপেন ভাষাৰ বিভিন্ন শব্দ ব্যৱহাৰ কৰিছে। থলুৱা ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰৰ লগতে —Customer, ডিষ্টাৰ্ব, হেণ্ডচেক, লড', হোটেল , Deserted, ইন্টাৰেষ্টিং, ওৰেঞ্জ, লান্স, মেনু, হোটেল বয়, ইন্টাৰকম , ৰেষ্টুৰেন্টৰ, অৰ্ডাৰ, ডুপ্লিকেট, ষ্টাইল, পি.ডব্লিউ.ডি, চাৰ্ভিচ, আংকল, ৰকৰ্চ, পাৰ্কিং প্লেচ , বিল্ডিঙ আদি ইংৰাজী শব্দৰ প্ৰয়োগ মন কৰিবলগীয়া। ভিন্ন ভাষাৰ শব্দ সম্ভাৰৰ প্ৰয়োগে ঔপন্যাসিকৰ ভাষিক দক্ষতাৰ পৰিচয় বহন কৰিছে। উপন্যাসখনিৰ ভাষাতাত্বিক দিশৰ আলোচনা কৰাৰ স্থল আছে।

সামৰণি ঃ

য়েছে দৰজে ঠংচিৰ ৰচিত জনগোষ্ঠীয় জীৱনভিত্তিক এখনি সাৰ্থক আৰু জনপ্ৰিয় উপন্যাস হ'ল 'মিছিং'। উপন্যাসখনিত চেৰদুকপেন সমাজখনত পূৰ্বৰেপৰা প্ৰচলিত হৈ অহা ভূত-প্ৰেত সম্পৰ্কীয় লোক-বিশ্বাস আৰু মৃত্যুৰ সৈতে জড়িত লোকাচাৰক কেন্দ্ৰ কৰি বিষয়বস্তু উপস্থাপন কৰিছে যদিও উপন্যাসখনিত চেৰদুকপেন জনগোষ্ঠীৰ লোকজীৱনটোৰেই প্ৰতিফলিত হৈছে বুলিব পাৰি। উপন্যাসখনিৰ আৰম্ভণিৰ পৰা শেষলৈকে চেৰদুকপেনসকলৰ সামাজিক বান্ধোন, পূজা-পাতল, উৎসৱ-পাৰ্বন, যাত্ৰাৰ শুভাশুভ, মৃত্যুৰ সৈতে জড়িত লোকাচাৰ, খাদ্যাভাস, সাজপাৰ, কৃষি, ভূত-প্ৰেতকেন্দ্ৰিক লোকাচাৰ, মিছিং সম্পৰ্কীয় লোক-বিশ্বাস, অন্ধবিশ্বাস, জনশ্ৰুতি, যাতায়ত ব্যৱস্থা, শিক্ষা, ন-পুৰণিৰ সংঘাত আদি বিভিন্ন বিষয় উপস্থাপন কৰিছে।সেইফালৰপৰা উপন্যাসখনিক সামাজিক-সাংস্কৃতিক সমলেৰে পৰিপূৰ্ণ এখন জনজাতীয় উপন্যাস বুলিব পাৰি। কাৰণ উপন্যাসখনিত জনগোষ্ঠীয় প্ৰায়বোৰ সমলেই বিচাৰি পোৱা যায়। কিন্তু গতিশীল সময়ৰ সৈতে সংস্কৃতিৰ পৰিৱৰ্তন হয়। গতিকে পৃথিৱীৰ আন আন সভ্যতা-সংস্কৃতিৰদৰে চেৰদুকপেনসকলৰ মাজত থকা সামাজিক পৰম্পৰা, লোকৰীতি-নীতিলৈ পৰিৱৰ্তন আহিছে বা ঠায়ে ঠায়ে নতুন সংযোজনে পুৰণিকে নতুনৰূপত উপস্থাপন কৰিছে। কিন্তু চেৰদুকপেনসকলৰ বাবে সুখৰ কথা যে, তেওঁলোকৰ পুৰণি সাংস্কৃতিক পৰম্পৰাবোৰ কালৰ গতিত হেৰাই গ'লেও বহু যুগৰ পাছতো মিছিং উপন্যাসখনিয়ে চেৰদুকপেনসকলৰ মাজত প্ৰচলিত লোক-কথা, লোকজীৱনক প্ৰতিনিধিত্ব কৰিব। চৰিত্ৰৰ মনোজগতত আত্ম সমালোচনা সিং খৰ্ক্সইভাৰৰ চৰিত্ৰটিত সামান্যভাৱে দেখুৱাইছে। আনফালে প্ৰথম পুৰুষত কৰা বৰ্ণনাশৈলী আৰু কথোপকথন ৰীতিৰ সহজ-সৰল ভাষাই উপন্যাসখনিৰ কাহিনীক সকলো পাঠকৰ ওচৰ চপাই নিয়াত সহায়ক হৈছে। উপন্যাসখনিত প্ৰয়োগ হোৱা অসমীয়া, ইংৰাজী আৰু চেৰদুকপেন ভাষালৈ লক্ষ্য কৰিলে উপন্যাসখনিক ভাষাতাত্বিক দিশৰ পৰাও আলোচনা কৰাৰ স্থল আছে। কাৰণ যুগ পৰিৱৰ্তনৰ লগে লগে চহকী স্বয়ংসত্ৰীয়

জনগোষ্ঠীয় লোক-জীৱনৰ সমলসমূহ হেৰাই যাবলৈ ধৰিছে। সেয়েহে সময় থাকোঁতেই এনেবোৰ লোক-সাংস্কৃতিক বৈচিত্ৰ্যৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা প্ৰয়োজন আছে। উপন্যাসখনিৰ জড়িয়তে চেৰদুকপেন সমাজত পালিত মৃত্যুৰ সৈতে জড়িত সামাজিক লোকাচাৰৰ লগতে তেওঁলোকৰ খাদ্যাভাস, সাজপাৰ, সামাজিক বান্ধোন আদি বিভিন্ন দিশৰ বিষয়ে অৱগত হ'ব পাৰি। বিশেষকৈ —সেই সময়ত ফিৰোং জলপ্ৰপাতৰ কাষৰ হাবি বিলাক জুম খেতি কৰিবলৈ কিছুমান মানুহে কাটি মুকলি কৰি আছিল (মি., পৃ.১৯)ৰদৰে বৰ্ণনাই চেৰদুকপেনসকলৰ কৃষিকৰ্মৰ আভাস স্পষ্টকৈ দাঙি ধৰিছে। উপন্যাসখনিৰ কোনো কোনো অংশত চন, তাৰিখ আদি উল্লেখেৰে বাস্তৱতাৰ ৰহন সানিছে। উপন্যাসখনিত অৰুণাচলৰ ৰূপাৰ বিভিন্ন বাস্তৱ পৰিৱেশৰ লগতে সৈন্য বাহিনীত চলা ষড়যন্ত্ৰৰ এখন অপ্ৰিয় জীৱন্ত ছবি তুলি ধৰিছে। আশা কৰিব পাৰি অনাগত দিনত মিছিং উপন্যাসখনিয়ে চেৰদুকপেনসকলৰ লোক-জীৱনৰ অলিখিত কাহিনী ভৱিষ্যৎত প্ৰজন্মলৈ কঢ়িয়াই নিব। ❑

সংক্ষিপ্তৰূপ ঃ

পৃ. - পৃষ্ঠা

মি. - মিছিং

অন্ত্যটীকা ঃ

১। নেওগ, মহেশ্বৰঃ শ্বেৰডুকপেন্ প্ৰবন্ধ, প্ৰমোদচন্দ্ৰ ভট্টাচাৰ্য্য সম্পাদিত অসমৰ জনজাতি, তৃতীয় সংস্কৰণ, অকোবৰ, ২০০৮, পৃ. ২৩৯

২। বৰপাত্ৰ গোহাঁই, চন্দ্ৰঃ অৰুণাচল প্ৰদেশৰ জনজাতিসকল, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১৩, পৃ.১৪

৩। নেওগ, মহেশ্বৰঃ উপৰোক্ত, পৃ.২৪০

৪। গগৈ, লোকেশ্বৰঃ অসমৰ লোক-সংস্কৃতি, ক্ৰান্তিকাল প্ৰকাশন, ২০১৩, পৃ. ১৫৫-১৫৬

৫। গগৈ, লোকেশ্বৰঃ সদ্যোক্ত, পৃ. ৮৮

মুখ্য সমলঃ

দৰজে ঠংচি, য়েছেঃ মিছিং, বনলতা, প্ৰথম প্ৰকাশ, নবেম্বৰ, ২০০৮

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জীঃ

১। গগৈ, লোকেশ্বৰঃ অসমৰ লোক-সংস্কৃতি, ক্ৰান্তিকাল প্ৰকাশন, ২০১৩

২। নেওগ, মহেশ্বৰঃ শ্বেৰডুকপেন্ প্ৰবন্ধ, প্ৰমোদচন্দ্ৰ ভট্টাচাৰ্য্য সম্পাদিত অসমৰ জনজাতি, তৃতীয় সংস্কৰণ অকটোবৰ, ২০০৮

৩। বৰপাত্ৰ গোহাঁই, চন্দ্ৰঃ অৰুণাচল প্ৰদেশৰ জনজাতিসকল, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১৩

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্য

ড° খামছেং বৰগোহাঁই

নিজ লাহোৱাল গাওঁ
ডাক ঃ লাহোৱাল, পিন ঃ ৭৮৬০১০
জিলা ঃ ডিব্ৰুগড় (অসম)
৯৪৩৫৫৭৪৫২০
khamseng42@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

শিশু সাহিত্য শিশুক উদ্দেশ্যি ৰচনা কৰা হয়। শিশুৰ মন কোমল, আৱেগিক, কল্পনাপ্ৰৱণ, অনুসন্ধিৎসু। শিশুক কাল্পনিক বা অলৌকিক জগতৰ মনোৰম কাহিনীয়ে আনন্দ দিয়ে। শিশু সাহিত্যই শিশুৰ মনত আনন্দ দিয়াৰ লগে লগে শিশুৰ বুদ্ধি-বৃত্তি বিকাশৰ প্ৰতিও গুৰুত্ব দিয়া পৰিলক্ষিত হয়। কাৰণ শিশুৰ জ্ঞানৰ পৰিসৰ বৃদ্ধিৰ কথাটোও শিশু সাহিত্যৰ সৈতে জড়িত হৈ থাকে। গতিকে, শিশুৰ বাবে সাহিত্য সৃষ্টি কৰোঁতে লেখকে বিষয় নিৰ্বাচন, উপস্থাপন কৌশল, ভাষা, নৈতিক শিক্ষা ইত্যাদি দিশবোৰৰ প্ৰতি সচেতন হোৱাটো প্ৰয়োজন। অসমীয়া শিশু সাহিত্যলৈ অৱদান যোগোৱা বিভিন্নজন লেখকৰ ভিতৰত লীলা গগৈ অন্যতম। তেওঁ ভালেসংখ্যক কবিতা, কাল্পনিক কাহিনী আৰু জীৱনীমূলক ৰচনাৰে অসমীয়া শিশু সাহিত্যক চহকী কৰিছে। তেওঁৰ ৰচনাসমূহ শিশু পাঠকক আকৰ্ষণ কৰিব পৰাকৈ মনোৰঞ্জনধৰ্মী, চিত্ৰধৰ্মী, কাহিনীধৰ্মী, ধ্বনিমাধুৰ্যৰে সমৃদ্ধ।

০.১ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

সাহিত্যৰ বিভিন্ন বিধাবোৰৰ ভিতৰত এবিধ অন্যতম বিধা হৈছে শিশু সাহিত্য। সাধাৰণতে শিশু সাহিত্য বুলিলে শিশুৰ সৰল, অনুসন্ধিৎসু, কল্পনাপ্ৰৱণ আৰু কৌতুহলী মনে স্পৰ্শ কৰিব পৰাকৈ শিশুক আকৰ্ষিত কৰা উপাদানসমূহেৰে শিশুৰ জ্ঞানৰ পৰিসৰ বিস্তৃত আৰু ৰস প্ৰদান কৰিব পৰাকৈ ৰচনা কৰা সাহিত্যই শিশু সাহিত্য। অসমীয়া শিশু সাহিত্যৰ ইতিহাসটোলৈ মন কৰিলে দেখা যায় যে, মৌখিক যুগৰ পৰাই সাধুকথা, নিচুকণি গীত, ওমলা গীত ইত্যাদিৰ জৰিয়তে অসমীয়া শিশু সাহিত্যৰ প্ৰচলন হৈ আহিছে। তাৰপিছত বৈষ্ণৱ যুগতো বিভিন্ন ৰচনাৰ মাজত শিশু সাহিত্যৰ লক্ষণ দেখা যায়। যেনে - মাধৱদেৱৰ ঝুমুৰাসমূহ, শংকৰদেৱৰ কীৰ্তনৰ 'শিশুলীলা', ৰাম সৰস্বতীৰ 'ভীম চৰিত', শ্ৰীধৰ কন্দলিৰ 'কাণখোৱা' ইত্যাদিত শিশু মনস্তত্ত্বৰ প্ৰতিফলন ঘটিছে। আধুনিক যুগলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায়, 'অৰুণোদই' কাকতো বাইবেলৰ বিভিন্ন কাহিনী, সাধুকথা ইত্যাদি ভালেমান শিশুকেন্দ্ৰিক ৰচনা প্ৰকাশ পাইছিল। অৰুণোদইৰ পাছৰ কালছোৱাত অৰ্থাৎ জোনাকী যুগত লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা, পানীন্দ্ৰনাথ গগৈ, পদ্মনাথ গোহাঞিবৰুৱা, অতুলচন্দ্ৰ হাজৰিকা, আনন্দচন্দ্ৰ আগৰৱালা আদি কেইজনমান সাহিত্যিকে শিশু সাহিত্য ৰচনাত গুৰুত্ব দিয়ে। এই সাহিত্যিকসকলে ৰামায়ণ-মহাভাৰতকে ধৰি বিভিন্ন পুৰাণৰ আখ্যান, সাধুকথা, দেশী-বিদেশী বিবিধ কাহিনীৰ অনুবাদ, কবিতা আদি শিশু উপযোগীকৈ ৰচনা কৰিছিল। ইয়াৰ লগে লগে শিশু সাহিত্যৰ

এটি অন্যতম প্ৰকাৰ হিচাপে অসমীয়া সাহিত্যত গুৰুত্ব লাভ কৰে।

লীলা গগৈয়ে অসমীয়া ভাষা-সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ ক্ষেত্ৰখনত বিশেষ বৰঙণি আগবঢ়ায়। তেওঁ মুখ্যতঃ এজন সাহিত্যিক, বুৰঞ্জীবিদ আৰু সংস্কৃতিৰ সাধক। লীলা গগৈয়ে উপন্যাস, গীতি-কবিতা, হাস্যৰসাত্মক ৰচনা, শিশু সাহিত্য ইত্যাদি বিবিধ ৰচনাৰে অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁৰাল পুষ্ট কৰি থৈ গৈছে।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য আৰু গুৰুত্ব ঃ

শিশু সমাজৰ ভৱিষ্যত। শিশুৰ মানসিক তথা বৌদ্ধিক বিকাশৰ ক্ষেত্ৰত শিশু সাহিত্যৰ ভূমিকা লক্ষণীয়। এই দিশলৈ লক্ষ্য ৰাখি লীলা গগৈৰ শিশু উপযোগী ৰচনাসমূহ শিশু সাহিত্য হিচাপে কিমান ফলপ্ৰসূ আৰু শিশু সাহিত্যৰ লক্ষণসমূহ তেওঁৰ ৰচনাত কেনেদৰে ফুটি উঠিছে সেই সম্পৰ্কে আলোচনা দাঙি ধৰাটোৱেই এই অধ্যয়নৰ মুখ্য উদ্দেশ্য।

বৰ্তমান সময়ত শিশু সাহিত্যৰ জনপ্ৰিয়তা বৃদ্ধি পাইছে যদিও শিশুক মনোৰঞ্জন দিয়াৰ লগতে শিশুৰ শাৰীৰিক, মানসিক তথা বৌদ্ধিক বিকাশ কৰা সফল শিশু সাহিত্যৰ ৰচনা সততে লক্ষ্য কৰা নাযায়। এনে ক্ষেত্ৰত অসমীয়া শিশু সাহিত্যক চহকী কৰা লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যৰ বিভিন্ন দিশসমূহ বিচাৰ কৰাৰ হেতু বিষয়টি অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব উপলব্ধি কৰা হৈছে।

০.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি আৰু পৰিসৰ ঃ

"লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্য"—শীৰ্ষক বিষয়টো অধ্যয়নৰ বাবে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হৈছে। অধ্যয়নৰ পৰিসৰত লীলা গগৈৰ ৰচিত *খঁৰা শিয়ালৰ বিয়া, অনুপম কোঁৱৰৰ সাধু, পোনাকণৰ সপোন, সোণতৰা* আৰু *ৰংমনৰ কথা* শীৰ্ষক গ্ৰন্থকেইখনক সামৰি অধ্যয়নটি আগবঢ়াই নিয়া হৈছে। অধ্যয়নটিত লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যত প্ৰতিফলিত শিশু সাহিত্যৰ বিভিন্ন দিশসমূহৰ বিশ্লেষণ দাঙি ধৰা হৈছে।

১.০ লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্য ঃ

লীলা গগৈয়ে শিশু উপযোগী মুঠ সাতখন গ্ৰন্থ ৰচনা কৰে। তেওঁৰ ৰচনাসমূহক তিনিটা ভাগত ভাগ কৰিব পাৰি। সেইকেইটা হৈছে—

- কবিতা ঃ *খঁৰা শিয়ালৰ বিয়া* (১৯৫৪)
- কাল্পনিক কাহিনী ঃ *পোনাকণৰ সপোন* (১৯৫৫), *সোণতৰা, ৰংমনৰ কথা* (১৯৬০), আৰু *অনুপম কোঁৱৰৰ সাধু* (১৯৬৯)
- জীৱনীমূলক ৰচনা ঃ *জয়মতী আৰু মূলা গাভৰু, ল'ৰাৰ লাচিত বৰফুকন*

উক্ত শিশু গ্ৰন্থকেইখনৰ উপৰিও লীলা গগৈৰ দ্বাৰা ৰচিত 'জোনবাই এ তৰা এটি দিয়া' (১৯৫৭) শীৰ্ষক আন এখন কবিতা পুথিৰ নাম উল্লেখ পোৱা যায়।[1] লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যসমূহত মনোৰঞ্জনৰ লগতে শিশুৰ মানসিক তথা বৌদ্ধিক দিশটোতো গুৰুত্ব দিয়া দেখা যায়। লীলা গগৈৰ দ্বাৰা ৰচিত কাল্পনিক কাহিনীসমূহত গীত-মাত, খেল-ধেমালিৰ জৰিয়তে শিশুৰ সহজাত প্ৰবৃত্তিসমূহৰ একোখন বাস্তৱ ছবি প্ৰতিফলন ঘটিছে। সেইদৰে কবিতাবোৰৰ খুহুটীয়া উপস্থাপনে আৰু ছন্দৰ সুপ্ৰয়োগে তথা ধ্বনিমাধুৰ্যতাই শিশুৰ বাবে কবিতাবোৰ আনন্দদায়ক হোৱাত সহায় কৰিছে। শিশুৰ শৈক্ষিক দিশটোৰ ক্ষেত্ৰত জীৱনীমূলক গ্ৰন্থ দুখনৰ ভূমিকা মন কৰিবলগীয়া। এই গ্ৰন্থ দুখনত কেইবাগৰাকী ইতিহাস প্ৰসিদ্ধ ব্যক্তি (জয়মতী, মূলাগাভৰু, লাচিত বৰফুকন)ৰ কাহিনী শিশু উপযোগীকৈ ৰচনা কৰিছে। গ্ৰন্থ দুখনত সেই ব্যক্তিসকলৰ জীৱন সম্পৰ্কীয় কথাবোৰৰ লগতে ইতিহাস প্ৰসিদ্ধ বহুতো ঘটনা (মোগলৰ অসম আক্ৰমণ, শৰাইঘাটৰ যুদ্ধ ইত্যাদি)ৰ লগত শিশুক পৰিচয় হোৱাৰ সুযোগ দিছে। ইয়াৰ লগে লগে লেখকে শিশুৰ মনত স্বদেশ প্ৰীতিৰ ভাৱ জাগ্ৰত কৰাৰ প্ৰয়াসো কৰিছে।

১.১ লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যত প্ৰতিফলিত শিশু সাহিত্যৰ বিশেষত্ব ঃ

যিহেতু শিশু সাহিত্য ৰচনা কৰা হয় শিশুক উদ্দেশ্য কৰি, সেয়ে শিশুৰ বাবে লিখা ৰচনাসমূহ শিশু পাঠকৰ মন আকৰ্ষণ কৰিব পৰাকৈ সহজ-সৰল ৰূপত উপস্থাপন কৰাটো প্ৰয়োজনীয়। তদুপৰি শিশুৰ বৌদ্ধিক বিকাশৰ ক্ষেত্ৰতো লেখকে গুৰুত্ব দিব লাগে। গতিকে সাহিত্যৰ অন্যান্য বিধাবোৰৰ তুলনা শিশু সাহিত্য ৰচনা কৰোঁতে কিছুমান সূক্ষ্ম দিশৰ প্ৰতি সচেতন হ'বলগীয়া হয়। তলত লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যসমূহত প্ৰতিফলত শিশু সাহিত্যৰ বিভিন্ন লক্ষণসমূহৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে—

১.১.১ মনোৰঞ্জনধৰ্মী

শিশুক মনোৰঞ্জন দিয়াটো শিশু সাহিত্যৰ এক অন্যতম বৈশিষ্ট্য। মনোৰঞ্জনধৰ্মীতাইহে শিশুক সাহিত্যৰ প্ৰতি আগ্ৰহী কৰি তোলে। লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যসমূহ শিশুক মনোৰঞ্জন

দিব পৰাকৈ সুন্দৰ ৰূপত উপস্থাপন কৰা দেখা যায়। বিশেষকৈ কবিতাসমূহ আৰু কাল্পনিক কাহিনীবোৰৰ মাজে মাজে উল্লেখ কৰা গীত-মাতবোৰৰ ধ্বনিমাধুৰ্যই লীলা গগৈৰ সাহিত্যৰাজিক অতি ৰসাল কৰি তুলিছে। শিশু পাঠকে এই কবিতাবোৰ আওৰাই যে মনত আনন্দ লাভ কৰিব তাত সন্দেহ নাই।

মেঘদেৰতাই ঢোলটো বজাইছে
আটায়ে উৰুলি দিয়া;
ৰ'দো দিছে, বৰষুণো দিছে
খঁৰা শিয়ালৰ বিয়া। (খঁৰা শিয়ালৰ বিয়া, লীলা গগৈৰ ৰচনাৱলী, পৃ. নং- ৭৪১)

সেইদৰে, গল্পবোৰৰ শিশু চৰিত্ৰসমূহৰ মুখত দিয়া ওমলা গীতবোৰৰ জৰিয়তেও শিশু পাঠকক আনন্দ দিয়াৰ প্ৰয়াস কৰিছে।

"এইটো কাৰ দৌল?" - "ৰজাৰ"
"ভাঙি বলৈ দিয়ে নে নিদিয়ে" - "নিদিয়ে"
"কলীক মাতিমনে" - "নেমাতিবা"
"বগীক মাতিমনে" - "নেমাতিবা"
"কলা ঔচ্, বগী ঔচ্, ঘেকেচ্।"
(সোণতৰা, লীলা গগৈৰ ৰচনাৱলী, পৃ. নং- ৭৯৮)

গীত-মাতবোৰৰ উপৰিও গল্পবোৰত বৰ্ণিত আমোদজনক ঘটনাসমূহে শিশু পাঠকক সহজতেই আকৰ্ষণ কৰিব বুলি ক'ব পাৰি। গল্পসমূহত কণ কণ শিশু চৰিত্ৰবোৰৰ হাঁহি-ধেমালিৰ কথা, অনুপম কোঁৱৰক চিলনীয়ে উৰুৱাই নিয়াৰ ঘটানা, অনুপম কোঁৱৰ ডাঙৰ হৈ মাক-দেউতাকক বিচাৰি যাওঁতে ঘটা নানা ঘটনা ইত্যাদি মনোৰম কাহিনীবোৰে শিশুৰ মনত সহজতেই আনন্দ দিয়ে। উল্লেখযোগ্য যে, লীলা গগৈয়ে শিশু সাহিত্যসমূহত কেৱল শিশুকেই মূল চৰিত্ৰ হিচাপে লোৱা নাই, শিশুৰ উপৰিও বিভিন্ন পোক-পতংগ (পৰুৱা, কেৰেলুৱা, নিগনি, ফৰিং ইত্যাদি)ক কাহিনীৰ চৰিত্ৰ হিচাপে গ্ৰহণ কৰিছে। এনে চৰিত্ৰবোৰে কথাও ক'ব পাৰে। প্ৰকৃততে শিশুসকল এনেধৰণৰ কাল্পনিক, মায়াসনা কাহিনীৰ প্ৰতি আগ্ৰহী হোৱা দেখা যায়। লীলা গগৈৰ ৰচনাৰ এনেবোৰ দিশে শিশুক আমোদ দিয়াত যথেষ্ট সহায় কৰিছে।

শিশুক মনোৰঞ্জন প্ৰদান কৰাৰ ক্ষেত্ৰত ৰসাল কাহিনীধৰ্মী উপস্থাপনো শিশু সাহিত্যৰ এক বিশেষ লক্ষণ। লীলা গগৈৰ শিশু গল্প অথবা কাল্পনিক কাহিনীসমূহৰ উপৰিও শিশু কবিতাসমূহৰ মাজত একোটা মন্ময়ধৰ্মী চিত্ৰ জীৱন্ত ৰূপত উপস্থাপন কৰিছে। যিবোৰ কল্পনা কৰি শিশুৱে আনন্দ পায়। যেনে- 'জোঁৱাই কুকুৰীকণা' শীৰ্ষক কবিতাটিত অসমীয়া সমাজত প্ৰচলিত কুকুৰীকণা সাধুটোক কবিতাৰ ৰূপ দিছে। ইয়াত কুকুৰীকণা জোঁৱায়েকৰ লটি-ঘটিয়ে শিশুৰ মনত আনন্দ দিয়ে। এনেদৰে কবিতাসমূহত একো একোটা কাহিনীৰ অৱতাৰণা কৰি শিশু পাঠকক মনোৰঞ্জন প্ৰদানৰ প্ৰয়াস কৰা দেখা যায়। শিশু সাহিত্যৰ এনে মনোৰঞ্জনধৰ্মী গুণে শিশুক সাহিত্য পঠনৰ প্ৰতিও আগ্ৰহী কৰি তোলাত সহায় কৰিব বুলি ক'ব পাৰি।

১.১.২ শৈক্ষিক দিশ ঃ

সাহিত্যিকে শিশুৰ বাবে লিখা ৰচনাত গুৰুত্ব দিবলগীয়া আন এটি মনকৰিবলগীয়া দিশ হৈছে - শৈক্ষিক দিশ। শিশু সাহিত্যই শিশুৰ জ্ঞানৰ পৰিসৰ বৃদ্ধিত সহায় কৰে। লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যসমূহ মন কৰিলে দেখা যায় যে, তেওঁ শিশুৰ শৈক্ষিক দিশটোৰ প্ৰতিও যথেষ্ট সচেতন আছিল। তেওঁ গল্পৰ চলেৰে শিশুক নৈতিক শিক্ষা প্ৰদানৰ প্ৰয়াস কৰিছিল। যেনে - 'ৰংমনৰ কথা' শীৰ্ষক পুথিখনত নিয়মানুৱৰ্তীতা, শৃংখলাবদ্ধতা, একতাৰ বল, ডাঙৰৰ অবাধ্য হোৱা অনুচিত ইত্যাদি বিভিন্ন কথাৰে শিশুক নৈতিক শিক্ষা দিয়াৰ যত্ন কৰিছে।

'জয়মতী আৰু মূলাগাভৰু' আৰু 'ল'ৰাৰ লাচিত বৰফুকন' নামৰ পুথি দুখনত শিশুক অসমৰ বীৰ-বীৰাঙ্গনাৰ পৰিচয়মূলক ৰচনা আগবঢ়াইছে। ইয়াত জয়মতী, মূলাগাভৰু, লাচিত বৰফুকন ইত্যাদি ইতিহাস প্ৰসিদ্ধ ব্যক্তিৰ বিষয়ে শিশুৰ উপযোগীকৈ তুলি ধৰিছে। এনে কাহিনীয়ে শিশুক অসমৰ

ইতিহাসৰ বিভিন্ন ঘটনাৰ লগত পৰিচয় কৰি দিয়াৰ লগতে শিশুক বুৰঞ্জীৰ প্ৰতি আগ্ৰহী কৰি তুলিব পাৰি। লগতে শিশুৰ মনত স্বদেশপ্ৰীতিৰ মনোভাৱ গঢ়ি তোলাৰ ক্ষেত্ৰতো এই ৰচনাসমূহৰ ভূমিকা পৰিলক্ষিত হয়। নিজ দেশৰ মান ৰক্ষাৰ বাবে আত্মাহুতি দিয়া জয়মতী, মূলাগাভৰু, লাচিত বৰফুকন আদি বীৰ-বীৰাঙ্গনাসকলৰ কাহিনীয়ে শিশুক আপ্লুত কৰাৰ লগতে শিশুৰ মনত স্বদেশপ্ৰীতিৰ ভাৱ জাগ্ৰত কৰাৰ অৱকাশ আছে।

লীলা গগৈৰ শিশু ৰচনাসমূহত শিশুক অসমীয়া ভাষাৰ বৰ্ণমালাৰ জ্ঞান দিয়াৰো প্ৰয়াস দেখা যায়। 'সোণতৰা' শীৰ্ষক পুথিখনত 'ব্যঞ্জনবৰ্ণৰ মেল' আৰু 'স্বৰবৰ্ণৰ মেল' নামৰ ৰচনা দুটিত বৰ্ণবোৰৰ দ্বাৰা কেনেকৈ শব্দ গঠন কৰিব পাৰি তাক ধেমেলীয়া কথাৰে শিকোৱাৰ যত্ন কৰিছে। যেনে - 'ক' বৰ্ণৰ জৰিয়তে শব্দ গঠন কৰিছে এনেদৰে—

কথা ছলাহী কই কবিতা এটাকে আবৃত্তি কৰি
দিলে - কলিকালত কলীয়া ককায়ে কিমান কৰিব কাম।

(*সোণতৰা*, লীলা গগৈৰ ৰচনাৱলী, পৃ. নং- ৮০১)

অসমীয়া সমাজত প্ৰচলিত বিভিন্ন ধৰণৰ লোক গীত-মাত আদিৰ লগত শিশুক পৰিচয় কৰোৱাৰ ক্ষেত্ৰতো লীলা গগৈয়ে শিশু সাহিত্যৰ জৰিয়তে প্ৰয়াস কৰিছে। তেওঁৰ শিশু গল্পবোৰৰ বিভিন্ন ঠাইত বিয়ানাম, ভেকুলী বিয়াৰ নাম, ওমলা গীত, নিচুকণি গীত, বিহুনাম, কমলা কুঁৱৰীৰ গীত আদি উল্লেখ কৰিছে। 'সোণতৰা' পুথিখনত উল্লেখ থকা এফাঁকি ভেকুলী বিয়াৰ নাম এনেধৰণৰ—

চুকৰে ভেকুলী
মেঘৰ মন মুকলী
ঐ ৰাম, ৰাইজক পানী কৰি দিয়া।
(*সোণতৰা*, লীলা গগৈৰ ৰচনাৱলী, পৃ. নং- ৭৯৫)

১.১.৩ শিশুকেন্দ্ৰিকতা ঃ

শিশুকেন্দ্ৰিকতা শিশু সাহিত্যৰ প্ৰধান বৈশিষ্ট্য। বিষয়বস্তুৰ পৰা ৰচনাৰীতিলৈকে আটাইবোৰ দিশতে শিশু সাহিত্যই শিশুক আকৰ্ষণ কৰিব পাৰিব লাগে। লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যসমূহ শিশুকেন্দ্ৰিক গুণেৰে ভৰপূৰ। লীলা গগৈয়ে শিয়াল, পৰুৱা, কেৰেলুৱা ইত্যাদিক চৰিত্ৰ হিচাপে গ্ৰহণ কৰাত শিশুৰ বাবে ৰচনাসমূহ অতি আকৰ্ষণীয় হৈছে বুলি ক'ব পাৰি। শিশুৱে সহজাতভাৱেই ওমলি-জামলি ভাল পায়। লীলা গগৈয়ে শিশুৰ এই প্ৰবৃত্তিৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি 'সোণতৰা' পুথিখনত সোণ, ৰূপালী, ৰুণু, পুতু আদি শিশু চৰিত্ৰই খেলা বালিৰ দৌল সজাৰ খেল, ভাওনাৰ ভাও লোৱা খেল আদি খেলৰ বৰ্ণনা কৰিছে। এইবোৰে শিশুৰ সহজাত প্ৰবৃত্তিৰ একোখন জীৱন্ত চিত্ৰৰ ৰূপায়ণ কৰিছে। সেইদৰে শিশুৰ ঠেহ-পেচ, অভিমান, বন্ধুত্বসুলভ মন আদি অন্যান্য স্বাভাৱিক প্ৰবৃত্তিসমূহো লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যত প্ৰতিফলিত হোৱা দেখা যায়।

শিশু সাহিত্যত শিশুৰ মনস্তাত্বিক দিশটোও মনকৰিবলগীয়া। শিশুৰ মন সদায় কৌতুহলী। সিহঁতৰ মনত অজস্ৰ প্ৰশ্নই দোলা দি থাকে। জীৱ-জন্তু, জোন, বেলি, তৰা ইত্যাদি জগতখনৰ বিভিন্ন বস্তুৰ প্ৰতি শিশুৰ কৌতুহলৰ সীমা নাই। শিশুৰ এই কৌতুহলী মনক লেখকে সাহিত্যত ধৰি ৰখাৰ প্ৰয়াস কৰিব লাগে। শিশুৰ কৌতুহলী মনৰ চিত্ৰণো লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যসমূহত প্ৰতিফলিত হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে 'সোণৰ সাহস' শীৰ্ষক গল্পটোৰ কথা উল্লেখ কৰিব পাৰি। গল্পটিত 'সোণ' নামৰ ল'ৰাটিয়ে প্ৰশ্ন কৰিছে, এইদৰে—

"বুঢ়ী আইতা, জোনটো কাৰ অ'?
"ঈশ্বৰৰ।"
"ঈশ্বৰ কোন? ক'ত থাকে? দেখিবলৈ কেনেকুৱা, কাৰ নিচিনা?
আমাৰ সৰু ভাইটিৰ নিচিনা?

(*সোণৰ সাহস*, লীলা গগৈৰ ৰচনাৱলী, পৃ. নং- ৭৯৫)

শিশুৰ কাল্পনিক মনৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি শিশু সাহিত্যত শিশুক কল্পনাৰ বিশাল পথাৰখনত বিচৰণ কৰিবলৈ সুবিধা দিয়া হয়। লীলা গগৈৰ "অনুপম কোঁৱৰৰ সাধু"ত এজনী চিলনীয়ে এটি কেঁচুৱাক উৰুৱাই নিয়া, চিলনীয়ে কেঁচুৱাক খোৱাই-বোৱাই ডাঙৰ-দীঘল কৰা, কোঁৱৰ ডাঙৰ হৈ চিলনী মাকৰ পাখি পিন্ধি মাক-দেউতাকক বিচাৰি উৰি যোৱা আদি অতিবাস্তৱ কথাবোৰে শিশুক যথেষ্ট আমোদ দিয়াৰ লগতে কল্পনাৰ অবাধ স্বাধীনতা দিয়া হৈছে।

১.১.৪ ভাষাৰ সহজবোধ্যতা ঃ

শিশু সাহিত্যৰ ভাষা সহজবোধগম্য হোৱাটো অতি প্ৰয়োজনীয়। সহজ-সৰল ভাষা আৰু সৰল উপস্থাপনেহে শিশুক আকৰ্ষণ কৰে আৰু সহজে বুজি পোৱাত সহায় কৰে। লীলা গগৈয়ে তেওঁৰ শিশু সাহিত্যসমূহ চুটি চুটি বাক্যৰে সহজ-সৰল ৰূপত উপস্থাপন কৰিছে। উদাহৰণস্বৰূপে, 'সোণতৰা' পুথিখনৰ 'সোণৰ ভাওনা' শীৰ্ষক গল্পটিৰ এটি বৰ্ণনা তুলি ধৰা হ'ল—

"পদূলিমূৰৰ শেৱালিজোপা ফুলিছিল। ৰাতিপুৱা বগা, কোমল ফুলবোৰ তল উপচি সৰি আছিল। সোণ আৰু ৰূপালীয়ে একোচ একোচ ফুল বুটলি আনি পিৰালিত গোটাই থৈছিল। ইমান ধুনীয়া ফুলবোৰ। সিহঁতৰ বৰ মৰম লাগে।"

(*সোণৰ ভাৱনা*, লীলা গগৈৰ ৰচনাৱলী, পৃ. নং- ৭৯৮)

সেইদৰে, কবিতাবোৰৰ ভাষাও সহজ-সৰল—

"এক আছিল খঁৰা শিয়াল,

সিও আছিল সাহসিয়াল

বৰ চাপৰিৰ জুপুৰি ঘৰত

খঁৰাৰ আছিল ঘৰ।"

(লীলা গগৈৰ ৰচনাৱলী, পৃ. নং- ৭৪২)

লীলা গগৈৰ শিশুৰ বাবে লিখা ৰচনাসমূহৰ ভাষা সহজ-সৰল হোৱাৰ উপৰিও উপস্থাপনৰীতি ইমান মনোৰম যে, ই যিকোনো পাঠকক আমোদ দিয়ে। তেওঁৰ সৰল উপস্থাপনৰীতি সম্পৰ্কে কৰবী ডেকা হাজৰিকাই কৈছে- কবিতাসমূহৰ ছন্দ ক'তো আঁৰ নলগা বিধৰ।[২]

উল্লেখযোগ্য যে, লীলা গগৈৰ শিশু ৰচনাসমূহৰ ভাষা সহজ-সৰল হ'লেও দুই এঠাইত উল্লেখ কৰা কিছুমান শব্দ শিশুৰ বাবে সহজে বুজাত অসুবিধাৰ সৃষ্টি হ'ব পাৰে। যেনে- 'ৰংমনৰ কথা' শীৰ্ষক ৰচনাটিত নিগনিটোৱে কোৱা "এদিন মই সাতোটা বোন্দা মেকুৰীক শিশুপাল খেদা দিছিলোঁ"- কথাষাৰ ভালদৰে বুজি পোৱাত শিশুৰ বাবে অসুবিধাৰ সৃষ্টি হ'ব পাৰে। কাৰণ শিশুটিয়ে 'শিশুপাল' শব্দটিৰ লগত পৰিচিত নহ'বও পাৰে। সেইদৰে 'কঠালগুটীয়া নিগনি', ইয়াত 'কঠালগুটীয়া' বিশেষণটোও শিশুৰ পাক লগা। আকৌ 'জয়মতী আৰু মূলাগাভৰু' শীৰ্ষক পাঠটিত উল্লেখ থকা 'স্বাৰ্থান্বেষী' শব্দটোও শিশুৰ বাবে কঠিন। সেইদৰে 'ফ্লাইংছ'চাৰ' শীৰ্ষক কবিতাটিৰ শীৰ্ষকটি অৰ্থাৎ ফ্লাইংছ'চাৰ শব্দটি শিশুৰ বাবে পৰিচিত অথবা সহজবোধ্য নহয়। কিন্তু এইবোৰে শিশু সাহিত্য হিচাপে ৰচনাসমূহৰ সৌন্দৰ্য ম্লান কৰা নাই।

২.০ উপসংহাৰ ঃ

লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যসমূহত শিশু সাহিত্যৰ বিভিন্ন বিশেষত্বসমূহৰ প্ৰতিফলন ঘটা পৰিলক্ষিত হ'ল। মনোৰঞ্জনধৰ্মী, শিশুকেন্দ্ৰিক, ধ্বনিমাধুৰ্য, চিত্ৰধৰ্মী, কাহিনীধৰ্মী, শৈক্ষিক দিশ ইত্যাদি বৈশিষ্ট্যৰ প্ৰতিফলনে ৰচনাবোৰক শিশু উপযোগী কৰি তুলিছে। তদুপৰি সংস্কৃতিসাধক লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যসমূহত অসমীয়া সংস্কৃতিৰ বিভিন্ন চিত্ৰৰ প্ৰতিফলনে সেইবোৰক এক অনন্য মাত্ৰা প্ৰদান কৰিছে। অসমীয়া বিভিন্ন লোক গীত-মাতবোৰৰ লগতে জাকৈ মৰাৰ দৃশ্য, হুঁচৰি তাঁতশাল আদিৰ বৰ্ণনাই অসমীয়া সমাজৰ একো একোখন প্ৰতিচ্ছবি দাঙি ধৰিছে। বৰ্তমান সমাজৰ পৰা প্ৰায় হেৰাই যোৱা; জোনাক নিশা চোতালত বহি ককাক-আইতাকে নাতি-নাতিনীহ'তক সাধু কোৱাৰ মনোমোহা চিত্ৰখন লীলা গগৈয়ে তেওঁৰ ৰচনাৰ মাজত তুলি ধৰিছে।

বৰ্তমান ব্যস্ততাপূৰ্ণ সমাজত শিশুসকল কম্পিউটাৰসাধিত খেলৰ প্ৰতি অধিক আকৃষ্ট হোৱা দেখা যায়। এনে ক্ষেত্ৰত লীলা গগৈৰ ৰচনাসমূহত বৰ্ণিত লুকা-চুৰিৰ খেল, বালিৰে দৌল সজা খেল, ভাওনা খেল আদিয়ে শিশু পাঠকক কিছুমান ব্যতিক্ৰমী সোৱাদ দিব বুলি ক'ব পাৰি। সৰ্বশেষত ক'ব পাৰি যে, লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যসমূহত দুই এক দুৰ্বলতা থাকিলেও এইবোৰ বিভিন্ন দিশৰ পৰা উৎকৃষ্ট মানৰ। এইবোৰ পঢ়ি শিশুসকল যে যথেষ্ট উপকৃত হ'ব তাত কোনো সন্দেহ নাই। গতিকে লীলা গগৈৰ শিশু সাহিত্যসমূহ বিস্তৃতভাৱে অধ্যয়ন কৰাৰ যথেষ্ট থল আছে বুলি ক'ব পাৰি। ❑

প্ৰসঙ্গ সূত্ৰ ঃ

১। কৰবী ডেকা হাজৰিকা, শিশু আৰু কিশোৰ সাহিত্য, *অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী* (ষষ্ঠ খণ্ড), সম্পা. হোমেন বৰগোহাঞি, ২০১২, পৃ.- ৫৩৪

২। উল্লিখিত, পৃ.- ৫৩৪

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জীঃ

১। গগৈ, লীলা ঃ *ড° লীলা গগৈৰ ৰচনাৱলী*, ডিব্ৰুগড়, বনলতা প্ৰকাশন, ১ম প্ৰকাশ, অক্টোবৰ, ২০১১

২। নেওগ, মহেশ্বৰ ঃ *অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা*, গুৱাহাটী, চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, ত্ৰয়োদশ তাঙৰণ, জুন, ২০১৩

৩। বৰগোহাঞি, হোমেন ঃ *অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী* (ষষ্ঠ খণ্ড), গুৱাহাটী, আনন্দৰাম বৰুৱা ভাষা-কলা-সংস্কৃতি সংস্থা, ২য় প্ৰকাশ, ২০১২

৪। শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ ঃ *অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত*, গুৱাহাটী, সৌমাৰ প্ৰকাশ, দশম সংস্কৰণ, ২০১৩

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ আভিযান্ত্ৰিক নিদৰ্শন ঃ এক অধ্যয়ন

অসীম শইকীয়া
গৱেষক ছাত্ৰ
নৰ্থ লখিমপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়
পিন ঃ ৭৮৬০০৪, অসম
৮৮২২৫৬৭৩৩৭
ashimsaikia@gmail.com

ড° ধীৰাজ পাটৰ
সহকাৰী অধ্যাপক
নৰ্থ লখিমপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়
পিন ঃ ৭৮৬০০৪, অসম
৯৯৫৪৬৮৯৬১৯
dhirajpatar@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

ঐতিহাসিক পৰিক্ৰমা একোটাৰ মাজেৰে আহি মানুহৰ ব্যৱহাৰিক আৰু মানসিক বৈশিষ্ট্যসমূহে গঢ় লৈ উঠে। ব্যক্তি বিশেষে ব্যৱহাৰ কৰা সামগ্ৰী আৰু জীৱন যাপনৰ পদ্ধতিৰ মাজত উক্ত দিশৰ প্ৰতিফলন স্পষ্ট। ভাৰতত কলাৰ সৃষ্টিত ধৰ্মৰ প্ৰভাৱ উল্লেখনীয়। প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ অভিযান্ত্ৰিক নিদৰ্শন সম্পৰ্কে বিচাৰ কৰিবলৈ যাওঁতে উক্ত সময়ছোৱাৰ ধৰ্মীয় প্ৰেক্ষাপট, সাংস্কৃতিক প্ৰেক্ষাপট তথা উক্ত সময়ৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ কলাশৈলীগত বিকাশৰ ধাৰাক গুৰুত্ব দিব লগা হয়। উন্নত স্থাপত্য আৰু উন্নত ভাস্কৰ্যই একোটা অঞ্চলৰ উন্নত সভ্যতা আৰু সংস্কৃতিৰ ইতিহাস ধৰি ৰাখিব পাৰে। এনে ক্ষেত্ৰত বৰ্মন বংশৰ ৰাজত্বৰ সময়ৰেপৰা উন্নত আৰু পৰিশীলিত তেনে সভ্যতা আৰু সাংস্কৃতিক দিশৰ আধাৰ প্ৰতিষ্ঠা হোৱা কথা ক'ব পৰা হয়। প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ অভিযান্ত্ৰিক নিদৰ্শন শীৰ্ষক আলোচনা পত্ৰৰ জৰিয়তে সেই সময়ছোৱাৰ সভ্যতা সংস্কৃতিৰ প্ৰবাহৰ মান, কলাগত আৰু শিল্পগত দিশৰ আলোচনাৰ প্ৰয়াস কৰা হ'ব।

বীজ শব্দ ঃ

স্থাপত্য, ভাস্কৰ্য, আভিযান্ত্ৰিক, প্ৰাক্ আহোম যুগ।

প্ৰস্তাৱনা ঃ

ঐতিহাসিক পৰিক্ৰমা একোটাৰ মাজেৰে আহি মানুহৰ ব্যৱহাৰিক আৰু মানসিক বৈশিষ্ট্যসমূহে গঢ় লৈ উঠে। ব্যক্তি বিশেষে ব্যৱহাৰ কৰা সামগ্ৰী আৰু জীৱন যাপনৰ পদ্ধতিৰ মাজত উক্ত দিশৰ প্ৰতিফলন স্পষ্ট। ভাৰতত কলাৰ সৃষ্টিত ধৰ্মৰ প্ৰভাৱ উল্লেখনীয়। প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ অভিযান্ত্ৰিক নিদৰ্শন সম্পৰ্কে বিচাৰ কৰিবলৈ যাওঁতে উক্ত সময়ছোৱাৰ ধৰ্মীয় প্ৰেক্ষাপট, সাংস্কৃতিক প্ৰেক্ষাপট তথা উক্ত সময়ৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ কলাশৈলীগত বিকাশৰ ধাৰাক গুৰুত্ব দিব লাগিব। "ভাৰতত স্থাপত্য আৰু ভাস্কৰ্যকলাৰ বিকাশত ধৰ্মই এক মুখ্য স্থান গ্ৰহণ কৰি আহিছে। অৰ্থাৎ ভাৰতীয় মন্দিৰ-ভাস্কৰ্যৰ লগত ধৰ্ম ওতঃপ্ৰোতভাৱে জড়িত। বিভিন্ন সময়ত ধৰ্মোপাসনাৰ বাবে ভাৰতত বিভিন্ন মঠ-মন্দিৰ নিৰ্মাণ কৰা হৈছিল আৰু সেই মন্দিৰৰ ভিতৰত আৰু বাহিৰত দেৱ-দেৱীৰ মূৰ্তিকে ধৰি বিভিন্ন প্ৰকাৰৰ ভাস্কৰ্য মূৰ্তি খোদাই কৰা হৈছিল। ভাৰতীয় ভাস্কৰ্যৰ বিষয়বস্তুবিলাক বিভিন্ন ধৰ্মীয় ধাৰণাৰপৰা গ্ৰহণ কৰা হৈছিল তথা

যিবিলাক ভাস্কৰ্য আপাত ধৰ্মীয় নহয় আৰু মন্দিৰৰ বৰ্হিভাগত খোদাই কৰা হৈছিল সিবিলাকো প্ৰত্যক্ষ আৰু পৰোক্ষভাৱে ধৰ্মীয় চেতনাৰ লগতেই জড়িত আছিল।"[১]

স্থাপত্য কলা হ'ল স্থপতিবিদে শিল, ইটা আদিৰ লগতে অন্যান্য থলুৱা সামগ্ৰীক আধাৰ হিচাপে লৈ মঠ-মন্দিৰ, দুৰ্গ, প্ৰসাদ, দৌল-দেৱালয় আদি নিৰ্মাণ কৰা প্ৰণালীকে বুজায়। আনহাতে স্থপতিবিদে কলাশৈলীগতভাৱে নিৰ্মাণ কৰা সেই শিল্পৰ গাত খোদিত কৰা ভিন ভিন নক্সা-মূৰ্তিয়ে হ'ল ভাস্কৰ্য। অসমৰ প্ৰেক্ষাপটত স্থাপত্য-ভাস্কৰ্য কলাৰ দিশটো সমৃদ্ধিময়। পৌৰাণিক সময়ৰেপৰা অসমৰ প্ৰেক্ষাপটত মঠ-মন্দিৰ, দুৰ্গ, সাঁকো, দৌল-দেৱালয়ৰ লগতে তাত খোদিত কৰা বিভিন্ন নক্সা, মূৰ্তি আদিয়ে সেই কথা স্পষ্ট কৰে। ইয়াৰ বাহিৰেও বিভিন্ন সময়ত প্ৰাপ্ত বিভিন্ন শিলালেখ আৰু তাম্ৰলেখসমূহতো তেনে বহু নিদৰ্শন পাব পৰা যায়। "অসমীয়া মানুহটো নৃ-তাত্ত্বিকভাৱে যিদৰে, বহল অৰ্থত ককেচাছ আৰু মংগোলয়ডৰ সংমিশ্ৰণত (আলপাইন, দ্ৰাবিড় আদিকো সামৰি) গঢ় লৈ উঠিছে, অসমীয়া সংস্কৃতিও এহাতে ভাৰতীয় আৰ্য সংস্কৃতি আৰু আনহাতে দক্ষিণ-পূব এছিয়াৰ তিব্বত-বৰ্মী ভাষিক গোষ্ঠীসমূহৰ অৱদানেৰে গঢ়ি উঠিছে। এই বিষয়ে কোনো সন্দেহ নাই যে ভাৰতীয় আৰ্য সংস্কৃতি এটা উন্নত, পৰিশীলিত সংস্কৃতি। তাৰ মাজত যে নানা তৰহৰ দোষ-দুৰ্বলতা নাছিল এনে নহয়; কিন্তু তৎসত্ত্বেও ভাষাৰ ফালৰপৰা, ই (আৰ্য ভাষা, পৰৱৰ্তী কালত সংস্কৃত) যিদৰে অত্যন্ত উন্নত ভাষা আছিল, দৰ্শন, সাহিত্য, সংগীত, চিত্ৰ, নৃত্য, ভাস্কৰ্য, স্থাপত্য আদি সাংস্কৃতিক সকলো দিশ সামৰি তুলনামূলকভাৱে আছিল সমগ্ৰ বিশ্বৰ ভিতৰতে উন্নত আৰু পৰিশীলিত সংস্কৃতি।"[২]

পৌৰাণিক অসমত গুপ্ত যুগৰপৰাই অগণন মঠ-মন্দিৰ, ৰাজপ্ৰসাদ, দুৰ্গ আদি নিৰ্মাণ কৰাৰ প্ৰমাণ পোৱা যায়। বিভিন্ন সময়ৰ বিদেশী পৰ্যটকৰ টোকা, তাম্ৰলেখ, শিলালেখ আৰু ধৰ্মীয় গ্ৰন্থত ইয়াৰ বিষয়ে প্ৰমাণ পোৱা যায়। বিভিন্ন পৰিস্থিতি বা কাৰণত এইসমূহ অক্ষত অৱস্থাত থকা নাই যদিও এইসমূহৰ ধ্বংসাৱশেষসমূহেও আমাক থূলমূল ধাৰণা দিব পাৰে। এই ধ্বংসাৱশেষসমূহে সেইসমূহৰ নিৰ্মাণ প্ৰণালী আৰু কলাশৈলীগত দিশক জানি উঠাত আমাক বহুখিনি সহায় কৰে। সেয়ে প্ৰস্তাৱিত গৱেষণাত *প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ অভিযান্ত্ৰিক নিদৰ্শন* সমূহৰ বিষয়ে আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য আৰু গুৰুত্ব ঃ

উন্নত স্থাপত্য আৰু উন্নত ভাস্কৰ্যই একোটা অঞ্চলৰ সভ্যতা আৰু সংস্কৃতিৰ ইতিহাসক ধৰি ৰাখিব পাৰে। কিয়নো মানুহৰ বস্তুগত সংস্কৃতি আৰু ভাবগত সংস্কৃতিৰ সমন্বয়ৰ দিশটো কিদৰে সাধন হৈছে এনে দিশৰো প্ৰমাণ স্থাপত্য আৰু ভাস্কৰ্যসমূহত স্পষ্ট। সেয়েহে প্ৰস্তাৱিত আলোচনাত *প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ অভিযান্ত্ৰিক নিদৰ্শন* সম্পৰ্কে বিচাৰ কৰিবলৈ যাওঁতে উক্ত সময়ছোৱাৰ ধৰ্মীয় প্ৰেক্ষাপট, সাংস্কৃতিক প্ৰেক্ষাপট তথা উক্ত সময়ৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ কলাশৈলীগত বিকাশৰ ধাৰা, অন্য কলাশৈলীৰ প্ৰভাৱ আৰু কালশৈলীগত স্থান নিৰ্ণয়ৰ দিশক গুৰুত্বসহকাৰে লৈ এই আলোচনা পত্ৰ প্ৰস্তুত কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ অভিযান্ত্ৰিক নিদৰ্শন শীৰ্ষক আলোচনা পত্ৰত অধ্যয়নৰ বাবে বিষয় বিশ্লেষণ পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ অভিযান্ত্ৰিক নিদৰ্শন ঃ

স্থাপত্য আৰু ভাস্কৰ্য কলাৰ ইতিহাস অতি প্ৰাচীন। স্থাপত্য কলাৰ দুটা ৰূপৰ কথা ক'ব পাৰি। সেয়া হ'ল— লোকায়ত আৰু নাগৰিক। ইয়াৰে লোকায়ত ৰূপটোত বাঁহ, বেত, কাঠ, খেৰ আদি বনজ সামগ্ৰী আৰু নাগৰিক ৰূপটোত শিল আৰু ইটাৰ ব্যৱহাৰৰ কথা ক'ব পাৰি। এই ইতিহাসৰ প্ৰথম সময়ত শিল আৰু দ্বিতীয় সময়ত ইটাৰ ব্যৱহাৰ হোৱাৰ কথা কোৱা হয়। সভ্যতা বিকাশত এই দুই স্তৰৰ সঠিক সময় নিৰূপণ কৰিব পৰা নাযায়। কিন্তু বৰ্মন বংশৰ ৰাজত্বৰ সময়ৰপৰা উক্ত বিকাশ হোৱা বুলি অনুমান কৰা হয়। প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য আৰু ভাস্কৰ্য সংক্ৰান্তত বিভিন্ন শতিকাৰ শিলালেখ, তাম্ৰলিপিৰপৰা জানিব পৰা হয়। সেইমতে, বনমাল বৰ্মনে নৱম শতিকাৰ মাজ ভাগত উছৰ্গা কৰা তাম্ৰপত্ৰ মতে, তেওঁ হিমালয়ৰ শৃঙ্গৰ দৰে গগনচুম্বী শিৱমন্দিৰ নিৰ্মাণ কৰিছিল। প্ৰাকৃতিক দুৰ্যোগত মন্দিৰটোৰ বিভিন্ন অংশ ধ্বংসপ্ৰাপ্ত হয়। মন্দিৰটো সম্পূৰ্ণ শুক্ল বৰণৰ আছিল। পিছত, মন্দিৰটো শিল- ইটাৰে সম্পূৰ্ণ বগা ৰং কৰি পুনৰ নিৰ্মাণ কৰা হয়। তৃতীয় বলবৰ্মনৰ শিলালেখৰ মতে, বনমাল বৰ্মনে বহু কোঠাযুক্ত ৰাজপ্ৰাসাদ এটা নিৰ্মাণ কৰিছিল আৰু বিভিন্ন অলংকৰণেৰে, প্ৰাসাদৰ সৌন্দৰ্য চৰাইছিল। ৰত্নপালে একাদশ শতিকাৰ মধ্যভাগত উছৰ্গা কৰা তাম্ৰপত্ৰৰ পৰা জনা যায় যে,

তেওঁৰ শ্ৰী দূৰ্জয়া নগৰত অৱস্থিত প্ৰাসাদৰ লগত সংলগ্ন কৰি নিৰ্মাণ কৰা হাজাৰ হাজাৰ মসৃণ গম্বুজে সূৰ্য চৰ্চা দৰ্শনত বাধাৰ সৃষ্টি কৰিছিল। ইন্দ্ৰপালৰ তাম্ৰপত্ৰ মতে, ৰজা ৰামপালে ৰাজ্যখনত অসংখ্য বগা ৰঙৰ শিৰ মন্দিৰ নিৰ্মাণ কৰিছিল। তাম্ৰপত্ৰৰ উল্লেখৰ আধাৰত ক'ব পৰা যায় যে সেইকালত স্থাপত্য ভাস্কৰ্যৰ কলাশৈলীগত দিশৰ উত্তৰণ ঘটিছিল। এই কলাশৈলীগত উত্তৰণৰ ইংগিত দিয়ে নামনি অসমত সিঁচৰিত হৈ থকা স্থাপত্য আৰু ভাস্কৰ্যৰ ভগ্নাৱশেষসমূহে। ভগ্নাৱশেষসমূহ সিঁচৰতি থকা অঞ্চলসমূহ হ'ল— গুৱাহাটী, উত্তৰ গুৱাহাটী, তেজপুৰ, শিলঘাট, বিশ্বনাথ আদি।

প্ৰাগজ্যোতিষপুৰ আৰু কামৰূপ ৰাজ্যৰ স্থাপত্য আৰু ভাস্কৰ্যবিদসকলে নিজ নিজ কৰ্মক্ষেত্ৰত যে পাৰ্গত আছিল তাৰ উৎকৃষ্ট সাক্ষ্য এতিয়ালৈকে উদ্ধাৰ হোৱা সম্পদসমূহ। এই সম্পদসমূহ উদ্ধাৰ হৈছিল বৰ্তমানৰ গুৱাহাটী আৰু প্ৰাচীন প্ৰাগজ্যোতিষপুৰ নগৰত। এই মন্দিৰ, দৌল-দেৱালয় প্ৰাসাদসমূহ ধ্বংস কৰা হৈছিল হৰ্ষবৰ্ধনৰ মৃত্যুৰ পিছত আৰু শালস্তম্ভই ৰাজ্যখন কাঢ়ি লোৱাৰ পিছত। ইয়াৰ লগতে ভাস্কৰ বৰ্মনৰ মৃত্যুৰ পিছত তিনি শতিকাতকৈ অধিক কাল প্ৰাগজ্যোতিষপুৰ কোনো শাসক গোষ্ঠীৰে ৰাজধানী বা শাসন কেন্দ্ৰ নাছিল। ইয়াৰ ফলস্বৰূপে প্ৰাসাদ, দৌল দেৱালয় আদি নৈসৰ্গিক কাৰণতো বিনষ্ট হৈ পৰিছিল। কছাৰীসকলেও প্ৰাগজ্যোতিষ ৰাজ্যত আধিপত্য বিস্তাৰ কৰিছিল আৰু মোগলেও কেইবাবাৰো আক্ৰমণ কৰি কামৰূপ ৰাজ্যত নিজৰ শাসন প্ৰৱৰ্তন কৰিছিল। পুবৰ পৰা আহোমেও মোগলৰ লগত তিনি শতিকাতকৈও অধিক কাল ব্যাপি কৰা ৰণৰ যোগে সমস্ত অঞ্চলটো নিজৰ অধীনলৈ আনিছিল। এই দীঘলীয়া ৰণ বিগ্ৰহতো বহু সম্পদ বিনষ্ট হৈছিল। জানিব পৰা মতে, ইংৰাজ বণিকে ৰাজ্যখন দখল কৰা পাছত, গুৱাহাটীৰ নগৰখন পদ্ধতিগতভাৱে নিৰ্মাণ কৰিছিল। এই শৃংখলাৰে কৰা কাৰ্যত পথ নিৰ্মাণ কৰিবলৈ এটা শিলৰ গড় ভাঙি তাৰ পৰা শিল সংগ্ৰহ কৰিছিল। এই কথাও স্পষ্ট যে পথত ব্যৱহৃত শিলসমূহত বিভিন্ন দেৱ-দেৱীৰ মূৰ্তি, গছ-লতিকা, জীৱ-জন্তুৰ মূৰ্তি খোদিত আছিল। শাসকে নহয় বহু সম্ভ্ৰান্ত ব্যক্তিয়ে ধুনীয়া ধুনীয়া মূৰ্তি দেখি নিজৰ গৃহত সেইসমূহ সজাই ৰাখিলে। কামৰূপ অনুসন্ধান সমিতি গঠন হোৱাৰ পিছত, ইয়াৰে কিছু মূৰ্তি সংৰক্ষণ কৰা হয়। সংগৃহীত এই মূৰ্তিসমূহৰ ভিতৰত প্ৰাক্ আহোম যুগৰ দেৱ-দেৱীৰ লগতে গণেশ, বিষ্ণু আদিৰ মূৰ্তি দেখা যায়। পাণ্ডু মন্দিৰত পাঁচটা শিলত কটা মূৰ্তি পোৱা গৈছে। ইয়াৰে চাৰিটা গণেশৰ আৰু আনটো মূৰ্তি এগৰাকী দেৱীৰ। দেৱীগৰাকী দুৰ্গাই হ'ব। মন্দিৰৰ নামনিৰ মুকলি স্থানত দুটা শিলত কটা মূৰ্তি আছে। দিক্ষীতে প্ৰতিবেদনত উল্লেখ কৰা মতে, এটা মূৰ্তি সূৰ্যদেৱ আৰু আনটো মূৰ্তি ইন্দ্ৰৰ। কামাখ্যা মন্দিৰৰ (নীলাচল) পাহাৰৰ পশ্চিম দিশৰ এঢলীয়া অংশটোত অসংখ্য শিলত কটা সৰু সৰু মূৰ্তি আছে। এইবিলাক শিখৰ শ্ৰেণীৰ মন্দিৰ। প্ৰত্যেকটো মন্দিৰৰ লগত ক্ষুদ্ৰ লিংগ স্থাপন কৰা আছিল। অন্য শিলত লিংগ আৰু গণেশৰ মূৰ্তি খোদিত আছিল। কামাখ্যা মন্দিৰৰ একেটা দিশতে পৌৰাণিক মন্দিৰৰ সমলেৰে নতুনকৈ ঘটকাসুৰ মন্দিৰ নিৰ্মাণ কৰা হৈছিল । এনেদৰে ব্যৱহাৰ কৰা এটা শিলত, ওপৰৰ অংশত এশাৰী মালাৰে সুশোভিত কৰা। তলৰ অংশত চাৰিটা জন্তু - এটা ম'হ, এটা শহা, এটা সিংহ আৰু এটা বাঘ খোদিত কৰা হৈছিল। খোদিত কাৰ্য সুষম আৰু বাঙ্ময় আছিল। সেই স্থাপত্য সেই সময়ৰ উৎকৃষ্ট স্থাপত্য শিল্পৰ নিদৰ্শন। এনে স্থাপত্যকলা প্ৰাক্- আহোম যুগৰ উৎকৃষ্ট নিদৰ্শন।

আৰ. ডি. বেনাৰ্জীয়ে ১৯২৪-২৫ ৰ বছৰেকীয়া প্ৰতিবেদনত উল্লেখ কৰিছে— "তেজপুৰৰ পাৰ্কত বিষয়া আৰু চাহ খেতিয়কে সংৰক্ষণ কৰি ৰখা ভগ্নাৱশেষসমূহ অধ্যয়ন কৰিছে; এই ধ্বংসাৱশেষবিলাক বুৰঞ্জীৰ তিনিটা যুগৰ তিনিটা ৰাজপ্ৰাসাদৰ সমাহাৰ বুলি কৈছে।" তেখেতে আৰু প্ৰকাশ কৰিছে যে প্ৰথম ভাগৰ ভগ্নাৱশেষসমূহৰ ভিতৰত চাহ-বাগানৰ ক্লাৱলৈ সোমোৱা পথত থকা এযোৰ খুটা আৰু তেজপুৰৰ পাৰ্কত থকা দুৱাৰৰ চৌকাঠৰ ওপৰত সংযোজিত এচটা গধুৰ শিল কথা। উল্লেখিত খুটাযোৰৰ এটা যোলশিৰিয়া আৰু খুঁটাৰ ওপৰফাল কীৰ্তি মুখেৰে অন্ত পৰিছে। খুঁটাযোৰৰ নিম্নভাগত সৰু সৰু চতুৰ্ভূজ অংকনেৰে সুশোভিত কৰিছিল। দ্বিতীয় খুঁটাটোৰ ওপৰ অংশৰ দ্বাদশ মূৰ্তি সংযোগেৰে অন্ত পৰিছে। এনেভাৱে শীৰ্ষভাগ তিনি ভাগত বিভক্ত কৰা হৈছে — ভেটিৰ সমান্তৰালকৈ তিনিখন তৰোৱালৰ আকাৰত। তৰোৱাল তিনিখনৰ এখন হীৰাৰ আকাৰৰ গোলাপ ফুলেৰে আৰু বাকী দুখন অলংকৃত কৰিছিল কীৰ্তি মুখেৰে। এই অলংকৰণ একেটা প্ৰাসাদৰ। ৰাজহুৱা স্থানত থকা বিশাল দুৱাৰৰ চৌকাঠ একেটা যুগৰে। চৌকাঠটো দুটা অংশত বিভক্ত। দুৱাৰ ওপৰত ক্ষুদ্ৰ শিৰ লিংগৰ সৈতে মন্দিৰ খোদিত কৰা হৈছে। দুৱাৰৰ চৌকাঠ দুয়োফালে দুশাৰী অলংকৃত কৰা খুটাৰ সংযোগ কৰা হৈছে। এই খুটা দুশাৰী লতা ফুলেৰে আৰু অন্য শাৰী গোলাপ ফুলেৰে অলংকৰণ কৰা হৈছে। এই

দুই শাৰী খুটাই প্ৰাসাদৰ ওপৰ মহলাৰ সন্মুখ ভাগৰ বৃত্তাকাৰ অংশকে স্পৰ্শ কৰিছিল। দুৱাৰখনৰ ওপৰত শৈল চৌকাঠটোৰ সোমাজত এটা গণেশ মূৰ্তি প্ৰতিষ্ঠা কৰা হৈছে। চৌকাঠবোৰ ছফুট দহ ইঞ্চি দীঘল আৰু এক ফুট চাৰে পাঁচ ইঞ্চি বহল। এই স্থাপত্য সম্ভাৰ দশম শতিকাৰ শেষ ফালৰ।

বছৰেকীয়া প্ৰতিবেদনৰ, দ্বিতীয়টো গোটত আৰ. ডি. বেনাৰ্জীয়ে অন্তৰ্ভুক্ত কৰিছে তেজপুৰত উদ্ধাৰ হোৱা আৰু অবিভক্ত দৰং জিলাৰ উপায়ুক্তৰ কাৰ্যালয় অৱস্থিত স্থানত থকা এটা বিশাল মন্দিৰৰ স্থাপত্য আৰু ভাস্কৰ্যৰ ভগ্নাৱশেষসমূহ। এই বিলাকৰ মাজত উল্লেখযোগ্য হ'ল বিশাল মন্দিৰলৈ সোমোৱা বিশাল শিলৰ চৌকাঠ, দুৱাৰ দলিত তলত পাৰি দিয়া বিশাল চটীয়া শিল। এই বিলাক বাগানৰ ক্লাৱৰ প্ৰৱেশ পথত আছিল। এই বিশাল শৈল চৌকাঠবোৰৰ উচ্চতা ১০//৩/ আৰু প্ৰস্থ আছিল ১/৮/ইঞ্চি। ইয়াৰ ওপৰত তিনিটা উচ্চ অংশ আছিল। ইয়াৰে এটা সোমাজত আৰু দুটা দুকাষত। মাজৰ উচ্চ অংশটো আহল বহল আৰু ইয়াতে শ্ৰীসূৰ্য দেৱতাৰ মূৰ্তি আৰু দুয়োকাষে বাওফালে এজন ব্ৰাহ্মণ আৰু দুজন আলধৰা, সোফালে শিৱ আৰু দুজন আলধৰাৰ মূৰ্তি স্থাপন কৰা হৈছিল। সোৱে বাওৱে খালী থকা অংশবিলাকৰ তিনিটাকৈ চিনাক্ত কৰিব নোৱাৰা দেৱ-দেৱীৰ মূৰ্তি স্থাপন কৰা হৈছিল। প্ৰত্যেকটোৰ মূৰ্তি দুয়োকাষে ২ûû ওখকৈ বেৰ দিয়া হৈছিল। হিন্দু ধৰ্মৰ পৰম্পৰা মতে মন্দিৰৰ অধিষ্ঠাতা দেৱতাজনক দুৱাৰৰ মধ্যস্থানত প্ৰতিষ্ঠা কৰা হয়, সেইফালৰ পৰা, এই মন্দিৰটো সূৰ্য মন্দিৰ। দুৱাৰ দলিৰ তলত থকা শিলচটা বিশাল আকাৰৰ আছিল। এই চটা শিলতে দুৱাৰৰ দুয়োকাষে এহালকৈ সিংহ মূৰ্তি আছিল। দুয়ো কাষৰ বেৰত এফালে এজন পুৰুষ আৰু অন্যফালে এগৰাকী নাৰীৰ মুণ্ডী; মূৰ্তি ৰখা স্থানত আছিল। অৱশ্যে, দুৱাৰৰ কাষৰ খুটাৰ সন্ধান পোৱা নাযায়।

তেজপুৰৰ পাৰ্কখনত যিবিলাক কাটি গঢ় দিয়া শিল পৰি আছে, সেইবিলাক মন্দিৰৰ ভেটি প্ৰতিষ্ঠাৰ বাবে ব্যৱহাৰ কৰা হৈছিল। খুটাৰ সংযোগ স্থানৰ শীৰ্ষভাগ সৰু বৰ কীৰ্তি মুখৰ মূৰ্তিৰে অলংকৰণ কৰা হৈছিল। খাপকটা বেৰবিলাক লতা ফুল আৰু গোলাপ ফুলেৰে অলংকৰণ কৰা হৈছিল। বিশাল বিশাল স্তম্ভ বা খুটাবিলাকৰ শীৰ্ষভাগ লোহাৰ শলাৰে সংযোগ ঘটোৱা হৈছিল। এই বিলাকৰ লগত সংযোগ কৰি গোল খুটাত মূৰ্তি থোৱা খলপাৰ সৃষ্টি কৰা হৈছিল। এনে খলপাবিলাকৰ এটাত ওৰণি লোৱা ভংগীৰে এগৰাকী শকত মহিলা, এওঁৰ বাওঁকাষে প্ৰণাম জনোৱা ভংগীত ভক্তিভাৱে থিয় দি থকা মহিলাৰ মূৰ্তি আছিল। অন্য এটা খলপাত বাওঁহাতে বনবীণা লৈ এগৰাকী দেৱী; এওঁ নিশ্চিতভাৱে সৰস্বতী দেৱীয়ে হ'ব। তৃতীয় খলপাত থকা প্ৰতীকটো হ'ল গজলক্ষীৰ। এই গৰাকী দেৱী কামৰূপ আৰু বংগত কমল কামিনী নামে খ্যাত। দেৱীৰ শিৰত দুই হাতীয়ে শুৰেৰে পাত্ৰত পানীলৈ ঢালি আছে। চতুৰ্থ খলপাত থকা প্ৰতীকটো হ'ল উত্তৰ ভাৰতৰ পৰম্পৰাৰে চলি থকা শিৱ পাৰ্বতী। স্থাপত্যৰ এনে ধাৰাসমূহে উত্তৰ ভাৰতৰ মন্দিৰ স্থাপত্যৰ দিশৰ লগত মিলৰ কথাকে প্ৰকাশ কৰে। ইয়াৰ উপৰিও তেজপুৰৰ উদ্যানত সংৰক্ষিত ধ্বংসাৱশেষসমূহৰ ভিতৰত উল্লেখযোগ্য যে— মন্দিৰ ভেটিৰ ওপৰৰ এচটা শিল। এই শিলচটাত বহুসংখ্যক খলপাত বিভক্ত কৰা হৈছিল আৰু প্ৰত্যেকটো খলপাত দুজন পুৰুষ বা দুগৰাকী মহিলাৰ মূৰ্তি স্থাপন কৰা হৈছিল। সোফালৰ পৰা সিংহৰ সৈতে যুঁজ কৰা এজন পুৰুষ, বাঁহী বজাই থকা এজন ব্যক্তিৰ কাষত এগৰাকী নৃত্যৰত মহিলা, কড়ি খেলি থকা দুজন লোক, ঢোল বজাই থকা পুৰুষ আৰু নাচি থকা মহিলা, বীণা বজোৱা এগৰাকী মহিলা আৰু সোফালে নাচি থকা এগৰাকী মহিলা, এজন ঢোল বজোৱা লোক আৰু তেওঁৰ বাওঁফালে নাচি থকা তিৰোতা আদি খলপাত স্থাপন কৰি মন্দিৰৰ সৌন্দৰ্য বৰ্ধন কৰিছিল।

মন কৰিব লগা কথাটো হ'ল উনৈশ শতিকাৰ আগভাগত অসম ৰাজ্য শাসন কৰিবলৈ অহা ইংৰাজ বিষয়াসকলে অসমৰ স্থাপত্য ভাস্কৰ্যৰ ভগ্নাৱশেষৰ প্ৰতি আকৃষ্ট হৈ এই বিষয়সমূহ অধ্যয়ন কৰি ৰেষ্ট কটৰ, ডেলটন, হান্নাই আদিয়ে লিখিছিল। সেই সময়ত ছবি তোলাৰ সুবিধা নথকা বাবে ভগ্নাৱশেষৰ ছবিসমূহ অংকন কৰি প্ৰকাশৰ দিহা কৰিছিল। সেইসমূহৰ ভিতৰত ১৮৫৫ চনত প্ৰকাশ পোৱা। Taite Dalton ৰ *Notes on Assam Temple ruins* উল্লেখযোগ্য।

আৰ্কিয়'লজিকেল ছাৰ্ভে অভ ইণ্ডিয়াৰ প্ৰাক্তন পূব মাণ্ডিলক বিষয়া আৰ. ডি. বেনাৰ্জীয়ে ১৯২৪-২৫ খ্ৰীঃৰ বছৰেকীয়া প্ৰতিবেদনত কৈছিল যে—"ভাৰতবৰ্ষৰ ভিতৰত কেৱল অসমৰ স্থাপত্য আৰু ভাস্কৰ্যৰ ইতিহাস আপ্ৰকাশিত হৈ আছে। এই সুদীৰ্ঘ সময়ৰ পিছতো সুৰেন্দ্ৰবৰ্মা আৰু মহাভূতিবৰ্মাৰ ৰাজত্ব কালৰ লিপি আৰু ভগ্নাৱশেষৰ বাহিৰে ইয়াতোকৈ প্ৰাচীনতৰ কোনো সাক্ষ্য এতিয়াও আৱিষ্কাৰ হোৱা নাই। কিন্তু প্ৰাচীন লিপিসমূহত বৰ্ণিত প্ৰসাদ আৰু মন্দিৰৰ অৱস্থানে কিছু লিখিত প্ৰমাণ ধৰি ৰাখিছে। নৱম শতিকাৰ

বনমাল দেৱৰ তেজপুৰ শাসনত থকা গীতবাদ্যৰ ধ্বনিৰে মুখৰিত মন্দিৰৰ উল্লেখ আৰু নগাঁও শাসনত থকা অতুলনীয়, বিশাল অনেক কোঠাযুক্ত, চিত্ৰৰ অন্তৰ্ভাগ শোভিত প্ৰসাদৰ বিৱৰণ, বলবৰ্মাৰ (নৰম শতিকাৰ) হাওৱাঘাটত প্ৰাপ্ত শাসনত থকা অতুলনীয় আৰু প্ৰকাণ্ড স্তম্ভযুক্ত আৰু প্ৰকোষ্ঠযুক্ত, বিস্ময় অনুভৱ হোৱা আৰু ছবিৰে সজোৱা আট্টালিকা শ্ৰেণীৰ বিৱৰণে, একাদশ শতিকাৰ ইন্দ্ৰপালদেৱৰ প্ৰথম তামৰ ফলিত থকা শিৱ মন্দিৰৰ উল্লেখে বিভিন্ন প্ৰসংগ স্পষ্ট কৰে।"[৩]

১৯২৫-২৬ খ্ৰীঃৰ বছৰেকীয়া প্ৰতিবেদনত তেজপুৰৰ পূব দিশত থকা বামুণী পাহাৰৰ ভগ্নাৱশেষৰ বিস্তাৰিত ৰূপত আলোচনা কৰিছে। এই প্ৰতিবেদনৰ মতে, বামুণী পাহাৰৰ ভগ্নাৱশেষসমূহ— সাতটা মন্দিৰৰ ভগ্নাৱশেষৰ সমষ্টি। ইয়াৰে চাৰিটা মন্দিৰ চতুৰ্ভূজ আকাৰৰ ভূমিৰ চাৰিকোণত অৱস্থিত আছিল। দুটা মন্দিৰ চতুৰ্ভূজ আকাৰৰ এটা ভূমিভাগৰ মাজত আৰু আন এটা পূব দিশত। ঊনবিংশ শতিকাৰ আগভাগলৈ মন্দিৰ দুটাৰ গৰ্ভগৃহৰ মজিয়া অক্ষত অৱস্থাত আছিল। মধ্যভাগত অৱস্থিত মন্দিৰ দুটাৰ এটা মন্দিৰ তুলনামূলকভাৱে সৰু আছিল। বৃহৎ মন্দিৰটোৰ পূবলৈ মুখ কৰা। মণ্ডপ আৰু গৰ্ভগৃহৰ অন্তৰালত থকা বৃত্তাকাৰ ভাস্কৰ্য খচিত খটখটিয়ে বিভাজিত কৰিছিল। বিশাল মন্দিৰটো চৌকাঠৰ দুয়োফালে খলপা কটা আৰু মধ্যত সৰু মন্দিৰৰ প্ৰতীকেৰে অলংকৰণ কৰা হৈছিল। বাওঁহাতৰ চৌকাঠৰ বৰ্গাকাৰ আৰু গোলাকাৰ দুয়ো অংশতে গোলাপ ফুলেৰে সজোৱা হৈছিল। সো-কাষৰ চৌকাঠত বগাই যোৱা লতাফুল আছিল। প্ৰত্যেকটোৰ সমান্তৰাল শাৰীতে, এটা এৰি আনটো খুলনিত তিনিটাকৈ ক্ষুদ্ৰ মন্দিৰ স্থাপন কৰা হৈছিল। দুৱাৰৰ ওপৰত আৰু দুয়োকাষৰ খুটাৰ শীৰ্ষভাগত গোলাকাৰ কৰি, বেৰত ধেনুভিৰীয়া তলি সংযোগ কৰা হৈছিল। ভাজবিলাক সৰু ডাঙৰ আছিল। সৰু ভাজত পুৰুষ বা মহিলা সেৱক-সেৱিকা আৰু ডাঙৰ ভাজত, নৰসিংহ, পৰশুৰাম, বলৰাম, বৰাহ বিষ্ণু আৰু ৰামচন্দ্ৰ অৱতাৰৰ মূৰ্তি স্থাপন কৰা হৈছিল। বৰ্গাকাৰ ভাজবিলাকত যোৰ পাতি নৃত্য কৰা মহিলাৰ মূৰ্তি আছিল।

তেজপুৰ দ-পৰ্বতীয়া গাঁৰৰ ভগ্নাৱশেষৰ সংক্ৰান্তত আৰ. ডি. বেনাৰ্জীয়ে বছৰেকীয়া প্ৰতিবেদনত উল্লেখ কৰিছে— "তেজপুৰ নগৰৰ কাষতে অৱস্থিত এখন সৰু গাঁও দ-পৰ্বতীয়া। এই বিশেষ গাঁওখনতে প্ৰাচীন কালৰ সমগ্ৰ ৰাজ্যখনৰ ভিতৰত আটাইতকৈ পুৰণি মন্দিৰটো আছিল। ইয়াতে খ্ৰীঃ ষষ্ঠ শতিকাত প্ৰতিষ্ঠা কৰা মন্দিৰৰ ওপৰত প্ৰতিষ্ঠা কৰা ইটাৰ শিৱ মন্দিৰ ভগ্নাৱশেষ। ইটাৰে নিৰ্মাণ কৰা মন্দিৰটো ষষ্ঠ শতিকাতে শিলেৰে নিৰ্মিত মন্দিৰৰ ভগ্নস্তূপৰ ওপৰত নিৰ্মাণ কৰা হৈছিল। এই মন্দিৰটো ১৮৯৭ খৃঃৰ ভূমিকম্পত ধ্বংস হৈছিল। ইটাৰ মন্দিৰটো ধ্বংস হোৱাত শিলৰ মন্দিৰটোৰ দুৱাৰৰ চৌকাঠ ওলাই পৰে। পিছত গঞাই খেৰ বাঁহৰ ঘৰ এটা নিৰ্মাণ কৰিছিল। কালত সেই ঘৰো জহি খহি গ'ল। মন্দিৰৰ ভেটিটো চাৰি ফুট মান ওখ আছিল। অঞ্চলটো ৰবৰ গছ আৰু অন্যান্য গছলতিকাই ঢাকি ৰাখিছিল। মাজত বৰ্গক্ষেত্ৰাকাৰ স্থানৰ সৈতে এশাৰী শিল সন্মুখত থিয় দি আছিল। সম্ভৱতঃ এই খালী স্থানতে শিৱলিংগ স্থাপন কৰা হৈছিল। চৌকাঠত কৰা অলংকৰণ গুপ্ত যুগৰ আগভাগৰ অলংকৰণৰ আৰ্হিত কৰা হৈছিল। এই বৈশিষ্ট্যৰ অলংকৰণ যুক্ত বহু সম্পদ ইতিমধ্যে জন মাৰচেল নামৰ পণ্ডিতজনে উত্তৰ ভাৰতৰ বিভিন্ন স্থানত উদ্ধাৰ কৰিছে। চৌকাঠৰ কাষৰ খুটাবিলাকৰ অলংকৰণ দুটা ভাগত কৰা হৈছিল। তলৰ অংশত শিল কাটি তলি নিৰ্মাণ কৰা হৈছিল আৰু ওপৰৰ অংশত চাৰিটাকৈ শিল কাটি তলি নিৰ্মাণ কৰা হৈছিল। তলৰ তলিবিলাকৰ প্ৰত্যেকতে এগৰাকী দেৱীমূৰ্তি আছিল। এই সকলৰ ওপৰত দেৱত্ব প্ৰকাশ কৰিবলৈ মূৰৰ পিছফালে জ্যোতি-চটা প্ৰয়োগেৰে প্ৰত্যেক দেৱী হাতত এধাৰ মালাৰে সৈতে হাস্য বান্দনা ৰূপ দিয়া হৈছে। ইয়াৰে ডাঙৰ আকাৰৰ দেৱী দুগৰাকীৰ এগৰাকী গংগা আৰু আনগৰাকী যমুনা বুলি পণ্ডিতসকলে মত প্ৰকাশ কৰিছে। এই মূৰ্তি মধ্যযুগৰ আৰু গুপ্তযুগৰ পৰম্পৰাৰ আধাৰতে প্ৰতিষ্ঠা কৰিছে। এই দুটা মূৰ্তিৰ লগত সৰু সৰু মূৰ্তিও আছিল। দুৱাৰৰ সোফালৰ তলত এখন হাতত চামৰলৈ আৰু অন্যহাতত ফুলৰ কৰণিলৈ দুগৰাকী মহিলা আছে। তৃতীয় মূৰ্তিয়ে হাতত চামৰ লৈ ডাঙৰ মূৰ্তিৰ পিছত থিয় দি আছে। বাওফালে থকা খলাত, এজোৰ উৰি অহা ৰাজহংসৰ প্ৰতিমূৰ্তি। তলৰ অংশটো সোফালৰ দৰে সংৰক্ষিত নহয়। ইয়াত আছে দুয়োহাতে দুটা অস্পষ্ট বস্তু হাতত লৈ থকা মহিলাৰ মূৰ্তি।

পৰ্বতীয়া মন্দিৰটো অকল সকলোতকৈ পৌৰাণিক মন্দিৰেই নহয়, এই মন্দিৰ পঞ্চম ষষ্ঠ শতিকাৰ প্ৰাগজ্যোতিষ কামৰূপ ৰাজ্যৰ স্থাপত্য কলা উৎকৃষ্ঠ নিদৰ্শন। এই মন্দিৰ ভাস্কৰ বৰ্মনৰ কোনো উপৰি পুৰুষৰ এজনে প্ৰতিষ্ঠা কৰিছিল। মন্দিৰটোৰ পৰিষ্কাৰ কৰোতে ভালেমান পোৱা মাটিৰ বহি থকা মানুহৰ মূৰ্তি উদ্ধাৰ হৈছে। ইয়াত থকা অন্য দুটা বিশেষত্বপূৰ্ণ মূৰ্তি হ'ল গংগা যমুনাৰ। এই মূৰ্তিৰ গঠন প্ৰণালী চাৰিত্ৰিক ভাৱে গ্ৰীক ধাৰাৰ হ'লেও শাৰীৰিক গঠনৰ সুসমতা

প্ৰতি লক্ষ্য কৰি, এই মূৰ্তিৰ সাদৃশ্য হেলেনিক কলাৰ লগত অধিক।

প্ৰাচীন পবিত্ৰ স্থাপত্য ভাস্কৰ্য সম্ভাৰ অকল তেজপুৰ বা গুৱাহাটীতে সীমা বদ্ধ নহয় এইবিলাক কামৰূপ ৰাজ্যৰ বিভিন্ন প্ৰান্তত সিঁচৰতি হৈ আছে। তেনে দুটা মূৰ্তি উদ্ধাৰ হৈছে - গোলাঘাট ডিমাপুৰ পথত। মূৰ্তি দুটাৰ এটা বিষ্ণু মূৰ্তি। মূৰ্তিটোৰ সংক্ৰান্তত কে. এন দীক্ষিতে কৈছে — "এই মূৰ্তিটো নৱম শতিকাৰ কামৰূপ ৰাজ্যৰ ভাস্কৰ্য কলাৰ উৎকৃষ্ট নিদৰ্শন। ইয়াত ব্যৱহৃত লিখন ৰীতি, তেজপুৰৰ হৰজৰ বৰ্মনৰ লিখন ৰীতিৰ সৈতে একে। মূৰ্তিটো সোহাত এখন আৰু ভৰিটো বগা। শিৰৰ পিছফালে দিয়া জ্যোতি চটা বা জ্যোতিমংগল নাই, সেয়া হেৰাইছে। বাওঁফালৰ ওপৰৰ হাতত শংখ, তলৰ হাতত গদাই শোভা বৰ্ধন কৰিছে। বিষ্ণুৱে ধাৰণ কৰা সকলো অলংকাৰ কৌস্তুভমণি, শ্ৰীবৎস, পৱিত্ৰ উত্তৰীয়, আজানুলম্বিত বনমালা আদি সকলো আভৰণ ধাৰণ কৰিছে। মুখাৱয়ত তলৰ ওঁঠ শিৰৰ আভৰণ আদিত শেযাস্থাৰ গুপ্তভাস্কৰ্যৰ প্ৰভাৱ বিৰাজমান। তলত অশুদ্ধ সংস্কৃত শ্লোক এটা খোদিত আছে।"

প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য আৰু ভাস্কৰ্য ধ্বংসাৱশেষ দৰং জিলাৰ বিশ্বনাথ আৰু শিৱসাগৰ জিলাৰ নেঘেৰীটিঙত উদ্ধাৰ হৈছে। নেঘেৰীটিঙত অৱস্থিত দৌলটো আহোম শাসকে এটা প্ৰাচীন শৈৱ মন্দিৰ মন্দিৰৰ ভগ্নাৱশেষৰ ওপৰত নিৰ্মাণ কৰিছিল। আহোম শাসকে গুৱাহাটীত নিৰ্মাণ কৰা উমানন্দ আৰু অশ্বকান্ত মন্দিৰত প্ৰাচীন মন্দিৰৰ শিল আৰু ভাস্কৰ্য ব্যৱহাৰ কৰিছিল। অশ্বক্ৰান্তত সংযোগ ঘটা অনন্ত শৰ্যাত শায়িত মূৰ্তি দশম একাদশ শতিকাৰ ভাস্কৰ্য। এই ভাস্কৰ্য উচ্চ কলা সমৃদ্ধ। অন্য এটা সমৃদ্ধ ভাস্কৰ্য হ'ল গুৱাহাটী যাদু ঘৰত সংৰক্ষিত বিষ্ণু মূৰ্তি। এই মূৰ্তিটো স্কীষ্ট জাতীয় কলা শিলত কটা হৈছে। এই ধ্যানী বিষ্ণুৰ দেৱ আৱৰণ দুৰ্গা, গণেশ, কাৰ্তিক আৰু পখাৰে সৈতে গৰুড় বিগ্ৰহ পদতলত অৱস্থিত। কে. এন. দীক্ষিতে জনোৱা মতে, 'বিষ্ণুৰ সোহাতে গণেশ আৰু মহিষ মন্দিনীক প্ৰতিষ্ঠা কৰা কাৰ্যই বিষ্ণু পঞ্চ দেৱতাৰ কেন্দ্ৰ হিচাপে চিহ্নিত কৰা বুলি যুক্তিযুক্ততা প্ৰতিপন্ন কৰে। বাওঁদিশে থকা মূৰ্তি দুটা শিৱ আৰু সূৰ্য দেৱতা বুলি ভবাৰ অৱকাশ আছে যদিও প্ৰকৃততে তেওঁলোক ভিন্ন দেৱতাৰ। ওপৰৰ মূৰ্তিটো আকৃতি প্ৰকৃতিৰ পৰা হনুমান বা অন্য কোনো বিষ্ণুৰ আলধৰা আৰু মূৰ্তিটোৰ অন্য কাষে কোনো আত্ম সংযমী সাধকে লেপেতকাঢ়ি বহি থকা সাধক। শিৱসাগৰৰ মহকুমা বিষয়াৰ বাসস্থানৰ ওচৰত এনে কিছু ভাস্কৰ্য আৰু স্থাপত্যৰ ভগ্নাৱশেষ সংৰক্ষিত হৈছে। এইবিলাক, নৱম আৰু দশম শতিকাৰ ভিতৰত নিৰ্মিত এটা বিষ্ণু মন্দিৰৰ ভগ্নাৱশেষ। বিষ্ণু মন্দিৰটো এই অঞ্চলতে প্ৰতিষ্ঠা হৈছিল।' দীক্ষিতে লগতে কৈছে যে মন্দিৰৰ স্থাপত্য কলাৰ সৌন্দৰ্যৰ লগত তেজপুৰ আৰু বামুণী পাহাৰৰ স্থাপত্য ভাস্কৰ্যৰ সাদৃশ্য আছে।

বংগৰ পাল বংশ শাসন কালৰ জোখতকৈ অধিক বাঢ়ি অহা তলিৰ স্থাপত্য ভাস্কৰ্য কলাতকৈ কামৰূপ শিল্প কলাই মগধ আৰু উত্তৰ ভাৰতৰ কলা সংস্কৃতিয়ে কামৰূপ ৰাজ্যৰ কলা সংস্কৃতিক প্ৰভাৱম্বিত কৰিছিল। কামৰূপ ৰাজ্যৰ স্থাপত্যৰ অভিযান্ত্ৰিক নিদৰ্শন হ'ল - শিল সাকো (দলঙ)। উত্তৰ গুৱাহাটীৰ পশ্চিমাঞ্চলত বৰনদীৰ জুৰি এটাৰ ওপৰত এডাল শিল সাকোঁ আছে। ১২০৬ খৃঃত এই ডাল সাকোৰে মহম্মদ-ই-বসতিয়াৰ আৰু তেওঁৰ অশ্বাৰোহী বাহিনীৰ সৈতে পাৰ হৈ তিৰ্বত অভিযান কৰিবলৈ যাত্ৰা কৰিছিল। এই সাকোঁ ১৮৯৭ খৃঃৰ ভূমিকম্পত নষ্ট হৈছিল। হেন্নাই চাহাবৰ ১৮৫১ খৃঃৰ টোকামতে, 'শিলৰ সাকোঁডালত ব্যৱহাৰ কৰা শিলবিলাক বৰ্গাকাৰ আৰু মিহি। এইবিলাক সাকো নিৰ্মাণ কৰোতে আকাৰ আৰু ভৰৰ বাবে অধিক শক্তি আৱশ্যক হৈছিল। সেইফালৰ পৰা কৌশল শক্তি আৰু দৃঢ়তাৰ ফলস্বৰূপে সাকোঁ আজি (১৮৫১খৃঃ) লৈ অক্ষত অৱস্থাত আছে। মাত্ৰ সাকোঁডালৰ দুয়োটা মূৰতে দুজোপা বৃক্ষই বিশাল আকাৰৰ বৰ্গাকাৰ শিলাখণ্ড মূল স্থানৰ পৰা আঁতৰাই পেলাইছিল। ভাগি পৰা খুটা এটা পৰ্যবেশন কৰি দেখা গ'ল যে বিশাল শিলৰ টুকুৰাবিলাক ওপৰৰ চটাৰ লগত তলৰ চটা লোৰ শলাৰে শালি ৰখা হৈছিল। টুকুৰাবিলাকৰ চাৰি কোণত চাৰিটা আৰু মাজত লোৰ শাল মৰা হৈছিল। সাকোৰ ধৰণীৰ ওপৰত দিয়া চটা শিলত চেপেনা লগোৱা খুলনি দেখা পোৱা গৈছিল। চটাশিলৰ বাহিৰ কাষত তিনি বৰ্গ ইঞ্চিৰ চেপেনাৰ অনুপাতিক খোলনি আছিল। সমান্তৰালভাৱে অলংকিতকৰা কিছুমান শিলাখণ্ড সাকোৰ দুয়ো মূৰে পৰি আছিল। এইবিলাক সাকোৰ দুয়ো মূৰে নিৰ্মাণ হোৱা তোৰণৰো হ'ব পাৰে।

উপসংহাৰ ঃ

উন্নত স্থাপত্য আৰু উন্নত ভাস্কৰ্যই একোটা অঞ্চলৰ উন্নত সভ্যতা আৰু সংস্কৃতিৰ ইতিহাস ধৰি ৰাখিব পাৰে। এনে ক্ষেত্ৰত বৰ্মন বংশৰ ৰাজত্বৰ সময়ৰেপৰা উন্নত আৰু পৰিশীলিত তেনে সভ্যতা আৰু সাংস্কৃতিক দিশৰ আধাৰ প্ৰতিষ্ঠা হোৱা কথা ক'ব পৰা হয়। প্ৰাক্ আহোম যুগৰ স্থাপত্য-ভাস্কৰ্যৰ অভিযান্ত্ৰিক নিদৰ্শন শীৰ্ষক আলোচনা পত্ৰৰ জৰিয়তে

সেই সময়ছোৱাৰ সভ্যতা সংস্কৃতিৰ প্ৰবাহৰ মান বিস্তৃত হোৱাৰ কথাও উল্লেখনীয়। বিশেষকৈ প্ৰাক্ আহোম যুগৰ এই স্থাপত্য বিদ্যা আৰু ভাস্কৰ্যশিল্পসমূহৰ কলাগত আৰু শৈলীগত দিশে প্ৰাচীন সময়তে মানুহ মন-মগজুত তেনে আভিযান্ত্ৰিক দিশৰ পোখা মেলিছিল। য'ত আমাৰ সভ্যতা আৰু সংস্কৃতিৰ বাহক হিচাপে বহুতো তেনে প্ৰাচীন পবিত্ৰ স্থাপত্য আৰু ভাস্কৰ্য সম্ভাৰৰ সাক্ষ্য আমাৰ মাজত আছে। বৰ্মন বংশৰ ৰাজত্বৰ সময়তে আধাৰ প্ৰতিষ্ঠা হোৱা এনে স্থাপত্য বিদ্যা আৰু ভাস্কৰ্যশিল্পসমূহৰ বিকাশ পাল বংশৰ শাসন অন্ত পৰাৰ কেইবাটাও শতিকালৈ স্থবিৰ হৈ পৰিছিল। কিয়নো কোঁচ, কছাৰী, চুতীয়া আৰু আহোমৰ ৰাজত্ব কালত হোৱা বিভিন্ন যুঁজ-বাগৰে তেনে শিল্পকৰ্মৰ বিকাশত পৃষ্ঠপোষকতা আগবঢ়োৱা নাছিল। সিয়ে হ'লেও কছাৰী আৰু কোঁচ ৰজাৰ পৃষ্ঠপোষকতাত তেনে স্থাপত্যকলা বিকাশত মনোনিৱেশ কৰা দেখা যায়। শিলৰ স্থাপত্যবিদ্যা আৰু ভাস্কৰ্য শিল্পৰ বিকাশ স্থবিৰ হোৱাৰ পৰৱৰ্তি সময়ত বিশেষকৈ পঞ্চদশ শতিকাত শংকৰদেৱৰ হাতত এনে জাগৰণে পূৰ্ণতা লাভ কৰি বিকাশৰ পথত অগ্ৰসৰ হয়। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থ ঃ

কাকতি, বাণীকান্ত (সম্পা.) ঃ *পুৰণি কামৰূপৰ ধৰ্মধাৰা,* বাণী প্ৰকাশ, ডিব্ৰুগড়, ১৯৫৫

দত্ত, মনোৰঞ্জন ঃ *অসমৰ ভাস্কৰ্যৰ ইতিহাস,* স্বপ্না পাব্লিচাৰ্চ, গুৱাহাটী

নাথ, ভৱকান্ত (অনু.) ঃ *অসমীয়া সংস্কৃতিৰ পটভূমি,* বাণী মন্দিৰ, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, ২০০৯

নেওগ, মহেশ্বৰ ঃ *প্ৰাচ্য-শাসনাৱলী,* অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৭৪

নেওগ, মহেশ্বৰ (সম্পা.) ঃ *বাণীকান্ত ৰচনাৱলী,* অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, চতুৰ্থ প্ৰকাশ, ২০১৮

ভূঞা, সূৰ্য্যকুমাৰ (সম্পা.) ঃ *অসম বুৰঞ্জী,* বাণী মন্দিৰ, ডিব্ৰুগড় , ১৯৬০

ভূঞা, সূৰ্য্যকুমাৰ (সম্পা.) ঃ *কামৰূপৰ বুৰঞ্জী,* অসম চৰকাৰৰ বুৰঞ্জী আৰু পুৰাতত্ত্ব বিভাগ, গুৱাহাটী, পঞ্চম সংস্কৰণ, ২০১৭

ভূঞা, সূৰ্য্যকুমাৰ (সম্পা.) ঃ *দেওধাই অসম বুৰঞ্জী,* অসম চৰকাৰৰ বুৰঞ্জী আৰু পুৰাতত্ত্ব বিভাগ, গুৱাহাটী, চতুৰ্থ সংস্কৰণ, ২০০১

ভূঞা, সূৰ্য্যকুমাৰ (সম্পা.) ঃ *কছাৰী বুৰঞ্জী,* অসম চৰকাৰৰ বুৰঞ্জী আৰু পুৰাতত্ত্ব বিভাগ, গুৱাহাটী, তৃতীয় সংস্কৰণ, ১৯৮৪

শইকীয়া, নগেন ঃ *অসমীয়া মানুহৰ ইতিহাস,* কথা প্ৰকাশন, ২০১৩

শইকীয়া, চন্দ্ৰপ্ৰসাদ ঃ *পদ্মনাথ গোহাঞিবৰুৱা,* অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, ২০০৭

Ahmed, K. : *The Art and Architecture of Assam,* Spectrum Publication, 1994

Banerji, R. D. : *Archaeological Survey of India, Annual Report* 1924-25

Banerji, R. D. : *Archaeological Survey of India, Annual Report* 1925-26

Bhattacharya, Tarapada : *A Study on Vastubidya or Canons of Indian Architecture,* University of Calcutta, 1948

Dikshit, K. N. : *Puratattva,* Bulletin of the Indian Archaeological Society, Indian Archaeological Society Publication, 1993

Majumdar, R.C. (Ed.) : *The Struggle for àßmpire,* Bharatiya Vidya Bhavan, 1957

Nath, Raj Mohan : *The Back-Ground of Assamese Culture,* Published by A. K. Nath, Mimosa Ridge, First àßdition, 1948

গৱেষণা গ্ৰন্থ ঃ

বড়া, অনুপম ঃ *আহোম যুগৰ শৈল-ভাস্কৰ্য ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন,* ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়ৰ অসমীয়া বিভাগৰ অধীনত পিএইচ. ডি. ডিগ্ৰীৰ বাবে দাখিল কৰা গৱেষণা গ্ৰন্থ, ২০২১

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

উজনি অসমৰ নক্টে সমাজৰ উৎসৱ-অনুষ্ঠান ঃ এক ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়ন

ড° খনিকৰ মাউত

সহকাৰী অধ্যাপক
বৰভাগ মহাবিদ্যালয়
কালাগ, নলবাৰী-৭৮১৩৫১
৮৬৩৮৮৮৫৩৪২
khanikarmaut@gmail.com

০.১ প্ৰস্তাৱনা ঃ

লোক-জীৱনৰ সামগ্ৰিক ৰূপেই হ'ল লোক-সংস্কৃতি। 'লোক' সমাজত পৰম্পৰাগতভাৱে যি সংস্কৃতি জীয়াই আছে তাক লোক-সংস্কৃতি বুলি অভিহিত কৰিব পাৰি। পৰম্পৰাগতভাৱে মানুহৰ মাজত প্ৰচলিত ৰীতি-নীতি, বিশ্বাস, ৰুচি-অভিৰুচি আদিৰ দ্বাৰাই লোক-সংস্কৃতি সৃষ্ট। লোক-সংস্কৃতি যুগ-সাপেক্ষ, মানৱৰ অভিৰুচি অনুসৰি লোক-সংস্কৃতিলৈ পৰিৱৰ্তন আহে। লোক-সংস্কৃতিৰে এক অভিন্ন অংগ লোকাচাৰ। লোক সমাজত প্ৰচলিত বিবিধ অনুষ্ঠান, আচাৰ, অৱসৰ-বিনোদন আৰু খেল-ধেমালি, লোকচিকিৎসা আদিকেই সামগ্ৰিকভাৱে লোকাচাৰ বোলা হয়। লোকসংস্কৃতিৰ অন্তৰ্গত লোক সাহিত্য, ভৌতিক সংস্কৃতি, লোক পৰিৱেশ্য কলাৰ সৈতেও লোকাচাৰ জড়িত হৈ আছে। যিবোৰ সামাজিক আচাৰ-পদ্ধতিয়ে লোকাচাৰক গঢ়ি তোলে, তাৰ সৈতে অন্য কিছুমান সামাজিক আচৰণ সংযুক্ত হৈ উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰ জন্ম দিয়ে। সামাজিক লোকাচাৰৰ এক অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ অংশ হ'ল উৎসৱ-অনুষ্ঠান। অসমত বসবাস কৰা জনগোষ্ঠীৰ সামাজিক উৎসৱ-অনুষ্ঠান ক্ষেত্ৰত যথেষ্ট বৈবিধ্যতা আৰু স্বতন্ত্ৰ ৰূপ দেখিবলৈ পোৱা যায়। অসমত বসবাস কৰি থকা জনজাতিসমূহৰ মাজত নগা জনজাতিসমূহৰ অন্যতম। অসমত কন্যাক, চেমা, নক্টে, ৰান্‌ছু আদি কেইবাটাও নগা জনগোষ্ঠী বসবাস কৰি আছে। এই প্ৰত্যেকটো জনগোষ্ঠীৰে কেতবোৰ নিজা উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰে সমৃদ্ধ। এই গৱেষণা-পত্ৰখনিত অসমত বাস কৰা নগাসকলৰ এক অন্যতম জনগোষ্ঠী নক্টে (Nocte) সকলৰ উৎসৱ-অনুষ্ঠান সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হৈছে।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

- নক্টেসকলৰ সমাজ আৰু সংস্কৃতিৰ ঐতিহাসিক প্ৰেক্ষাপটক বিচাৰ কৰা।
- নক্টেসকলৰ উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰ বিভিন্ন দিশত আলোকপাত কৰা।
- নক্টেসকলৰ উৎসৱ-অনুষ্ঠানত সাংস্কৃতিক সমাহৰণৰ প্ৰভাৱক বিচাৰ কৰা।

০.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা-পত্ৰখনৰ বিষয়বস্তু ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়নৰ পৰা আহৰণ কৰা তথ্যৰ আধাৰত আলোচনা কৰা হৈছে।

আলোচনা কৰিবৰ বাবে মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি (Analytical Method) অৱলম্বন কৰা হৈছে। প্ৰয়োজনসাপেক্ষে তুলনামূলক পদ্ধতিৰো সহায় লোৱা হৈছে।

০.৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

এই গৱেষণা-পত্ৰৰ অধ্যয়নৰ পৰিসৰত মূলতঃ নক্টেসকলৰ উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰ বিভিন্ন দিশক সামৰি লোৱা হৈছে। বিষয়বস্তুৰ লগত সংগতিপূৰ্ণ অন্য সামাজিক-সাংস্কৃতিক দিশৰো অৱতাৰণা কৰা হ'ব।

০.৫ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ স্থান আৰু কৌশল ঃ

এই গৱেষণা-পত্ৰৰ ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়নৰ বাবে ব্যৱহাৰ কৰা কৌশলসমূহ উল্লেখ কৰা হ'ল ঃ

(ক) পৰ্যবেক্ষণ (Observation)

(খ) সংৰচিত প্ৰশ্নসূচী (Structural Questionnaire scheduled)

(গ) অসংৰচিত সাক্ষাৎকাৰ, কথোপকথন, বাণীবদ্ধকৰণ আৰু লিপিবদ্ধকৰণ (Recording of unstructural interview, audio recording an conversation)

উজনি অসমত ঘাইকৈ শিৱসাগৰ আৰু ডিব্ৰুগড় জিলাৰ অঞ্চলবিশেষে নক্টেসকলৰ সমূহীয়া বসতি পোৱা যায়। এই অধ্যয়নৰ বাবে ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়ন চলোৱা অঞ্চলসমূহ হ'ল—

(ক) দিহিং কিনাৰ গাঁও ঃ

ডিব্ৰুগড় জিলাৰ জয়পুৰ ৰাজহ চক্ৰৰ অন্তৰ্গত দিহিংকিনাৰ নক্টে গাঁও জয়পুৰ নগৰ অঞ্চলৰ পৰা উত্তৰে দুই কিলোমিটাৰ দূৰত বুঢ়িদিহিং নৈৰ সমীপত অৱস্থিত। গাঁওখনত মুঠ ৪৫ ঘৰ নক্টে লোক বাস কৰি আছে আৰু গাঁওখনৰ মুঠ জনসংখ্যা ৫০০ জনৰ অধিক। গাওঁখনৰ সৰহ সংখ্যক লোকেই সাক্ষৰ। এইসকল নক্টেলোক বৈষ্ণৱ ধৰ্মাৱলম্বী।

(খ) শিলনী গাঁও ঃ

শিৱসাগৰ জিলাৰ সাপেখাটি ৰাজহ চক্ৰৰ অৰ্ন্তগত শিলনী গাঁও বৰপাত্ৰ চাহ বাগিছাৰ নিকটত অৱস্থিত। ইয়াত ৩০ ঘৰৰো অধিক নক্টেলোক বাস কৰি আছে। শিলনী গাঁৱৰ নক্টেলোকৰ সংখ্যা ২০০ ৰ পৰা ২৫০ভিতৰত। এইসকল নক্টেলোক বৈষ্ণৱ ধৰ্মাৱলম্বী।

(গ) বৰদুৰিয়া, পানীদুৰিয়া ঃ

অৰুণাচল প্ৰদেশৰ টিৰাপ জিলাৰ খুনছা ৰাজহ চক্ৰৰ অৰ্ন্তগত বৰদুৰিয়া, পানীদুৰিয়া নক্টে লোকৰ আবাসভূমি। ২০০১ৰ লোকপিয়ল অনুসৰি বৰদুৰিয়াত ১৫৮৯ টা আৰু পানীদুৰিয়াত ৪০৬টা নক্টে পৰিয়াল বাস কৰে। বৰ্তমান এই অঞ্চলৰ নক্টেসকলৰ অধিকাংশই খ্ৰীষ্টান ধৰ্ম গ্ৰহণ কৰিছে।

১.০ নক্টেসকলৰ ঐতিহাসিক প্ৰেক্ষাপট

নগাসকল ভাৰতৰ উত্তৰ-পূব আৰু বাৰ্মাৰ উত্তৰ-পশ্চিম অঞ্চলৰ বাসিন্দা। নগা জনজাতিসমূহৰ মাজত নক্টে (Nocte) অন্যতম। ভাৰতৰ উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ ঘাইকৈ অৰুণাচল প্ৰদেশত বসতি কৰি থকা নক্টেসকল নিজা ভাষিক আৰু সাংস্কৃতিক পৰিচয়েৰে সমৃদ্ধ এটা উল্লেখযোগ্য জনজাতি। নক্টে শব্দটোৰ ব্যুৎপত্তিগত অৰ্থ হ'ল 'নক' মানে গাঁও আৰু 'টে' মানে মানুহ; অৰ্থাৎ গাঁওত বাস কৰা লোক।[১] এই জনজাতিটোৰ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাৰ পূৰ্বে নগা জনজাতি সম্পৰ্কে দুআষাৰ আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়োজনীয়তা আহি পৰে। 'নগা' অভিধাটোৰ দ্বাৰা সমধৰ্মী সামাজিক-সাংস্কৃতিক উপাদানৰে সমৃদ্ধ নাগালেণ্ড, মণিপুৰ, দক্ষিণ-পূব অৰুণাচল প্ৰদেশ আৰু অসমৰ অঞ্চল বিশেষে বাস কৰি থকা বহুকেইটা জনজাতিক বুজোৱা হয়। নাগালেণ্ডৰ আও, আংগামী, ছেমা, লোথা, ৰেংমা, কন্যাক, ফোম, ৰেংমা আদি জনজাতি, মণিপুৰত টাংখুল, মাও, কাবুই, অৰুণাচল প্ৰদেশৰ নক্টে আৰু ৱানছু, অসমৰ জেমি, ৰংমি, (উত্তৰ কাছাৰ পাৰ্বত্য অঞ্চল) আদি জনজাতিক বৃহত্তৰ নগা জাতিৰ মাজত অন্তৰ্ভুক্ত কৰা হয়।[২] নগা জনজাতিৰ অন্তৰ্গত সৰ্বাধিক লোক নাগালেণ্ডত বাস কৰে।[৩] নগা জনগোষ্ঠীসমূহৰ অন্তৰ্গত শাখাসমূহক যিবোৰ নামেৰে নামকৰণ কৰা হৈছে, সেই নামসমূহৰে সুকীয়া ৰূপ তেওঁলোকৰ লগতে অন্য জনগোষ্ঠীৰ মাজতো পোৱা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে, আও নগাসকলে নিজক 'আও' আৰু 'আওৰ' বুলি চিনাকি দিয়ে, অন্যহাতে 'চেমা', 'লোথা' আৰু 'কন্যাক' নগাসকলে 'আও'সকলক ক্ৰমে 'চুলিমি' (cholimi), 'চুনগলি' (chongli) আৰু 'পেইমি' (Paimi) বুলি সম্বোধন কৰে।[৩] আহোম ৰাজত্বকালৰ সময়ত নগা জনজাতিসমূহক অঞ্চলভিত্তিক নামেৰে নামকৰণ কৰা হৈছিল। 'আও'সকলক হাতীগৰীয়া আৰু দোপডৰীয়া, কন্যাকসকলক নামচাঙীয়া, ফুমসকলক এচিৰিঙিয়া,[৫] নক্টে সকলক বৰদুৱৰীয়া, পানীদুৱৰীয়া[৬] আদি 'চাঙ' বা অঞ্চলভিত্তিক নামেৰে অভিহিত কৰা হৈছিল।

নক্টেসকলৰ ইতিহাস সম্পৰ্কীয় তথ্য বৰ্তমানলৈকে পৰ্যাপ্তৰূপত পোৱা নাযায়। যিহেতু নগাসকলৰ মাজত লিখন পৰম্পৰা অতীজতে নাছিল, সেয়ে লোককথা, অন্য ঐতিহাসিক তথ্য-সমলৰ গইনা লৈহে তেওঁলোকৰ সম্পৰ্কে কিছু কথা জানিব পাৰি। আহোম যুগৰ বুৰঞ্জী, চৰিত পুথি আদিত নক্টেসকলৰ সম্পৰ্কে বিক্ষিপ্ত ঐতিহাসিক তথ্য পোৱা যায়।

১.১ প্ৰব্ৰজন ঃ

নক্টেসকলৰ প্ৰব্ৰজন সম্পৰ্কে তেওঁলোকৰ মাজত কেইবাটাও লোককথাৰ প্ৰচলনৰ সম্ভেদ পোৱা যায়। এনে প্ৰচলিত লোককথাসমূহক বিশ্লেষণ কৰি এই কথা অনুমান কৰিব পাৰি যে, নক্টেসকল বাৰ্মাৰপৰা পাটকাই পাৰ হৈ বৰ্তমানৰ মূল বসতি স্থান টিৰাপ জিলালৈ আহিছিল। তেওঁলোক প্ৰথমে পাহাৰৰ ওখ ঠাইত বসতি কৰিবলৈ লয় আৰু কালক্ৰমত তাৰপৰাই নামনি অংশলৈও প্ৰব্ৰজিত হৈ নক্টেসকলে গাঁও পাতি বসতি কৰিবলৈ ধৰে। গৱেষক পাৰুল দত্তই তেওঁৰ *'Tribal Cheiftainship'* গ্ৰন্থত নক্টেসকলৰ প্ৰব্ৰজন বৰ্মাৰ হুকং উপত্যকাৰ পৰা হৈছে বুলি অনুমান কৰিছে। প্ৰচলিত এক প্ৰবাদ অনুসৰি নামচাং, বৰদুৰীয়া আৰু লাপটাং–তিনিও চাঙৰ ৰজাৰ বংশ মূলতঃ এক আছিল। প্ৰবাদ অনুসৰি তেওঁলোকৰ কোনোবা এজন ৰজা পাটকাই পৰ্বত পাৰ হৈ হুকং উপত্যকাৰ পৰা আহিছিল। তেওঁ পোনতে লাপটাঙত নিজৰ ৰাজ্য গঢ়ি তোলে। কিন্তু প্ৰজা তেওঁৰ প্ৰতি বিদ্ৰোহী হোৱাৰ কথা গম পাই পৰিয়ালসহ ৰাজ্য ত্যাগ কৰি খুনছালৈ পলাই যায়। তাৰপৰা নিনু, কামহুৱা, ন্যনু, চানু, বানফেৰা আদি অঞ্চলেদি ঘূৰি আহোম ৰজাৰ লগ লাগেহি। আহোমে নিজৰ ক্ষমতা প্ৰয়োগ কৰি পুনৰ তেওঁক কৰতীয়া ৰজা পাতে। পৰৱৰ্তী সময়ত ৰজাৰ পুতেক কেইজনৰ মাজত বিবাদৰ সূত্ৰপাত হৈ লাপটাং, নামচাং আৰু বৰদুৰীয়া এই তিনিঘৰ ৰজা হ'ল।[৮]

অন্য যিবোৰ জনপ্ৰবাদ আছে সেইসমূহৰ বিশ্লেষণ আৰু গৱেষক পাৰুল দত্তৰ মতৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি নক্টে সকলৰ আদি বসতিস্থান বৰ্তমানৰ ম্যানমান(বাৰ্মা) বুলি ঠাৰৰ কৰিব পাৰি। বৰ্তমানৰ অৰুণাচল প্ৰদেশৰ টিৰাপ অঞ্চললৈ নক্টেসকলৰ আগমন আহোমসকলৰ আগমনৰ আগতে অৰ্থাৎ বৰ্তমানৰ সময়ৰ পৰা ৮০০ বছৰ পূৰ্বে ঘটাৰ সম্ভাৱনাই অধিক। অসমৰ ভৈয়ামলৈ প্ৰব্ৰজন সম্পৰ্কে শিৱসাগৰ শিলনি গাঁৱত এক লোককথাৰ প্ৰচলন আছে। আহোম ৰাজত্বৰ সময়তেই বৰদুৰীয়া নগা ৰজাৰ সৈতে কৰ-কাটলক লৈ তেওঁলোকৰ চাঙৰ ৰজাৰ সংঘাত হয়। কিন্তু সংখ্যা লঘু হোৱাৰ বাবে পৰাস্ত হৈ তেওঁলোকে প্ৰায় দুশঘৰ লোক অসমৰ ভৈয়ামলৈ গুচি আহে। কিন্তু ইয়াৰ পিছত মহামাৰী হোৱাৰ বাবে একাংশ নক্টেলোক পুনৰ বৰ্তমানৰ টিৰাপ জিলালৈ ঘূৰি যায়। পৰৱৰ্তী সময়ত ব্ৰিট্ৰিছ শাসনৰ দিনত হোৱা জৰীপত তেওঁলোকৰ অৰ্থনৈতিক শোচনীয়তালৈ লক্ষ্য ৰাখি তেওঁলোকক থাকিবলৈ মাটি দান কৰা আৰু খাজনা ৰেহাই দিয়া হৈছিল।[৯]

স্বৰ্গদেউ চুপিমফাই (১৪৯৩-৯৭ খৃঃ) নামচাঙীয়া নগাক সগৰ্ভা চমুৱা কুঁৱৰীক গটোৱাৰ ঘটনাৰ উল্লেখ বুৰঞ্জীত আছে।[১০] পৰৱৰ্তীসময়ত ব্ৰিটিছ আমোলত প্ৰশাসনিক বিষয়া তথা মিছনেৰীসকলৰ প্ৰচেষ্টাত বিভিন্ন তথ্য নক্টেসকলৰ সম্পৰ্কে কেতবোৰ তথ্য লিপিবদ্ধ হ'ল। কিন্তু সেইসমূহৰ গ্ৰহণযোগ্যতা সম্পৰ্কে কোনো কোনো ক্ষেত্ৰত সন্দেহৰ অৱকাশ আছে। কেতবোৰ আলোচকে নগাসকলক অতি বৰ্বৰ, নগ্ন জনজাতিৰূপে প্ৰতিপন্ন কৰাত অধিক গুৰুত্ব দিছে। অন্যহাতে মিচনেৰীসকলৰ উদ্দেশ্য আছিল নগাসকলৰ মাজত খ্ৰীষ্টান ধৰ্ম প্ৰচাৰ। গতিকে নগাসকলৰ কল্যাণত বিশিষ্ট বৰঙণি আগবঢ়ালেও ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ বাবে তেওঁলোকে কোনো কোনো ক্ষেত্ৰত নগাসকলৰ পৰম্পৰা, লোকধৰ্মক কটু সমালোচনা কৰিছিল। আহোম শাসনৰ সময়ত নক্টেসকলক পানীদুৰীয়া, বৰদুৰীয়া, নামচঙীয়া নগাৰূপেহে জনা গৈছিল। সাম্প্ৰতিক সময়ত এই অঞ্চলসমূহ বৰদুৰিয়া, পানীদুৰিয়া আদি নামেৰে জনা যায়। নক্টেসকলৰ সন্দৰ্ভত লীলা গগৈয়ে এক গুৰুত্বপূৰ্ণ মন্তব্য আগবঢ়াইছে যে, নক্টেসকলৰ ৰজাৰ গোষ্ঠী হুকং উপত্যকাৰ পৰা অহা টাইজাতীয় মানুহ। নামচাং, লাপ্টাং আৰু বৰদুৰীয়া মূলতঃ একে বংশৰ। অন্যান্য চাংবিলাকৰ ৰজা নক্টে গোষ্ঠীৰে।[১১] লীলা গগৈৰ এই মন্তব্যটোৰ গ্ৰহণযোগ্যতা কিমান তাক বিচাৰ কৰিবলৈ পৰ্যাপ্ত তথ্যৰ অভাৱ। কিয়নো মতটো প্ৰতিষ্ঠা কৰিবলৈ তেখেতে যথাযথ প্ৰমাণ আগবঢ়োৱা নাই। নক্টেসকলৰ লোককথাক আধাৰ কৰি তেওঁলোকৰ ইতিহাসক বিচাৰ কৰিলেও ইতিহাসৰ এক স্পষ্ট ৰূপৰেখা পোৱা নাযায়।

মহেশ্বৰ নেওগে *'অসমৰ জনজাতি'* গ্ৰন্থত আগবঢ়োৱা ঐতিহাসিক তথ্য অনুসৰি বৰ্তমানৰ শিৱসাগৰ জিলাৰ দক্ষিণ অঞ্চল আহোম ৰাজশাসনৰ দিনত আহোমৰ অধীনস্থ আছিল। আহোমৰ দিনত নগাসকলক নিৰীক্ষণ কৰা আৰু তেওঁলোকৰ লগত ৰাজনৈতিক, বাণিজ্যিক সম্পৰ্ক ৰক্ষা কৰিবলৈ নগা-কটকী নামৰ বিষয়বাব আছিল। পুৰন্দৰসিংহৰ সময়ত এই অঞ্চলৰ ৮৫ টা লোণপুঙৰ 'লোণ-কৰ' আহোম ৰজাক আদায় দিয়া হৈছিল। কিন্তু পৰৱৰ্তী সময়ত অসম ব্ৰিটিছৰ অধীন হোৱাৰ পিছত ১৮৪১ চনত ব্ৰিটিছ চৰকাৰে এই কৰ উঠাই দিয়ে।[১২]

এই কথা নিশ্চিত যে, অসমলৈ নক্টেসকলৰ প্ৰব্ৰজিত

হোৱা বেছিদিন হোৱা নাই। দিহিংকিনাৰ নক্টে গাঁৱৰ নক্টেসকলে ঊনবিংশ শতিকাৰ আগছোৱা সময়তেই পানীদুৰীয়াৰ পৰা প্ৰব্ৰজিত হৈ অহা বুলি ক'ব খোজে। শিলনি গাঁও আৰু দিহিংকিনাৰ নক্টে গাঁৱৰ নক্টেসকলৰ প্ৰব্ৰজন একে সময়তে হোৱা নাই। তেওঁলোক পৃথক পৃথক ঠাইৰ পৰা প্ৰব্ৰজিত হৈ বৰ্তমানৰ বসতিস্থানলৈ অহিছে। তেওঁলোকে সুকীয়া ভাষা কয়। শিলনি গাঁৱত দোৱানৰ সৈতে দিহিংকিনাৰ নক্টে গাঁৱত 'হাবা' একে নহয়। ভাষাৰ ভিন্নতাৰ ভিত্তিত পৃথক প্ৰব্ৰজনৰ উৎসৰ সম্পৰ্কে নিশ্চিত হ'ব পাৰি। শিলনি গাঁৱৰ নক্টেসকলৰ প্ৰব্ৰজন দিহিংকিনাৰ নক্টে গাঁৱতকৈ যে আগতে হৈছিল সেই কথা ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়নৰ পৰা জানিব পৰা গৈছে।

এনেবোৰ তথ্যই অতীজৰ পৰা অসমৰ ভৈয়াম অঞ্চলৰ সৈতে নক্টেসকলৰ এক বাণিজ্যিক আৰু ৰাজনৈতিক সম্পৰ্ক স্থাপন হোৱাৰ প্ৰমাণ দিয়ে। অষ্টাদশ শতিকাত ৰজা লথা খুনবাও (নৰোত্তম)ৰ দ্বাৰা প্ৰচাৰিত নৱ বৈষ্ণৱ ধৰ্মৰ দ্বাৰা নক্টেসকল অসমীয়া সংস্কৃতিৰ অধিক কাষ চাপি আহে।

১.৩ নৃগোষ্ঠীয় পৰিচয় ঃ

নৃতাত্ত্বিক অধ্যয়নত পোৱা তথ্যৰ পৰা নক্টেসকল মূলতঃ মঙ্গোলীয় বুলি পোৱা যায়। এই কথা স্বীকাৰ্য যে, নগা জনজাতিসমূহৰ মাজত মঙ্গোলয়ড্ নৃগোষ্ঠীয় উপাদান অধিক স্পষ্ট। এই সন্দৰ্ভত S.H.M. Rizvi আৰু Shibani Roy - এ নগাসকলৰ দৈহিক গঠনত মিশ্ৰিত ৰূপ থকাৰ সিদ্ধান্তক সমৰ্থন কৰিছে।[১৩] নগা সংস্কৃতি সন্দৰ্ভত আলোচনা কৰোঁতেও এক মিশ্ৰিত ৰূপ নগাসকলৰ মাজত পৰিলক্ষিত হয়। গৱেষক লীলা গগৈয়ে নগা সংস্কৃতিত মিশ্ৰিত উপাদানৰ অস্তিত্বক স্বীকাৰ কৰি অষ্ট্ৰিক সংস্কৃতিৰ উপাদানৰ সম্ভাৱনীয়তাক আলোচনা কৰিছে ।[১৪] নগাসকলৰ সংস্কৃতিত প্ৰশান্ত মহাসাগৰীয় দ্বীপত একালত বাসকৰা জনগোষ্ঠীৰ উপাদান দেখা যায়। ইণ্ডোনেচিয়া আৰু ফিলিপাইনৰ এগৰ'ট আৰু ডাইকসকলৰ জীৱন-পদ্ধতিৰ সৈতেও নগাসকলৰ সাদৃশ্য মনকৰিবলগীয়া। নগাসকলৰ এটি অন্যতম ফৈদৰূপে নক্টেসকলৰ ক্ষেত্ৰতো এই কথা প্ৰযোজ্য। তেওঁলোক মূলতঃ মংগোলীয় নৃগোষ্ঠীৰ যদিও তেওঁলোকৰ মাজত অন্য নৃগোষ্ঠীয় উপাদানৰ অস্তিত্বও পোৱা যায়। তেওঁলোকৰ মাজত আৰ্য উপাদান থকাৰ সম্ভাৱনাও নুই কৰিব নোৱাৰি। এই সম্পৰ্কে H.M. Bareh-এ নক্টেসকল মংগোলীয় নৃগোষ্ঠীৰ বুলি মন্তব্য আগবঢ়াইছে। [১৫]

নক্টেসকলৰ সম্পৰ্কে ১৯৭২ চনত ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়ৰ উদ্যোগত লাপটাং, খুনচা, বৰদুৰীয়া, কলাগাঁও, খেলা, আদি গাঁৱত ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়ন কৰি ৰক্ত পৰীক্ষা কৰিছিল। এই অধ্যয়নত নক্টেসকলৰ ৰক্তৰ 'জেনেটিক ক'ন্ছটিট্যুচন'(genetic constitution)ত ভাৰতীয় তথা বৰ্মা আৰু তিব্বতৰ সৈতেও কোনো সম্পৰ্ক চিনাক্ত কৰিব পৰা নগ'ল বুলি জানিব পাৰি।[১৬]

নক্টেসকলৰ নৃগোষ্ঠীয় পৰিচয়ৰ সম্পৰ্কে স্পষ্ট তথ্য এতিয়াও পোহৰলৈ অহা নাই। ভৱিষ্যতে এই সম্পৰ্কে বিস্তৃত অধ্যয়ন হ'লে নক্টেসকলৰ নৃগোষ্ঠীয় পৰিচয় সম্পৰ্কে নিশ্চিত হ'ব পৰা যাব।

১.৪ জনসংখ্যা আৰু শিক্ষাৰ হাৰ ঃ

উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ নক্টেসকলৰ মূল বাসভূমি অৰুণাচলৰ টিৰাপ জিলা। অৰুণাচল প্ৰদেশৰ টিৰাপ জিলাৰ মূল জনসংখ্যাৰ ৪৫ শতাংশ লোক হৈছে নক্টে। [১৭] ২০০১ চনৰ লোকপিয়ল অনুসৰি নক্টেসকলৰ মুঠ জনসংখ্যা ৩৩,৬৮০জন।[১৮] অৰুণাচল প্ৰদেশত মুঠ ৬৩ খন নক্টে গাঁও আছে। অসমৰ ডিব্ৰুগড় জিলাৰ জয়পুৰৰ দিহিংকিনাৰ নক্টে গাঁও, নামৰূপৰ কাষৰ বৰপাত্ৰ চাহ বাগিছাৰ সমীপৰ নক্টে গাঁও দুখনত কমেও ১০০ ঘৰ নক্টে লোক বাস কৰে। অৰুণাচল প্ৰদেশত নক্টেসকলৰ লিংগ-অনুপাত ১০০০ পুৰুষৰ বিপৰীতে ৯৪১ গৰাকী মহিলা। তেওঁলোকৰ মাজত শিক্ষিতৰ হাৰ ৫২.২৩ % ।[১৯]

১.৫ ভাষিক স্থিতি ঃ

ভাষিক গোষ্ঠী হিচাবে নক্টেসকল চীন তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ অন্তৰ্গত। জৰ্জ আব্ৰাহাম গ্ৰীয়ৰ্চনে *'Linguistic Survey of India'* ত নক্টে ভাষাক চীন-তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ নগা-কুকিচীন শাখাত অন্তৰ্ভুক্ত কৰি দেখুৱাইছে। চীন-তিব্বতীয়ৰ প্ৰধান শাখা দুটা – তিব্বতবৰ্মী আৰু থাই-চীন বা শ্যাম-চীনীয়। তিব্বতবৰ্মী শাখাৰ তিনিটা উপশাখা তিব্বত হিমালয়ী, উত্তৰ অসম আৰু অসমবৰ্মী। অসমবৰ্মী উপশাখাৰ পাঁচটা প্ৰশাখা 'কাচিন', 'বাৰ্মিজ', 'বড়ো', 'নগা' আৰু 'কুকিচীন'। ইয়াৰে চতুৰ্থটো প্ৰশাখা 'নগা'ৰ অন্তৰ্ভুক্ত ১৮ টা ভাষাৰ ভিতৰত অৰুণাচল প্ৰদেশৰ নক্টে ভাষাও এটা।[২০]

প্ৰায় ৩৩,০০০ নক্টে লোকৰ মাজত প্ৰচলন থকা নক্টে ভাষা ভাষিক বৈচিত্ৰ্যৰে পৰিপূৰ্ণ। নক্টে ভাষাৰ নটা আঞ্চলিক ৰূপ পোৱা যায়। নক্টৈৰ এই নটা উপভাষিক ৰূপ হাৱাখুন, খাপা, হাৱা, ডলমাক, ফুটুং, জপা, টুট, লাজু আৰু দদাম্ –

এই আটাইকেইটা উপভাষাৰ মাজত ভাষিক ভিন্নতা স্পষ্ট।[১১]

নক্টেসকলে এনে ঔপভাষিক ভিন্নতাৰ বাবে একে নক্টে ভাষাৰ আন উপভাষীৰ মাজত ভাব বিনিময়ৰ বাবে দ্বিতীয় এটা ভাষাৰ আশ্ৰয় ল'বলগা হয়। ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নত যোগেদি দেখা গ'ল যে, দ্বিতীয় ভাষা হিচাবে অধিকসংখ্যক নক্টেভাষীয়ে অসমীয়া ভাষা গ্ৰহণ কৰিছে। নক্টে উপভাষাসমূহৰ ভিতৰত 'খাপা' উপভাষাত আনকেইটা উপভাষাতকৈ কিছু সুকীয়া বৈশিষ্ট্য আছে। নক্টেসকলৰ মাজত প্ৰচলিত লোকগীতসমূহত এই উপভাষাটো বহুলৰূপত ব্যৱহৃত হয়।

নক্টে ভাষাটো এক সীমিত ভৌগোলিক অঞ্চলত মুষ্টিমেয় নক্টেসকলৰ মাজত প্ৰচলিত এটা ভাষা। নক্টে ভাষাৰ ঔপভাষিক ভিন্নতাৰ লগতে ভাষিক বৈচিত্ৰ্যই ভাষাটোৰ বিকাশত সমস্যাৰ সৃষ্টি কৰিছে। কম পৰিসৰত প্ৰচলিত হোৱাৰ লগতে নক্টেসকলৰ মাজতে পাৰস্পৰিক ভাষিক দুৰ্বোধ্যতাই নক্টে ভাষাৰ বিকাশত ঘাই অন্তৰায়ৰ সৃষ্টি কৰিছে।

২.০ নক্টেসকলৰ উৎসৱ-অনুষ্ঠান

সামাজিক লোকাচাৰৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ অংশ উৎসৱ-অনুষ্ঠান। নক্টেসকলৰ উৎসৱ-অনুষ্ঠানক প্ৰধানকৈ চাৰিটা ভাগত ভাগ কৰিব আলোচনা কৰিব পাৰি—(ক) কৃষিভিত্তিক উৎসৱ (খ) ধৰ্মকেন্দ্ৰিক উৎসৱ-অনুষ্ঠান (গ) জন্মসম্বন্ধীয় উৎসৱ-অনুষ্ঠান (ঘ) বিবাহকেন্দ্ৰিক উৎসৱ অনুষ্ঠান(ঙ) মৃত্যু সম্বন্ধীয় অনুষ্ঠান

২.১. কৃষিভিত্তিক উৎসৱ

নক্টে সমাজৰ মূল জীৱিকা কৃষি। নক্টে সমাজত কৃষি কৰ্মত শস্য ৰোপণ, উৎপাদন, সংগ্ৰহ আদি স্তৰত বিভিন্ন ধৰণৰ অনুষ্ঠান উদযাপন কৰা হয়। এই অনুষ্ঠানসমূহ গাঁও অনুসৰি সুকীয়া সুকীয়া হোৱা দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে, ঝুম খেতিৰ বাবে মঙল চাই ভূমি চয়ন কৰ্মত একপ্ৰকাৰৰ অনুষ্ঠান আয়োজন কৰা হয়। যাক বৰদুৰিয়া অঞ্চলত 'পিটচা' বুলি কোৱা হয়। অন্যহাতে ধান সিচাঁৰ আগতে এটি অনুষ্ঠানৰ প্ৰচলন স্থানবিশেষে পোৱা যায় যাক বৰদুৰীয়া, কলাগাঁও আদি অঞ্চলত 'কপখুট' উৎসৱ, নক্চাত 'মেইকিট' উৎসৱ আদি নামেৰে জনা যায়। ইয়াৰ উপৰিও নক্টেসকলৰ মাজত বহুবোৰ অঞ্চলভিত্তিক কৃষি উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰ প্ৰচলন আছে। এইক্ষেত্ৰত বৰদুৰীয়া অঞ্চলৰ 'হামি পৰি','চামপু পৰি', 'ৰংহুন', আদি কৃষিভিত্তিক উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰ নাম উল্লেখযোগ্য। নক্টেসকলৰ দ্বাৰা উৎপাদিত মূল শস্য ধান, কণীধান আৰু মানকচুৰ খেতিৰ সামৰণিত সকলো নক্টে গাঁৱতেই পালন কৰা 'লকু' উৎসৱক নক্টেসকলে নিজ মূল উৎসৱৰূপে পালন কৰে। অৱশ্যে এই উৎসৱ পালন কৰাৰ সময়, ধৰণ সকলো ঠাইতে অনুৰূপ নহয়। ইয়াক স্থান বিশেষে 'কু' আৰু 'পাকু' বুলিও জনা যায়।

২.১.১ লকু

নক্টেসকলৰ মূল কৃষিভিত্তিক উৎসৱ হৈছে 'চালু লকু'। 'লকু' উৎসৱত নক্টেসকলৰ সংস্কৃতিৰ মূৰ্ত প্ৰকাশ ঘটে। নক্টেসকলে ঝুম খেতিৰ বাবে নতুন ভূমি চয়ন কৰাটোৱেই এই 'লকু' উৎসৱৰ মূল উদ্দেশ্য। ইয়াৰ পৰাই নক্টেসকলৰ কৃষি পঞ্জিকা আৰম্ভ হয়। সেইদৃষ্টিকোণৰ পৰা ইয়াক নৱ বৰ্ষৰ উৎসৱ বুলিও অভিহিত কৰিব পাৰি। 'লকু'ত মঙলতীৰ নিৰ্দেশ আৰু গাঁওপ্ৰধান আৰু গাঁওসভাৰ বিচাৰ-আলোচনাৰে নতুন কৃষিভূমি নিৰ্বাচন কৰা হয়। আগন্তুক দিনত শস্যৰ শ্ৰীবৃদ্ধি হ'বলৈ, অপায়-অমংগল দূৰ হ'বলৈ 'লকু' উৎসৱ নৃত্য-গীতৰ সমাৰেশেৰে বৰ্ণাঢ্য ৰূপত উদ্‌যাপন কৰা হয়। অৰুণাচল প্ৰদেশৰ টিৰাপ জিলাত 'লকু' উৎসৱ বাৰ্ষিকভাৱে নৱেম্বৰ-অক্টোবৰ মাহত অৰ্থাৎ ধান খেতি চপাই নতুনকৈ কৃষি আৰম্ভণিৰ পূৰ্বে সমজুৱাকৈ উদ্‌যাপন কৰা হয়।

টিৰাপ জিলাত 'চালু লকু' সাধাৰণতে তিনিদিনীয়াকৈ পালন কৰা হয়। প্ৰথম দিন হ'ল 'ফামলামজা', দ্বিতীয় দিনটো 'চামকটজা' আৰু শেষৰ দিনটো 'ঠানলন্‌জা'। অৱশ্যে এই নামসমূহ স্থানবিশেষে সুকীয়া ৰূপত পোৱা যায়। 'লকু' উৎৱৰৰ বাবে নক্টেসকলে 'জু' (সুৰা), সাজ-পাৰ আদি প্ৰস্তুতি পূৰ্বৰ পৰাই চলায়। প্ৰথম দিনটো 'ফামলামজা'ত উৎসৱৰ বাবে গোটোৱা গাহৰি, ম'হ, কুকুৰা আদি নিধন কৰি ভাগ-বতৰা কৰা হয়। ইয়াত জন্তু নিধন কৰোঁতে কোনোধৰণৰ নীতি-নিয়ম পালন কৰা দেখা নাযায়। পিছবেলালৈ নক্টেসকলে 'চিলনিট'ৰ বাবে প্ৰস্তুতি(আদা পিন্ধা অনুষ্ঠান) 'পাঙমিৱান' (ডেকাসকল আনুষ্ঠানিকভাৱে একত্ৰ হোৱা অনুষ্ঠান), 'চুমৰৱান'(বয়োজ্যেষ্ঠসকল একত্ৰিত হোৱা অনুষ্ঠান), 'তামথ'খাট(মৃতকৰ অনুষ্ঠান)আদিৰে পিছদিনাখনৰ বাবে প্ৰস্তুত হয়।

দ্বিতীয় দিন 'চামকটজা'ত ডেকাসকলে গাঁৱৰ মুখ্য দুৱাৰত অতিথিক আদৰে। মোমায়েক পৰা আদা পিন্ধা অনুষ্ঠান 'চিলনিট' এই দিনটোত সমাপণ হয়। জানচ'জুহম (গাভৰু চাং)ৰ গাভৰুসকলে ঘৰে ঘৰে গৈ সমজুৱাকৈ উদ্যাপিত কৰিবলৈ লোৱা 'লকু'ৰ বাবে 'জু' সংগ্ৰহ কৰে। 'জানচ'জুহম'ত নতুনকৈ সদস্য হোৱা ছোৱালীক লৈ 'জানচ'জুহম'ত ভোজ

পতা হয়। আনফালে গাঁৱৰ সকলো 'চুম'ৰ প্ৰতিনিধিসকল আহি নিৰ্দিষ্ট স্থানত উপস্থিত হয়। গধূলি সকলো মিলি পৰম্পৰাগত পোচাকেৰে গাঁও-প্ৰধানৰ গৃহত নিজ নিজ 'চুম'ৰ নৃত্য-গীত পৰিৱেশন কৰে। এই নৃত্য-গীতৰ আঁত ধৰিবলৈ একোজন বিশিষ্ট পুৰোহিত শ্ৰেণীৰ লোক থাকে, যাৰ নিৰ্দ্দেশ আৰু গীতৰ মাজেৰে সকলোৱে মিলি আদি উপাস্য দেৱতা 'জুৱন'লৈ সেৱা আগবঢ়ায়। তৃতীয় দিন 'ঠানলন্‌জা'ত নক্টেসকলে বিশেষকৈ আত্মীয়-কুটুমৰ ঘৰলৈ যায়। এই দিনটোত তেওঁলোকে উপহাৰ আদান-প্ৰদান কৰে। নৃত্য-গীতৰ অনুষ্ঠানো এই দিনটোত পালন কৰা হয়। পৰম্পৰাগত বাদ্যযন্ত্ৰ 'থাম' তেওঁলোকে এই 'লকু' উৎসৱৰ দিনকেইটাত বজায়। ই নিজস্ব বৈশিষ্ট্যপূৰ্ণ এক জনজাতীয় বাদ্যযন্ত্ৰ। খাম বাদ্য হৈছে গাঁৱত থকা এক বৃহৎ আকাৰৰ খোলা গছ। খাম গাঁৱৰ ৰাইজে সমজুৱাকৈ ইয়াক নিৰ্মাণ কৰে। ইয়াৰ দৈৰ্ঘ্য কমেও ৰপ্ত হাত। পোন গছ কাটি তাক ভালদৰে খোলা কৰা হয়। সাধাৰণতে আনদ্ধ বাদ্যত ব্যৱহাৰ হোৱা কোনোধৰণৰ চামৰাজাতীয় সামগ্ৰী ব্যৱহাৰ কৰা নহয়। খোলাটোৰ দুয়োটা মূৰত কোনো আভৰণ নাথাকে। খোলাটো ইমূৰৰ পৰা সিমূৰলৈ এহাতমান বহলকৈ এক খালী অংশ থাকে। এই গছৰ খোলাত প্ৰায় ১½ ফুট দীঘল শকত মাৰিৰে প্ৰহাৰ কৰি শব্দ সৃষ্টি কৰা হয়। খাম বাদ্য ১০-১২ জন লোকে একত্ৰিত হৈ বজায়। ইয়াৰ কিছুমান নিৰ্দিষ্ট লয় থাকে। অৰিয়াৰ বাহিৰে বছৰৰ অন্য সময়ত এই বাদ্য বজোৱা নিষেধ। পূৰ্বতে গাঁৱলৈ কোনো আকস্মিক বিপদ আহিলে এই বাদ্য বজাই সকলোকে সৰ্তক আৰু একত্ৰিত কৰা হৈছিল। শিশু, ডেকা, বুঢ়া, গাভৰু, মহিলা, সকলোৱে অংশগ্ৰহণেৰে সমজুৱাকৈ মিলি 'চালু লকু'ৰ সামৰণি মাৰে।

অসমৰ নক্টেসকলে পালন কৰা 'লকু' উৎসৱ অৰুণাচল প্ৰদেশৰ নক্টেসকলৰ সৈতে সাদৃশ্যপূৰ্ণ যদিও কেতবোৰ আচাৰ-অনুষ্ঠানে সুকীয়াৰূপ পৰিগ্ৰহ কৰিছে। 'লকু' উৎসৱক শিলনি গাঁৱৰ নক্টেসকলে 'পাকো' বুলি কয়।

দিহিংকিনাৰ নক্টে গাঁৱৰ লোকসকলে লকুঅ উৎসৱ অসমীয়া ব'হাগ বিহুৰ সমান্তৰালভাৱে পালন কৰে। অসমৰ নক্টেসকলৰ সংস্কৃতিত নিজ মূল সংস্কৃতিৰ প্ৰৱাহ বৰ্তি থাকিলেও অসমৰ থলুৱা সংস্কৃতিয়ে তেওঁলোকৰ সংস্কৃতিক যথেষ্ট প্ৰভাৱিত কৰিছে। অসমৰ নক্টেসকলে ব'হাগ বিহুৰ সমান্তৰালভাৱে 'লকু' উৎসৱ পালন কৰে। তেওঁলোকৰ মূল শস্য ধান খেতি চপাই শেষ হোৱাৰ পিছত সকলোৱে মিলি নতুন কৃষিৰ কাৰণে প্ৰস্তুত হ'বৰ বাবে এক বাৰ্ষিক উৎসৱ অনুষ্ঠিত কৰে। অসমৰ নক্টেসকলে নিজ পৰম্পৰাগত নীতি-নিয়ম মানি উৎসৱটো পালন কৰিবলৈ টিৰাপ জিলাৰ বৰদুৱীয়াৰ পৰা কেইজনমান বয়োজ্যেষ্ঠক নিমন্ত্ৰণ কৰি আনে। তেওঁলোকৰ তত্বাৱধানতেই তেওঁলোকৰ 'লকু' উৎসৱ উদ্‌যাপিত হয়।

অসমৰ নক্টেসকলে ব'হাগ মাহত লকু উৎসৱ পাঁচদিনীয়া কাৰ্যসূচীৰে সমজুৱাকৈ পালন কৰে।। লকু উৎসৱ পালন কৰাৰ এসপ্তাহ বা দহদিনমানৰ আগত গাঁৱৰ ছোৱালীবোৰে একগোট হৈ গাঁৱৰ প্ৰত্যেক গৃহস্থৰ পৰা চাউল তুলি পানীয় (খাম, এই পৰম্পৰাগত পানীয়ক শিলনি গাঁৱত 'য়ু' বোলা হয়) তৈয়াৰ কৰে। এই পানীয় তেওঁলোকে সমূহীয়াভাৱে 'য়েনচৌহোম'(গাভৰু চাং)ত তৈয়াৰ কৰে। পানীয় তৈয়াৰ কৰা দিনাৰ পৰা বিহুলৈকে গাঁৱৰ য়েনচৌহোম'ৰ ছোৱালী গাভৰু চাঙত পানীয়ৰ ৰখীয়া হৈ প্ৰয়োজনীয় যতন লয়।

অসমৰ নক্টেসকলে নিজ 'লকু'ৰ শুভাৰম্ভণি গাঁওপ্ৰধানৰ ঘৰত কৰে। লকু উৎসৱ 'ফাম্‌লাম'ৰে আৰম্ভ হয়। অৰ্থাৎ উৎসৱৰ বাবে প্ৰয়োজনীয় খাদ্য আৰু সামগ্ৰী গোটোৱাৰ দিন। ফাম্‌লাম অনুষ্ঠানটো গাওঁ-প্ৰধানৰ গৃহত পালন কৰা হয়। উক্ত দিনা গাঁৱৰ ৰাইজে একগোট হৈ গাহৰি মাৰে। পূৰ্বতে 'লকু'ত সকলোৱে ভালকৈ এসাঁজ খাবলৈ ম'হ মাৰিছিল। কিন্তু আজিকালি ই গাহৰিৰ মাংসতেই সীমিত হৈছে। গাহৰিৰ মাংস গাঁওখনৰ প্ৰত্যেকৰ ঘৰলৈ সমানে বিতৰণ কৰি দিয়া হয়। গাহৰিৰ মূৰ অংশ গাঁওপ্ৰধানক ঘৰত দিয়াৰ পৰম্পৰা আছে। ই একপ্ৰকাৰে গাঁওপ্ৰধানলৈ কৰা সন্মান প্ৰদৰ্শন। নগা-সংস্কৃতিত দেহৰ মূৰ অংশৰ বিশেষ গুৰুত্ব আছে। ইয়াৰ বাবেই পুৰণি সময়ত নগাসকলৰ মাজত মুণ্ড চিকাৰৰ পৰম্পৰা ব্যাপকৰূপত প্ৰচলিত আছিল। মুণ্ডৰ অবিহনে দেহৰ অস্তিত্ব সম্ভৱ নহয়। মুণ্ডৰ সৈতে আত্মাৰ সম্পৰ্ক আছে। মুণ্ড সংগ্ৰহৰ দ্বাৰা আত্মাক বশ কৰিব পাৰি। মানৱ মুণ্ড চিকাৰে খেতিপথাৰৰ উৰ্ব্বৰতা বৃদ্ধি কৰে বুলিও বহুতো নগা জনজাতিয়ে বিশ্বাস কৰিছিল। কোনো জন্তুৰ মূৰ অংশ অৰ্পণ কাৰ্যই এক প্ৰকাৰে জন্তুটোৰ আত্মাক গাঁওপ্ৰধানক অৰ্পণ কৰা বুজায়। নক্টেসকলে নিজ মৰং ঘৰ, ধানভঁৰাল আদিতো ম'হৰ মুণ্ড উলমাই ৰখা দেখা যায়। ফাম্‌লামৰ দিনা নক্টেসকলৰ আন এটা পৰম্পৰা লক্ষ্যণীয়। সেইদিনা মৰা গাহৰিটোৰ কলিজাত নক্টে পুৰোহিতে মঙল চায়। নক্টেসকলে মঙল চাওতে কলপাতৰ ব্যৱহাৰ কৰে। আগন্তুক খেতি কেনে হ'ব, আগন্তুক বৰ্ষত কিবা অপায়-অমংগল হ'ব নেকি বা তাক মষিমূৰ কৰিবৰ বাবে কোনো

অনুষ্ঠান কৰিব লাগিব নেকি আদিৰ উদ্দেশ্যেৰে এই মঙল চোৱা হয়।

লকু উৎসৱৰ লগত জড়িত এক গুৰুত্বপূৰ্ণ অনুষ্ঠান হৈছে চিল্‌নিট। চিল্‌নিটৰ অৰ্থ আদা পিন্ধা। অসমত দিহিংকিনাৰ নক্তে গাঁৱত এই অনুষ্ঠানটো 'লকু'ৰ দ্বিতীয় দিনা আৰু শিলনি গাঁৱত তৃতীয় দিনা পালন কৰাহয়। নক্তেসকলৰ বিশ্বাস অনুসৰি আদা এক পবিত্ৰ আৰু ঔষধি উদ্ভিদ। আদা পৰিধানৰ দ্বাৰা ৰোগ নিৰাময় কৰিব পাৰি। সেইদৰে আদাই অপায়-অমংগলৰ পৰাও মানুহক পৰিত্ৰাণ দিয়ে। নক্তে লোকৰ মোমাইঘৰৰ সৈতে এক বিশেষ আন্তৰিকতা থাকে। সকলো ঠাইৰ নক্তেৰ মাজত এই পৰম্পৰা অতি গুৰুত্বসহকাৰে পালন কৰা হয়। 'লকু'ত সকলো নক্তে লোকে নিজ নিজ মোমায়েকৰ ঘৰলৈ আদা পিন্ধিবলৈ যায়। মোমায়েক নাথাকিলে মামীয়েক বা মোমায়েকৰ ডাঙৰ পুত্ৰৰ পত্নীয়ে আদা পিন্ধায়। আদা পিন্ধাওতে মোমায়েকে ভাগিনীয়েকক অপায়-অমংগলৰ পৰা ৰক্ষা পোৱাৰ লগতে বংশ বৃদ্ধি হ'বলৈ আশীৰ্বাদ দিয়ে। আদা পিন্ধা অনুষ্ঠানটো পুৱাৰ ভাগত অনুষ্ঠিত হয়। মোমায়েকৰ ঘৰলৈ আদা পিন্ধিবলৈ যাওঁতে 'খাম'(সুৰা) এচুঙা নিয়াৰো পৰম্পৰা আছে। আদা পৰিধান কৰাৰ ক্ষেত্ৰত নক্তেসকলৰ অন্য এক পৰম্পৰাও লক্ষ্যণীয়। সাধাৰণতে আদা বগা সূতাৰে চিলাই ডিঙিত পিন্ধে। পুৰুষ হ'লে কিছু দীঘল কৰি আৰু মহিলা হ'লে চেপেটা কৰি আদা চিলোৱা হয়।

'লকু' উৎসৱৰ তৃতীয় দিনটোৰ মুখ্য অনুষ্ঠান হ'ল ' বাংবুৱাং'। অৰ্থাৎ উৎসৱৰ প্ৰথম নাচ। 'বাংবুৱাং'ত নক্তে ডেকা-গাভৰু, বুঢ়া-মেঠা সকলোৰে লগ হৈ নৃত্য-গীত গাই ৰং-ধেমালি কৰে। এই অনুষ্ঠানৰ গীতসমূহ প্ৰেম-প্ৰণয়, উৰ্বৰাশক্তি বিষয়ক। 'বাংবুৱাং'ৰ দিনা ব্যক্তিগতভাৱে কোনো লোকৰ ঘৰত বিহু মাৰিবলৈ আমন্ত্ৰণ জনাব পাৰে। বিহু গাবলৈ আমন্ত্ৰণ জনোৱা ঘৰখনত যদি ইতিপূৰ্বে কোনো ব্যক্তিৰ মৃত্যু হৈছে তেন্তে সেই মৃতকৰ আত্মাৰ সদ্গতিৰ উদ্দেশ্যেও লকুগীতসমূহ গোৱা হয়। অসমৰ দিহিংকিনাৰ নক্তে গাঁৱত যি পৰম্পৰাগত নৃত্য নচা হয় তাত সৰু,ডেকা, বুঢ়া, মহিলা মিলি বৃত্তাকাৰে ঘূৰে। নামতীয়ে 'খাপা' উপভাষাৰ কেতবোৰ গীত গায়। অন্যসকলে ঢোলৰ চেওৰ তালে তালে ঘূৰি থাকে। প্ৰকৃততে নক্তেসকলে 'লকু' উৎসৱত পৰম্পৰাগত 'থাম' বাদ্য বজায়। এই বাদ্যযন্ত্ৰ সম্পৰ্কে আগলৈ আলোচনা কৰা হৈছে।

লকু উৎসৱৰ চতুৰ্থ দিনা 'চে-হাপ' অনুষ্ঠানটো পালন কৰা হয়। ইয়াৰ অৰ্থ হৈছে 'চে' মানে গান আৰু 'হাপ' মানে এৰি দিয়া। সেইদিনাখন গাভৰু চাঙৰ পৰা বিহু আনি ৰজাৰ ঘৰত সামৰা হয়। গাঁওখনৰ সকলোৰে ৰজাৰ ঘৰত বিহু গাই নাচি বাগি বিহু সামৰণি মাৰে। উক্ত দিনাৰ অনুষ্ঠানত উপস্থিত থকা সকলোৰে একগোট হৈ নীতি-নিয়ম কৰি পানীয় গ্ৰহণ কৰে।

লকু উৎসৱৰ লগত অন্তিম দিনটোৰ মুখ্য অনুষ্ঠান হ'ল 'ল-জুন'। এই দিনটোক শিলনি গাঁৱত 'পাকোৱা' বুলিও জনা যায়। ল - মানে বিহু, জুন-খেদা, অৰ্থাৎ বিহু খেদা। ল- জুন অনুষ্ঠানটো পালন কৰাৰ আগত মঙল চোৱাৰ নিয়ম আছে। নক্তে পুৰোহিতজনে মঙল চাই কোনদিশে বিহু খেদাব সেইটো নিৰূপন কৰে। সেইমৰ্মে গাঁৱৰ সমূহ ৰাইজে দা, যাঠি, জোং লৈ বিহু খেদে। অনুষ্ঠানটোৰ মূল উদ্দেশ্য হওল বিহুৰ লগত অহা অপায়-অমংগলবোৰ যাতে থাকি নাযায়, সেই উদ্দেশ্যে ল-জুন অনুষ্ঠানটো নক্তেসকলে পালন কৰে। তদুপৰি এই অনুষ্ঠানত সকলোৰে আগন্তুক বৰ্ষটিক সকলো অপায়-অমংগলৰ লগতে শস্য পথাৰো যাতে নদন-বদন হয় তাৰ কামনা কৰে।

অসমৰ নক্তেসকল অসমীয়া সংস্কৃতিত লীন গৈছে। বৈষ্ণৱ ধৰ্ম গ্ৰহণ, অন্য জনগোষ্ঠীৰ প্ৰভাৱত তেওঁলোকৰ 'লকু' উৎসৱত বহুল পৰিৱৰ্তন পৰিলক্ষিত হয়। 'লকু'ৰ যি পৰম্পৰাগত নৃত্য সেই নৃত্য পৰিৱেশনৰ সমান্তৰালভাৱে অসমীয়া বিহুৰ সাজত বিহু নাম গাই, ঢোল বজাই চেমনীয়া তথা ডেকা-গাভৰুৰে বিহু নচাও দেখা যায়। ই সাংস্কৃতিক সমাহৰণৰ এক উজ্জ্বল নিদৰ্শন।

নক্তেসকলৰ মূল লোক-উৎসৱ 'লকু'ৰ সৈতে তেওঁলোকৰ পৰম্পৰাগত সাজ-পাৰো জড়িত হৈ আছে। অসমৰ নক্তে পুৰুষসকলে 'লকু' উৎসৱৰ নৃত্য-গীতত ভাগ লওঁতে টকৌপাতৰ কুমলিয়া আগ বিভিন্ন আকৃতিৰে মূৰ, ডিঙি, হাত আৰু ভৰিৰ পানী গাঁঠিতো মেৰিয়াই লয়। মূৰত দুয়ো কাণৰ কাষত ফুল গুজি লয়।

নক্তে পুৰুষসকলৰ সাজযোৰক 'দালাৰাং' আৰু মহিলাৰ সাজযোৰক 'দহাকৰাং' বুলি কোৱা হয়। নক্তে পুৰুষে যি হাতকটা চোলা পৰিধান কৰে, তাক 'চ্যামচং' বুলি কোৱা হয়। সাধাৰণতে ইয়াৰ ৰং ক'লা বৰণৰ আৰু ইয়াত ৰঙা ক'লা বৰণৰ ফুল বচা থাকে। পিঠিত দুডাল যাঠি মুখামুখিকৈ বনোৱা হয়। মূৰত ধনেশ চৰাইৰ পাখিৰে বনোৱা টুপী পৰিধান কৰে।

উৎসৱ-অনুষ্ঠানত নক্তে মহিলাসকলে দেহৰ তল অংশত মেখেলা আৰু ওপৰ অংশত ৰঙা চোলা পৰিধান কৰে।

কঁকালত এখন বস্ত্ৰ মেৰিয়াই, যাক ‘ৰমদিদ্’ বোলে। আধুনিক সময়ৰ লগত খোজ মিলাই এই সাজ তেওঁলোকে নতুনকৈ গ্ৰহণ কৰিছে। তেওঁলোকৰ পৰম্পৰাগত আ-অলংকাৰৰ ভিতৰত কাণত পিন্ধা ‘নাট্‌টে’, হাতত হাতী দাঁতৰ খাৰু ‘দাক্‌ফাং’, ডিঙিত– ‘লিটফ্যাং’, ‘লিটটুম’, ‘লিটৰাট’, ‘চাংছি’, খোপাত পিন্ধা ‘খালাট’, ‘ভংখাফত’ আদি প্ৰধান। ‘ভাংখাফ’ত ৰূপৰ মুদ্ৰাৰে তৈয়াৰ কৰা হয়। এই সমূহৰ চিত্ৰ পৰিশিষ্টত সংযোগ কৰা হৈছে।

২.১.২ কাতি লকু ঃ

অসমৰ ভৈয়ামৰ নক্টেসকলৰ সংস্কৃতিত ইয়াৰ থলুৱা প্ৰভাৱ স্পষ্ট। ইয়াক প্ৰকৃতাৰ্থত তেওঁলোকৰ পৰম্পৰাগত লোক-উৎসৱ বুলিব নোৱাৰি। কিয়নো এই উৎসৱৰ প্ৰায়সকলোখিনি ৰীতি-নীতি অসমীয়া কাতি বিহুৰ অনুৰূপ। অৰশ্যে শিলনি গাঁৱৰ নগাসকলে কাতি লকুৰ দিনটোত মৃতকৰ এক অনুষ্ঠান আয়োজন কৰে। এই অনুষ্ঠানটোত পুৰুষৰ ভূমিকা অধিক। নিজ পূৰ্বপুৰুষক সেৱা জনায় সকলোৱে মিলি ‘য়ু’(সুৰা) পান কৰে। ‘কাতি লকু’ত তেওঁলোকে তুলসীৰ তল, ভঁৰাল, পথাৰ, গোহালি, গঁড়ালৰ আগত চাকি জ্বলায়। এই লকুত বিশেষ নীতি-নিয়ম পালন কৰা দেখা নাযায়। নক্টেসকলৰ সমাজ কৃষিজীৱী সমাজ। শস্য ৰোপণৰ পিছত ভাল শস্যৰ আশাত তেওঁলোকে এই উৎসৱ পালন কৰে। শস্য ৰোপণৰ পিছত এনেধৰণৰ অনুষ্ঠানৰ আয়োজন টিৰাপৰ নক্টেসকলৰ মাজতো দেখা যায়। বৰদুৰীয়াৰ, নামচাঙৰ ‘পুবি’, লাজুৰ ‘মুজপ’ আদি অনুষ্ঠান শস্য-ৰোপণৰ পিছত আয়োজন কৰা হয়। অসমৰ নক্টেসকলে ইয়াৰ অন্য জনগোষ্ঠীক অনুসৰণ কৰি এই ‘কাতি লকু’ পালন কৰি আহিছে।

২.১.৪ মাঘ লকু ঃ

‘মাঘ’ লকু উৎসৱ প্ৰকৃততে অসমীয়া মাঘ বিহু। মাঘ লকু পালন কৰাৰ এসপ্তাহ বা দহদিনৰ আগতে গাঁৱৰ ডেকাসকল একগোট হৈ হাবিৰ পৰা খৰি কাটে। ডেকাসকলৰ দৰে গাভৰুসকলেও তেওঁলোকৰ গাভৰু চাঙত সমূহীয়াভাৱে পানীয় তৈয়াৰ কৰে। এই পানীয় গাভৰু চাঙতে তৈয়াৰ কৰা হয়। মাঘ লকুত নক্টেসকলেও অসমীয়া লোকসকলৰ দৰে ভোজ-ভাত খোৱা আৰু মেজি জ্বলোৱাৰ পৰম্পৰা আছে। এই উৎসৱ পৰিচালনা কৰিবৰ বাবে গাঁৱৰ ৰাইজে এজন লোকক মেধি পাতে। মেধিয়েহে মেজিৰ জুইত অগ্নি সংযোগ কৰে। কৃষি সামৰি নতুন শস্যৰে এসাঁজ খোৱাৰ বাবে অনুষ্ঠিত ‘মাঘ লকু’ৰ লগত সাদৃশ্য থকা অনুষ্ঠান টিৰাপ জিলাৰ নক্টেসকলৰ মাজতো অনুষ্ঠিত হোৱা দেখা যায়, যেনে– বৰদুৰিয়াৰ ‘কাকিয়াক’, থিনচাৰ ‘ৰংঘুন’ অনুষ্ঠান। তেওঁলোকে মেজি নজ্বলায়। অসমৰ নক্টেসকলে থলুৱা প্ৰভাৱত এই ‘মাঘ লকু’ অনুষ্ঠানক নিজ পৰম্পৰাৰ অন্তৰ্ভুক্ত কৰি লৈছে।

২.২ জন্ম সম্বন্ধীয় অনুষ্ঠান ঃ

নক্টেসকলৰ মাজত প্ৰচলিত পৰম্পৰা অনুসৰি এগৰাকী গৰ্ভৱতী স্ত্ৰীয়ে ভালেমান নিয়ম-নীতি মানি চলিব লাগে। গৰ্ভৱতী স্ত্ৰীয়ে হৰিণৰ মাংস নাখায়, মৰা জন্তু, শুকান মাছ, কোনোধৰণৰ তিতা স্বাদৰ আঞ্জা গ্ৰহণ নকৰে, ৰাগিয়াল বস্তু সেৱনৰ পৰা বিৰত থাকে। ইয়াৰ বৈজ্ঞানিক ভিত্তিও নথকা নহয়। হ’বলগীয়া সন্তানৰ পিতৃয়েও কোনো জন্তু-প্ৰাণী মৰাৰ পৰা বিৰত থাকিব লাগে বুলি নক্টেসকলে বিশ্বাস কৰে। বিশেষকৈ সাপ মৰাটো অতি অমংগলীয় বুলি বিশ্বাস কৰা হয়। নক্টে সমাজত যঁজা সন্তান জীয়াই থাকিব দিয়া নহয়। তেওঁলোকে বিশ্বাস কৰে যে যঁজা সন্তান অমংগলৰ চিন তথা ই পিছলৈ সমাজৰ বোজা স্বৰূপ হৈ পৰে। সেইদৰে জাঁৰজ সন্তানকো নক্টে সমাজত জীয়াই থাকিব দিয়া নহয়। জন্মৰ লগে লগে তেনে সন্তানক মাৰি পেলোৱা হয়।

নক্টে সমাজত নতুনকৈ বিয়া হৈ গৰ্ভধাৰণ কৰা মহিলা আঠ মাহলৈকে মাকৰ ঘৰলৈ থাকিবলৈ যায়। কিন্তু সন্তানৰ জন্ম স্বামীগৃহত হোৱাতো নক্টে সমাজত বাধ্যতামূলক। গৰ্ভধাৰণৰ সময়ত মহিলাগৰাকীয়ে কেতবোৰ নীতি-নিয়ম মানি চলিব লাগে।

নক্টে সমাজত পোৱতীক প্ৰতিপাল কৰোঁতে কেৱল মহিলাই অংশ গ্ৰহণ কৰে। এইক্ষেত্ৰত কোনো অভিজ্ঞ মহিলাক প্ৰসৱৰ পূৰ্বেই অৱগত কৰোৱা হয়। নক্টেসকলে ল’ৰা সন্তান জন্ম হ’লে ঘৰৰ দুৱাৰ মুখত বাঁহৰ জেং-পাতৰ সৈতে আগ এটা আওজাই থয়। ইয়াৰ দ্বাৰা ভূত-প্ৰেতআৰু অপদেৱতাই সন্তানটিক অনিষ্ট কৰিব নোৱাৰে বুলি নক্টেসকলে বিশ্বাস কৰে।

নক্টেসকলৰ নামকৰণ অনুষ্ঠানটোক ‘ন’চুক’ বোলে। ‘ন’চুক’ অনুষ্ঠানটোত নৱজাত শিশুৰ কাণ বাঁহৰ খৰিকাৰে ফুটোৱা হয়। এই কাম কোনো দক্ষ নাৰীয়ে কৰে। নচুক জন্মৰ পৰৱৰ্তী দিনটোত, তৃতীয় অথবা চতুৰ্থ দিনটোত পালন কৰা হয়। ভাত, পানীয় আৰু গাহৰি মাংসৰে অতিথিসকলক আপ্যায়িত কৰা হয়। নক্টেসকলৰ নাম তেওঁলোকৰ সুযোগ্য পূৰ্ব পুৰুষৰ পৰা নিবাৰ্চন কৰা হয়। বংশটোৰ কেইজনমান সুযোগ্য পুৰুষসকলৰ নাম সন্তানৰ পিতৃয়ে বাচি থ’ব লাগে।

ইয়াৰ পৰা মঙল চাই এটি ভাল নাম সন্তানটিক দিয়া হয়। নাম নিবাৰ্চন কৰোঁতে তিনিটা টকৌ পাতৰ আগলিৰে মংগল চায়। উল্লেখযোগ্য যে নক্টেসকলে কোনো অপমৃত্যু ঘটা লোক, যেনে-গছৰ পৰা পৰি মৰা, পানীত ডুবি মৰা লোকৰ নামেৰে সন্তানৰ নামকৰণ নকৰে। এই পৰম্পৰা ৱানছুসকলৰ মাজতো দেখা যায়।

এসপ্তাহৰ পিছত সন্তানৰ মাকে নিজ স্বামীৰ সৈতে সন্তানক লৈ মাকৰ ঘৰলৈ যায়। নৱজাত সন্তানটিক প্ৰথম গৰাহ ভাত ককাকে আৰু তাৰ পিছত মোমায়েকে খোৱায়। এটা মতা কুকুৰা আদি দেৱতা 'জ'ৱন'ৰ নামত উছৰ্গা কৰে। মোমায়েকে নৱজাত শিশুটোৰ হাতত আদা এডোখৰ পিন্ধোৱাৰ পৰম্পৰাও নক্টেসকলে মানি আহিছে। এইদিনটোত শিশুক মুণ্ডন কৰোৱা হয়। ইয়াৰ লগতে চুবুৰীয়াসকলৰ বাবে এটা ভোজৰো আয়োজন কৰে। ইয়াৰ পিছত নৱজাত শিশুটোক প্ৰথমবাৰৰ বাবে শস্যৰ পথাৰলৈ নি দেখুওৱা হয়। এই পৰম্পৰাই নক্টেসকলৰ কৃষিৰ লগত থকা অভিন্ন সম্পৰ্কৰ সাক্ষ্য বহন কৰিছে।

২.৩ বিবাহকেন্দ্ৰিক অনুষ্ঠান ঃ

বিবাহ সমাজৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ অনুষ্ঠান। সমাজভেদে বিবাহ অনুষ্ঠানৰ ৰূপ সুকীয়া হোৱা দেখা যায়। নে'ক্টেসকলেও বিবাহৰ ক্ষেত্ৰত কেতবোৰ সামাজিক নীতি-নিয়ম মানি আহিছে। এই সম্পৰ্কে পূৰ্বে আলোচনা কৰি অহা হৈছে। বহুক্ষেত্ৰত নক্টেসকলে বৈবাহিক সম্পৰ্ক সৰুকালতেই ধাৰ্য কৰে। কিন্তু পিছত যদি দুয়োপক্ষ অথবা ল'ৰা-ছোৱালী অমান্তি হয়। তেন্তে বিবাহ ভাঙ খায়। নক্টেসকলৰ মাজত প্ৰেম বিবাহ যথেষ্ট পৰিমাণত পোৱা যায়। যদি দুয়োপক্ষ বিবাহৰ বাবে মান্তি হয়, তেন্তে বিবাহৰ দিন ধাৰ্য হোৱাৰ পিছত দৰা পক্ষৰ হৈ ঘৰৰ কোনো ভাল চিনাকিৰ বয়োজ্যেষ্ঠ আৰু এহাল দম্পতি কইনাৰ ঘৰলৈ গৈ কইনাৰ মাকক এযোৰ তামোল-পাণ, এযোৰ কাপোৰ, খাৰু আৰু এচুঙা পানীয় আগবঢ়ায়। ই এক প্ৰকাৰে বিবাহত মাকৰ সন্মতি লোৱাৰ নিয়ম। সেইদিনা কইনা আৰু দৰা দুয়োঘৰতে ভোজৰ আয়োজন কৰা হয়।

গধূলি কইনা নিজ আত্মীয় আৰু সখীয়েকহঁতৰ সৈতে দৰাৰ ঘৰলৈ যায়। আনফালে দৰাৰ কেইজনমান বন্ধু এই অনুষ্ঠানটোত আনুষ্ঠানিকৰূপত উপস্থিত থাকিব লাগে। সকলোৰে বাবে ভোজন আয়োজন কৰা হয়। কইনা দৰাঘৰলৈ গৈ সকলোকে তামোল-পাণ যাচে। নক্টেসকলৰ বিবাহত নীতি-নিয়মৰ বিশেষ পয়োভৰ পৰিলক্ষিত নহয়। সকলোৰে মাত্ৰ পানীয় গ্ৰহণ কৰি দৰা-কইনাৰ সুখী দাম্পত্য জীৱনৰ বাবে আৰ্শীবাদ দিয়ে। দৰাৰ ঘৰত কইনা কিছু সময় থাকি পুনৰ মাকৰ ঘৰলৈ ঘূৰি যায়। যদি দুৰণিবটীয়া বাট হয়, তেন্তে নিশাও দৰাৰ ঘৰত কইনা আৰু কইনাৰ পক্ষৰ লোক থকাত কোনো বাধা নাই।

বিবাহৰ পিছদিনা কইনা নিজ সখীয়েকহঁতৰ সৈতে দৰাৰ লগত মাছ মাৰিবলৈ যায়। ইয়াৰ দুই-এদিনৰ পিছত দৰা-কইনা দুয়ো মিলি শস্যৰ পথাৰলৈ গৈ একেলগে কাম কৰে। তেতিয়াৰ পৰা সমাজৰ দৃষ্টিত তেওঁলোক স্বামী-স্ত্ৰী। ইয়াৰ পিছত তেওঁলোক একেলগে থকাত কোনো সামাজিক বাধা নাথাকে। কিন্তু স্ত্ৰী স্বামীৰ ঘৰলৈ স্থায়ীভাৱে থাকিবৰ কাৰণে গৰ্ভধাৰণৰ আঠমাহৰ পিছতহে আহে। যেতিয়া স্ত্ৰী স্বামীঘৰলৈ স্থায়ীভাৱে থাকিবলৈ আহে, তেতিয়া বিভিন্ন প্ৰকাৰৰ শস্যৰ বীজ, সুৰা, প্ৰয়োজনীয় পোছাক, দা, সৰু কটাৰী আদি কেতবোৰ বস্তু লগত নিয়াৰ এক পৰম্পৰাৰ প্ৰচলন নক্টে সমাজত পোৱা যায়।

যদি নক্টে সমাজত কোনো ডেকা-গাভৰুৱে ঘৰৰ পৰা পলাই বিয়া পাতে, তেন্তে তাৰবাবে ল'ৰাই ছোৱালীৰ অভিভাৱকক গা-ধন দিয়াৰ নিয়মো নক্টে সকলৰ মাজত প্ৰচলন আছে। এইক্ষেত্ৰত দৰাই কইনাৰ ঘৰত ভোজৰ বাবে দুটা গাহৰি দিয়াৰ নিয়ম দেখা যায়। পলোৱাই নিয়া বিবাহৰ ক্ষেত্ৰত দৰাই পিছত ছোৱালীৰ অভিভাৱকক দেখা কৰিব লাগে। দৰাই নিজৰ এজন বন্ধু আৰু এজন বয়োজ্যেষ্ঠলোকৰ সৈতে কইনাৰ ঘৰলৈ যায়,তাত কইনাৰ অভিভাৱকৰ সৈতে সকলোৱে মিলি এসাঁজ খায়।

নক্টেসকলৰ সমাজত বিবাহত আনুষ্ঠানিক নীতি-নিয়মতকৈ সকলোৰে সন্মতিৰহে অধিক প্ৰয়োজন হয়। নক্টে সমাজত বৰ্তমান খ্ৰীষ্টান ধৰ্ম, হিন্দু ধৰ্মৰ পদ্ধতিৰে বিবাহ হোৱাৰো নিদৰ্শন পোৱা যায়। পূৰ্বতে অন্য জনগোষ্ঠীৰ লগত বৈবাহিক সম্বন্ধ স্থাপনৰ বাধা-নিষেধ বৰ্তমান নক্টে সমাজত বহু পৰিমাণে কমি গৈছে।

নক্টেসকলৰ মাজত তোলনী বিয়াৰ বিশেষ আড়ম্বৰতা দেখা নাযায়। তেওঁলোকে কোনো ছোৱালী পুষ্পিতা হ'লে গাঁৱৰ বয়সীয়াল তিৰোতা আৰু বোৱাৰী, পৰিয়ালৰ মহিলা সদস্যসকলে মিলি অনুষ্ঠানিকভাৱে চাদৰ-মেখেলা পৰিধান কৰোৱায়। এই পৰম্পৰা তেওঁলোকে অসমৰ অন্য অজনজাতীয় জনগোষ্ঠীৰ পৰা অনুকৰণ কৰা বুলি নিশ্চিতভাৱে ক'ব পাৰি।

২.৪ মৃত্যু সম্বন্ধীয় অনুষ্ঠান ঃ

নক্টে সমাজত যেতিয়া কোনো এজন লোক বুঢ়া হৈ স্বাভাৱিকভাৱে মৃত্যু বৰণ কৰে, তেতিয়া তাক 'জ'ৰন'ৰ ইচ্ছা আৰু প্ৰকৃতি নিয়ম বুলি গ্ৰহণ কৰা হয়। কিন্তু গছৰ পৰা পৰি, পানীত ডুবি অস্বাভাৱিকভাৱে কোনো লোকৰ মৃত্যু ঘটিলে, তাক নক্টে সমাজে কোনো অপদেৱতাক কৰ্ম বুলি বিশ্বাস কৰে। সেইদৰে নিজ কৰ্ম অনুসৰি ভাল আত্মাই 'লুমলান' আৰু বেয়া আত্মাই 'চালাম'লৈ গতি কৰে। অসমৰ নক্টেসকল বৈষ্ণৱ ধৰ্মৰে দীক্ষিত। সেয়ে পূৰ্বৰ শ সৎকাৰ পৰম্পৰা নক্টেসকলৰ মাজত নাই। বৰ্তমান তেওঁলোকে শ পুতে যদিও হিন্দু ধৰ্মৰ আচাৰ-অনুষ্ঠানৰ মাজেৰে মৃত্যু সম্বন্ধীয় অনুষ্ঠান পালন কৰে।

পুৰণি কালত নগাসকলে সকলো আত্মীয় উপস্থিত নোহোৱা পৰ্যন্ত শ সৎকাৰ নকৰিছিল। কোনোটো মৃতদেহৰ তিনি-চাৰিদিন পলমকৈ সৎকাৰ কৰা হৈছিল। তদুপৰি শ মুকলিকৈ ৰাখি এমাহ-দুমাহৰ পিছত নৰমুণ্ডটো সংগ্ৰহ কৰি সংৰক্ষণ কৰাৰ প্ৰথাও নক্টেসকলৰ মাজত প্ৰচলিত আছিল। কোনো লোকৰ অপমৃত্যু হ'লে সেইব্যক্তিৰ মুণ্ড সংগ্ৰহ কৰা নহৈছিল। বৰ্তমান এই পৰম্পৰা তেওঁলোকে ত্যাগ কৰিছে। অসমৰ নক্টেসকলে কোনো ব্যক্তি ঢুকালে শ নিৰ্দিষ্ট ঠাইত পুতে। ৫-৬ ফুট দ' গাত খান্দি তাত প্ৰথমে গোটা বাঁহ আৰু বাঁহৰ গাধৈ পাৰি দিয়া হয়। শটো তাত ৰাখি তাৰ ওপৰত আকৌ গোটা বাঁহ জাপি দিয়া হয়। মৃতকে ব্যৱহাৰ কৰা দুই এটা সম্পদ যেনে, ধঁপাতৰ টেমা, বাচন, দা আদি তাত ৰাখি নখিলা টকৌ পাতেৰে ঢকা হয়। শেষত সমজুৱাকৈ মৃতকৰ আত্মাৰ সদগতি কামনা কৰি মাটি দিয়া হয়। মৃতকক পুতিবলৈ যোৱা লোক শ্মশানৰ পৰা বাছি জুই দেও দি পাৰ হৈ অহাৰ নিয়ম নক্টেসকলৰ মাজত প্ৰচলিত আছে। মৃতকৰ অন্তোষ্টি সকাম সুবিধা অনুসৰি তিনিদিন, দহদিন বা মাহৰ মূৰত আয়োজন কৰা হয়। এই দিনটোত সকলোৰে বাবে পানীয় আৰু মাংসৰ সৈতে ভোজৰ আয়োজন কৰা হয়। সকলোৰে মিলি আত্মাৰ সদ্গতিৰ বাবে প্ৰাৰ্থনা কৰে।

নক্টে সমাজত গাঁও প্ৰধানৰ মৃত্যু হ'লে সকলো লোকে নিজ পৰম্পৰাগত সাজেৰে আহি মৃত গাঁওপ্ৰধানলৈ সন্মান প্ৰদৰ্শন কৰে। অন্য গাঁৱৰ লোকেও আহি ইয়াত ভাগ লয়। পূৰ্বতে এই উপলক্ষ্যে নৃত্যৰ অনুষ্ঠানো কৰা হৈছিল। বৰ্তমান এই পৰম্পৰা নোহোৱা হৈ আহিছে। অৰুণাচল প্ৰদেশৰ টিপাৰ জিলাত খ্ৰীষ্টান ধৰ্ম গ্ৰহণ কৰা নক্টেসকলে সম্পূৰ্ণ খ্ৰীষ্টান ধৰ্মৰ নীতি অনুসৰি শ সৎকাৰ কৰা পৰিলক্ষিত হয়।

২.৫ অন্যান্য অনুষ্ঠান ঃ

নক্টে সমাজৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ অংশ মৰং। এখন গাঁৱৰ মৰঙত যুৱকসকল অন্তৰ্ভুক্ত হ'বলৈ এক ৰীতি পালন কৰা হয় যাক 'পমিখি' বোলে। এটি ল'ৰা মৰং ঘৰৰ সদস্য হ'বলৈ এটি গাহৰি বা ঘৰচীয়া হাঁহ-কুকুৰা আৰু সুৰা ৰাইজলৈ আগবঢ়ায় এক ভোজৰ আয়োজন কৰে। ইয়াৰ দ্বাৰা এটি কিশোৰ যুৱকৰ শাৰীলৈ উন্নীত হৈ গাঁৱৰ তথা মৰঙৰ দায়িত্ব বহন কৰিবলৈ পৈণত হোৱা বুলি ৰাজহুৱা স্বীকৃতি লাভ কৰে।

অসমৰ দিহিংকিনাৰ গাঁৱৰ নক্টেসকলে বুঢ়া ডাঙৰীয়াক লৈ এটি অনুষ্ঠান পাতে। এই অনুষ্ঠানত চাৰিচুকত চাৰিটা বাঁহৰ আগত ৰঙা কাপোৰৰ পতাকা লগাই পোতে, লগতে কলগছ-কুঁহিয়াৰৰ আগ আদিও পোতা দেখা যায়। এই চাৰি চুক পুনৰ এৰী সূতাৰে সাতপাক দিয়া হয়। বৰসবাহ পাতিবলৈ তেওঁলোকে তিনিটা বেদী পাতি লয়। এই বেদী কেইটাত তিনিখন মাটিৰ চাকি আৰু গোটা তামোল আগলি কলাপাতত দিয়া হয়। পূজাৰ শেষত কল কুঁহিয়াৰ আদি নৈবেদ্যৰ সৈতে ভেলত উঠাই দি নৈত উটুৱাই দিয়ে। এই অনুষ্ঠানসমূহত মহিলাই অংশগ্ৰহণ নকৰে। এই পৰম্পৰাত হিন্দু ধৰ্মৰ প্ৰভাৱ অতি স্পষ্ট।

২.০৬ সিদ্ধান্ত ঃ

- অৰুণাচল প্ৰদেশত যথেষ্ট সংখ্যাত নক্টেসকলৰ জন বসতি থাকিলেও অসমত নক্টেসকল এক সংখ্যালঘু জনগোষ্ঠীৰূপেহে চিহ্নিত কৰিব পাৰি।

- অৰুণাচল প্ৰদেশত বাস কৰা নক্টেসকলৰ সমাজ-সাংস্কৃতিক ধাৰাৰ সৈতে অসমৰ ভৌগলিক সীমাত বাস কৰি থকা নক্টেসকলৰ কিছুমান পাৰ্থক্য পৰিলক্ষিত হয়।

- এই কথা উল্লেখ্য যে, বৰ্তমান সময়ত নক্টেসকলৰ সমাজ-জীৱনলৈ আমূল পৰিৱৰ্তন আহিছে। দীৰ্ঘদিন ধৰি অন্য জনগোষ্ঠীৰ সৈতে সহ-অৱস্থান, হিন্দু আৰু খ্ৰীষ্টান ধৰ্ম গ্ৰহণ, গণমাধ্যম আদি কাৰকবোৰৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত বৰ্তমান নক্টে সমাজত সাংস্কৃতিক সমাহৰণ ঘটিছে।

- নক্টেসকলৰ 'চালু-লকু' উৎসৱ অতি আড়ম্বৰতাৰে অসমত উদ্‌যাপিত কৰা হয় যদিও ই বৰ্তমান থলুৱা অসমীয়া সমাজৰ দ্বাৰা গভীৰৰূপত প্ৰভাৱিত হৈছে।

■ বাৰেঘৰ চলিহা সত্ৰৰ শিষ্যত্ব গ্ৰহণ কৰি নৰ বৈষ্ণৱ ধৰ্মৰে দীক্ষিত হোৱা অসমৰ নক্টেসকলৰ মাজত আদি ধৰ্মৰ বিলুপ্তি ঘটিছে। ইয়াৰ বাবে নক্টেসকলৰ মাজত পূৰ্বে প্ৰচলিত বহুতো আচাৰ-অনুষ্ঠান নোহোৱা হৈছে।

■ 'লকু' উৎসৱ লগত জড়িত গীত-মাতসমূহো ক্ৰমান্বয় হেৰাই যাব ধৰিছে। গীত-নাচৰ পৰম্পৰাৰ সাংস্কৃতিক অৱক্ষয় ঘটাতো নক্টে সমাজৰ বাবে ইতিবাচক বুলিব নোৱাৰি।

৩.০০ উপসংহাৰ ঃ

অসমত বসবাস কৰা নগা জনগোষ্ঠীকেইটাৰ সমাজ-সংস্কৃতিত বহুকেইটা কাৰকৰ ফলত সাংস্কৃতিক সমাহৰণ প্ৰক্ৰিয়া অব্যাহত আছে যদিও এই প্ৰক্ৰিয়া সাংস্কৃতিক অভিযোজন (Acculturation) ৰ পৰ্যায়ত আছে ; ই সাংস্কৃতিক সমাহৰণ পৰ্যায়লৈ সম্পূৰ্ণৰূপত উন্নীত হোৱা নাই। সেয়ে তেওঁলোকৰ ধৰ্ম, আচাৰ, আভৰণ, খাদ্যাভাস আদিত বহুবোৰ মৌলিক বৈশিষ্ট্য আৰু স্বকীয়তা বৰ্তমানো ৰক্ষিত হৈছে। নক্টেসকলৰ সম্পৰ্কে অদ্যপি বিস্তৃত আলোচনা হোৱা নাই। এই গৱেষণা-পত্ৰত নক্টেসকলৰ লোকাচাৰৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ অংশ লোক উৎসৱ-অনুষ্ঠান সম্পৰ্কে এটি সংক্ষিপ্ত আলোচনা আগবঢ়োৱা হ'ল। অসমৰ জনগোষ্ঠী হিচাপে নক্টেসকলৰ সমাজ-সাংস্কৃতিক দিশসমূহৰ পূৰ্ণাংগ অধ্যয়নৰ প্ৰয়োজনীয়তা আছে। ❑

প্ৰসংগ সূত্ৰ

১. Dutta Parul , *The Nocte*. Shillong : Director Information and Public Relation.1978.print, p. 04

২. Rizvi S.H.M. & Shibani Roy. *Nage Tribes of North East India* Delhi : B.R. Publication Corporation, 2012.Print, p. 01

৩. ibid, p. 01

৪. Kumar, B.B. *Naga Identity*. Delhi : Concept Publishing Company.2005, .print, p. 25-26

৫. ibid, p. 25-26

৬. Dutta, Parul. *The Nocte*. Shillong : Director Information and Public Relation,1978.print, p. 07

৭. Dutta, Parul. *Tribal Chieftainship.* Itanagar : Himalayan Publishers. 2003 .print, p. 161

৮. ভট্টাচাৰ্য, প্ৰমোদ চন্দ্ৰ. *অসমৰ জনজাতি.* ধেমাজি ঃ কিৰণ প্ৰকাশন. ২০০৮.পৃ. ১৮৮

৯ তথ্যদাতা- ভোগেশ্বৰ নক্টে (ৰজা, শিলনি গাঁও). সাক্ষাৎকাৰৰ সময় ঃ ১৯ অক্টোবৰ,২০১৩. ২ঃ০০ অপৰাহ্ণ

১০. ফুকন,পদ্মেশ্বৰ নাওবৈছা. *নাওবৈছা ফুকনৰ অসম বুৰঞ্জী.* (সম্পা.- লক্ষ্মীনাথ তামুলী). *গুৱাহাটী* ঃ অসম প্ৰকাশন পৰিষদ. ২০০৫.পৃ. ১৩২

১১. গগৈ, লীলা. *অসমৰ সংস্কৃতি.* ডিব্ৰুগড় ঃ বনলতা. ২০০৬. পৃ.১৬০

১২. ভট্টাচাৰ্য, প্ৰমোদ চন্দ্ৰ. *অসমৰ জনজাতি.* ধেমাজি ঃ কিৰণ প্ৰকাশন.২০০৮.পৃ. ১৯০

১৩. Rizvi, S.H.M. & Shibani Roy. *Nage Tribes of North East India.*Delhi : B.R. Publication Corporation.2012.Print, pp. 02

১৪. গগৈ, লীলা. *অসমৰ সংস্কৃতি.* ডিব্ৰুগড় ঃ বনলতা. ২০০৬. পৃ.১৫৫

১৫. Bareh, H M. *Encyclopaedia of North-East India(Vol-1).* New Delhi : Mittal Publication.2007.pp. 2002

১৬. Dutta, Parul. *Tribal Chieftainship.* Itanagar : Himalayan Publishers,2003 .print, pp. 19

১৭. "Noctes." *Know Tirap/people. tirap.nic.in*.web.17Nov, 2013

১৮. "Arunachal Pradesh Data Highlights: The Scheduled Tribes, Census of India. 2001"*censusindia.gov.in.*web.17 Nov, 2013

১৯. ibid

২০. Bhattacharji, Pramod Ch. ''Sino Tibetan Languages of North àßast India, Social Aspect''. *Linguistic Situation in North East India* pp.14

২১. Dutta, Parul. *The Noctes.*Shillong : Director Information and Public Relation,1978.print, pp.11

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

ভাৰতীয় প্ৰেক্ষাপটত শিশুৰ অধিকাৰ ঃ এক পৰ্যালোচনা

ড° বিৰাজ দত্ত

সহকাৰী অধ্যাপক, ৰাজনীতি বিজ্ঞান বিভাগ
ডি.এইচ.এছ.কে. মহাবিদ্যালয়,
ডিব্ৰুগড়, অসম-৭৮৬০০১
৮৬৩৮৬১৬০৫০
jaanbiaj@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

বিশ্বৰ সৰ্বাধিক জনসংখ্যা থকা তথা উন্নয়নশীল ৰাষ্ট্ৰসমূহৰ মাজত ভাৰতবৰ্ষ হৈছে এনে এখন ৰাষ্ট্ৰ যাৰ এক বৃহৎসংখ্যক লোক ১৮ বছৰৰ তলৰ আয়ুসৰ অৰ্থাৎ শিশু। যিহেতু শিশুসকলক জনসাধাৰণৰ এক বৃহৎ অংশ হিচাপে চিনাক্ত কৰা হয় যাক তেওঁলোকৰ পিতৃ-মাতৃৰ লগতে সমাজ আৰু ৰাষ্ট্ৰৰ পৰা বিশেষ যত্ন আৰু মনোযোগৰ প্ৰয়োজন আছে। ভাৰতীয় প্ৰেক্ষাপটত ভাৰতীয় সংবিধানক নাগৰিকসকলৰ লগতে শিশুসকলৰ অভিভাৱক হিচাপে গণ্য কৰা হয়। সাংবিধানিকভাৱে সকলো শ্ৰেণীৰ লোককে সুৰক্ষা প্ৰদান কৰিবলৈ যথাসম্ভৱ ব্যৱস্থাৱলী সন্নিৱিষ্ট কৰা হৈছে। আৰু ইয়াৰ অনুৰূপ ধৰণেৰে শিশুসকলক বিশেষ সুৰক্ষা প্ৰদান কৰিবলৈ দিহা কৰা হৈছে। ভাৰতবৰ্ষৰ সংবিধানৰ তৃতীয় আৰু চতুৰ্থ অধ্যয়নত শিশুসকলৰ অধিকাৰ সুনিশ্চিত কৰিবৰ বাবে যথেষ্ট গুৰুত্বপূৰ্ণ ব্যৱস্থাৱলী গ্ৰহণ কৰা হৈছে। আন্তঃৰাষ্ট্ৰীয় প্ৰেক্ষাপটত ৰাষ্ট্ৰসংঘই জন্মলগ্নৰে পৰা মানৱজীৱনৰ বিভিন্ন ক্ষেত্ৰত নিৰন্তৰভাৱে কাম কৰি আহিছে লগতে শিশুসকলৰ অধিকাৰ বিষয়টোৰে ৰাষ্ট্ৰসংঘৰ মজিয়াত বিশেষ স্থান দখল কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। এইক্ষেত্ৰত ৰাষ্ট্ৰসংঘৰ নেতৃত্বত বহুতো গুৰুত্বপূৰ্ণ পদক্ষেপ তথা কাৰ্যসূচী ৰূপায়ণ কৰি অহা হৈছে। এনে পৰিৱেশ আৰু পৰিস্থিতিৰ পাছতো বিভিন্ন সময়ত শিসুসকলক সাংবিধানিক প্ৰদত্ত অধিকাৰৰ ব্যাপক উলংঘন হোৱা আমাৰ সকলোৰে দৃষ্টিগোচৰ হৈছে। সেয়েহে এই গৱেষণাপত্ৰখনৰ জৰিয়তে বৰ্তমান ভাৰতীয় প্ৰেক্ষাপটত কোনবিলাক কাৰণে প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰিছে তাৰ এক তথ্যগত বিশ্লেষণ কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

মূল শব্দ ঃ

শিশু, শিশুৰ অধিকাৰ, সাংবিধানিক ব্যৱস্থা।

পৰিচিতি ঃ

ভাৰতবৰ্ষ হৈছে উন্নয়নশীল ৰাষ্ট্ৰসমূহৰ ভিতৰত এখন জনবহুল ৰাষ্ট্ৰ যাৰ এক বৃহৎসংখ্যক জনসাধাৰণ শিশু হিচাপে পৰিচিত। ২০১১ চনৰ জনসংখ্যাৰ পৰিগণনা অনুসৰি ভাৰতবৰ্ষৰ মুঠ জনসংখ্যাৰ প্ৰায় ৩৭% লোক শিশু, যি ১৮ বছৰৰ তলৰ আৰু ই প্ৰায় ৪৪০ মিলিনয়।[১] যিহেতু শিশুসকলক বিশেষ সুৰক্ষা আৰু মনোযোগিতাৰ

প্ৰয়োজন আছে সেয়েহে তেওঁলোকক পিতৃ-মাতৃ, সমাজ তথা ৰাষ্ট্ৰই বিশেষ গুৰুত্ব প্ৰদান কৰাটো অতি প্ৰয়োজনীয় হ'ব। ভাৰতীয় প্ৰেক্ষাপটত শিশুসকল জন্মলগ্নৰে পৰা শাৰীৰিক, মানসিক আৰু আৱেগিক ৰূপত স্ব-নিৰ্ভৰশীল হোৱালৈকে প্ৰায় অসুৰক্ষিত বুলি বিবেচনা কৰা হয়।

শিশুসকলৰ অধিকাৰ কথা চিন্তা কৰি ১৯২৪ চনত 'জেনেভা ঘোষণাপত্ৰ'ৰ জৰিয়তে 'Same the Children fund International Union', যি জাতিসংঘৰ জৰিয়তে একেটা বৰ্ষতে স্বীকৃতি লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল লগতে পাঁচটা বিশেষ অধিকাৰ শিশুসকলৰ কাৰণে সুনিশ্চিত কৰিছিল। দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধৰ পৰিসমাপ্তিৰ পাছত ২৪ অক্টোবৰ ১৯৪৫ চনত প্ৰতিষ্ঠা লাভ কৰা ৰাষ্ট্ৰসংঘই জাতিসংঘই স্বীকৃতি প্ৰদান কৰা শিশুসকলৰ এই অধিকাৰক পুনৰবাৰ নিশ্চিত কৰিবৰ বাবে ১৯৪৮ আৰু ১৯৫৯ চনত বিশেষ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰে। সমান্তৰালভাৱে ১০ ডিচেম্বৰ ১৯৪৮ চনত ৰাষ্ট্ৰসংঘই গৃহীত কৰা 'মানৱ অধিকাৰৰ সাৰ্বজনীন ঘোষণা পত্ৰৰ' জৰিয়তে শিশুসকলৰ অধিকাৰ সুৰক্ষিত কৰাৰ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰে। ১৯৫৯ চনৰ ২০ নৱেম্বৰ তাৰিখে ৰাষ্ট্ৰসংঘৰ সাধাৰণ সভাই গ্ৰহণ কৰা 'শিশু অধিকাৰ সম্পৰ্কীয় ঘোষণা পত্ৰ'ৰ জৰিয়তে জেনেভা ঘোষণা পত্ৰই সুনিশ্চিত কৰা শিশুৰ পাঁচটা অধিকাৰক পুনৰবাৰ সুনিশ্চিত কৰে।[২]

ইয়াৰ পৰৱৰ্তী সময়ত ১৯৮৯ চনত ৰাষ্ট্ৰসংঘৰ সাধাৰণ সভাই শিশুৰ অধিকাৰ সম্পৰ্কীয় ঘোষণাপত্ৰ গৃহীত কৰে যিখন ২ ছেপ্তেম্বৰ ১৯৯০ চনৰ পৰা কাৰ্যকৰী হৈছে যি ৫৪ টা অনুচ্ছেদৰ জৰিয়তে সমগ্ৰ বিশ্বতে শিশুৰ অধিকাৰ সমূহ সুৰক্ষিত কৰিবলৈ গ্ৰহণ কৰা এক বিশেষ পদক্ষেপ। এই ঘোষণাপত্ৰখনে শিশুসকলৰ সামাজিক, পৌৰ, অৰ্থনৈতিক আৰু সাংস্কৃতিক অধিকাৰ সুনিশ্চিত কৰাৰ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰিছে। ইয়াৰ মাজত (১) জীয়াই থকাৰ অধিকাৰ, (২) বিকাশৰ অধিকাৰ, (৩) সুৰক্ষাৰ অধিকাৰ, (৪) অংশগ্ৰহণৰ অধিকাৰ।[৩]

১৯৪৭ চনৰ ১৫ আগষ্ট তাৰিখে ভাৰতবৰ্ষই বৃটিছ শাসনৰ পৰা স্বাধীনতা লাভ কৰে। ভাৰতবৰ্ষৰ ইতিহাস আৰু ইয়াৰ প্ৰাক্-স্বাধীনতাকালীন সামাজিক অৰ্থনৈতিক পৰিস্থিতিয়ে শিশুৰ সামাজিকীকৰণৰ মূখ্য সংস্থা হিচাপে পৰিয়ালৰ ভূমিকাক নিশ্চিত কৰে আৰু শিশুৰ উচিত প্ৰতিপালন আৰু সুৰক্ষাৰ পথ প্ৰশস্ত কৰে। ইয়াৰ উপৰিও, ই শিশু, পৰিয়াল আৰু ৰাষ্ট্ৰৰ মাজৰ সম্পৰ্কৰ প্ৰকৃতি নিৰ্দ্ধাৰণ কৰে আৰু এনেদৰে সকলো শিশুৰ বাবে এক ৰাষ্ট্ৰীয় শৈশৱৰ প্ৰয়োজনীয় ভেঁটি সৃষ্টি কৰে। স্বাধীন ভাৰতৰ সংবিধান ১৯৪৯ চনৰ ২৬ নৱেম্বৰত গৃহীত হয় আৰু ই কাৰ্যকৰী হয় ১৯৫০ চনৰ ২৬ জানুৱাৰী তাৰিখে, য'ত শিশুৰ জীয়াই থকাৰ, বিকাশ আৰু সুৰক্ষাৰ ব্যৱস্থা অন্তৰ্ভূক্ত আছিল। এই ব্যৱস্থাৱলীসমূহ 'মৌলিক অধিকাৰ' আৰু 'ৰাষ্ট্ৰ পৰিচালনাৰ নিৰ্দেশনাত্মক নীতি' সম্পৰ্কীয় সংবিধানৰ তৃতীয় আৰু চতুৰ্থ দুয়োটা খণ্ডতে অন্তৰ্ভূক্ত কৰা হৈছে। ভাৰতীয় সংবিধানক ইয়াৰ নাগৰিক সকলৰ লগতে শিশুসকলোৰ অভিভাৱক হিচাপে গণ্য কৰা হয়।[৪]

সাম্প্ৰতিক অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্যসমূহ ঃ

১) বৰ্তমানৰ অধ্যয়নটোৰ মূখ্য উদ্দেশ্য হ'ল ভাৰতত শিশু সকলৰ অধিকাৰ আৰু ইয়াৰ বিকাশৰ বাবে থকা সংবিধানিক ব্যৱস্থাৰ ওপৰত আলোকপাত কৰা।

২) এই অধ্যনয়টোৰ দ্বিতীয় উদ্দেশ্য হৈছে ভাৰতত শিশুৰ অধিকা প্ৰচাৰ-প্ৰসাৰ আৰু সুৰক্ষাৰ বাবে কাম কৰি থকা বিভিন্ন আইনৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা।

৩) এই অধ্যয়নটোৰ তৃতীয় উদ্দেশ্য হৈছে শিশুৰ বিৰুদ্ধে হোৱা বিভিন্ন ধৰণৰ হিংসাৰ ওপৰত আলোকপাত কৰা, যিয়ে অতিমাত্ৰাত শিশুৰ অধিকাৰসমূহ খৰ্ব বা উলংঘন কৰিছে।

অনুসৰণ কৰা পদ্ধতি ঃ

এই অধ্যয়নটো হৈছে বৰ্ণনামূলক আৰু উক্তবিষয়টোৰ ওপৰত তথ্য সংগ্ৰহ কৰিবলৈ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে তথা অধ্যয়নটোৰ প্ৰয়োজনীয়তা অনুসৰি প্ৰতিনিধিত্ব কৰা হৈছে। এই অধ্যয়নটো কেৱল গৌণ তথ্যৰ ওপৰত আধাৰিত।

সম্বোধন কৰিবলগীয়া গৱেষণামূলক প্ৰশ্ন ঃ

শিশুৰ অধিকাৰ এক অতি বিস্তৃত ধাৰণা আৰু সেই বাবে শিশুৰ অধিকাৰ ৰূপায়ণ সম্পৰ্কীয় সকলো সমস্যাৰ কৰাটো অতি কঠিন কাম। সেইবাবে এই অধ্যয়নত নিম্নলিখিত প্ৰাসংগিক গৱেষণামূলক প্ৰশ্নবোৰ আলোচনা কৰা হ'ব -

১) ভাৰতত শিশুৰ অধিকাৰ সুৰক্ষিত কৰাৰ ক্ষেত্ৰত সাংবিধানিক ব্যৱস্থাসমূহ কিমান দূৰ প্ৰভাৱশালী?

২) ৰাষ্ট্ৰসংঘৰ সদস্য ৰাষ্ট্ৰ হিচাপে ভাৰতবৰ্ষই ৰাষ্ট্ৰসংঘই শিশুৰ অধিকাৰ সুৰক্ষিত কৰাৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰণয়ন কৰা

নিৰ্দেশনামূলক কাৰ্যকৰী কৰাত কিমানদূৰ সফল হৈছে?

ভাৰতত শিশুৰ অধিকাৰ ঃ

ভাৰতীয় সংবিধানৰ মতে জনসংখ্যাৰ ০-১৮ বছৰ বয়সৰ লোকসকলেই হৈছে শিশু। ভাৰতৰ সংবিধান প্ৰণেতাসকলে শিশুসকলৰ অধিকাৰৰ প্ৰসাৰ আৰু সুৰক্ষাৰ বাবে সংবিধানৰ ভিতৰতেই কেবাটাও গুৰুত্বপূৰ্ণ ব্যৱস্থা অন্তৰ্ভূক্ত কৰিছিল। অধিক স্পষ্টকৈ উল্লেখ কৰিবলৈ গ'লে ভাৰতীয় সংবিধানৰ তৃতীয় অধ্যায়ৰ সন্নিৱিষ্ট অধিকাৰসমূহ যাক মৌলিক অধিকাৰ বুলি কোৱা হয়, সেয়া ভাৰতৰ সকলো নাগৰিকৰ বাবে কোনো বৈষম্যবিহীন বা পাৰ্থক্যবিহীন ভাৱে উপলব্ধ কৰোৱা হয়। তদুপৰি সংবিধানৰ চতুৰ্থ অধ্যায় ভাৰত চৰকাৰক কেইবাটাও নিৰ্দেশনা প্ৰদান কৰিছে যাৰ দ্বাৰা ৰাষ্ট্ৰৰ প্ৰতিজন নাগৰিকৰ কল্যাণৰ বাবে বিভিন্ন কাৰ্যকলাপ সম্পাদন কৰিব লাগে। এই নীতি নিৰ্দেশনাসমূহক ব্যাপকৰূপত ৰাষ্ট্ৰ পৰিচালনাৰ নিৰ্দেশনাত্মক নীতি বুলি জনা যায়। ইয়াত সংবিধানত কৰা বিভিন্ন ব্যৱস্থাৱলী, বিশেষকৈ সংবিধানৰ তৃতীয় আৰু চতুৰ্থ অধ্যায় উল্লিখিত ব্যৱস্থাৱলীসমূহৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে।

ভাৰতবৰ্ষৰ সংবিধানৰ তৃতীয় অধ্যায়ৰ মৌলিক অধিকাৰ ঃ

ভাৰতবৰ্ষৰ সংবিধানৰ 'তৃতীয় অধ্যয়নত সন্নিৱিষ্ট মৌলিক অধিকাৰ আৰু শিশুৰ অধিকাৰ -

অনুচ্ছেদ১৪ ঃ ভাৰতৰ ভোটাৰসকলক, সমান্তৰালভাৱে শিশুসকলক আইনৰ সন্মুখত সমান দৃষ্টিৰে ব্যৱহাৰ কৰিব লাগিব আৰু কোনো কোনো ধৰণৰ বৈষম্য নোহোৱাকৈ আইনে সমান সুৰক্ষা প্ৰদান কৰিব লাগিব।

অনুচ্ছেদ ১৫ ঃ সংবিধানৰ জৰিয়তে বৈষম্যতা নিষিদ্ধ কৰা হৈছে। অৱশ্যে, ই শিশুসকলৰ বাবে তেওঁলোকৰ বিকাশৰ সুবিধাৰ ক্ষেত্ৰত ৰাষ্ট্ৰক বিশেষ ব্যৱস্থাৱলীৰ সৃষ্টি কৰাত কোনো বাধা আৰোপ নকৰে।

অনুচ্ছেদ ২১ ঃ আইনৰ নিৰ্দিষ্ট উপযুক্ত প্ৰক্ৰিয়াৰ দ্বাৰা নহ'লে, আন কোনো ক্ষেত্ৰতে যিকোনো লোক জীয়াই থকাৰ বা ব্যক্তিগত স্বাধীনতাৰ পৰা বঞ্চিত নহ'ব। এজন ব্যক্তিয়ে উপযুক্ত আৰু উচিত পৰিমাণৰ খাদ্য, আশ্ৰয় (বাসস্থান), বস্ত্ৰ ইত্যাদি লাভ কৰিব লাগিব।

অনুচ্ছেদ ২১ (A) ঃ ৰাষ্ট্ৰই ৬ ৰ পৰা ১৪ বছৰৰ যিকোনো বা সকলো শিশুকে বিনামূলীয়া আৰু প্ৰয়োজনীয় শিক্ষা প্ৰদান কৰিব, যিটো ৰাজ্যই আইন অনুসৰি নিৰ্দ্ধাৰিণ কৰিব পাৰিব।

অনুচ্ছেদ ২৩ ঃ মানৱ সৰবৰাহ আৰু ভিক্ষাৰী বৃত্তি তথা বলপূৰ্বক শ্ৰমক নিষিদ্ধ কৰা।

অনুচ্ছেদ ২৪ ঃ ১৪ বছৰৰ তলৰ শিশুক কলঘৰ, খননকাৰ্য বা অন্যান্য বিপদজনক কাৰ্যক্ষেত্ৰত নিযুক্তিকৰণ নিষিদ্ধ কৰা।[৫]

চতুৰ্থ অধ্যায়, ৰাষ্ট্ৰ পৰিচালনাৰ নিৰ্দেশনাত্মক নীতি ঃ

ভাৰতবৰ্ষৰ সংবিধানৰ চতুৰ্থ অধ্যয়ত সন্নিবিষ্ট ৰাষ্ট্ৰ পৰিচালনাৰ নিৰ্দেশাত্মক নীতিসমূহৰ জৰিয়তে সকলো লোকৰ লগতে শিশুসকলৰ অধিকাৰ সুৰক্ষিত কৰিবলৈ যথাসম্ভৱ ব্যৱস্থাৱলীৰ সন্নিৱিষ্ট কৰিছে। ইয়াৰে ভিতৰত—

অনুচ্ছেদ ৩৯ (e) ঃ ৰাষ্ট্ৰই এই কথা সুনিশ্চিত কৰিব যাতে কম বয়সৰ ল'ৰা-ছোৱালীয়ে শোষণৰ / নিৰ্যাতনৰ সন্মুখীন নহয় আৰু আৰ্থিক প্ৰয়োজনীয়তাৰ বাবে বাধ্য হৈ তেওঁলোকৰ বয়স আৰু ক্ষমতাৰ বাবে অনুপযুক্ত কাৰ্যকলাপত লিপ্ত নহয়।

অনুচ্ছেদ ৩৯ (f) ঃ ৰাষ্ট্ৰই এক সুস্থ প্ৰক্ৰিয়াৰে আৰু স্বাধীনতা তথা মৰ্যাদাজনক পৰিস্থিতিত শিশুক বিকাশৰ বাবে সুযোগ আৰু সুবিধাৰ নিশ্চয়তা প্ৰদান কৰিব। ইয়াৰ লগতে ৰাষ্ট্ৰই এয়াও সুনিশ্চিত কৰিব লাগিব যে শিশুৰ শৈশৱ আৰু কৈশোৰ যিকোনো শোষণৰ পৰা আৰু অৰ্থনৈতিকভাৱে তথা ভৌতিক সহায়ৰ পৰা বঞ্চিত নোহোৱাকৈ সুৰক্ষিত হৈ থাকিব।

অনুচ্ছেদ ৪১ ঃ ৰাষ্ট্ৰই নিজৰ অৰ্থনৈতিক সামৰ্থ্য আৰু বিকাশৰ ভিতৰত, শৈক্ষিক সুযোগ আৰু সুবিধা প্ৰদান কৰিবৰ বাবে বাধ্য হ'ব।

অনুচ্ছেদ ৪৪ ঃ ৰাষ্ট্ৰই সকলো নাগৰিকৰ বাবে এখন সমান নাগৰিক সংহিতা প্ৰস্তুতৰ বাবে সকলো সাম্ভাব্য প্ৰচেষ্টা গ্ৰহণ কৰিব, যাৰ দ্বাৰা শিশুসকলৰ দণ্ডক গ্ৰহণ (তুলি লোৱাৰ বাবে)ৰ বাবে সমান নাগৰিক সংহিতাৰ সৃষ্টি হ'ব।

অনুচ্ছেদ ৪৫ ঃ ৰাষ্ট্ৰই শিশুৰ ১৪ বছৰ বয়স নোহোৱালৈকে বিনামূলীয়া আৰু প্ৰয়োজনীয় শিক্ষা প্ৰদান কৰিবলৈ প্ৰচেষ্টা কৰিব।

অনুচ্ছেদ ৪৬ ঃ সংবিধান অনুসৰি, সমাজৰ দুৰ্বল শ্ৰেণীৰ লোকসকলৰ অৰ্থনৈতিক স্বাৰ্থক উন্নত / বিকাশ কৰা আৰু এনেদৰে সেই শ্ৰেণীৰ শিশুসকলৰ বিকাশ সাধন কৰিব লাগে।

অনুচ্ছেদ ৪৭ ঃ ৰাষ্ট্ৰই পুষ্টিৰ পৰিমাণ বৃদ্ধি কৰিবলৈ আৰু জীৱন-ধাৰণৰ মান তথা জনস্বাস্থ্য সুনিশ্চিত কৰিবলৈ যি ব্যৱস্থা সন্নিবিষ্ট কৰিছে সেই ব্যৱস্থাৱলীয়ে শিশুসকলকো এইক্ষেত্ৰত অন্তৰ্ভূক্ত কৰিছে।

অনুচ্ছেদ ৫১ (c) ঃ ৰাষ্ট্ৰই আন্তৰ্জাতিক আইন তথা নীতিসমূহ আৰু ইয়াৰ বৈকল্পিক নীতি-নিৰ্দেশনাসমূহ যিমান দূৰ সম্ভৱ মানি চলিব আৰু সন্মান প্ৰদৰ্শন কৰিব।

অনুচ্ছেদ ৫১ (k) ঃ ভাৰতৰ প্ৰতিজন নাগৰিকৰ এয়া কৰ্তব্য যে পিতৃ-মাতৃ বা অভিভাৱক হয় তেন্তে শিশুৰ শিক্ষাৰ বাবে উপযুক্ত সুবিধা প্ৰদান কৰিব বা এই ক্ষেত্ৰত ৬ ৰ পৰা ১৪ বছৰৰ শিশুৰ ক্ষেত্ৰত ৰাষ্ট্ৰীয় শিক্ষা অধিকাৰ আইনৰ ধাৰাসমূহ প্ৰযোজ্য হ'ব।[৬]

অনুচ্ছেদ ২৪৩ (G) ঃ সংবিধানৰ ৭৩ তম সংশোধনীৰ জৰিয়তে প্ৰৱৰ্তন কৰা তিনি তৰপীয়া পঞ্চায়তীৰাজ ব্যৱস্থাত মহিলা আৰু শিশুৰ বিকাশৰ কাৰ্যসূচী অৰ্পণ কৰাৰ যোগেদি শিশুৰ যতনক আনুষ্ঠানিকতা প্ৰদান কৰিছে।[৭]

ভাতৰত সংবিধানৰ প্ৰণেতাসকলে এই কথাত স্বীকৃতি প্ৰদান কৰিছিল যে, জাতি, বৰ্ণ, লিংগ, ভাষা, ধৰ্ম, সামাজিক উৎস বা জন্মৰ ভিত্তিত কোনো বৈষম্য অবিহনে প্ৰতিটো শিশুৰ স্বাস্থ্য, কল্যাণ আৰু সামাজিক সুৰক্ষাৰ অধিকাৰ আছে। ৰাষ্ট্ৰীয় নীতিসমূহে আইন প্ৰস্তুতকৰণ, আইন নিশ্চিতকৰণত প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰে আৰু অৱশেষত অধিকাৰৰ সমৰ্থনত প্ৰভাৱ পেলায়।

শিশু সম্পৰ্কীয় ৰাষ্ট্ৰীয় নীতিসমূহ এনেধৰণৰ -

(ক) ৰাষ্ট্ৰীয় শিশুনীতি (১৯৭৪)

(খ) ৰাষ্ট্ৰীয় শিশু শ্ৰমিক নীতি (১৯৮৭)

(গ) ৰাষ্ট্ৰীয় শিক্ষা নীতি (১৯৮৭, ২০২০)

(ঘ) প্ৰতিবন্ধী ব্যক্তিসকলৰ বাবে ৰাষ্ট্ৰীয় নীতি (২০০৬)

ভাৰতত শিশুৰ অধিকাৰ সুৰক্ষিত কৰাৰ বাবে ভাৰত চৰকাৰে গ্ৰহণ কৰা বিভিন্ন আইন ঃ

ভাৰতৰ সংবিধান অনুসৰি, সকলোধৰণৰ শোষণৰ বিৰুদ্ধে শিশুৰ সুৰক্ষাৰ বাবে আইন আৰু নীতি প্ৰস্তুত কৰাৰ দায়িত্ব ৰাষ্ট্ৰ আৰু চৰকাৰক অৰ্পন কৰা হৈছে। প্ৰাক্-স্বাধীনতাৰ সময়ৰ সমান্তৰালভাৱে স্বাধীনোত্তৰ কালতো ভাৰত চৰকাৰে ভাৰতত শিশুসকলৰ অধিকাৰ সুৰক্ষিত কৰিবৰ বাবে বহুতো আইন প্ৰণয়ন কৰিছে। এই গুৰুত্বপূৰ্ণ আইনসমূহৰ তালিকা তলত উল্লেখ কৰা হ'ল -

১) শিশু শ্ৰমিকৰ প্ৰতিশ্ৰুতি আইন, ১৯৩৩ ঃ

শিশু শ্ৰমিক বন্ধককৰণ আইন, ১৯৩৩ ঃ

এই আইনৰ যোগেদি শিশু শ্ৰমিকক বন্ধককৰণ কৰা কাৰ্যক নিষিদ্ধ কৰা হৈছিল।

২) অনৈতিক সৰবৰাহ (প্ৰতিৰোধ) আইন, ১৯৮৭ ঃ

এই আইনৰ যোগেদি সৰু ল'ৰা-ছোৱালীৰ বেআইনী সৰবৰাহ বন্ধ কৰিব বিচৰা হৈছিল।

৩) শিশু শ্ৰমিক (নিষিদ্ধকৰণ আৰু নিয়ন্ত্ৰণ) আইন, ১৯৮৬ ঃ

এই আইনে শিশুসকলক কিছুমান নিৰ্দিষ্ট কামত নিয়োজিত হোৱাত বাধা প্ৰদান কৰে আৰু আন কিছুমান কামত শিশুক নিযুক্তি দিয়াৰ ক্ষেত্ৰত চৰ্তাৱলী আৰোপ কৰে।

৪) বাল্যবিবাহ নিষিদ্ধকৰণ আইন, ২০০৬ ঃ

এই আইনে অনুসৰণ কৰা মৌলিক আধাৰ হ'ল (ক) শিশুক বিবাহপাশত আৱদ্ধ কৰোৱাটো এক অপৰাধ, (খ) শিশু বা নাবালক হৈছে, ছোৱালীৰ ক্ষেত্ৰত ১৮ বছৰৰ তলৰ ছোৱালী আৰু ল'ৰাৰ ক্ষেত্ৰত ২১ বছৰৰ অনুৰ্দ্ধৰ ল'ৰা।

৫) শিশুৰ বিনামূলীয়া আৰু বাধ্যতামূলক শিক্ষাৰ আইন, ২০০৯ ঃ

শিক্ষাৰ অধিকাৰ ৰাষ্ট্ৰ পৰিচালনাৰ নিৰ্দেশনাত্মক নীতিৰ এক ব্যৱস্থা আছিল, যাৰ জৰিয়তে ৰাষ্ট্ৰই দহ বছৰৰ ভিতৰত বিনামূলীয়া আৰু বাধ্যতামূলক শিক্ষা প্ৰদান কৰিবলৈ লক্ষ্য নিৰ্দ্ধাৰণ কৰিছিল। এতিয়া আমাৰ ওচৰত অনুচ্ছেদ ২১ (A) ৰ জৰিয়তে মৌলিক অধিকাৰৰ ভিতৰত ন্যায়িক অধিকাৰৰ ৰূপত শিক্ষাৰ অধিকাৰ উপলব্ধ হৈছে। শিক্ষাৰ অধিকাৰ আইন, ২০০৯, যাক Right to education ACT (RTE) বুলিও জনা যায় যাৰ জৰিয়তে ৬ ৰ পৰা ১৪ বছৰৰ মাজৰ শিশুসকলৰ বাবে বিনামূলীয়া আৰু বাধ্যতামূলক শিক্ষাৰ গুৰুত্ব প্ৰদান কৰিছে।

৬) যৌন উৎপীড়ন নিষিদ্ধকৰণ আইন, ২০১২ ঃ

২০১২ চনত ভাৰত চৰকাৰে শিশুসকলৰ বিৰুদ্ধে সংঘটিত হৈ থকা যিকোনো প্ৰকাৰৰ যৌন নিৰ্যাতনমূলক

কাৰ্যকলাপ প্ৰতিৰোধ কৰিবলৈ 'The Protection of Children from Sexual Offences' (POSCO Act) আইনখন গৃহীত কৰে। এই আইন অনুসৰি ১৮ বছৰৰ অনুৰ্দ্ধ সকলো লোককে শিশুৰ সুৰক্ষা আৰু ন্যায়িক প্ৰক্ৰিয়াত শিশুসকলক যৎপৰোনাস্তি সুৰক্ষা প্ৰদান কৰিব পৰা ব্যৱস্থা কৰিছে। ইয়াৰ পৰৱৰ্তী সময়ত 'Juvenile Justice Act. 2015' গৃহীত কৰি ইয়াক ২০১৬ চনৰ ১৫ জানুৱাৰীৰ পৰা কাৰ্যকৰী কৰিছে। আইনখনৰ মূখ্য উদ্দেশ্য হৈছে শিশুসকলৰ সুৰক্ষা, বিকাশ আৰু যিকোনো পৰিস্থিতিত শিশুসকলক নিৰাপত্তা প্ৰদান কৰা। এই আইনখনে শিশুসকলক দুটা ভাগত ভাগ কৰিছে - 'Child in Conflict with Law' আৰু 'Child in Need of Care and Protection'।[৮]

শিশু সুৰক্ষা আৰু বিকাশৰ বাবে ভাৰত চৰকাৰে গ্ৰহণ কৰা ব্যৱস্থাৱলী ঃ

ভাৰত চৰকাৰে শিশুসকলৰ সৰ্বাংগীণ বিকাশ আৰু উন্নতি সাধনৰ কাৰণে নিৰন্তৰে প্ৰয়াস কৰি আহিছে। সমান্তৰালভাৱে শিশুৰ শাৰীৰিক, মানসিক, সামাজিক বিকাশৰ লগতে শিক্ষাৰ ওপৰত যথেষ্ট গুৰুত্ব প্ৰদান কৰি আহিছে। ইয়াৰ মাজত কেইখনমান আঁচনি অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ ক্ৰমে -

(১) ৰাষ্ট্ৰীয় স্বাস্থ্য আঁচনি
(National Health Policy, 2002)

(২) শিশুৰ ৰাষ্ট্ৰীয় আঁচনি
(National Policy for Children, 2013)

(৩) প্ৰধানমন্ত্ৰী মাতৃ বন্দনা যোজনা
(Pradhanmantri Matru Vandana Yojana, 2017)

(৪) সংহত শিশু কল্যাণ আঁচনি
(Integrated Child Development Scheme, ICDS, 1975)

(৫) ৰাষ্ট্ৰীয় স্বাস্থ্য আৰু পোষণ যোজনা
(Scheme for health and Nutrition of Children, 1975)

(৬) বেটী বচাও, বেটী পঢ়াও
(Beti Bachao, Beti Padhao, 2015) [৯]

ভাৰতবৰ্ষত ক্ৰমবৰ্দ্ধমান হাৰত বৃদ্ধি হোৱা শিশু বিৰোধী অপৰাধ ঃ

স্বাধীনতাৰ সময়ৰে পৰা ভাৰত চৰকাৰে বিভিন্ন আইন তথা আঁচনি ৰূপায়ণৰ জৰিয়তে শিশু সুৰক্ষাৰ ব্যৱস্থা কৰি আহিছে যদিও কিন্তু কাৰ্য্যত সমাজৰ বিভিন্ন স্তৰত বিভিন্ন কাৰকৰ বাবে শিশুসকলৰ বিৰুদ্ধে বিভিন্ন ধৰণৰ অপৰাধমূলক কাৰ্যকলাপ দিনক দিনে বৃদ্ধি পাই আহিছে। National Crime Record Bureau (NCRB) ৰ তথ্য অনুসৰি বিগত বছৰ সমূহত শিশুৰ বিৰুদ্ধে সংঘটিত হোৱা অপৰাধ মূলক কাৰ্য কলাপ যথেষ্ট বৃদ্ধি পাইছে। যি বিষয় সমাজ তথা ৰাষ্ট্ৰখনৰ কাৰণে এক অশোভনীয় কাৰ্য আৰু ইয়াক প্ৰতিহত কৰিবলৈ সমাজৰ সকলো শ্ৰেণীৰ লোকৰ অংশীদাৰিত্ব নিতান্তই প্ৰয়োজনীয়। National Crime Record Bureau ৰ তথ্য অনুসৰি ২০১৪ চনৰ পৰা ২০২২ চনলৈকে সংগৃহীত তথ্য যথেষ্ট উদ্বেগজনক। নিম্ন উল্লিখিত তালিকাখনত সন্নিৱিষ্ট হোৱা সংখ্যাই আমাৰ সকলোৰে চকু কলাপত তুলিব -

তালিকা ঃ ১

বছৰ অনুসৰি ভাৰতত শিশুসকলৰ বিৰুদ্ধে সংগঠিত অপৰাধ (২০১৪ - ২০২২)

বছৰ	ভাৰতত শিশুসকলৰ বিৰুদ্ধে সংগঠিত অপৰাধ
২০১৪	৯,৪২৩
২০১৫	৯৪,১৭২
২০১৬	১,০৬,৫৯৮
২০১৭	১,২৯,০৩২
২০১৮	১,৪১,৭৬৪
২০১৯	১,৪৮,০৯০
২০২০	১,২৮,৫৩১
২০২১	১,৪৯,৪০৪
২০২২	১,৬২,৪৪৯

উৎস ঃ শিশুৰ বিৰুদ্ধে অপৰাধ, এন চি আৰ বি, ভাৰত চৰকাৰ, ২০১৪-২০২২ চনলৈ

১ নং তালিকাত ভাৰতবৰ্ষৰ বিভিন্ন প্ৰান্তৰ ২০১৪ ৰ পৰা ২০২২ লৈ শিশুসকলৰ বিৰুদ্ধে সংঘটিত হোৱা অপৰাধমূলক কাৰ্যকলাপ যথেষ্ট পৰিমাণে বৃদ্ধি পোৱা পৰিলক্ষিত হৈছে। উল্লেখযোগ্য যে ২০২০ চনত ক'ভিড

মহামাৰীৰ সময়ছোৱাত শিশুৰ বিৰুদ্ধে হোৱা অপৰাধৰ সংখ্যা কিছু পৰিমাণে কম যদিও ই যথেষ্ট উদ্বেগজনক। বিগত ন' বছৰত অৰ্থাৎ ২০১৪ চনত সংঘটিত হোৱা অপৰাধৰ সংখ্যা আছিল ৮৯,৪২৩ যি ২০২২ চনত বৃদ্ধি হৈ ১৬২,৪৪৯ হয়গৈ। যি হাৰত এই অপৰাধ বৃদ্ধি পাইছে সেয়া প্ৰায় ৮১%। [১০] এই তথ্য যথেষ্ট উদ্বগজনক যাৰ ওপৰত চৰকাৰে বিহিত ব্যৱস্থা লোৱাটো অতি আৱশ্যক হৈ পৰিছে।

National Crime Record Bureau ৰ নিচিনাকৈ National Commission for Protection of Child Rights (NCPCR) এ ইয়াৰ বাৰ্ষিক প্ৰতিবেদন ২০২০-২১ ত এটা অতি ভয়াৱহ তথ্য প্ৰকাশ কৰিছে। তথ্য অনুসৰি বিগত বৰ্ষসমূহত ভাৰতবৰ্ষত শিশুসকলৰ বিৰুদ্ধে সংঘটিত হোৱা অপৰাধসমূহে ব্যাপক হাৰত বৃদ্ধি পাবলৈ ধৰিছে যিকোনো কাৰণতে ভাৰতৰ বাবে এটা ভাল নিদৰ্শন হ'ব নোৱাৰে।[১১]

ভাৰতৰ শিশুৰ বিৰুদ্ধে সংঘটিত হোৱা অপৰাধৰ শ্ৰেণীকৰণ ঃ

যুগে যুগে মহিলা, শিশু আৰু বয়োজেষ্ঠ লোকসকলক এক স্পৰ্শকাতৰ শ্ৰেণীৰ লোক হিচাপে মান্যতা প্ৰদান কৰি অহা হৈছে। এই ক্ষেত্ৰত শিশুসকলৰ বিৰুদ্ধে সংঘটিত যিকোনো প্ৰকাৰৰ অপৰাধ, শাৰীৰিক, মানসিক, যৌন-নিৰ্যাতন, আৱেগিক অপৰাধ আদি সমাজৰ বিভিন্ন স্তৰত সংঘটিত হয় কিন্তু এনে কাৰ্যকলাপৰ শিশুসকলে বহু সময়ত পৰিয়ালৰ সদস্যসকলক অৱগত নকৰাৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত এক বৃহৎ সংখ্যক অপৰাধৰ পৰিসংখ্যাৰ তথ্য নোহোৱাকৈয়ে থাকি যায়। শিশুসকলে তেওঁলোকৰ বিৰুদ্ধে হোৱা অপৰাধক অপৰাধ হিচাপে গণ্য কৰিব লাগে নে নালাগে সেয়া বুজা-নুবুজাৰ দোমোজাত থাকি ৰোৱাৰ বাবে শিশুসকলৰ বিৰুদ্ধে তেওঁলোকৰ জ্ঞাতে বা অজ্ঞাতে বহু অপৰাধ সংঘটিত হৈ আহিছে। শিশুৰ বিৰুদ্ধে হৈ অহা অপৰাধক যদি ভাল ধৰণেৰে বিশ্লেষণ কৰা হয় তেন্তে এনে অপৰাধক তলত উল্লিখিত শ্ৰেণীবিভাজন অনুসৰি দেখুৱাব পৰা যাব।

১) বিভিন্ন প্ৰকাৰৰ শাৰীৰিক আৰু মানসিক আতিসাৰ্য্য ঃ

২) শিশু শ্ৰমিক ঃ

৩) শিশু জোৰকৈ ভিক্ষাকাৰ্যত লিপ্ত কৰোৱা ঃ

৪) শিশুক নিচাযুক্ত দ্ৰব্যৰ প্ৰতি আসক্তিৰ সৃষ্টি কৰোৱা ঃ

৫) অপহৰণমূলক কাৰ্যকলাপ ঃ

৬) শিশু ক্ৰয় আৰু বিক্ৰীৰ প্ৰক্ৰিয়া ঃ

৭) শিশুক দেহ ব্যৱসায়ৰ লগত জড়িত কৰোৱা ঃ

৮) চাইল্ড পৰ্ণগ্ৰাফী (Child Pornography) ঃ

৯) শিশুৰ উৎপীড়ন আৰু ধৰ্ষণ ঃ [১২]

সামৰণি ঃ

ভাৰতবৰ্ষই স্বাধীনতাৰ সময়ৰে পৰা শিশু সুৰক্ষাৰ বাবে বিভিন্ন প্ৰকাৰৰ আঁচনি আৰু আইন প্ৰণয়ন আৰু ৰূপায়ণ কৰি আহিছে যদিও ক্ৰমবৰ্দ্ধমান হাৰত বৃদ্ধি পাই অহা অপৰাধৰ বাবে ভাৰতবৰ্ষৰ নিচিনা দেশত আজিও শিশু সুৰক্ষিত নহয়। যি ভাৰতবৰ্ষৰ কাৰণে এটা ভাল নিদৰ্শন হ'ব নোৱাৰে। ভাৰতবৰ্ষই নিজেই প্ৰণয়ন কৰা আইন আৰু ৰাষ্ট্ৰসংঘৰ সদস্য ৰাষ্ট্ৰ হিচাপে ইয়াৰ নিৰ্দেশাৱলী অনুসৰি শিশু সুৰক্ষাৰ আইনী ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰিছে যদিও ই সম্পূৰ্ণৰূপে সফল হ'ব পৰা নাই। তৃতীয় বিশ্বৰ তথা পৃথিৱীৰ আটাইতকৈ জনবহুল ৰাষ্ট্ৰ হিচাপে শিশুকেন্দ্ৰিক অপৰাধে কেৱল মাত্ৰ ভাৰতবৰ্ষৰ কাৰণেই নহয় সমগ্ৰ বিশ্বৰ কাৰণে এক ডাঙৰ প্ৰত্যাহ্বান হিচাপে থিয় দিছে। ইয়াৰ কাৰণসমূহৰ হিচাপে থিয় দিছে। ইয়াৰ কাৰণসমূহৰ ভিতৰত কেৱল মাত্ৰ এটা শ্ৰেণীৰ লোকক ইয়াৰ বাবে জগৰীয়া কৰিলে নহ'ব। বৰঞ্চ আইনসমূহৰ মাজত থকা সৰু সৰু সুৰুঙাৰ বাবে আৰু বিচাৰ কাৰ্য লেহেমীয়া হোৱাৰ বাবেও এনে অপৰাধৰ সংখ্যা দিনক দিনে উদ্বেগজনক ভাৱে বৃদ্ধি পাই আহিছে। দেশ ৰাজধানী দিল্লীত সংঘটিত হোৱা 'নিৰ্ভয়া কাণ্ড' আমাৰ সকলোৰে জ্ঞাত। কিন্তু বিচাৰৰ লেহেমীয়া গতি আৰু অপৰাধীক উপযুক্ত শাস্তি প্ৰদান কৰাৰ ক্ষেত্ৰত ভাৰত চৰকাৰে গ্ৰহণ কৰা স্থিতিয়ে বহু সময়ত এনে অপৰাধ মূলক কাৰ্যকলাপক উদ্‌গনিহে যোগাইছে। সদৌ শেষত আমি সকলোৱে সজাগ আৰু সমাজৰ সকলো শ্ৰেণীৰ লোকক একলগ কৰি এনে অপৰাধমূলক কাৰ্যকলাপ ৰোধ কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰাটো উচিত। সমাজত সংঘটিত হোৱা যিকোনো প্ৰকাৰৰ অপৰাধৰ বিৰুদ্ধে সকলোৱে মাৰবান্ধি থিয় হৈ প্ৰতিবাদ সাবস্ত্য কৰাতে ক্ষান্ত নাথাকি চৰকাৰক ইয়াৰ বিৰুদ্ধে ব্যৱস্থা ল'বলৈ বাধ্য কৰাব লাগে। যদি সকলোৱে দেশৰ ভৱিষ্যত সুৰক্ষিত কৰিব লাগে বুলি বিবেচনা কৰে তেন্তে আহক আমি সকলোৱে হাতত হাত ধৰি দেশৰ ভৱিষ্যত তথা শিশুসকলৰ বিকাশ আৰু কল্যাণৰ কাৰণে থিয় দিওঁ। ❑

প্ৰসংগসমূহ ঃ

১। ভাৰতৰ লোকপিয়ল ২০১১
২। ভাৰতত শিশু আৰু শিশু অধিকাৰৰ পৰিস্থিতি, ২০১৫, পৃ.১৭
৩। পূৰ্বোল্লিখিত।
৪। ভাৰতত শিশু আৰু তেওঁলোকৰ অধিকাৰ, এন. চি. এইচ. আৰ., পৃ. ১৯
৫। গগৈ, পি. ভাৰত চৰকাৰ আৰু ৰাজনীতি, বনলতা, ২০১২, পৃ. ১৬৮
৬। পূৰ্বোল্লিখিত।
৭। ৭৩তম সংবিধান সংশোধনী আইন, ১৯৯২।
৮। ত্ৰিপথ, এছ.চি. আৰু অৰোৰা, ভি, মহিলা আৰু শিশু সম্পৰ্কীয় আইন, কেন্দ্ৰীয় আইন প্ৰকাশন, ২০০৮
৯। শতপতি চিন্ময়ী, ভাৰতত শিশু কল্যাণ নীতি আৰু কাৰ্যসূচী, যোজনা, নৱেম্বৰ ২০১২, পৃ. ২৩-২৭
১০। ৰাষ্ট্ৰীয় অপৰাধ ৰেকৰ্ড ব্যুৰো, ভাৰত চৰকাৰ, বাৰ্ষিক প্ৰতিবেদন ২০১৪-২০২২
১১। বাৰ্ষিক প্ৰতিবেদন, ৰাষ্ট্ৰীয় শিশু অধিকাৰ সুৰক্ষা আয়োগ, ২০২০-২১
১২। https://blog.ipleaders.in/offences-against-children/

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

বড়ো সকলৰ বসন্তকালীন উৎসৱ ‘ৰংজালি বৈসাগু’ ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

ড° বনশ্ৰী ভৰদ্বাজ

সহকাৰী অধ্যাপক, দৰ্শন শাস্ত্ৰ
কোকৰাঝাৰ চৰকাৰী মহাবিদ্যালয়
কোকৰাঝাৰ, অসম-৭৮৩৩৭০
৯৮৫৪৭২৯৬৬০
banashreekok@gmail.com

ড° কবিতা ডেকা

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
কোকৰাঝাৰ ছোৱালী মহাবিদ্যালয়
কোকৰাঝাৰ, অসম-৭৮৩৩৭০
৭০০২৩৪৯৩৪৭
kabitadeka@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

উৎসৱ-অনুষ্ঠান সামাজিক লোক আচৰণৰ সংযুক্ত ৰূপ। উৎসৱ অনুষ্ঠানসমূহ সংস্কৃতিৰ এক অবিচ্ছেদ্য অংগ। প্ৰতিখন সমাজতে বিভিন্ন সময়ত অনুষ্ঠিত হৈ অহা উৎসৱ অনুষ্ঠানৰ আনুষংগিক হিচাপে নৃত্য, গীত আদি অনুষ্ঠিত কৰি অহা হয়। অসমভূমি বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ মিলনভূমি। অতীজৰে পৰা অসমত প্ৰতিটো ঋতুত প্ৰতিটো মাহত, আনকি নিৰ্দিষ্ট দিন-বাৰত বিভিন্ন জনগোষ্ঠীয়ে উৎসৱ-অনুষ্ঠান পালন কৰি আহিছে। অসমত বসবাস কৰা বিভিন্ন জনগোষ্ঠীসকলৰ ভিতৰত জনসংখ্যাৰ ফালৰ পৰা এটি বৃহৎ জনগোষ্ঠী হৈছে বড়ো জনগোষ্ঠী। বড়োসকল অসমৰ ভূমিপুত্ৰ। বড়ো জনগোষ্ঠীয় লোকসকলে বছৰৰ বিভিন্ন সময়ত বিভিন্ন উৎসৱ-অনুষ্ঠান আৰু লোকাচাৰ সমূহ পালন কৰি আহিছে। তেওঁলোকে পালন কৰি অহা উৎসৱসমূহৰ ভিতৰত এটি উল্লেখযোগ্য উৎসৱ হৈছে বৈসাগু উৎসৱ। বৈসাগু উৎসৱ মূলতঃ এটি ঋতুকালীন বা বসন্তকালীন উৎসৱ। বৈসাগু হৈছে বড়োসকলৰ জাতীয় উৎসৱ। অতীতৰ পৰা বড়োসকল প্ৰধানতঃ কৃষি কৰ্মৰ সৈতে সংপৃক্ত এটি জনগোষ্ঠী। বড়োসকলৰ বৈসাগু উৎসৱ অসমৰ বিহু উৎসৱৰ সমধৰ্মী। বৈসাগু উৎসৱৰ লগত জড়িত বৈসাগু নৃত্যও বিহু নৃত্যৰ সমপৰ্যায়ৰ। বিহুগীতৰ দৰে বৈসাগু নৃত্যতো বৈসাগু গীত গোৱা হয়। বৈসাগু নৃত্যত চিফুং, জোথা, থৰখা, ৰামতাল, খাম ইত্যাদি বজাই বড়ো ডেকা গাভৰুসকলে একেলগে অথবা সুকীয়াকৈ নৃত্য প্ৰদৰ্শন কৰে। এই উৎসৱত নাচ-গান, আনন্দ ফূৰ্তি কৰা হয়, কাৰণ এই বিহুৰ পিছৰে পৰাই আৰম্ভ হয় পৰৱৰ্তী বছৰৰ বাবে খেতি চপাই লোৱাৰ সংগ্ৰাম। বৈসাগু উৎসৱ বড়োসকলৰ কেৱল আনন্দৰ হেতু নহয়, ই মানুহৰ মাজত সমতা ৰক্ষাৰ উপৰি বড়োসমাজৰ আচাৰ ব্যৱহাৰ আৰু বিভিন্ন জ্ঞানৰ পৰিচয় বহনকাৰী এক ঐতিহ্যপূৰ্ণ অনুষ্ঠান। আমাৰ এই গৱেষণাপত্ৰখনত বড়ো জনগোষ্ঠীৰ পৰম্পৰাগত উৎসৱ ‘ৰংজালি বৈসাগু’ (ৰঙালি বিহু)ৰ পৰম্পৰা আৰু ঐতিহ্য সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হ’ব।

সূচক শব্দ ঃ

বড়ো জনগোষ্ঠী, উৎসৱ অনুষ্ঠান, বৈসাগু, ৰংজালি, সংস্কৃতি।

০.১ গৱেষণাৰ উদ্দেশ্য আৰু গুৰুত্ব ঃ

আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখনৰ জৰিয়তে বড়োসকলৰ জাতীয় উৎসৱ বৈসাগুৰ

ইতিহাসৰ লগতে তেওঁলোকৰ পৰম্পৰাগত সংস্কৃতি আৰু উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰ লগত সংপৃক্ত বিভিন্ন পৰম্পৰাগত মৌলিক নীতি নিয়মসমূহ লিপিবদ্ধ কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। ইয়াৰ জৰিয়তে মৌখিক পৰম্পৰাত প্ৰচলিত লোকাচাৰসমূহ সংৰক্ষণ লাভ কৰিব বুলি আমি আশাবাদী হোৱাৰ লগতে আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখন পৰবৰ্তী সময়ত উক্ত বিষয় সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰিবলৈ ইচ্ছুক গৱেষক সকলৰ নিশ্চয়কৈ সহায়ক হ'ব। এই লক্ষ্য আৰু উদ্দেশ্য শিৰোগত কৰিয়ে আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

০.২ গৱেষণাৰ পদ্ধতি আৰু পৰিসৰ ঃ

আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে সাধাৰণতে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। অৱশ্যে প্ৰয়োজন সাপেক্ষে গৱেষণা পত্ৰখনত বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰো প্ৰয়োগ কৰা হৈছে। গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰিবলৈ সংশ্লিষ্ট বিষয়ৰ গ্ৰন্থ, গৱেষণা গ্ৰন্থ, গৱেষণা পত্ৰ, বিভিন্ন আলোচনীৰ প্ৰবন্ধ পাতি তথা বিষয়সম্পৰ্কে জ্ঞাত বিজ্ঞ ব্যক্তি সকলৰ পৰা তথ্য সংগ্ৰহ কৰা হৈছে। লগতে গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰিবলৈ ইন্টাৰনেটৰো সহায় লোৱা হৈছে।

০.৩ পূৰ্বকৃত অধ্যয়ন ঃ

অবিনশ্বৰ আত্মাকো প্ৰকাশৰ বাবে দেহৰ প্ৰয়োজন হয়। ঠিক সেইদৰে ভাষা এটাই প্ৰতিষ্ঠা লাভ কৰে সাহিত্য চৰ্চাৰ জৰিয়তেহে। বড়ো ভাষাই বিভিন্ন সাহিত্য, আলোচনা, গ্ৰন্থপঞ্জী, কাব্যপুথি, ৰচনা আদিৰ জৰিয়তে প্ৰচাৰ আৰু প্ৰসাৰ লাভ কৰি আজিৰ পূৰ্ণ ভাষাৰ মৰ্য্যদা পাইছে। বড়ো ভাষাক লিখিত ৰূপ দি কিতাপ আকাৰে ৰাইজৰ মাজলৈ উলিয়াই দিয়াত অগ্ৰণী ভূমিকা লৈছিল অৱশ্যেই মিছনেৰী সকলে। Rev. S. Endle চাহাবে 'The Kacharis' নামে প্ৰকাশ কৰি উলিওৱা মূল্যবান কিতাপখনে শিক্ষিত বড়োসমাজৰ চকু মেল খুৱাইছিল। ঠিক সেইদৰে J. D. Anderson ৰ 'Kachari Folk Tales and Rhymes' নামৰ গ্ৰন্থখনেও যথেষ্ট প্ৰভাৱ পেলাবলৈ সক্ষম হৈছিল। ১৯২৬ চনত পদ্মশ্ৰী স্বৰ্গীয় মদাৰাম ব্ৰহ্ম ৰচিত 'বড়োনি গুদিদিবসা' আৰু 'আৰজ' নামৰ পুথি দুখনো লেখতলবলগীয়া।

সময় আগবঢ়াৰ লগে লগে বড়ো ভাষাই বিদ্যালয়, মহাবিদ্যালয়, বিশ্ববিদ্যালয় পৰ্য্যায়ত স্বীকৃতি লাভ কৰে। ফলত বড়ো শিক্ষিত লোকসকলৰ দায়িত্ব আৰু তাড়না বৃদ্ধি পায়। সেই তাড়নাতেই বিভিন্ন জনে বিভিন্ন দিশত সাহিত্য সৃষ্টি কৰিবলৈ ধৰিলে আৰু জাতীয় জীৱনত বড়ো সাহিত্যৰ অভূত পূৰ্ব বিকাশৰ ধাৰা তৰান্বিত হ'বলৈ ধৰিলে। ভবেন নাৰ্জীৰ 'বড়ো সমাজ আৰু সংস্কৃতি' (১৯৬৪), 'বড়ো কছাৰীৰ গীত-মাত' (১৯৮৩) , 'বড়ো ৰাও' (১৯৯০) আদি উল্লেখযোগ্য। ইয়াৰ বাহিৰেও প্ৰমোদ চন্দ্ৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ 'A Descriptive Analysis on Bodo language' (1977), মোহিনী মোহন ব্ৰহ্মৰ 'খুগা মেথায় আৰু খুগা চলো' (১৯৬৮), 'আবৈ আবৌনি চলো' (১৯৬৮), 'বড়ো কছাৰীৰ সাধু' (১৯৭২), ৰোহিনী কুমাৰ ব্ৰহ্মৰ 'সেৰজা চিফুং' (১৯৬৪), মনোৰঞ্জন লাহিড়িৰ A Study of Bodo Folk Song (1985) ইত্যাদি গ্ৰন্থই বড়ো লোক সাহিত্যৰ ভঁৰাল টনকিয়াল কৰিছে। পৰবৰ্ত্তী পৰ্য্যায়ত প্ৰকাশ পোৱা বিভিন্ন গ্ৰন্থ যেনেঃ মেদিনী চৌধুৰীৰ 'The Bodo- Dimasa of Assam' (1988), মধুৰাম বৰোৰ 'Historical Development of the Boro language' (1990), শ্ৰীমতী বিজয়া লক্ষ্মী চৌধুৰীৰ 'Bodos (Kacharis) at a glance' (1993) , থমাছ পুল্ল'পিলিন আৰু জেকৰ আলুকলালৰ 'The Bodos: The Children of Bullum butter', ড° লীলাধৰ ব্ৰহ্মৰ 'Religion and Dances of Bodos (2003) , ড° অনিল বৰোৰ 'The Flute and the Harp (àßassy on Bodo Literature and culture) (2004), প্ৰেমলতা দেৱীৰ 'Social and Religious Institutions of Bodos' (2007), ড° কামেশ্বৰ ব্ৰহ্মৰ 'Aspects of social customs of Bodos' 2008 (reprint) আৰু 'A Study in cultural Heritage of the Boros' 2011 (reprint), ভাষাবিদ সুনীতি কুমাৰ চেটাৰ্জীৰ 'Kirata Jana Kriti' 2011 (reprint), ড° শেখৰ ব্ৰহ্মৰ 'Religion of the Boros and their Socio-cultural Transition' 2011 (reprint), ড° মালবিকা বাগলাৰীৰ 'বড়ো সমাজ আৰু সংস্কৃতি' (২০১৬), এই অভাজন আৰু উমেশ দাস সম্পাদিত The Bodos: The Frontier Aboriginal of Assam' (2014) ইত্যাদি গ্ৰন্থৰাজিৰ পৰা আলোচিত বিষয়বস্তুৰ সম্যক ধাৰণা পাবৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। ইয়াৰ বাহিৰেও বিভিন্ন গৱেষক, লেখক, পণ্ডিতে তেওঁলোকৰ তথ্যসমৃদ্ধ লেখা তথা আলোচনা বিভিন্ন ৰাষ্ট্ৰীয়, আন্তৰাষ্ট্ৰীয় জাৰ্নেলত প্ৰকাশ কৰি থৈ গৈছে। আলোচ্য বিষয়ৰ কাৰণে উক্ত জাৰ্নেল সমূহো সহায়ক বুলি বিবেচিত হৈছে।

১.০ অৱতৰণিকা ঃ

অসম এখন বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ মিলনভূমি, পৱিত্ৰ ঠাই। ইয়াত অতীতৰে পৰা বাস কৰি অহা বিভিন্ন জাতি-

জনগোষ্ঠীয়ে স্বকীয় বৈশিষ্ট্যৰে নিজস্ব উৎসৱ-পাৰ্বণ পালন কৰি আহিছে। বিহুটোও তেনেকৈ প্ৰতিটো জাতি-জনগোষ্ঠীয়ে ভিন্ন নামাকৰণেৰে ভিন্ন ৰূপত পালন কৰি আহিছে। বিহু এই সুকীয়া ৰূপৰে এক সন্মিলিত ৰূপ, সন্মিলিত উৎসৱ। সেয়ে বিহু অসমৰ বিভিন্ন জনগোষ্ঠীৰ এক উমৈহতীয়া উৎসৱ, সমন্বয়ৰ প্ৰতীক। বিভিন্ন পৰিবৰ্তন আৰু পৰিবৰ্দ্ধনৰ মাজেৰে আহি অসমীয়াৰ বিহুৱে আজিৰ অৱস্থা পাইছেহি। অসমীয়াৰ বাপতি সাহোন বিহুটিত ব্যৱহৃত হোৱা লোকবাদ্য সমূহো ভিন, ভিন জনগোষ্ঠীসমূহৰেই অৱদান। কাৰোবাৰ যদি গগণা, কাৰোবাৰ গাম-খাৰু, মহঁৰ শিঙৰ পেঁপাটি যদি কোনোবাটো জনগোষ্ঠীৰ, ঢোল-পেঁপা, ৰিহা-মেখেলা আকৌ আন কাৰোবাৰ। মুঠতে, এই জনগোষ্ঠীসমূহৰ মাজত প্ৰচলিত বিহুক বাদ দি অসম বা অসমীয়াৰ বিহুৰ কথা আলোচনা কৰা সম্ভৱ নহয়।

অসমৰ বিভিন্ন জনগোষ্ঠীৰ ভিতৰত বড়োসকল এক অন্যতম আৰু প্ৰাচীনতম জনগোষ্ঠী। তেওঁলোক অসমৰ ভূমিপুত্ৰ। অৱশ্যে এই আলোচনাত 'বড়ো' বুলি ক'লে বড়ো, ডিমাছা, তিৱা (লালুং), দেউৰী, চুতীয়া, মৰাণ (মটক) ৰাভা, গাৰো, ঠেঙাল-কছাৰী শৰণীয়া-কছাৰী, কোচ-ৰাজবংশী, ক'ক বৰোক (ত্ৰিপুৰী) আদি সকলো বড়োমূলীয় মংগোলীয় লোকসকলক সামৰি লোৱা হৈছে। ইয়াৰে মূল বড়োসকলে ৰঙালী বিহুটিক 'বৈসাগু' নামেৰে পালন কৰি আহিছে যদিও তেওঁলোকৰ মাজত এই উৎসৱ প্ৰচলনৰ সময়সীমা খুব বেছি পুৰণি নহয় বুলি বিজ্ঞসকলে জানিব দিছে। যেতিয়াৰ পৰা বছৰ, মাহ তথা ব'হাগ, জেঠ, আহাৰ আদি গণনাৰ প্ৰক্ৰিয়া আৰম্ভ হ'ল তেতিয়াৰ পৰাহে এই নামটিও উৎসৱৰ লগত সাঙোৰ খাই পৰে। তেতিয়া স্বাভাৱিকতে মনত প্ৰশ্ন জাগে তেন্তে ইয়াৰ পূৰ্বে এই উৎসৱটিক কি নামেৰে অভিহিত কৰা হৈছিল বা পালন কৰা হৈছিল? নে নতুন বছৰ, নতুন মাহ আদি গণনাৰ আগত বড়োসকলৰ মাজত এই উৎসৱটিৰ অস্তিত্বই নাছিল?

এইখিনিতে এটা কথা স্পষ্ট কৰি দিয়া ভাল যে কোনো এটা জাতিৰ জাতীয় সংস্কৃতি বা উৎসৱ কোনো দিন-বাৰ বা চন-তাৰিখ লৈ জন্ম নহয়। এটা জাতিৰ কোনো উৎসৱ বা সংস্কৃতি হ'ল বহু হাজাৰ বছৰৰ পুঞ্জীভূত অভিজ্ঞতাৰ ফল। গঢ় দিম বুলিলেই উৎসৱ এটা হঠাতে গঢ় দিব নোৱাৰি। ই বহু জাতিৰ, বহুযুগৰ অৱদান। সেয়ে হয়তো বিখ্যাত নৃতত্ত্ববিদ E.B. Tylor এ কৈছিল "Culture is that complex whole which includes knowledge, belief, art, morals, law, custom and any other capabilities acquired by man as a member of society. Culture is the total Social heritage, it is not the individual heritage of man" গতিকে, সংস্কৃতি কোনো ব্যক্তিৰ ব্যক্তিগত সম্পত্তি নহয়; বৰং জনসমাজৰ সন্মিলিত অভিজ্ঞতাৰ ফল। কোনো এটা জনসমষ্টিয়ে জীয়াই থকাৰ বাবে কৰি অহা অবিৰত সংগ্ৰামৰ মাজেদি লাভ কৰা জ্ঞান তথা অভিজ্ঞতা আৰু তাক কেন্দ্ৰ কৰি গঢ় লৈ উঠা অগাধ বিশ্বাস আৰু প্ৰাকৃতিক সৌন্দৰ্য্য ৰাশিৰ অপৰূপ সৌন্দৰ্য্যত মুগ্ধ হৈ প্ৰকাশ কৰা শিল্পীমনৰ সুংসহত কাল্পনিক শক্তিৰ স্বতঃস্ফূৰ্ত বহিঃ প্ৰকাশেই হৈছে সংস্কৃতি।

১.১ বিষয়বস্তুৰ বিশ্লেষণ ঃ

'ৰংজালি বৈসাগু'ও বড়োসকলৰ এনে এটা উৎসৱ যাৰ সৃষ্টি হৈছে বহু হাজাৰ বছৰীয়া জ্ঞান-অভিজ্ঞতাৰ ভিত্তিত। অসমীয়া সকলৰ বিহু যিদৰে কৃষিৰ লগত জড়িত ঠিক একেদৰে বড়ো জনগোষ্ঠীৰ 'ৰংজালি বৈসাগু'ও কৃষি কাৰ্য্যৰ লগত সংপৃক্ত হৈ আছে। বিহুৰ লগত বিজ্ঞানৰো সম্পৰ্ক মন কৰিব লগীয়া। সেই একেই বিজ্ঞান 'ৰংজালি বৈসাগু'তো বিদ্যমান। কৃষি তথা শস্য উৎপাদন কৰিবলৈ হ'লে প্ৰকৃতিৰ বিৰুদ্ধে সংগ্ৰামত লিপ্ত হ'বই লাগিব। প্ৰকৃতিৰ গতি-বিধিৰ ওপৰতে নিৰ্ভৰ কৰে খেতি-বাতিৰ কথা। সেয়ে প্ৰকৃতিৰ উৎপাদন শক্তি বৃদ্ধিৰ আকাংক্ষা মানুহৰ স্বাভাৱিক আকাংক্ষা। এই আকাংক্ষাই আছিল মূলতঃ বিহু উৎপত্তিৰ অন্তৰালত ক্ৰিয়া কৰি থকা চালিকা শক্তি। 'ৰংজালি বৈসাগু'ও এই শক্তিৰেই উদ্বুদ্ধ।

কেৱল অসমতেই যে 'ৰঙালী বিহু' বা 'ৰংজালি বৈসাগু'ৰ প্ৰচলন আছে তেনে নহয়। খেতি পথাৰত নমাৰ আগত আৰু খেতি চপোৱাৰ পিছত ভগবানক সাক্ষী কৰি কিছু ধৰ্মীয় তথা সামাজিক নীতি-নিয়মৰ মাজেৰে শস্য উৎপাদন বৃদ্ধিৰ লগতে সকলোৰে মংগল কামনা কৰাটো ভাৰতৰ অন্যান্য ঠাইৰ লগতে অন্য দেশসমূহতো বিৰাজমান। পশ্চিম বংগত 'সংক্ৰান্তি' উৎসৱ, পাঞ্জাৱত 'বৈশাখ', দক্ষিণ ভাৰতত 'অখতীজ', মহাৰাষ্ট্ৰত 'ৰায়চায়নাম' আদি উৎসৱ পালন কৰা হয় যদিও ইয়াক পালন কৰাৰ পদ্ধতি অসমৰ দৰে নহয়। পশ্চিমীয়া দেশবোৰতো এক প্ৰকাৰ Spring Festival পালন কৰা হয় যাৰ উদ্দেশ্যৰ লগত আমাৰ বিহুৰ উদ্দেশ্যৰ যথেষ্ট সাদৃশ্য পৰিলক্ষিত হয়। তথাপি যেন আমাৰ অসমৰ বিহু কিবা এটা বেলেগ; ই আমাৰ আবেগ তথা জাতিটোৰ সাহ। প্ৰতিজন অসমীয়াৰ দেহৰ ৰন্ধ্ৰে ৰন্ধ্ৰে, সিৰাই-উপসিৰাই প্ৰবাহিত হৈ আছে বিহুৰ আবেগ।

বড়োসকলৰ মাজত বিহুটি যেনেকৈ ‘বৈসাগু’ নামেৰে জনাজাত ঠিক তেনেকৈ দেউৰী সকলৰ মাজত ‘বিচু’, ৰাভাসকলৰ মাজত ‘বায়খো’, তিৱা সকলৰ মাজত ‘বিচু’, ডিমাছাসকলৰ মাজত ‘বুচু’, ৰাজবংশীসকলৰ মাজত ‘বিষুৱা’ ইত্যাদি নামেৰে পালন কৰা হৈ আহিছে। এই সকলোবোৰ বড়োমূলীয় জনগোষ্ঠী হোৱা বাবে উৎসৱটিৰ নামৰ মাজতো একপ্ৰকাৰ সাদৃশ্য পৰিলক্ষিত হয়। আহোম সকল অহাৰ পূৰ্বে বিহু বা তেনে নামৰ জাতীয় কোনো উৎসৱ অসমত নাছিল বুলি পণ্ডিত সকলে ক’ব বিচাৰে। আহোম সকলৰ পূৰ্বে অসমত বসবাস কৰি অহা বড়োমূলীয় লোকসকলৰ মাজত অৱশ্যেই প্ৰচলন আছিল আনন্দ প্ৰকাশক গীত-মাত বা নাচ-গান। কিন্তু সেইবোৰ কেতিয়াও সংগঠিত ৰূপত নাছিল। যেনে মাছ ধৰিবলৈ যাওতে, পথাৰত কঠীয়া তুলিবলৈ যাওতে কিম্বা তাঁত শালত কাপোৰ বওতে গাভৰুসকলে সুখ-দুখ, হাঁহি-কান্দোন, আনন্দ-স্ফুৰ্ত্তি প্ৰকাশৰ বাবে গীত গাইছিল আৰু সুযোগ পালে এপাক কঁকাল ঘুৰাই নাচিও লৈছিল। কিন্তু সেইবোৰ আছিল অতি অসংগঠিত ৰূপত আৰু স্বভাৱসুলভ ভংগীমাত প্ৰকাশ পোৱা গীত-মাত বা নাচ। পৰৱৰ্ত্তী সময়ত আহোম সকলে এইবোৰ সংগঠিত ৰূপত লৈ আহে আৰু সেয়াই সময়ৰ সোঁতত গৈ অসমৰ জনগোষ্ঠী সকলৰ সমন্বয়ৰ উৎসৱ ‘ৰঙালী বিহু’ৰ ৰূপ পৰিগ্ৰহণ কৰে।

বড়োসকলে ৰঙালি বিহুটিক ‘বৈসাগু’ নাম কিয় দিলে তাক লৈ গৱেষক, ইতিহাসবিদ সকলৰ মাজত যথেষ্ট মতানৈক্য দেখা যায়। কিছুমানৰ মতে ‘বৌছাৰনি আগু— বৈসাগু’ অৰ্থাৎ বছৰৰ পহিলা দিন বা আৰম্ভণি হিচাপে এই উৎসৱটিৰ নাম ‘বৈসাগু’ ৰখা হয়। আকৌ আন কিছুমানে ‘বিহু’ শব্দটোকে বড়ো শব্দ বুলি কব বিচাৰে। এওঁলোকৰ ভিতৰত কলাগুৰু বিষ্ণু প্ৰসাদ ৰাভা অন্যতম। তেখেতৰ মতে, বছৰৰ পহিলা দিনকেইটিত বড়ো ডেকা-গাভৰু সকলে জাক পাতি বা দল বান্ধি নাচি নাচি ইঘৰৰ পৰা সিঘৰলৈ যায় আৰু নাচৰ পিচত কিবা এটি মাগি বা ভিক্ষা খুজি লৈ আহে। এতিয়াও গাঁও অঞ্চলত এই প্ৰথাৰ প্ৰচলন দেখা যায়। পুৰণি কালত গৃহস্থই ডেকা-গাভৰুসকলক আথে-বেথে চোতালত বহিবলৈ দি জা-জলপানেৰে আপ্যায়িত কৰাৰ লগতে যথা-সম্ভৱ দান-দক্ষিণা দিয়াৰ নিয়ম আছিল। তেওঁলোকেও গৃহস্থক আশীৰ্বাদ দি দান কৰা দ্ৰব্যখিনি দুহাতেৰে তুলি লৈ অতি সন্তোষেৰে প্ৰস্থান কৰি আন এঘৰলৈ বুলি ৰাওনা হৈছিল। অতি সন্তোষেৰে দুহাতেৰে তুলি লোৱা কাৰ্য্যক বড়ো ভাষাত ‘হুনানৈই লানায়’ বুলি কোৱা হয়। এইদৰে ‘বিনায়’ (খোজা বা বিচৰা) আৰু ‘হুনায়’ (তুলি লোৱা) — এই দুই শব্দৰ সংযোগত ‘বিহু’ শব্দ নিঃসৃত হোৱা বুলি ৰাভাদেৱে ক’ব খোজে। বড়োমূলীয় দেউৰী ভাষাত ‘বিচু’, তিৱাত ‘বিচু’, ৰাভাত ‘বায়খো’, ডিমাছাত ‘বুচু’ বা কোচ-ৰাজবংশীত ‘বিষুৱা’ আদিলৈ লক্ষ্য কৰিলে ‘বিহু’ শব্দটি বড়ো শব্দ হোৱাৰ সম্ভাৱনাক নিশ্চয় নুই কৰিব নোৱাৰি।

ৰাভাদেৱৰ বিশ্লেষণৰ আলমত আমিও এই কথা স্পষ্টকৈ ভাবি ল’ব পাৰো যে প্ৰকৃতি সকলো সময়তে আমাক দিবৰ কাৰণেই প্ৰস্তুত হৈ থাকে। আমি কেৱল শস্য-শ্যামলা প্ৰকৃতিৰ পৰা ল’ব জানিব লাগে। মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ মাজৰ এই সম্পৰ্ক অতি নিবিড় আৰু প্ৰাচীন। প্ৰকৃতিৰ বদান্যতা অবিহনে মানুহ জীয়াই থকাৰ কথা কল্পনা কৰাও অবাস্তৱ। প্ৰকৃতিয়ে দিয়াত কৃপণালি নকৰে যদিও তাৰ পৰা লোৱাও ইমান সহজ নহয়। প্ৰকৃতিৰ বুকুৰ পৰা আদায় কৰিবৰ কাৰণে প্ৰকৃতিক অধিক দিব পৰাকৈয়ো সক্ষম কৰি তুলিব লাগিব। প্ৰকৃতিৰ উৰ্বৰা শক্তি বৃদ্ধিত আমি গুৰুত্ব দিব লাগিব। সেয়ে হয়তো প্ৰকৃতিৰ শ্ৰীবৃদ্ধি কামনা কৰি বিহু বা বৈসাগুত ভগবান বা ‘বাথৌ বৌৱায়’ৰ ওচৰত প্ৰাৰ্থনা জনোৱা হয়। কৃষিকাৰ্য্যৰ অন্যতম অংগ গোধনৰ শ্ৰীবৃদ্ধি কামনা কৰি ‘গৰুবিহু’ (মসৌ ছান)ৰ দিনা ঢল পুৱাতে উঠি গৰুক গা ধুৱাই লাউ, বেঙেনাৰ টুকুৰা গৰুৰ গালৈ ছটিয়াই দি কোৱা হয় —

“লাউজা, ফাণ্ঠাও জা
বৌছাৰ বৌছাৰ এৰ হাঞ্জা হাঞ্জা
বিমানি খিথেৰ ফিফানি খিথেৰ
নৌং জা গৌলাও গেদেৰ”

(অৰ্থাৎ ‘লাউ খা, বেঙেনা খা, বছৰে বছৰে বাঢ়ি যা, মাৰ সৰু, বাপেৰ সৰু, তই হবি বৰ গৰু’ ইত্যাদি।)

গা ধুওৱাৰ পিছত ঘাঁহ খাবলৈ পথাৰত গৰুবোৰ মেলি দিয়া হয়। ইফালে আকৌ ঘৰৰ মহিলাসকলে গোহালিৰ পৰা গোবৰ এপাচি আনি বাটৰ এটা কোণত পেলাই থৈ যায়। তেনে কৰিলে গোহালিৰ গৰুলৈ কাৰো কোপ দৃষ্টি নপৰে বুলি বড়োসকলে বিশ্বাস কৰে। অসমীয়াৰ ‘গৰু বিহু’ৰ দৰেই বড়ো সকলেও দীঘলতী, মাখিয়তী, তৰা আদিৰে গৰুক কোবোৱা নিয়ম আছে। সেইদিনা গৰুক বাঁহ বা বেলেগ এচাৰিৰে কোবোৱা নিষেধ। দীঘলতী, মাখিয়তী, তৰা আদিৰে কোবালে গৰুৰ শৰীৰৰ পৰা নানা ৰকমৰ বেমাৰৰ বীজাণু দূৰ

হয় আৰু গাই-গৰু খীৰতি হয় বুলি বড়ো সকলে বিশ্বাস কৰি আহিছে। গধূলি গৰুবোৰক নতুন পঘাৰে বন্ধা হয়। নতুন পঘাৰে বন্ধাৰ আগতে চোতালৰ উত্তৰ-পূব দিশত থকা বাথৌ বেদীৰ ওচৰত পৱিত্ৰ পানীৰে ঠাইডোখৰ মচি-কাচি এখিলা আগলি কলপাতত এযোৰ তামোল-পাণ, আলাৰি বাতি (মাটিৰ চাকি) জ্বলাই পঘাবোৰ ৰাখি 'বৌৰাই বাথৌ'ক পূজা এভাগ দিয়া হয়। তাৰ পিচত গৰুক বিচনীৰ বা দিয়া হয় আৰু সেই দিনাৰ পৰা মানুহেও বিচনীৰ বা লোৱা আৰম্ভ কৰে।

গৰুবিহুৰ দিনাই তেওঁলোকে পৰম্পৰাগত বিশ্বাস অনুসৰি বিভিন্ন শাক-পাচলি (১০১ বিধ)ৰ ব্যঞ্জন ৰান্ধি খোৱা নিয়ম আছে। অৱশ্যে বহুতেই আকৌ সাত দিনৰ যিকোনো এদিনত শাক ভাজি খোৱাও দেখা যায়। বিভিন্ন শাক পাতৰ লগত ওমা বেদৰ (গাহৰিৰ মাংস) বা দাও বেদৰ (মুৰ্গীৰ মাংস) ও ৰান্ধি যায়। ইয়াক তেওঁলোকৰ মাজত 'গোখা-গৌখৈ খাজি জানায়' বুলি কোৱা হয়। লাফা শাক, মৈথা শাক, ঔৱা মেৰা (বাঁহ গাজ), শিব্ৰু, মেস্তা টেঙা, লাই, নিমপাত, ঢেকীয়া, পচঁতি আদি বিভিন্ন তিতা-মিঠা শাকৰ আঞ্জাই নতুন বছৰটোৰ আৰম্ভণিতে এক ভিন্ন স্বাদৰ অভিজ্ঞতা প্ৰদান কৰে। নতুন বছৰটো সকলোৰে কাৰণে শুভ হওক বুলি ভাবিলেও কেতিয়াবা, কেতিয়াবা তিতা-মিঠা অভিজ্ঞতাৰ সন্মুখীন হ'ব লগাত পৰিবও পাৰে বুলি তেনে পৰিস্থিতিৰ কাৰণে 'গোখা গৌখৈ খাজি জানায়' পৰম্পৰাৰ দ্বাৰা সদা প্ৰস্তুত কৰি ৰাখিবৰ কাৰণে 'বৌৰাই বাথৌ'ৰ ওচৰত প্ৰাৰ্থনা নিবেদন কৰা হয়।

তাৰ পিছৰ দিনা 'মানসি বৈসাগু' অৰ্থাৎ মানুহ বিহু পালন কৰা হয়। সিদিনা পুৱাই গা-পা ধুই বাথৌৰ বেদীত আঁঠু লৈ আগন্তুক নতুন বছৰটি যাতে সকলোৰে সুখে-সমৃদ্ধিৰে পাৰ হয়, পথাৰৰ শস্য শ্যামলা যাতে নদন-বদন হয় আৰু অপায়-অমংগল দূৰ হয় তাকে কামনা কৰি ধূপ-ধুনা জ্বলায়। তাৰ পিছতে সকলো বাদ্যযন্ত্ৰ যেনে ঢোল, চিফৌং (বাঁহী), পেপা, গগণা, জোথা, খেৰেঞ্জা আদি লোকবাদ্যসমূহ লৈ গাঁওৰ ইঘৰৰ পৰা সিঘৰলৈ যায়। পোন প্ৰথমে গাঁৱৰ মুখিয়াল জনৰ ঘৰৰ পৰাই বা এডোখৰ মুকলি ঠাইৰ পৰাই 'ৰংজালি বৈসাগু'ৰ প্ৰকৃত ৰং-ৰহইচ বা আনন্দ আৰম্ভ হয়। তেওঁলোকে গায়—

"দাওদৈ নানগৌ
দাওদৈ, দাওদৈ, দাওদৈ
দাওদৈ গুয়াব্লা
ইচিং খনানি জৌ বিদৈ।"

[অৰ্থাৎ আমাক কণী লাগে, কণী লাগে। যদি কণী নাই তেন্তে পাক-ঘৰত থকা জৌ বিদৈ (চাউলৰ পৰা প্ৰস্তুত কৰা পানীয়) লাগে।] বড়োসকলৰ যিকোনো মাংগলিক বা সামাজিক অনুষ্ঠান সি লাগিলে বিয়া-সবাহেই হওক বা বিহুৱেই হওক সেয়া 'জৌ বিদৈ' অবিহনে সম্পূৰ্ণ নহয়। 'জৌ বিদৈ' তেওঁলোকৰ সমাজ ব্যৱস্থাত এক অপৰিহাৰ্য্য অংগ।

ঘৰে ঘৰে গৈ 'বৈসাগু' গীত গোৱা পৰ্বটো আৰম্ভ হয় এই 'মানুহ বিহু'ৰ দিনাৰ পৰাই। প্ৰকৃতিয়ে ন-ৰূপ ধাৰণ কৰি যিদৰে সজীৱ আৰু জীপাল হৈ উঠে একেদৰে 'ৰংজালি বৈসাগু'ৰ দিনতো ডেকা-গাভৰু, বুঢ়া-মেথাৰ মন আনন্দত নাচি উঠে। সেয়ে তেওঁলোকে গায়—

"বৈসাগু বৌথৌৰনি অখা হানায়জৌং
বিফাং বিলায়বৌ খ্ৰব খ্ৰব আখায় খবৌ
জৌংনি গৌছায়াৰী বাগৰুম বাগৰুম মৌছানৌ
লুবৌইখাঙৌ হায় লৌগী লুবৌইখাঙৌ।"

অৰ্থাৎ ব'হাগৰ বতৰৰ বৰষুণ জাকত গছৰ পাতবোৰে যেনেকৈ হাত চাপৰি বজায়, তেনেকৈ আমাৰ মনবোৰেও বিহু অহাৰ লগে লগে বাগৰুম, বাগৰুম নাচিবলৈ আৰম্ভ কৰে। বিহু আহিলে যে আমাৰ মনত উথপ-থপ্ লাগে, আনন্দতে ডেকা-গাভৰুৰ মন আত্মহাৰা হয় তাৰেই বহিঃপ্ৰকাশ উক্ত গীতটো।

বিহুৰ লগত যে সৃষ্টিৰ বিজ্ঞান জড়িত আছে সেই কথা আগতে ইতিমধ্যে উনুকিওৱা হৈছে। 'ৰংজালি বৈসাগু'ও ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। সৃষ্টিৰ আদিমন্ত্ৰই হৈছে পুৰুষ আৰু প্ৰকৃতিৰ মিলন। বিপৰীত লিঙ্গৰ মিলন অবিহনে সৃষ্টি প্ৰক্ৰিয়া কেতিয়াও সম্ভৱ নহয়। ডেকা-গাভৰুৰ মাজত এই মিলনৰ স্বাভাৱিক বাসনা প্ৰকাশ পায় অখ্যাত ৰচকৰ দ্বাৰা সৃষ্ট প্ৰখ্যাত গীত সমূহত। সেয়ে বড়োৰ বিহু গীতত শুনা যায়—

"গৌছা থৌয়ৌব্লা খুছি জায়ৌব্লা
গৌৰজিয়া থাফৌই আদা গৌৰজিয়া থাফৌই
নৌং ছায়ৌব্লা গৌৰজিয়া থাফৌই।
আই আফায়াবৌ নাগিৰৰৌংলিয়া
আংহাবৌ খাফালাও মননৌ গৌইলিয়া।
আংবৌ আগৰ ৰৌঙা আদা
নৌংবৌ লেখা ৰৌঙা
গৌৰজিয়া থাফৌই আদা গৌৰজিয়া থাফৌই
গালাফাৰানি সোণালু আদা সোণা।"

অৰ্থাৎ তুমি যদি সহ্য কৰিব পাৰা, মানি ল'ব পাৰা আৰু মোক ভাল পোৱা, তোমাৰ মনে যদি শান্তি পায় তেন্তে তুমি আহি ঘৰজোঁৱাই হৈ থাকা। মা-পিতায়েও বিচাৰি ঠিক কৰি দিব নেজানে, মোৰো কপালত নাই; ময়ো কাপোৰত ফুল তুলিব নেজানো, তুমিও লিখা-পঢ়া নেজানা। কি আৰু কৰিবা। গতিকে, গালাপাৰাৰ সোণালু ককাই, মোৰ সোণ আহি ঘৰজোঁৱাই হৈয়ে থাকা।

কাপোৰ ব'ব নেজানা, ফুল তুলিব নেজানা বয়সে ভাটি দিয়া এগৰাকী আবিয়ৈ গাভৰুৱে বিহুৰ আগমনৰ লগে লগে নিজৰ দেহ আৰু মনৰ মাজত সুপ্ত হৈ থকা স্বাভাৱিক জৈৱিক তাড়না আৰু বিশ্বজনীন প্ৰবৃত্তিক কিদৰে লিখা-পঢ়া নজনা নিঃস্ব, নিঃকিন প্ৰিয়জনৰ ওচৰত প্ৰকাশ কৰিছে, আকুলতাৰে প্ৰেম নিবেদন কৰিছে তাৰেই বহিঃপ্ৰকাশ উক্ত গীতটো।

১.২ সামৰণি ঃ

এইদৰেই 'ৰংজালি বৈসাগু' বা 'ৰঙালী বিহু' বড়ো সকলৰ হওক বা আন জাতি-জনগোষ্ঠীৰে হওক ই হৈ পৰে ৰঙৰ উৎসৱ, আনন্দৰ উৎসৱ। পেটৰ ভোক পাহৰি আপোনজনৰ লগত হিয়া উজাৰি কথা পতা, হহাঁ-নচা, আনন্দ-স্ফুৰ্ত্তি কৰি থাকোতে নিশাবোৰো যে দিনৰ সৈতে একাকাৰ হৈ যায় সেয়া পাহৰি যায় এই বিহুতে। তথাপি যেন হেঁপাহ নপলায়। এইদৰে ৰং-ৰহইচ, স্ফুৰ্ত্তি-আনন্দৰ মাজেৰে পাৰ হৈ যায় 'ৰংজালি বৈসাগু'ৰ সাতোটা দিন। এই কথা লক্ষ্য কৰিয়ে Rev. Sidney Endle এ কৈ গৈছে- "Among the Darrang kacharis, this festival last for seven days, during which little or no work is done, the whole period being given up to marry-making, dancing, feasting etc." গতিকে, লক্ষ্য-উদ্দেশ্য আৰু উদযাপনৰ দিশৰ পৰা চাবলৈ গ'লে 'ৰংজালি বৈসাগু' আৰু 'ৰঙালী বিহু'ৰ মাজত যে খুব এটি তফাৎ পৰিলক্ষিত নহয় তাক স্পষ্টকৈ ক'ব পাৰি। আশা কৰিম, বিশ্বায়নৰ ধামখুমীয়াত যাতে 'ৰংজালি বৈসাগু'বা আমাৰ বাপতি সাহোন ৰঙালী বিহুৰ চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্ট, পৰম্পৰাগত লোকাচাৰ তথা বিশ্বাস সমূহ হেৰাই নেযায়। ই নিৰ্ভেজাল আৰু অকৃত্ৰিম হৈয়ে ৰওক! ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

১। Tylor, E.B ঃ Primitive Culture, P-1

২। Chattergi, S.Kঃ Kirata Jana kriti, P-27, 28

৩। Endle, S ঃ The kacharis, P-50

৪। Gait, Edward ঃ A History of Assam, P-7

৫। Nath, Rajmohan ঃ The Background of Assamese Culture.

৬। ৰাজকুমাৰ সৰ্বানন্দ ঃ 'ইতিহাসে সোঁৱৰা ছশটা বছৰ'

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰ আৰু ইয়াৰ প্ৰাসংগিকতা

গৰিমা দত্ত
গৱেষক, দৰ্শন বিভাগ
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত
বিশ্ববিদ্যালয়, খানাপাৰা
ৰেচম নগৰ বোড়োলেণ্ড গেষ্ট হাউচৰ
সমীপত, গুৱাহাটী, অসম-৭৮১০২২
৮৫৪৪৫৭৯২১
garimasaikia6@gmail.com

ড° তেজস্বা কলিতা
সহকাৰী অধ্যাপক, দৰ্শন বিভাগ
কৃষ্ণ কান্ত সৈন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত
বিশ্ববিদ্যালয়, খানাপাৰা
ৰেচম নগৰ বোড়োলেণ্ড গেষ্ট হাউচৰ
সমীপত, গুৱাহাটী, অসম পিনঃ ৭৮১০২২
৭০০২৬৮৮৩৪৯
tejasha397@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

ভাৰতীয় দৰ্শনৰ এক অন্যতম অবৈদিক শাখা হ'ল বৌদ্ধ দৰ্শন। গৌতম বুদ্ধ বৌদ্ধ ধৰ্ম আৰু দৰ্শনৰ প্ৰতিষ্ঠাপক। তেওঁৰ প্ৰকৃত নাম সিদ্ধাৰ্থ বা গৌতম। পৰৱৰ্তীকালত তেওঁ বুদ্ধ নামেৰে পৰিচিত হয়। বুদ্ধদেৱ দৰ্শনৰ আলোচনাত বিশেষ আগ্ৰহী নাছিল। তেওঁ মূলতঃ নীতিশাস্ত্ৰ ধৰ্মৰ প্ৰচাৰকহে আছিল। মানৱ জীৱনৰ পৰা দুখক সম্পূৰ্ণৰূপে অপসৰণ কৰাত তেওঁ বিশেষ আগ্ৰহী আছিল। বুদ্ধদেৱৰ দৰ্শন সম্পূৰ্ণৰূপে ব্যৱহাৰিক বা প্ৰায়োগিক। তেওঁৰ মতে যি জ্ঞান আমাৰ ব্যৱহাৰিক জীৱনৰ লগত যুক্ত নহয়, তাৰ আলোচনা নিৰৰ্থক। তেওঁ দৰ্শনৰ তাত্ত্বিক জ্ঞানতকৈ নৈতিক সদাচাৰেহে নিবাৰ্ণ অৰ্থাৎ মুক্তি লাভ কৰাত সহায় কৰে বুলি মত পোষণ কৰিছিল। বুদ্ধদেৱ আছিল মূলতঃ নৈতিক শিক্ষাগুৰু আৰু ধৰ্মসংস্কাৰক। এই গৱেষণা পত্ৰখনিত বৌদ্ধ দৰ্শনৰ বিভিন্ন নৈতিক ধাৰণা আৰু এই ধাৰণাসমূহৰ বৰ্তমানৰ সমাজ ব্যৱস্থাত প্ৰাসংগিকতা সম্পৰ্কে এটি নীতি দীৰ্ঘ আলোচনা দাঙি ধৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বিশেষ শব্দ ঃ

নীতিশাস্ত্ৰ, অষ্টাঙ্গিক মাৰ্গ, ব্ৰহ্মবিহাৰ, পঞ্চশীল।

অৱতৰণিকা ঃ

নীতিশাস্ত্ৰ হৈছে নৈতিকতাৰ বিজ্ঞান, সমাজৰ পটভূমিত মানুহৰ আচৰণ সম্পৰ্কে যি বিজ্ঞানে আলোচনা কৰে তাকে নীতিবিজ্ঞান বোলে। যি শাস্ত্ৰই মানুহৰ চৰিত্ৰ বা আচৰণৰ নৈতিক মূল্য বিচাৰ কৰে তাকে সাধাৰণতে নীতিশাস্ত্ৰ বোলা হয়। নৈতিক দৃষ্টিকোণৰ পৰা মানৱ জীৱনৰ কৰ্মসমূহক সৎ-অসৎ, ভাল-বেয়া, উচিত-অনুচিত বুলি বিচাৰ-বিবেচনা কৰা হয়। মানুহৰ ঐচ্ছিক বা অভ্যাস জনিত কামবোৰক নৈতিক মূল্যায়ন কৰা হয়। সেইবাবে নীতিশাস্ত্ৰক আচৰণৰ শুদ্ধতা- অশুদ্ধতা আৰু উচিত অনুচিত নিৰূপণৰ বিজ্ঞান বুলিও কোৱা হয়। পৰম কল্যাণক আদৰ্শ হিচাপে লৈ সমাজস্থ মানৱ আচৰণৰ যথাৰ্থ মূল্যায়ন কৰাই হ'ল দৰ্শন শাস্ত্ৰৰ নীতিবিদ্যা।

গৌতম বুদ্ধৰ উপদেশ আৰু বাণীসমূহৰ ওপৰত ভিত্তি কৰিয়েই বৌদ্ধ দৰ্শন গঢ়ি উঠিছিল। বুদ্ধ এগৰাকী নৈতিক শিক্ষক আৰু সংস্কাৰক আছিল। ব্যৱহাৰিক উপযোগিতাহীন আধ্যাত্মিক দিশটোক বুদ্ধদেৱে কেতিয়াও সমৰ্থন কৰা নাছিল। তেওঁৰ মতে ব্যৱহাৰিক জীৱনৰ লগত যুক্ত নোহোৱা জ্ঞানৰ আলোচনা নিৰৰ্থক। তেওঁৰ দৰ্শনৰ মূল উদ্দেশ্যই আছিল মানৱ জীৱনৰ পৰা কিদৰে জৰা-মৰণ আদি দুখ নিবাৰণ কৰা হয়

তাৰ আলোচনা কৰা। দাৰ্শনিক তত্বগধুৰ আলোচনাৰে মানুহৰ দুখ নিবৃত্ত নহয়, দুখৰ পৰা নিবাৰ্ণ লাভ কৰিব পাৰি কেৱল নৈতিক আচৰণৰ দ্বাৰা তেওঁ তাত্বিক জ্ঞানতকৈ নৈতিক সদাচাৰেহে নিবাৰ্ণ লাভ কৰাত সহায় কৰে বুলি স্পষ্ট মত পোষণ কৰিছিল। সেয়েহে দেখা যায় যে ভাৰতীয় নীতিশাস্ত্ৰত বৌদ্ধ নৈতিকতাই এক অন্যতম শ্ৰেষ্ঠ নৈতিক দৰ্শন হিচাপে প্ৰতিষ্ঠিত হৈছে।

উদ্দেশ্যঃ

বৌদ্ধ দৰ্শন আৰু বৌদ্ধ দৰ্শনৰ নীতিশাস্ত্ৰৰ লগত জড়িত বিভিন্ন ধাৰণা সমূহৰ বিষয়ে জনসাধাৰণক অৱগত কৰোৱাৰ লগতে এই ধাৰণাসমূহ আমাৰ সামাজিক জীৱনৰ লগত কেনেকৈ জড়িত হৈ আছে তাক উপলব্ধি কৰোৱাটোও হৈছে আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনিৰ লক্ষ্য আৰু উদ্দেশ্য।

পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখনি প্ৰস্তুত কৰোতে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হৈছে। সমল আহৰণৰ বাবে ইতিমধ্যে প্ৰকাশিত বিভিন্ন গ্ৰন্থ আৰু প্ৰবন্ধ আদিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

বিষয়বস্তুৰ আলোচনা ঃ

বুদ্ধদেৰৰ মতে এক নৈতিক জীৱন যাপনেই মানুহৰ প্ৰধান উদ্দেশ্য হোৱা উচিত। তেওঁ কয় যে এই সংসাৰখন দুখময় আৰু এই দুখক নিবাৰণৰ প্ৰচেষ্টাই মানুহৰ প্ৰধান লক্ষ্য হোৱা উচিত। দুখ নিবাৰণেই হ'ল বৌদ্ধ দৰ্শনৰ আলোচনাৰ মূল বিষয় সুদীৰ্ঘ কাল ধৰি তপস্যা কৰাৰ ফলত তেওঁৰ জ্ঞানোদীপ্তি হ'ল আৰু তেওঁ চাৰিটা মহান সত্যৰ সন্ধান পালে। এই চাৰিটা মহান সত্যক একেলগে চাৰি আৰ্যসত্য নামেৰে জনা যায়। এই চাৰি আৰ্যসত্য হৈছে।

(১) দুখ আছে।

(২) দুখৰ কাৰণ আছে।

(৩) দুখৰ নিবৃত্তি আছে।

(৪) দুখ নিবৃত্তিৰ উপায় আছে।

বৌদ্ধ দৰ্শনৰ চতুৰ্থ আৰ্যসত্য হ'ল দুখ নিবৃত্তিৰ পথ বা মাৰ্গ। অৰ্থাৎ যি পথেদি নিবাৰ্ণ লাভ কৰা যায় বা দুখৰ পৰা চিৰমুক্তি লাভ কৰা যায়, তাকে দুখ নিৰোধ মাৰ্গ বোলা হয়। বৌদ্ধ দৰ্শনত দুখৰ পৰা মুক্তি লাভ কৰাৰ বাবে আঠটা মাৰ্গ বা পথ অনুশীলনৰ কথা কোৱা হয়। এই আঠটা মাৰ্গক একেলগে আষ্টাঙ্গিক মাৰ্গ বোলা হয়। এই অষ্টাঙ্গিক মাৰ্গৰ (Eightfold path) মাজেদি বৌদ্ধ দৰ্শনৰ নীতিতত্ত্ব প্ৰকাশিত হৈছে। অৰ্থাৎ বৌদ্ধ নৈতিক দৰ্শনৰ ভিত্তি হ'ল এই অষ্টাঙ্গিক মাৰ্গ এই অষ্টাঙ্গিক মাৰ্গ সকলো শ্ৰেণীৰ মানুহৰ কাৰণে উন্মুক্ত আৰু উপযোগী যিকোনো ব্যক্তিয়েই এই পথবোৰ অনুসৰণ কৰি নিৰ্বাণ লাভ কৰিব পাৰে। এই আঠোটা মাৰ্গ হৈছে —

(১) সম্যক দৃষ্টি (Right view) : সম্যক দৃষ্টি বুলিলে যথাৰ্থ জ্ঞানকে বুজোৱা হয়। চাৰিটা আৰ্যসত্যৰ সম্পৰ্কে যথাৰ্থ জ্ঞানকে সম্যক দৃষ্টি বোৱা হয়। আৰ্যসত্যৰ জ্ঞান হ'লে মানুহে জীৱ আৰু জগতৰ প্ৰকৃত স্বৰূপ, আত্মাৰ অনিত্যতা, জগতৰ ক্ষণস্থায়ীত্বতা আদিৰ সম্যক জ্ঞান লাভ কৰি নিৰ্বাণৰ দুৱাৰডলিত উপস্থিত হ'ব পাৰে।

(২) সম্যক সংকল্প (Right Resolve) : সম্যক সংকল্পৰ অৰ্থ হ'ল মানসিক দৃঢ়তা। কেৱল চাৰি আৰ্যসত্য সম্পৰ্কে যথাৰ্থ জ্ঞান লাভ কৰিলেই নহ'ব, সেই জ্ঞান অনুসাৰে জীৱন যাপন আৰু চৰিত্ৰগঠনৰ সংকল্প ল'ব লাগিব।

(৩) সম্যক বাক্ (Right Speech) : সম্যক বাকৰ অৰ্থ হ'ল যথাৰ্ত কথন বা সত্য ভাষণ। সংকল্প গ্ৰহণ কৰিবলৈ সম্যক বাকৰ প্ৰয়োজন হয়। সত্য ভাষণ, প্ৰিয় কথন, শিষ্ট আলোচনা, মধুৰ বাক্য বিনিময় আদি সম্যক বাকৰ অন্তৰ্গত।

(৪) সম্যক কৰ্মান্ত (Right Conduct) : যথাৰ্থ আচৰণ বা সদাচাৰণেই সম্যক কৰ্মান্ত। পঞ্চশীল আৰু দান সম্যক কমান্তৰ অন্তৰ্গত। আহিংসা, সত্য, অস্তেয়, ব্ৰহ্মচৰ্য আৰু অপৰিগ্ৰহ- এইবোৰ সম্যক কমান্তৰ অন্তৰ্গত।

(৫) সম্যক আজীৱ (Right Livelihood) : সৎ উপায়েৰে জীৱন যাপন কৰাই হৈছে সম্যক আজীৱ। যি জীৱিকা আনৰ বাবে ক্ষতিকাৰক তাক ত্যাগ কৰা উচিত। অৱশ্যে ভিক্ষু আৰু সংসাৰী মানুহৰ আজীৱ একে নহয়। প্ৰবৃত্তি আৰু সামৰ্থ অনুসৰি জীৱিকা নিৰ্ধাৰিত হয়। কিন্তু প্ৰকৃত অৰ্থত ভিক্ষু বা সন্ন্যাসীৰ আজীৱই প্ৰকৃত সম্যক আজীৱ।

(৬) সম্যক ব্যায়াম (Right àßffort) : সম্যক ব্যায়ামৰ অৰ্থ যথাৰ্থ অনুশীলন প্ৰচেষ্টা বা অধ্যৱসায়। সম্যক ব্যায়াম হৈছে মানসিক ব্যায়াম। কু-চিন্তা বা কু-ভাৱ বৰ্জন কৰি সৎ চিন্তা আৰু সৎ মনোভাৱেৰে যি নৈতিক প্ৰচেষ্টা বা অনুশীলন কৰা হয় তাকেই সম্যক ব্যায়াম বোলা হয়।

(৭) সম্যক স্মৃতি (Right Mindfulness) : সম্যক স্মৃতি শব্দৰ অৰ্থ হ'ল যথাৰ্থ স্মৰণ। জগত, জীৱন, দেহ, মন,

আত্মাৰ অনিত্যতা আদি প্ৰতিনিয়ত স্মৰণ কৰাই হৈছে সম্যক স্মৃতি। বুদ্ধদেৱৰ মতে স্মৃতিৰ বিষয়বোৰ হ'ল- আৰ্যসত্য চতুষ্টয়, পঞ্চস্কন্ধ, শাৰিৰীক আৰু মানসিক বিষয় সমূহ, পঞ্চনীবৰণ, ষড়ায়তন আৰু ছয় অঙ্গবিশিষ্ট বোধি।

(৮) সম্যক সমাধি (Right Concentration) : অষ্টাঙ্গিক মাৰ্গৰ অন্তিমটো মাৰ্গ হ'ল সম্যক সমাধি। সম্যক সমাধিৰ অৰ্থ যথাৰ্থ ধ্যান। প্ৰথম সাতটা মাৰ্গ অতিক্ৰম কৰি যিয়ে জীৱন পৰিচালনা কৰিবলৈ সক্ষম হয় তেৱেঁই হৈছে মুক্তিকামী ব্যক্তি। সমাধিৰ চাৰিটা স্তৰ আছে-

প্ৰথম স্তৰত সাধকে চাৰি আৰ্যসত্য সম্পৰ্কে বিচাৰ বিতৰ্ক কৰি ধীৰ স্থিৰভাৱে সত্য নিৰ্ধাৰণত ব্ৰতী হয়। এই স্তৰত সাধকৰ মনত আসক্তিৰ বিনাশ ঘটে আৰু সাধকে এই অলৌকিক আনন্দ আৰু প্ৰশান্তি লাভ কৰে। এই স্তৰেই হৈছে ধ্যান।

দ্বিতীয় স্তৰত ধ্যান গভীৰ হয়। চাৰি আৰ্যসত্য সম্পৰ্কে সুনিশ্চিত আৰু নিঃ সংশয় জ্ঞান জন্মে। এই স্তৰ হৈছে অপাৰ শান্তি আৰু আনন্দৰ চেতনাৰ স্তৰ।

তৃতীয় স্তৰত ধ্যানৰ পৰা অনুভূত হোৱা আনন্দৰ বোধক অতিক্ৰম কৰি সাধকে ধ্যানৰ গভীৰতম পৰ্যায়ত গৈ বিশুদ্ধ প্ৰশান্তিৰ ভাৱ উপলব্ধি কৰে।

শেষৰ স্তৰত সাধক পূৰ্ণজ্ঞানৰ অধিকাৰী হয়। ফলত তেওঁ পূৰ্ণ সত্যক উপলব্ধি কৰিব পাৰে। এই অন্তিম পৰ্যায়েই হৈছে নিৰ্বাণ অৱস্থা। এই স্তৰত সাধকে সকলো ধৰণৰ দুখৰ পৰা মুক্তি লাভ কৰি নিৰ্বাণ প্ৰাপ্ত হয় আৰু পুনজৰ্ন্মৰ সকলো সম্ভাৱনা লোপ পায়।

বৌদ্ধ দৰ্শনৰ অষ্টাঙ্গিক মাৰ্গক তিনিটা স্কন্ধত বিভক্ত কৰা হয়- প্ৰজ্ঞা, শীল আৰু সমাধি। প্ৰজ্ঞাৰ অৰ্থ হ'ল সম্যক জ্ঞান। সম্যক দৃষ্টি আৰু সম্যক সংকল্প প্ৰজ্ঞাৰ অন্তৰ্গত। শীলৰ অৰ্থ হ'ল সম্যক আচৰণ। সম্যক বাক, সম্যক কৰ্মান্ত আৰু সম্যক আজীৱ শীলৰ অন্তৰ্গত। সমাধি হ'ল ধ্যান। সম্যক ব্যায়াম, সম্যক স্মৃতি আৰু সম্যক সমাধি সমাধিৰ অন্তৰ্গত।

বৌদ্ধ দৰ্শনৰ অষ্টাঙ্গিক মাৰ্গ প্ৰকৃততে নিৰ্বাণ লাভৰ এক ব্যৱহাৰিক নৈতিক পথ। এই অষ্টাঙ্গিক মাৰ্গক মধ্যপথ বুলিও কোৱা হয়। কাৰণ এই পথ এফালে অসংযত ভোগ বিলাস আৰু আনফালে অনাৱশ্যক শাৰীৰিক কৃচ্ছসাধন- এই দুই চৰম পথৰ মধ্যৱৰ্তী পন্থা। মানুহৰ কল্যাণাৰ্থে বুদ্ধদেৱে এই দুই চৰম পথ পৰিত্যাগ কৰি মধ্যপথৰ প্ৰচাৰ কৰিছে।

পঞ্চশীল ঃ

বৌদ্ধ দৰ্শনৰ সকলো নৈতিক আলোচনা আৰু জীৱনৰ সৰ্বোচ্চ লক্ষ্য নিৰ্বাণ প্ৰাপ্তিৰ মূল ভিত্তি হ'ল শীল। বৌদ্ধ নাতি শাস্ত্ৰত 'শীল' বুলি সদাচাৰণ, সদগুণ, নৈতিক হিতোপদেশ আদিক বুজায়। শীল হ'ল সদাচাৰণ বা নৈতিক উৎকৰ্ষতাৰ ভিত্তি। সংস্কৃত 'শীল' শব্দটোৰ আক্ষৰিক অৰ্থ হ'ল 'স্বভাৱ, চৰিত্ৰ, ব্যৱহাৰ বা আচৰণ'। শীলক নৈতিক নিয়ম বুলিও কোৱা হয়। বৌদ্ধ নীতিবিদ্যাত 'শীল' শব্দটো ব্যক্তিৰ দৈহিক আৰু মানসিক পৰিশুদ্ধতা আৰু আচৰণৰ শুচিতাক বুজায়। শীলৰ মূল অৰ্থ হ'ল সদাচাৰ। শীল আদৰ্শ জীৱন গঠনৰ উপায়, শাৰীৰিক বা মানসিক গঠন, আনৰ প্ৰতি সৎ আচৰণৰ উপায়, বৌদ্ধ গ্ৰন্থ 'বিশুদ্ধিমাৰ্গত' শীলৰ সংজ্ঞা প্ৰদান কৰি কোৱা হৈছে- "There Visuddhimagga, is virtue 'as volition, virtue as consciousness-concomitant', virtue as 'restrain, virtue as non-transgression" অৰ্থাৎ সদাচাৰ ইচ্ছাশক্তি, চেতনাৰ লগত সংযুক্ত, সদাচাৰ হ'ল অসৎ আচৰণ নিবৃত্তিকৰণ, পাপ আচৰণৰ পৰা বিৰত থকা। ইয়াৰ পৰা বুজা যায় যে, বৌদ্ধ নীতিতত্ত্ব শীলত বাহ্য আৰু আন্তৰ দিশ দুটা পৰস্পৰ সংযুক্ত। এটা দিশৰ শুচিতাই আনটো দিশক শুদ্ধ কৰে, (ৰয়, ২০২০,পৃঃ২৬০)

বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰত গৃহস্থীৰ কাৰণে পঞ্চশীল, উপোসাহীকৰ, কাৰণে অষ্টশীল, প্ৰব্ৰজিতৰ দশশীল আৰু পাতিমোক্ষৰ ভিক্ষু আৰু ভিক্ষুণীৰ কাৰণে ক্ৰমে ২২৭আৰু ৩৩১ প্ৰকাৰৰ শীলৰ নিৰ্দেশ দিয়া আছে। অৱশ্যে এইবোৰৰ ভিতৰত পঞ্চশীল হৈছে মৌলিক আৰু সকলো প্ৰকাৰৰ নৈতিক আৰু ধৰ্মীয় আচৰণৰ ভিত্তিস্বৰূপ (ৰয়, ২০২০,পৃঃ২৬১)

পঞ্চশীল হৈছে পাঁচবিধ সদাচাৰ পদ্ধতি, পঞ্চ নৈতিক শিক্ষা বা উপদেশ। মানুহে ব্যৱহাৰিক জীৱনত কিছুমান নীতি-নিয়ম মানি চলা উচিত। এই নীতিসমূহৰ জৰিয়তেহে ইজনে সিজনৰ দুখৰ সমভাগী হ'ব পাৰিব যাৰ দ্বাৰা মুক্তি বা নিৰ্বাণ লাভৰ পথ সুগম হ'ব বুলি বৌদ্ধ দৰ্শনত বিশ্বাস কৰা হয়। এই ব্যৱহাৰিক নীতি নিয়ম পালন কৰাৰ বাবে বুদ্ধদেৱে যি পাঁচটা নীতি দেখুৱাই দিছিল অৰ্থাৎ বৌদ্ধ প্ৰবৰ্তিত নিত্য পালিত পাঁচটা নীতি বা নিয়মক পঞ্চশীল বোলা হয়। এই পঞ্চশীল নীতিকেইটা হ'ল-

(১) প্ৰাণী হত্যাৰ পৰা বিৰত থকা (Abstention from

killing living beings: পঞ্চশীল নীতিৰ প্ৰথম শীল হ'ল পাণাতিপাতা বেৰমণী অৰ্থাৎ প্ৰাণী হত্যাৰ পৰা বিৰত থকা। 'পাণা'ৰ অৰ্থ হ'ল প্ৰাণী বা জীৱ আৰু 'অতিপাতা' মানে 'মাৰি পেলোৱা'। গতিকে কোনো জীৱক হত্যা কৰা, নাশ কৰা বা বিনষ্ট কৰাৰ পৰা বিৰত থকাই পাণাতিপাতা বেৰমণী, (ৰয়, ২০২০পৃ. ২৬৩)।বুদ্ধদেৱে এই নীতিৰ দ্বাৰা বুজাব বিচাৰিছিল যে মানুহে কেৱল মানুহৰ লগতে নহয়, অন্য কোনো জীৱ-জন্তুৰ ক্ষেত্ৰটো এই নীতি পালন কৰা উচিত। ই প্ৰকৃততে অহিংসা নীতিৰ অনুশীলন। হিন্দু আৰু জৈন নীতিতত্ত্বৰ দৰে বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰৰ প্ৰথম শীলত অহিংসা ব্ৰত পালন কৰা হয়। সৰ্বজীৱৰ কল্যাণাৰ্থে সকলো প্ৰকাৰৰ হিংসা, অনিষ্ট সাধন বা হত্যাৰ পৰা বিৰত থকা উচিত। প্ৰকৃতি জগতত কলো বস্তুৱে এটা আনটোৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি বৰ্তি আছে। গতিকে কোনো এটা সত্তাৰ ক্ষতি হোৱা মানে পৰোক্ষভাৱে মানৱ জাতিৰো ক্ষতি হোৱা। সেয়ে মানৱ তথা সমগ্ৰ বিশ্বজগতৰ কল্যাণাৰ্থে সৰ্ব প্ৰকাৰৰ হত্যাৰ পৰা বা অনিষ্ট সাধনৰ পৰা বিৰত থকা উচিত।

(২)অদত্তবস্তু গ্ৰহণৰ পৰা বিৰত থকা (Abstention from taking what is not given) : অদত্তবস্তু গ্ৰহণৰ পৰা বিৰত থকাক আদিন্নাদানা বেৰমণী বোলে। 'আদিন্না' শব্দৰ অৰ্থ হ'ল 'যিটো দিয়া হোৱা নাই' (ৰয়, ২০২০ পৃঃ২৬৫)। অদত্তবস্তু গ্ৰহণ কৰা চৌৰ্যবৃত্তিৰ সমান। আনৰ বস্তু, সম্পত্তি বা আৰ্জিত ধনৰ ওপৰত লোভ কৰাটো বুদ্ধৰ মতে অনৈতিক কৰ্ম। এই শীল আচৰণ কৰিলে মনৰ পৰা সকলো প্ৰকাৰৰ লোভ, লালসা, হিংসা, বিদ্বেষ আদি লাঘৱ হয়। ইয়ে সমাজত একতা আনে আৰু সামাজিক বৈষম্য, অসমতাক দূৰ কৰে। এই শীল অনুশীলনৰ ফলত সমাজ এখন দুৰ্নীতিমুক্ত হয়। এইদৰে সামাজিক প্ৰগতি আৰু বিকাশ সম্ভৱ হয়।

(৩) অবৈধ কামাচাৰৰ পৰা বিৰত থকা (Abstention from sexual misconduct) : এই শীলৰ অৰ্থ হৈছে ইন্দ্ৰিয়ৰ অপব্যৱহাৰ বা যৌন অপব্যৱহাৰৰ পৰা বিৰত থকা। যি কাৰ্য্যই পৰিয়ালৰ লগতে সমাজৰ সকলো ক্ষেত্ৰতে অনৈতিক বুলি বিবেচিত হয় তেনেকুৱা কাম কৰা অনুচিত। ইন্দ্ৰিয়ৰ অপব্যৱহাৰ যি কেতিয়াওঁ নৈতিকতাৰ ভিত্তি হ'ব নোৱাৰে তেনেকুৱা কাৰ্য্যৰ পৰা নিজক আঁতৰাই ৰখা উচিত। কাৰণ অনৈতিক কাৰ্য্যৰ পৰা সুখ কেতিয়াও নাহে। সেয়েহে বুদ্ধদেৱৰ মতে মানুহে নৈতিক কাৰ্য্য কৰা উচিত যাৰদ্বাৰা মানুহৰ নিৰ্বাণ লাভৰ পথ সুগম হয়।

(৪) মিথ্যা বাক্য প্ৰয়োগৰ পৰা বিৰত থকা (Abstention from lying) : চতুৰ্থ শীল হ'ল মিছা কথা কোৱাৰ পৰা বিৰত থকা। বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰত এই মিথ্যা কথনৰ পৰা সৃষ্টি হোৱা ক্ষতিৰ মাত্ৰা স্বীকাৰ কৰি কোৱা হৈ যে, এটা মিথ্যাৰ দ্বাৰা অপকাৰ কম হ'লে তাৰ গভীৰতা কম, কিন্তু ক্ষতিৰ পৰিমাণ বেছি হ'লে তাৰ গভীৰতা বেছি; মিথ্যাৰ দ্বাৰা যদি কাৰো জীৱন ৰক্ষা হয় তেনেহ'লে তাৰ গভীৰতা কম, কিন্তু সেই মিথ্যাৰ দ্বাৰা যদি জীৱন হানি হয় তেন্তে তেনে মিথ্যাৰ গভীৰতা বেছি; আকৌ অসৎ ব্যক্তিৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰয়োগ কৰা মিথ্যা কথাৰ গভীৰতা কম, কিন্তু সদাচাৰ ব্যক্তিৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰয়োগ কৰা মিথ্যা কথাৰ গভীৰতা বেছি, (ৰয়,২০২০, পৃ. ২৬৯) । গতিকে সৰ্বপ্ৰকাৰৰ মিথ্যাচাৰপৰিত্যাগ কৰি সত্যৰ পথত চলা উচিত। ই নিৰ্বাণৰ যথাৰ্থ পথৰ। অষ্টাঙ্গিক মাৰ্গৰ সম্যক বাকত এই কথাই কোৱা হৈছিল যে মিথ্যা ভাষণ, অপ্ৰিয় ভাষণ, কটুবাক্য, পৰনিন্দা, অৰ্থহীন বাক্যলাপ আদি পৰিহাৰ কৰি সত্য ভাষণ, প্ৰিয় কথন, শিষ্ট আলোচনা, মধুৰ বাক্য বিনিময় আদি নৈতিক সদাচাৰ অনুশীলন কৰা উচিত।

(৫) মাদক দ্ৰব্য সেৱনৰ পৰা বিৰত থকা (Abstention from partaking of intoxicants) : পঞ্চম তথা সৰ্বশেষ শীল হ'ল মাদক দ্ৰব্য সেৱনৰ পৰা বিৰত থকা। বুদ্ধদেৱৰ মতে, আমি এনেকুৱা বস্তু সেৱন কৰা অনুচিত যিয়ে আমাৰ মন, মগজু বিকৃত কৰে। উত্তেজিত বা ৰাগিয়াল বস্তু সেৱনৰ দ্বাৰা মানুহৰ চিন্তাবোৰ কেতিয়াও সম্যক হ'ব নোৱাৰে। ইয়ে সাংসাৰিক জীৱনত অশান্তি হত্যা, লুণ্ঠন ইত্যাদিৰ ক্ষেত্ৰত উৎসাহিত কৰিব পাৰে। বৌদ্ধ দৰ্শনত মাদক দ্ৰব্যৰ ভয়াৱহতাৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি সকলো স্তৰৰ মানুহক ইয়াৰ পৰা বিৰত থকাৰ কাৰণে এই শীল প্ৰাথমিক আৰু আৱশ্যকীয় শীল হিচাপে নিৰ্দিষ্ট কৰা হৈছে।

গতিকে দেখা যায় যে বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰত ব্যক্তিৰ অন্তৰত নৈতিক গুণ বিকশিত কৰিবলৈ শীল অনুশীলনৰ ব্যৱস্থা কৰা হৈছে। পঞ্চশীল অনুশীলনৰ ফলত এগৰাকী ব্যক্তিয়ে সামাজিক আৰু ব্যক্তিগত উভয় জীৱনতে সুখ শান্তিৰে বসবাস কৰিব পাৰে আৰু এটা সময়ত উচ্চতম শীল অনুশীলন কৰি মোক্ষৰ পথত অনায়াসে আগবাঢ়িব পাৰে?

ব্ৰহ্মবিহাৰ ঃ

বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰৰ এটি মহত্বপূৰ্ণ নৈতিক ধাৰণা হ'ল

ব্ৰহ্মবিহাৰ ভাৱনা বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰৰ এক শ্ৰেষ্ঠতম মানসিক অৱস্থা যাৰ জৰিয়তে নিজৰ লগতে সমাজ তথা সমগ্ৰ বিশ্ব কল্যাণ কৰা যায়। ব্ৰহ্মবিহাৰ শব্দটো ‘ব্ৰহ্ম’ আৰু ‘বিহাৰ’ এই শব্দ দুটাৰ পৰা উৎপত্তি হৈছে। ‘ব্ৰহ্ম’ শব্দৰ অৰ্থ হ’ল ‘উত্তম বা উৎকৃষ্ট’ আৰু ‘বিহাৰ’ শব্দৰ অৰ্থ হ’ল ‘অৱস্থান’। গতিকে ‘ব্ৰহ্মবিহাৰ’ৰ অৰ্থ হ’ল ‘উৎকৃষ্ট বা শ্ৰেষ্ঠতম অৱস্থান’ অথবা ‘জীয়াই থকাৰ উৎকৃষ্ট মানসিক অৱস্থা’। আনহাতে ‘ভাবনা’ শব্দৰ অৰ্থ ‘জীৱনত অনুশীলন কৰিবলগীয়া আচৰণ’ (ৰয়, ২০২০)।বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰত এনে ভাবনা চাৰি প্ৰকাৰৰ-

(১) মেত্তা বা মৈত্ৰী ঃ মৈত্ৰী ভাবনা বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰত এক আৱশ্যকীয় সদগুণ। ‘মৈত্ৰী’ শব্দটো পালি ভাষাৰ ‘মেত্তা’ শব্দ সংস্কৃত ৰূপ। ‘মৈত্ৰী’ মানে মিত্ৰতা, বন্ধুত্ব, সৌহাৰ্দ্য, সহিষ্ণুতা আৰু সহাৱস্থান। মৈত্ৰীৰ অৰ্থ হ’ল জাতি-ধৰ্ম-বৰ্ণ নিৰ্বিশেষে সকলো জীৱিত সত্তাৰ প্ৰতি চৰ্তহীন আৰু সাৰ্বজনীন প্ৰেম বিতৰণ কৰা (ৰয়,২০২০)। যিদৰে এগৰাকী মাতৃয়ে তেওঁৰ সন্তানৰ প্ৰতি প্ৰেম নিবেদন কৰে, তেনেকুৱা প্ৰেমেই হৈছে মৈত্ৰী। মৈত্ৰী ভাৱনাৰ প্ৰত্যক্ষ শত্ৰু হ’ল ঘৃণা, ক্ৰোধ আৰু লোভ। এনেকুৱা অপগুণক বিনাশ কৰি ভাতৃত্ববোধ, প্ৰেমভাৱ জাগ্ৰত কৰাই মৈত্ৰী। এই মৈত্ৰী ভাবনাৰ তাৎপৰ্য্য হ’ল অন্যান্য জীৱৰ কল্যাণ আৰু সুখৰ মাজেদি নিজৰ কল্যাণ আৰু সুখ সম্ভৱ। খং, ৰাগ, অভিমান, ঘৃণা ইত্যাদি দূৰ কৰি উদাৰ মনোভাৱৰ দৃষ্টি সকলোৰে ওচৰত প্ৰকাশ কৰাই মৈত্ৰীৰ এক অন্যতম বৈশিষ্ট্য।

(২) কৰুণা ঃ ব্ৰহ্ম বিহাৰৰ দ্বিতীয় ভাবনা হ’ল কৰুণা। কৰুণাক নৈতিক দৰ্শনত এটা মহৎ সদগুণ হিচাপে চিহ্নিত কৰা হয়। বুৎপত্তিগতভাৱে কৰুণা হ’ল এক আধ্যাত্মিক ব্যায়াম যাৰদ্বাৰা আমি আত্মসুখৰ সকলো পথ পৰিহাৰকৰি আনৰ সুখৰ কথা চিন্তা কৰো। বৌদ্ধ দৰ্শনৰ সকলো শাখাতে কৰুণা এটা অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ প্ৰত্যয় বুলি বিবেচিত হৈছে। থেৰাবাদী বৌদ্ধ দাৰ্শনিক সকলৰ মতে কৰুণা সদগুণৰ অধিকাৰী ব্যক্তিয়ে সদায় সুখী জীৱন অতিবাহিত কৰিব পাৰে। আনহাতে মহাযান বৌদ্ধ দাৰ্শনিক সকলৰমতে বোধিসত্ব হোৱাৰ ক্ষেত্ৰত কৰুণা হৈছে এটি সহ আৱশ্যিক চৰ্ত। থেৰাবাদী দাৰ্শনিক সকলৰ মতে কৰুণাৰ অনুশীলনে আমাৰ মনক পৰিশুদ্ধ কৰে, অসৎ প্ৰবৃত্তিৰ পৰা মনক আঁতৰাই ৰাখে, আৰু আমি বিশ্ব মানৱৰ লগত মৈত্ৰী ভাৱত আৱদ্ধ হৈ পৰমানন্দ লাভ কৰো আৰু অনাগত জন্ম-মৃত্যুৰ চক্ৰৰ পৰা মুক্তি লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হওঁ। আনহাতে , মহাযান বৌদ্ধ দাৰ্শনিক সকলৰ মতে বোধিসত্ব লাভ কৰিবলৈ প্ৰয়োজনীয় দুটা সদগুণৰ ভিতৰত কৰুণা অন্যতম। কৰুণা আৰু প্ৰজ্ঞাক অনুশীলন কৰিহে বোধিসত্বৰ পথত অগ্ৰসৰ হ’ব পাৰি। গতিকে দেখা যায় যে বৌদ্ধ নীতিতত্ত্বত কৰুণাই এটা অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ স্থান দখল কৰি আছে (ৰয়,২০২০)।

(৩) মুদিতা ঃ ব্ৰহ্মবিহাৰৰ তৃতীয় ভাবনা হ’ল মুদিতা। আনৰ সুখত তৃপ্তি লাভ কৰাটো হৈছে মুদিতা। অন্য জীৱৰ যি সুখ তাৰ লগত নিজৰ সুখখিনি বিলাই দিয়াৰ মানসিকতাই হৈছে মুদিতা। মুদিতা হ’ল- সহানুভূতিৰ মাজেৰে আনন্দৰ এক সৎ গুণ। বুৎপত্তি দিশৰ পৰা মুদিতা শব্দৰ অৰ্থ হ’ল সন্তোষ বা উজ্জ্বলতাপূৰ্ণ আনন্দ বা সকলোৰেআনন্দৰ মাজত। নিজৰ আনন্দ বিচৰা অৰ্থাৎ পৰসুখবাদী আনন্দ। এই পৰসুখবাদী আনন্দৰ মাজেৰে আগবাঢ়ি গৈ থাকিহে দুখৰ মাজতো নিৰ্বাণৰ দিশত মনত উৎসাহ থাকিব বুলি বুদ্ধদেৱে তেওঁৰ উপাসক সকলক উপদেশ দিছিল (দাস, ২০২০, পৃঃ১৯১)। মুদিতা ভাবনা সামাজিক তথা বিশ্বজগতৰ কল্যাৰ বাবে এক উপযোগী সদগুণ কেৱল নিৰ্বাণ লাভেই এই ভাবনাৰ অনুীলনৰ উদ্দেশ্য নহয়; ইয়াৰ উদ্দেশ্য সকলো জীৱিত সত্তাৰ কল্যাণ সাধন।

(৪) উপেক্ষা ঃ ব্ৰহ্মবিহাৰৰ চতুৰ্থ ধাৰণা হ’ল উপেক্ষা। মনৰ স্থিৰতা বা সমভাবেই উপেক্ষা। মৈত্ৰী, কৰুণা, মুদিতা—এই তিনি অৱস্থা অতিক্ৰম কৰি যেতিয়া ব্যক্তি নিৰুদ্বিগ্ন আৰু সুখ দুখ আদিত নিস্পৃহ হয় আৰু সদা শান্তভাৱে অৱস্থান কৰে, তেতিয়া সেই অৱস্থাক উপেক্ষা বোলা হয়। উপেক্ষা হ’ল ‘সুখ-দুখ নিস্পৃহ ভাৱ’। উপেক্ষাৰ অৰ্থ হ’ল যথাযথ নিৰীক্ষণৰ মাধ্যমত সঠিক উপলব্ধি বা নিৰপেক্ষ দৰ্শন য’ত কোনো প্ৰকাৰৰ অনুৰাগ-বিৰাগ, আসক্তি বা বিৰক্তি আৰু কোনো প্ৰকাৰৰ অনুকূলতা বা প্ৰতিকূলতাৰ কথা নাথাকে। বৌদ্ধ নীতিতত্ত্ব অনুসৰি যিয়ে মৈত্ৰী, কৰুণা, মুদিতা ভাবনা অনুশীলনৰ মাধ্যমত উপেক্ষা ভাবনাৰ এই নিৰপেক্ষ আৰু সুস্থিৰ মানসিক স্থিৰতা লাভ কৰে তেঁৱেই প্ৰকৃত ব্ৰহ্মবিহাৰী।

বৌদ্ধ নীতিতত্ত্বত মৈত্ৰী, কৰুণা, মুদিতা আৰু উপেক্ষা- এই চাৰিটা ভাবনাৰ সম্মিলিত ৰূপেই হৈছে ব্ৰহ্মবিহাৰ। মৈত্ৰীয়ে সকলো জীৱক আকোৱালি লয়, কৰুণাই সকলো দুখক সাৰটি লয়, মুদিতাই সুখ-সমৃদ্ধিক অন্তৰ্ভুক্ত কৰে, আৰু উপেক্ষাই শুভ-অশুভ, প্ৰেম-ঘৃণা, প্ৰীতিকৰ- অপ্ৰীতিকৰ ইত্যাদি সকলোকে অন্তৰ্ভুক্ত কৰি লয়। বুদ্ধদেৱৰ

মতে সৎ জীৱন যাপনৰ বাবে এইবোৰ আদৰ্শ নীতি। প্ৰকৃতিগতভাৱে এনে ভাবনা আধ্যাত্মিক আৰু নৈতিক। যি ব্যক্তিয়ে এই চাৰি ভাবনা সঁচা অৰ্থত পালন কৰে তেওঁ ব্ৰহ্মবিহাৰ কৰে অৰ্থাৎ ব্ৰহ্মলোকত গমন কৰে। ব্ৰহ্মবিহাৰত চাৰিটা মহৎ ভাবনা থকা বাবে ইয়াক চাৰিটা পৰিপূৰ্ণ সদগুণ বুলিও অভিহিত কৰা হয়।

সামৰণি ঃ

বুদ্ধদেৱ এগৰাকী নৈতিক শিক্ষক আছিল। ব্যৱহাৰিক উপযোগিতাহীন আধ্যাত্মিক দিশটোক তেওঁ কেতিয়াও সমৰ্থন কৰা নাছিল। নৈতিকভাৱে অসাৰ আৰু বৌদ্ধিকভাৱে অনিশ্চত আধ্যাত্মিক প্ৰশ্নৰ আলোচনাৰ পৰিৱৰ্তে বুদ্ধদেৱে সদায় ব্যক্তিৰ দুখৰ লগত জড়িত আটাইতকৈ গুৰুত্বপূৰ্ণ প্ৰশ্ন-দুখ উৎপত্তি, কাৰণ আৰু ইয়াৰ নিবৃত্তিৰ ওপৰত জ্ঞান দিবলৈ চেষ্টা কৰিছিল। তেওঁ পৃথিৱীৰ দুখ-কষ্টৰ ৰহস্য উন্মোচনকৰাৰ চেষ্টা কৰাৰ লগতে এই জীৱনত কেনেদৰে সুখ লাভ কৰিব পৰা যায় তাৰবাবে কিছুমান পথ আমাক দেখুৱাই থৈ গৈছে। বৌদ্ধ দৰ্শনৰ অষ্টাঙ্গিক মাৰ্গ তাৰে এক উদাহৰণ বৌদ্ধ, নীতিশাস্ত্ৰত ব্যক্তিৰ অন্তৰত নৈতিক গুণ বিকশিত কৰিবলৈ শীল অনুশীলনৰ ব্যৱস্থা কৰা হৈছে। এই শীলসমূহ অনুশীলন কৰি সকলো মানুহে নিজকে সদাচাৰী হিচাপে গঢ় দিব পাৰে। উন্নত জীৱন তথা আদৰ্শ সমাজ প্ৰতিষ্ঠা কৰিবলৈ হ'লে সকলো মানুহৰ পঞ্চশীল পালন এক কৰ্তব্য। এই পঞ্চশীলেই হৈছে সকলো প্ৰকাৰৰ নৈতিক আচৰণৰ ভিত্তি। মানুহৰ নৈতিক আৰু সামাজিক জীৱন পঞ্চশীল পালনৰ ওপৰতে নিৰ্ভৰ কৰে। বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰৰ পঞ্চশীল নীতিয়ে সভ্য সমাজৰ সকলোকে পাৰস্পৰিক সুৰক্ষা, একতা আৰু অৰ্থনৈতিক সমৃদ্ধিৰ সুবিধা দিয়ে যাৰ ফলত সমাজত সকলোৱে শান্তিপূৰ্ণভাৱ বসবাস কৰিব পাৰে। শীলৰ উপৰিও বৌদ্ধ নীতিশাস্ত্ৰত যি ব্ৰহ্মবিহাৰৰ কথা কোৱা হয় সেই ভাবনাসমূহৰো সামাজিক, সাংস্কৃতিক, নৈতিক আৰু আধ্যাত্মিক মূল্য আছে। ব্ৰহ্মবিহাৰ ভাবনাই কেৱল ব্যক্তিক নহয়, সমাজৰো কণ্যাণ সাধন কৰে আৰু সমগ্ৰ বিশ্বক প্ৰেমৰ বান্ধোনত বান্ধি ৰাখে।

আধুনিক জীৱনত দুখ এক অন্যতম কাৰক হৈ পৰিছে। যান্ত্ৰিক জীৱনবোধে মানুহক অকলশৰীয়া কৰি তুলিছে। বিশেষকৈ আৰ্থিক আৰু সামাজিক উশৃংখলতাই মানুহৰ দুখৰ পৰিমণ্ডল অধিক ব্যপ্ত কৰি তুলিছে। দুখ মানুহৰ জীৱনৰ কিদৰে অন্তৰায় হ'ব পাৰে সেই কথা উপলব্ধি কৰি বুদ্ধদেৱে দি যোৱা মাৰ্গ দৰ্শনেৰে আগুৱাই যোৱাৰ প্ৰয়োজনীয়তা আহি পৰিছে। অতীজৰ সকলো মহান গুৰুৰ দৰে বুদ্ধদেৱে কথোপকথনৰ জৰিয়তেহে শিক্ষা দিছিল। পৰৱৰ্তীকালত ত্ৰিপিটক গ্ৰন্থৰ জৰিয়তে সেই শিক্ষা সমাজত প্ৰচলিত হয়। বুদ্ধদেৱে জীৱন, সামাজিক, নৈতিক আৰু প্ৰমুল্যবোধৰ শিক্ষা প্ৰদান কৰি জ্ঞানৰ আলোকেৰে আগুৱাই যোৱাৰ পথ দেখুৱাই থৈ গৈছে। সেইবাবে একবিংশ শতিকাৰ সমাজ ব্যৱস্থাত বৌদ্ধ দৰ্শন তথা ধৰ্ম তথা বিভিন্ন নৈতিক ধাৰণা সমূহৰ প্ৰাসংগিকতা অধিক বৃদ্ধি পাইছে। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

ভট্টাচাৰ্য্য, ড° জ্যোৎস্না (২০০১) ঃ ভাৰতীয় দৰ্শন, স্বপ্না প্ৰিন্টিং ওৱাৰ্কচ (প্ৰাঃ) লিমিটেড।

বৰুৱা, গিৰীশ (১৯৭৪)ঃ ভাৰতীয় দৰ্শন (প্ৰথম খণ্ড), পাঠ্যপুথি প্ৰস্তুতি সমন্বয় সমিতি, ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়।

ৰয়, হেমন্ত কুমাৰ (২০২০) ঃ নীতিবিদ্যা, ইউনিয়ন বুক পাব্লিকেচন।

দাস, বিজয় কুমাৰ (২০২০) ঃ নাতিবিজ্ঞান, সূৰ্য প্ৰকাশ।

ডেকা, পুলিন (২০২৩)ঃ বুদ্ধদেৱৰ দৰ্শনৰ প্ৰাসংগিকতা, ই-প্ৰবন্ধ।

https://www.assam.awazthevoice.in/opinion-news/importance of touddhas-philosophy-7217.html.

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অসমীয়া আৰু কুঁডুখভাষাৰ ৰূপতত্ত্ব ঃ এটি অধ্যয়ন

(বচন, লিঙ্গ, কাৰক, সৰ্বনাম, সম্বন্ধবাচক শব্দ আৰু নঞাৰ্থক প্ৰত্যয়ৰ বিশেষ উল্লেখনেৰে)

সুলেখা দাস

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

ভাৰতবৰ্ষ এখন অতি জনবহুল দেশ। ২০১১ চনৰ লোকপিয়লৰ তথ্য অনুসৰি ভাৰতত মাতৃভাষা হিচাপে ভাৰতীয় আৰ্য, দ্ৰাবিড়, অষ্টিক আৰু চীনতিব্বতীয় ভাষাগোষ্ঠীৰ অন্তৰ্গত ১৯,৫৬৯টা ভাষা প্ৰচলিত হৈ আহিছে। এই ভাষা সমূহৰ ভিতৰত ২২টা ভাষাক ভাৰতীয় সংবিধানৰ অষ্টম অনুসূচীৰ অন্তৰ্গত বুলি স্বীকৃতি দিয়া হৈছে। ভাৰতবৰ্ষৰ উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চল তথা অসম ভূমিয়ো ভাষাবিদসকলৰ বাবে ভূ-স্বৰ্গ স্বৰূপ। কিয়নো সমগ্ৰ ভাৰতবৰ্ষত প্ৰচলিত প্ৰধান চাৰিটা ভাষাগোষ্ঠীৰ আৰ্য, দ্ৰাবিড়, অষ্টিক আৰু চীনতিব্বতীয় গোষ্ঠীৰ ভাষা উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চল তথা অসমৰ চুকে কোণে সিঁচৰতি হৈ আছে। এই ভাষাসমূহৰ ভিতৰত বিশেষকৈ আৰ্যগোষ্ঠীৰ অন্তৰ্গত অসমীয়া ভাষা আৰু দ্ৰাবিড় শাখাৰ অন্তৰ্গত কুঁডুখ ভাষা অন্যতম। অসমীয়া আৰু কুঁডুখ দুয়োটা ভাষাই ধ্বনিতত্ত্ব, ৰূপতত্ত্ব, বাক্যতত্ত্ব আৰু অৰ্থতত্ত্ব ইত্যাদিৰ দিশত নিজস্ব বৈশিষ্ট্যৰে মহিমামণ্ডিত। আমাৰ এই গৱেষণাপত্ৰত অসমীয়া আৰু অসমৰ কুঁডুখ ভাষাৰ ৰূপতত্ত্বৰ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হ'ব। বিশেষকৈ বচন, লিঙ্গ, কাৰক, সৰ্বনাম, সম্বন্ধবাচক শব্দ আৰু নঞাৰ্থক প্ৰত্যয়ৰ ভেদাত্মক ভাষাবিজ্ঞানৰ আধাৰত আলোচনাটি সম্পূৰ্ণ কৰা হ'ব।

সূচক শব্দ ঃ

ভেদাত্মক ভাষাবিজ্ঞান, বচন, লিঙ্গ, কাৰক, সৰ্বনাম, সম্বন্ধবাচক শব্দ, নঞাৰ্থক প্ৰত্যয়।

০.০ অৱতৰণিকা

০.১ বিষয় পৰিচয় ঃ

ভাৰতৰ উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চল তথা অসম বিভিন্ন নৃগোষ্ঠীয় লোকৰ আবাস ভূমি। ইয়াত নৃগোষ্ঠীগত বৈচিত্ৰ্যতাৰ লগে লগে সামাজিক, সাংস্কৃতিক আৰু ভাষিক বৈচিত্ৰ্যতাও পৰিলক্ষিত হয়। অসমৰ পাহাৰ, ভৈয়াম সৰ্বত্ৰতে যুগ যুগ ধৰি বিভিন্ন ভাষা-ভাষী লোকে বসবাস কৰি আহিছে। তেওঁলোকে সভা-সমিতি, বজাৰ-সমাৰ আদি ৰাজহুৱা অনুষ্ঠান সমূহত প্ৰধানভাৱে অসমীয়া ভাষা ব্যৱহাৰ কৰে যদিও ঘৰুৱা পৰিৱেশত কিন্তু নিজস্ব ভাষাতেই কথা পাতে।

অসমীয়া ভাষা অসম প্ৰদেশৰ ৰাজ্য ভাষা। তদুপৰি অৰুণাচল আৰু মেঘালয়তো ইয়াক সংযোগী ভাষা ৰূপে ব্যৱহাৰ কৰে। "২০১১ চনৰ লোকপিয়ল অনুসৰি মুঠ

গৱেষক, আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা
আৰু সাহিত্য অধ্যয়ন বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৯৮৫৯২৪৩৪০৫
Sulekhadasmanipur@gmail.com

অসমীয়াভাষী লোকৰ সংখ্যা -১৫৩১১৩৫১ জন।"[১] অসমীয়া ভাষাৰ উদ্ভৱ সম্পৰ্কে ভিন্ন ভাষাবিদে ভিন্ন মত আগবঢ়াইছে যদিও অধিকাংশ ভাষাবিদৰ মতে অসমীয়া ভাষাটো ভাৰতীয় আৰ্যভাষাৰ পূব মাগধী অপভ্ৰংশৰ কামৰূপী উপশাখাৰ পৰা উদ্ভৱ হৈছে। অৱশ্যে অসমত প্ৰচলিত অনা আৰ্য ভাষাবোৰৰ ধ্বনিতাত্ত্বিক, ৰূপতাত্ত্বিক, বাক্যতাত্ত্বিক আৰু শব্দগত দিশত প্ৰভাৱ পৰি অসমীয়া ভাষাই এক স্বকীয়তা লাভ কৰে। "বৰ্তমান অসমৰ মান্যভাষাটো উজনি অসমৰ কথিত ৰূপক আধাৰ কৰি গঢ় লোৱা।"[২]

"কুঁড়ুখ ভাষা হৈছে-দ্ৰাবিড় ভাষা পৰিয়ালৰ অন্তৰ্গত দ্ৰাবিড় শাখাৰ এটি ভাষা।"[৩] এই ভাষা অসমৰ বাগিচাৰ বিশেষকৈ গ্ৰামাঞ্চলত বসবাস কৰা কুঁড়ুখসকলে ব্যৱহাৰ কৰে। "২০১১ চনৰ লোকপিয়ল মতে অসমত কুঁড়ুখভাষীলোকৰ সংখ্যা-৭৩৪৩৭ জন।"[৪] অসমৰ উপৰি ঝাড়খণ্ড, বিহাৰ, উৰিষ্যা, মধ্যপ্ৰদেশ, পশ্চিমবঙ্গ, ত্ৰিপুৰা, ভুটান, নেপাল, বাংলাদেশ ইত্যাদি অঞ্চলসমূহত বসবাস কৰা ওৰাওঁ বা কুঁড়ুখসকলৰাজত এই ভাষা প্ৰচলন আছে। অতি পৰিতাপৰ বিষয় যে অসমত বাস কৰা অধিকাংশ কুঁড়ুখলোকেই নিজস্ব মাতৃ ভাষাটো পাহৰি পেলালে। নতুন চাম যুৱক-যুৱতীসকলৰ মাজত ভাষাটোৰ প্ৰচলন প্ৰায় নাই বুলিয়েই ক'ব পাৰি। তেওঁলোকে মনৰ ভাৱ আদান-প্ৰদানৰ বাবে সংমিশ্ৰিত চাদ্ৰী বা সাদানী ভাষা ব্যৱহাৰ কৰে।

অৱশ্যে গ্ৰামাঞ্চল আৰু বাগিচাসমূহত বসবাস কৰা বয়োজ্যেষ্ঠ ওৰাওঁ বা কুঁড়ুখসকলৰ মাজত অৱশ্যে ভাষাটো কিছু প্ৰচলন আছে। এওঁলোকে সভা-সমিতি বা বাহিৰত চাদ্ৰী বা অসমীয়া ভাষা ব্যৱহাৰ কৰিলেও ঘৰুৱা পৰিৱেশত কিন্তু সম্পূৰ্ণ কুঁড়ুখ ভাষাতেই কথা-বতৰা পাতে। কুঁড়ুখ ভাষাৰ নিজস্ব লিপি আছে। ইয়াক দেৱনাগৰী লিপি বোলে।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

অসমত বসবাস কৰা কুঁড়ুখসকলৰ মাজৰ পৰা লুপ্তপ্ৰায় হ'লবৈ ধৰা এই ভাষাটো পুনৰুদ্ধাৰৰ লগতে সঠিক ৰূপত অধ্যয়ন কৰাৰ উদ্দেশ্যৰে বিষয়টো নিৰ্বাচন কৰা হৈছে।

০.৩ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব ঃ

"অসমীয়া আৰু কুঁড়ুখভাষাৰ ৰূপতত্ত্ব ঃ এটি অধ্যয়ন" শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰখনিৰ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব হৈছে-

(১). গৱেষণাপত্ৰখনৰ জৰিয়তে অসমীয়া আৰু কুঁড়ুখ ভাষাৰ ৰূপতত্ত্বৰ ক্ষেত্ৰত মিল-অমিল সম্পৰ্কে জানিব পৰা যাব।

(২). বিষয়টো অধ্যয়নৰ যোগেদি কুঁড়ুখ ভাষাৰ বহুতো অনাচৰ্চিত বিষয়ে চৰ্চা লাভ কৰিব।

০.৪ অধ্যয়ন পদ্ধতি ঃ

আলোচ্য বিষয়টোৰ অধ্যয়নৰ বাবে প্ৰধানভাৱে দুই ধৰণৰ পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে- বিষয়ৰ পদ্ধতি আৰু ক্ষেত্ৰ অধ্যয়ন পদ্ধতি। বিষয়ৰ পদ্ধতি হিচাপে বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক দুয়োটা পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হৈছে। ভাষাৰ কথিত ৰূপটোৰ অধ্যয়নৰ বেলিকা বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতি আৰু সেই তথ্য সমূহ বিশ্লেষণৰ বাবে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হৈছে। আনহাতে, ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি হিচাপে প্ৰত্যক্ষ পৰ্যবেক্ষণ পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে। য'ত কেতিয়াবা সেই নিৰ্দিষ্ট ভাষাটো কোৱা ভাষা-ভাষীৰ অজ্ঞাতে তেওঁলোকৰ মাজৰে এজন হৈ তথ্য সংগ্ৰহ কৰিব লৈ যত্ন কৰা হৈছে। আনহাতে, কেতিয়াবা নিৰক্ষৰ-চহা লোকসকলৰ সাক্ষাৎকাৰ পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে। ইয়াৰ বাবে টেপৰেকৰ্ডাৰ, মোবাইল আদি অডিঅ ভিজুৱেল মাধ্যমৰ সহায়ত তথ্য সমূহ সংগ্ৰহ কৰা হৈছে।

০.৫ তথ্যৰ উৎস ঃ

অধ্যয়নৰ বাবে মুখ্য উৎসসমূহ ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰা হৈছে। তদপৰি উৎস সমূহ বিষয়ৰ সৈতে সংগতি থকা বিভিন্ন কিতাপ-পত্ৰিকা, বাতৰি কাকত, আলোচনী আদিৰ পৰা গ্ৰহণ কৰা হৈছে। ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ জৰিয়তে সমল সংগ্ৰহ কৰোঁতে আনুষ্ঠানিকভাৱে শিক্ষা গ্ৰহণ কৰা আৰু নকৰা, বয়স, অঞ্চল আদিৰ ভিত্তিত ভাগ কৰি লোৱা হৈছে। তথ্য সমূহ ৰেকৰ্ডাৰত বাণীবদ্ধন আৰু মৌখিক পদ্ধতিৰ যোগেদি আহৰণ কৰা হৈছে।

০.৬ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

অসমীয়া আৰু কুঁড়ুখ দুয়োটা ভাষাৰ ধ্বনিতাত্ত্বিক, ৰূপতাত্ত্বিক, শব্দতাত্ত্বিক, ইত্যাদিৰ দিশত নিজস্ব বৈশিষ্ট্য আছে। আমাৰ এই গৱেষণাপত্ৰত মাত্ৰ অসমীয়া আৰু কুঁড়ুখ ভাষাৰ ৰূপতত্ত্বৰ সম্পৰ্কেহে ভেদাত্মক ভাষাবিজ্ঞানৰ আধাৰত আলোচনা কৰা হ'ব। গৱেষণাপত্ৰৰ সীমাবদ্ধতাৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি ৰূপতত্ত্বৰ আটাইবোৰ বিষয় আলোচনা কৰাৰ পৰিৱৰ্তে কেৱল বচন, লিঙ্গ, কাৰক, সৰ্বনাম, সম্বন্ধবাচক শব্দ আৰু নঞাৰ্থক প্ৰত্যয় এইকেইটা দিশৰ বিষয়েহে বিশেষকৈ আলোকপাত কৰা হ'ব।

১.০ মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

কোনো এটা ভাষাৰ বৈজ্ঞানিকভাৱে অধ্যয়নৰ প্ৰধান

চাৰিটা স্তৰ হ'ল- ধ্বনিতত্ত্ব, ৰূপতত্ত্ব, বাক্যতত্ত্ব আৰু অৰ্থতত্ত্ব। ধ্বনিতত্ত্বত এটা ভাষাত উচ্চাৰিত ধ্বনিসমূহৰ বিষয়ে পুংখানুপুংখভাৱে আলোচনা কৰা হয়। সেইদৰে এক বা একাধিক ধ্বনি লগ হৈ ৰূপ গঠন কৰে। ৰূপবোৰ আকৌ পদ্ধতিগত ভাৱে লগ লাগি একোটা শব্দ সৃষ্টি হয়। এই ৰূপ সমূহৰ বিজ্ঞানসন্মত অধ্যয়নৰ স্তৰটোৱে হৈছে ৰূপতত্ত্ব। এক কথাত একোটা ভাষাৰ ৰূপ, ৰূপৰ সংযোগ আৰু সেই সংযোগৰ ফলত নতুনকৈ সৃষ্টি হোৱা অৰ্থ বাচক শব্দ বা পদ গঠনৰ পৰ্যালোচনাই হৈছে সেই ভাষাৰ ৰূপতত্ত্ব। যাৰ ইংৰাজী প্ৰতিশব্দ হৈছে Marphology। এই ৰূপতত্ত্ব আলোচনাই সামৰি লোৱা বিষয় সমূহ হৈছে- বচন, লিঙ্গ, কাৰক, প্ৰত্যয়, বিশেষ্য, বিশেষণ, সৰ্বনাম, ক্ৰিয়া, বিভক্তি, কাল আদি। আমাৰ এই আলোচনাপত্ৰত কুঁডুখ ভাষাৰ ৰূপতত্ত্বৰ বিশেষকৈ বচন, লিঙ্গ, কাৰক, সৰ্বনাম, সম্বন্ধবাচক পদ আৰু নঞাৰ্থক প্ৰত্যয়ৰ সম্পৰ্কে আলোকপাত কৰা হ'ল—

বচন ঃ

যাৰ বা যিহৰ দ্বাৰা সংখ্যাৰ বোধ জন্মে তাকে বচন বোলে। অসমীয়া ভাষাত বচন দুই প্ৰকাৰৰ। যেনে—এক বচন আৰু বহুবচন। সেইদৰে কুঁডুখ ভাষাৰো বচন দুই প্ৰকাৰৰ। সেয়া হৈছে--একবচন আৰু বহুবচন। মান্য অসমীয়াৰ দৰে কুঁডুখতো বিশেষ্য, বিশেষণ, সংখ্যাবাচক অৰ্থাৎ সকলো নামপদৰেই বচন হয়। কুঁডুখ ভাষাত বচন নিৰপেক্ষ ৰূপবোৰে এক বচনৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰে। ইয়াত নিৰ্দিষ্টতাবাচক প্ৰত্যয়ৰ প্ৰয়োগ নাই। "বহুবচনৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰিবলৈ মূল শব্দৰ পিছত -গুট্ঠি, -গৰ, -বগৰ আদি যোগ কৰা হয়।"[৫] উদাহৰণস্বৰূপে—

একবচন	**বহুবচন**
ইংজো (মাছ এটা)	ইংজো গুট্ঠি (মাছবোৰ)
অত্খা (পাত এটা)	অত্খা গুট্ঠি (পাতবিলাক)
বিটি (কন্যা)	বিটিবগৰ(কন্যাসকল)
নত্তি(নাতি)	নত্তিগৰ(নাতিসকল)

১। পুলিঙ্গবাচক শব্দৰ বহুবচন ৰূপ ঃ

পুৰুষবাচক, বৃত্তি, পদবী, জাতি, সম্প্ৰদায় সূচক তথা স্থানবাচক এক বচন বুজোৱা পুলিঙ্গ শব্দৰ ৰূপৰ পিছৰ 'স'ৰ ঠাইত 'ৰ' যোগ কৰি বহুবচন কৰা হয়। তদুপৰি স্ত্ৰী স্ত্ৰীয়ে কথা পাতিলে 'ৰ' সলনি 'য়' যোগ কৰি বহুবচন কৰা হয়। সেইদৰে 'ইস', 'য়স', 'ওস'ৰে শেষ হোৱা শব্দৰ একবচন ৰূপ পৰিৱৰ্তন কৰিবলৈ যাওঁতে 'য়য়' বা 'বয়' ব্যৱহাৰ কৰা হয়। যেনে—

একবচন	**বহুবচন**	**স্ত্ৰী-স্ত্ৰীয়ে**
আলস (মানুহ)	আলৰ (মানুহবোৰ)	আলয়
ঔৰতুস (এজন)	ঔৰতৰ (বহুজন)	ঔৰতয়
খদ্দস (কেঁচুৱা)	খদ্দৰ (কেঁচুৱাবোৰ)	খদ্দয়
জৌখস (যুৱক)	জৌখৰ (যুৱকসকল)	জৌখয়

২। কুঁডুখ ভাষাত একবচন আৰু বহুবচন বুজোৱা পৃথক পৃথক শব্দ সমূহ হ'ল--

একবচন	**বহুবচন**
এন (মই)	এম (আমি)
এংগ্গা (মোক)	এমা, নমা (আমাক)
এংগহয় (মোৰ)	এমহয়, নমহয় (আমাৰ)
নিন (তুমি)	নিম (তোমালোক)
ঈ (এইটো)	ইবড়া (এইবোৰ)
হু (সেইটো)	হুবড়া (সেইবোৰ)

কুঁডুখ ভাষাত বহুবচন বুজোৱা শব্দ সমূহৰ প্ৰয়োগ মন কৰিবলগীয়া। যেনে— নাম, নমা, নমহয়, নমন ইত্যাদি বহুবচনাত্মক শব্দ কোৱাৰ লগে লগে কওঁতা আৰু শুনোতা দুয়োজনকেই বুজাইছে। যেনে-- নাম কালোত (আমি যাম)। কিন্তু "এম কালোম' (আমি যাম) বুলি কোৱাত যিসকলে কৈছে তেওঁলোককহে যাবলগীয়া অৰ্থ প্ৰকাশ কৰিছে। শুনোতাজন নহয়। এতেকে "এম' হ'ল শ্ৰোতা ৰহিত আৰু "নাম' হ'ল শ্ৰোতা সহিত।

৩। কিছুমান বহুবচনাত্মক শব্দ স্ত্ৰী স্ত্ৰীয়ে কথা পাতিলে অন্য ৰূপ লয়। যেনে—

একবচন	**বহুবচন**	**স্ত্ৰী-স্ত্ৰীয়ে**
ইস (এওঁ)	ইৰ (এওঁলোক)	ইবড়য়
আস (তেওঁ)	আৰ (তেওঁলোক)	অবড়য়
মহৰস (গোৱাল)	আলৰ (গোৱালসকল)	মহৰয়

৪। সম্বন্ধবাচক একবচন বুজোৱা মূল ৰূপৰ পিছত 'গৰ' বা 'বগৰ' যোগ দি বহুবচন কৰা হয়। আনহাতে স্ত্ৰী স্ত্ৰীৰ কথাত 'বগয়' যোগ দিয়া হয়। যেনে—

একবচন	**বহুবচন**	**স্ত্ৰী-স্ত্ৰীৰ কথোপকথন**
ববস (দেউতা)	ববাগৰ (দেউতাসকল)	ববাগবগয়
বেটাস (পুত্ৰ)	বেটাবগৰ (পুত্ৰসকল)	বেটাবগয়
ককস(খুড়া)	ককাগৰ/ককাবগৰ (খুড়াসকল)	ককাবগয়
ককী (খুড়ী)	ককীগৰ/ককীবগৰ (খুড়ীসকল)	ককীবগয়

৫। কোনো জীৱজন্তু বা নির্জীৱ পদাৰ্থ অথবা কোনো বস্তুক একবচনৰ পৰা বহুবচন বুজাবলৈ মূল ৰূপৰ লগত গুট্ঠি যোগ কৰা হয়। যেনে—

একবচন	**বহুবচন**
মন্ন (গছ)	মন্ন গুট্ঠি (গছবোৰ)
ওড়া (চৰাই)	ওড়া গুট্ঠি (চৰাইবিলাক)
কংক (খৰি)	কংক গুট্ঠি (খৰিবিলাক)

লিঙ্গ(মেদ) ঃ

"যি ৰূপৰ দ্বাৰা পুৰুষ- স্ত্ৰী অথবা মতা-মাইকীৰ চিনাক্ত কৰিব পাৰি, তাকে লিঙ্গ বোলে। অসমীয়াত লিঙ্গ প্ৰধানকৈ দুই প্ৰকাৰৰ। সেয়া হৈছে-- পুলিঙ্গ(দেউতা, খুড়া, মামা)

আৰু স্ত্ৰী লিঙ্গ(মা, খুড়ী, মামী) অসমীয়াত কেৱল প্ৰাণীবাচক শব্দৰ ক্ষেত্ৰতহে লিঙ্গ ভেদ কৰা হয়। মানুহ, গৰু, ম'হ আদি শব্দই কোনো লিঙ্গৰ ধাৰণা নিদিয়ে বাবে এই সমূহক লিঙ্গ নিৰপেক্ষ ৰূপ বোলে।

কুঁড়ুখ ভাষাত লিঙ্গ প্ৰধানকৈ তিনি প্ৰকাৰৰ— ১। পুলিঙ্গ(মেত মেদ)

২। স্ত্ৰীলিঙ্গ (মুক মেদ)

৩। ক্লীৱ বা প্ৰাকৃত লিঙ্গ(আলো মেদ)।"[৬] পুৰুষ বুজালে পুলিঙ্গ, স্ত্ৰী বা মহিলাক বুজালে স্ত্ৰীলিঙ্গ, পুৰুষ-মহিলাক বাদ দি সকলো জীৱ বা জড় বস্তুকেই কুঁড়ুখ ভাষাত ক্লীৱ লিঙ্গ বুলি কোৱা হয়। যেনে- এড়া (ছাগলী), মন্ন (গছ), খাড় (নদী) ইত্যাদি।

কুঁড়ুখ ভাষাত তলত দিয়া ধৰণে লিঙ্গ নিৰ্ণয় কৰি দেখুৱাব পাৰি -

১। পুলিঙ্গবাচক শব্দৰ অন্ত্য স্থানত থকা 'স' ৰ ঠাইত 'দ' যোগ কৰি স্ত্ৰীলিঙ্গ কৰা হয়। যেনে—

পুলিঙ্গ	**স্ত্ৰীলিঙ্গ**
পচগীস (বুঢ়া)	পচ্চুদ (বুঢ়ী)
খদ্দস (ল'ৰা)	খদ্দদ (ছোৱালী)
ডিংডস(দঙুৰা)	ডিংডদ (বয়সীয়াল ছোৱালী)

২। পুলিঙ্গবাচক শব্দৰ পিছত 'আলী' স্ত্ৰী প্ৰত্যয় প্ৰয়োগ কৰি-

পুলিঙ্গ	স্ত্ৰীলিঙ্গ
খদ্দ (কেঁচুৱা)	খদ্দ আলী (কেঁচুৱাজনী)
চেংখস (চাকৰ)	চেংখআলী (চাকৰনী)

৩। ক্ৰিয়াপদৰ পিছত 'ঈ' লগ লগাই পুলিঙ্গৰ পৰা স্ত্ৰীলিঙ্গ কৰা হয়। যেনে—

পুলিঙ্গ	**স্ত্ৰীলিঙ্গ**
বৰদস (আহে)	বৰঃঈ (তাই আহে)
মেন্দস (শুলে)	মিনী (তাই শুলে)

৪। পুলিঙ্গবাচক ৰূপৰ আগত 'কটড়ী' (দামুৰী, চেঁউৰী) স্ত্ৰী প্ৰত্যয় ব্যৱহাৰ কৰি—

পুলিঙ্গ	**স্ত্ৰীলিঙ্গ**
খেৰ (কুকুৰা)	কটড়ী খেৰ (মাইকী কুকুৰা)
সিকতা (শিয়াল)	কটড়ী সিকতা (মাইকী শিয়াল)

৫। জীৱজন্তু তথা পশুপক্ষী বুজোৱা শব্দৰ আগত স্ত্ৰীবাচক 'বুঢ়ী' শব্দ ব্যৱহাৰ কৰি। যেনে—

পুলিঙ্গ	**স্ত্ৰীলিঙ্গ**
কিচ্ছি (গাহৰি)	বুঢ়ী কিচ্ছি(মাইকী গাহৰি)
এড়া (ছাগলী)	বুঢ়ী এড়া (মাইকী ছাগলী)
মেইনা (মইনা)	বুঢ়ী মেইনা (মাইকী মইনা)

অসমীয়া আৰু কুঁড়ুখ ভাষাৰ লিঙ্গৰ বিষয়ে অধ্যয়ন কৰিলে দেখা যায় যে অসমীয়াত কেৱল প্ৰাণীবাচক শব্দহে লিঙ্গ নিৰ্ণয় কৰা হয়। কিন্তু কুঁড়ুখ ভাষাত প্ৰাণীবাচক শব্দৰ উপৰি অপ্ৰাণীবাচক বা জড় বস্তুৰ ক্ষেত্ৰতো নিৰ্ণয় কৰা হয়। অসমীয়াত লিঙ্গ নিৰপেক্ষ ৰূপৰ পিছত টো, টা, টি, খন, খনি, জন, জনী আদি নিদিষ্টতাবাচক প্ৰত্যয় ব্যৱহাৰ কৰি লিঙ্গ নিৰ্ণয় কৰা হয়। তদুপৰি -ই, -অনী, -ইনী, -উনী, -ৰী আদি স্ত্ৰী প্ৰত্যয় সংযোগ কৰিও লিঙ্গ নিৰ্ণয় কৰা হয়। কিন্তু কুঁড়ুখ ভাষাত পুলিঙ্গ বুজাবলৈ বিশেষ্য শব্দৰ আগত অড়িয়া আৰু স্ত্ৰীলিঙ্গ বুজাবলৈ কটড়ী, আলী আদি স্ত্ৰী প্ৰত্যয় ব্যৱহাৰ কৰা হয়।

কাৰক (ননতু) ঃ

অসমীয়া ভাষাত কাৰক ছয় প্ৰকাৰৰ। সেয়া হৈছে-- কৰ্তা, কৰ্ম, কৰণ, নিমিত্ত, অপাদান আৰু অধিকৰণ। অৱশ্যে সম্বন্ধ পদৰো কাৰকৰ ৰূপ হয় বাবে ইয়াকো কাৰকৰ শাৰীত ধৰা হয়। কাৰক অনুযায়ী শব্দ বিভক্তি ছয় বিধ। অপাদান কাৰকৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰিবলৈ পৃথকে কোনো শব্দ বিভক্তি নাই। সম্বন্ধ পদৰ ষষ্ঠী 'ৰ' ৰ পিছত পৰা অনুসৰ্গ যোগ কৰি অপাদান কাৰকৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰে।

অসমীয়া ভাষাৰ ছয়বিধ কাৰকৰ বিপৰীতে কুঁড়ুখত আঠ প্ৰকাৰৰ কাৰক পোৱা যায়। সেয়া— কৰ্তা (ননতুখ), কৰ্ম (মনতুখ), কৰণ (সংগত), নিমিত্ত (পঁড়সা), অপাদান

(অস্বৰনা), সম্বন্ধ (নাতগোত), অধিকৰণ (অড্ডা) আৰু সহচৰ্য (সংগতা)। এই কাৰক সমূহৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰিবলৈ বিভক্তি প্ৰয়োগ কৰা হয়। তলত "কাৰক আৰু বিভক্তি তালিকাখন দিয়া হ'ল"[৭]

কাৰক----বিভক্তি----উদাহৰণ

ক। কৰ্তা-অস-ৰামাস বৰচম (ৰামাই আহিলে)

খ। কৰ্ম-অন-এংগহন ওণ্টে কমন তেংগা চি'আ (মোক এষাৰ কথা ক'বলৈ দিয়া।)

গ। কৰণ-তুৰু, তী-কন্তো তী খণ্ডা (কটাৰীৰে কাটা)

ঘ। নিমিত্ত-গে-এংগাগে ওণ্টা ওন্দৰ'আ (মোৰ বাবে এটা লৈ আনা)

ঙ। অপাদান-তী-মন্নতী খ? পা খৰতা(গছৰ পৰা ফল সৰিলে)

চ। সম্বন্ধ-গহী, তা-ইদ ৰামস গহী গড়পা (সেইটো ৰামৰ ঘৰ)

ছ। অধিকৰণ-নু-ডিব্ৰুগড় তা মেডিকেল কলেজ ৰঈ (ডিব্ৰুগড়ত মেডিকেল কলেজ আছে)

জ। সহচৰ্য-সংগে, গনে-এংগহয় সংগে বৰা (মোৰ লগত আহা)

অসমীয়াত কাৰক ছয় প্ৰকাৰৰ। কিন্তু কুঁড়ুখত কাৰক আঠ প্ৰকাৰৰ। অসমীয়া ভাষাত সম্বন্ধ পদৰো ৰূপ হয় বাবে আন কাৰকৰ দৰে ইয়াকো কাৰকৰ শাৰীত ধৰা হয়। কিন্তু কুঁড়ুখত সম্বন্ধ কাৰকৰ অৱস্থিতি পোৱা যায়। সেইদৰে কৰণ আৰু অপাদান কাৰকৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰিবলৈ অসমীয়াত কোনো অনুপদ বা অনুসৰ্গ প্ৰয়োগ নহয়। অপাদান কাৰকৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰিবলৈ কোনো বিভক্তি নাই, সম্বন্ধ পদৰ 'ৰ' বিভক্তিৰ সৈতে পৰা অনুসৰ্গ সংযোগ কৰি ইয়াৰ অৰ্থ নিৰূপন কৰৰ হয়। কুঁড়ুখত অপাদান কাৰকৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰিবলৈ 'তী' বিভক্তি যোগ কৰা হয়। তদুপৰি কুঁড়ুখত সহচৰ্য নামেৰে আন এক প্ৰকাৰৰ কাৰক পোৱা যায়। ইয়াৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰিবলৈ গনে, সংগে আদি বিভক্তি প্ৰয়োগ হয়।

সৰ্বনাম ঃ

অসমীয়া ভাষাৰ সৰ্বনাম পদক তলত দিয়া ধৰণে ভাগ কৰি দেখুৱাব পাৰি।

১। **ব্যক্তিবাচক সৰ্বনাম ঃ**

	একবচন	**বহুবচন**
১ম পুৰুষ-	মই	আমি
২য় পুৰুষ-(তুচ্ছ)	তই	তহঁত
(মান্য)	তুমি	তোমালোক
(অধিক মান্য)	আপুনি	আপোনালোক
৩য় পুৰুষ--	সি, তেওঁ	সিহঁত, তেওঁলোক

২। **নিৰ্দেশবোধক সৰ্বনাম ঃ**

ক। নিকটস্থ ঃ তুচ্ছাৰ্থক-ই (পুং), এই(স্ত্ৰী), এইটো, এইয়া
মান্যাৰ্থক- এওঁ, এখেত

খ। দূৰস্থ ঃ সৌ, সৌৱা, সেইয়া, সেই।

৩। সাকল্যবাচক সৰ্বনাম ঃ গোটেই, সমূহ, সকলো, আটাই, উভয়, সৰ, সদৌ আদি।

৪। অনিদিষ্টতাবাচক সৰ্বনাম ঃ কোনো, কেৰে, কেও, একো।

৫। প্ৰশ্নবোধক সৰ্বনাম ঃ কি আৰু কোন। 'কি'ৰ তিৰ্যক ৰূপ হৈছে 'কা'। ইয়াৰ পিছত কাৰক বাচক বিভক্তি সংযোগ কৰি ভিন্ন ৰূপ কৰা হয়। সেইদৰে 'কোন'ৰ পিছতো বচন বুজোৱা প্ৰত্যয় যোগ কৰি ভিন ভিন ৰূপ কৰিব পাৰি।

৬। আত্মবাচক সৰ্বনাম ঃ নিজ, স্বয়ং আৰু আপুনি। 'নিজ'ৰ পিচত কাৰক বিভক্তি লগ লগাই ভিন ভিন ৰূপ কৰা হয়। কুঁড়ুখ ভাষাৰ সৰ্বনামক তলত দিয়া ধৰণে ভাগ কৰিব পাৰি।"[৮]

১। **পুৰুষবাচক সৰ্বনাম ঃ**

	একবচন	**বহুবচন**
১ম পুৰুষ	এন (মই)	এম (আমি)
২য় পুৰুষ	নীন (তুমি)	নীম (তোমালোক)
৩য় পুৰুষ	আস (সি/তেওঁ)	আৰ (তেওঁলোক)

২। নিৰ্দেশবাচক সৰ্বনাম ঃ ঈ (এওঁ), আস (তেওঁ), ঈস (এখেত), হুস (তেওঁ), আৰ (সিহঁত)

৩। আত্মবাচক সৰ্বনাম ঃ তাঙ'আ (নিজৰ)

৪। অধিকাৰ বাচক সৰ্বনাম ঃ এঙহায় (মোৰ) নিঙহায় (তোমাৰ), তাঙহায় (তেওঁৰ) নীমহায় (তোমালোকৰ)

৫। অনিশ্চয়বাচক সৰ্বনাম ঃ এন্দেৰ'অম (কোনো), ইন্দিৰ'ঈম (কোনো)

৬। নিশ্চয়বাচক সৰ্বনাম ঃ ঈদিম (সেইটোৰেই), আদিম (এইটো), হুদিম (তাকে), ঈসিম (এওঁয়ে)

৭। প্ৰশ্নবাচক সৰ্বনাম ঃ নে (কোন), এন্দৰা (কি), এখো (ক'ত)

৮। সম্বন্ধবাচক সৰ্বনাম ঃ নে- আৰ(কোনে), জে-সে (যি ইচ্ছা)

৯। বিভাজবাচক সৰ্বনাম ঃ ওৰোত (এজনে), ওতোখ (এজনে), ওৰমী (গোটেইবোৰ), নাঃমিম (আমিয়ে)

সম্বন্ধবাচক শব্দ ঃ

ভাৰতীয় আন আন ভাষাবোৰৰ দৰে অসমীয়াতো সম্বন্ধবাচক শব্দবোৰ তিনিটা সম্বন্ধৰ জৰিয়তে গঢ় লৈ উঠিছে। সেয়া হ'ল-- জন্মগত, বৈবাহিক আৰু বন্ধুত্ব। অসমীয়াত কেইবা কুৰি এনে শব্দ পোৱা যায়। ইয়াৰে পিতামহ, মাতামহ, স্বামী বা স্ত্ৰী ইত্যাদি পোন্ধৰ-যোল্লটা মানহে সংস্কৃতৰ পৰা পোনে পোনে আহিছে। বাকীবোৰ কিছুমান তদ্ভৱ আৰু আন কিছু স্বকীয় শব্দ। অসমীয়াত সম্বন্ধ বুজোৱা বিশেষ্য শব্দ, যেনে—আজোককা-আজো আইতা, পিতা/পিতাই/দেউতা/বোপাই, আই মা/মা/বৌ, খুড়া/খুড়াদেউ, দদাই-খুড়ী-খুড়ীদেউ, জোঁৱাই-জী, দেওৰ, ননদ, শহুৰ, তাৱৈ- আমৈ, মিতা-মিতিনী ইত্যাদি। অৱশ্যে পুৰুষ অনুযায়ী ইহঁতৰ ৰূপ ভিন ভিন দেখা যায়। অৰ্থাৎ সম্বন্ধবাচক শব্দৰ প্ৰথম, দ্বিতীয় আৰু তৃতীয় পুৰুষত কাৰকৰ লগত সম্পৰ্ক দেখুৱাবলৈ হ'লে মূল ৰূপৰ পিছত পুৰুষবাচক সৰ্গ যোগ কৰিব লাগে। ইয়াকে পুৰুষ বাচক শব্দৰূপ বোলা হয়। উদাহৰণ স্বৰূপে--উত্তম পুৰুষ--মোৰ দেউতা আহিছে। মধ্যম মান্য--তোমাৰ দেউতাৰা আহিছে। মধ্যম তুচ্ছ--তোৰ দেউতাৰ আহিছে। নাম পুৰুষ -- দেউতাক আহিছে ইত্যাদি।

অসমীয়াৰ দৰে কুঁড়ুখতো সম্বন্ধবাচক শব্দবোৰ জন্মগত, বৈবাহিক আৰু সখিত্ব এই তিনিটা সম্বন্ধৰ যোগেদি গঢ় লৈ উঠে। যেনে-- আব্বা(দেউতা), আইঅ/আয়োং (মা), আজ্জ (ককা), আজ্জি (আইতা), এংড়িস (ভানটি), এঙড়ি (ভনী), দায়ি (বাইদেউ), কাকা (খুড়া), কাকী (খুড়ী), পিসা(পেহা), তাচী (পেহী), এৰখো (ননদ), চাইছ (শহুৰ), চাছু (শাহু), বন্ধুস(বন্ধু), বন্ধিয়ান(বান্ধৱী)।

কুঁড়ুখত সম্বন্ধবাচক শব্দত পুৰুষ অনুযায়ী কিছুমান সৰ্গ সংযোগ হয়। সম্বন্ধবাচক শব্দৰ প্ৰথম, দ্বিতীয় আৰু তৃতীয় পুৰুষত সম্বন্ধ কাৰকৰ লগত সম্পৰ্ক দেখুৱাবলৈ হ'লে মূল ৰূপৰ লগত পুৰুষবাচক শব্দ যোগ কৰিব লাগে। অন্যান্য ভাৰতীয় ভাষাৰ দৰে কুঁড়ুখতো পুৰুষবাচক সৰ্গৰ আধাৰ হ'ল — পুৰুষবাচক সৰ্বনামে। উদাহৰণ স্বৰূপে—

সম্বন্ধবাচক--১ম পুৰুষ--২য় পুৰুষ--৩য় পুৰুষ

ক। ববস/আব্বা 'দেউতা' এম্ববস 'মোৰ দেউতা' নিম্ম্বস 'তাৰ দেউতাৰা' তমমবস 'তেওঁ দেউতাক'

খ। আয়োং 'মা' ইংগিয়ো 'মোৰ মা' নিংগিয়ো 'তোমাৰ মা' তংগিয়ো 'তেওঁ মাক'

নঞৰ্থক প্ৰত্যয় ঃ অসমীয়া ভাষাত প্ৰধানকৈ ক্ৰিয়াপদৰ আগত নঞৰ্থক বদ্ধৰূপ -ন যোগ কৰি নঞৰ্থকতাৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰা হয়। অৱশ্যে ক্ৰিয়াপদৰ সম্পূৰক শব্দ প্ৰয়োগ কৰিয়ো, যেনে--বৰ্তমান মই অসমত আছোঁ, বৰ্তমান মই অসমত নাই, ইত্যাদি ধৰণে নঞৰ্থক অৰ্থ প্ৰকাশ কৰা হয়। ন বদ্ধৰূপৰ কেইবাটাও উপৰূপ থাকে। যেনে- ন, না, নি, নু, নে আৰু নো। এইবোৰ সদৰ্থক ৰূপটোৰ আদ্য স্থানত থকা স্বৰধ্বনিৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি প্ৰয়োগ হয়। যেনে--কৰে-নকৰে, খায়-নাখায়, কিনে-নিকিনে, শুনে-নুশুনে, দেখে-নেদেখে, খোৱা-নোখোৱা ইত্যাদি।

কুঁড়ুখ ভাষাত নঞৰ্থক অৰ্থ প্ৰকাশ কৰিবলৈ কেতবোৰ -মা, -মান, -আম, মল ইত্যাদি প্ৰত্যয় প্ৰয়োগ কৰা হয়। যেনে—

মা-নানন (নকৰোঁ)

মান-নাঞ্জকাই (নকৰিলা)

আমকেবাৰা (নাহিবা)

মলনন্দস (নকৰে)

অসমীয়াত যিদৰে নঞৰ্থক প্ৰত্যয় সমূহ সদৰ্থক ৰূপটোৰ আদ্যাক্ষৰত থকা ধ্বনিটোৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি প্ৰয়োগ হয়, সেইদৰে কুঁড়ুখতো নঞৰ্থক প্ৰত্যয়বোৰ সদৰ্থক ৰূপটোৰ আগত প্ৰয়োগ হয়।

মন্তব্য আৰু সামৰণি ঃ

অসমীয়া ভাষা হৈছে ভাৰতীয় আৰ্যভাষা গোষ্ঠীৰ অন্তৰ্গত এটা ভাষা। অন্যান্য ভাৰতীয় এই আৰ্য ভাষাবোৰৰ দৰে অসমীয়া ভাষাৰ ৰূপতত্ত্বৰ গাঁথনিক দিশত ভাৰতীয় আৰ্য ভাষাৰ গাঁথনিক অৱয়ব পৰিলক্ষিত হোৱা দেখা যায়। সেইদৰে কুঁড়ুখ ভাষাটো দ্ৰাবিড় ভাষা পৰিয়ালৰ উত্তৰ শাখা দ্ৰাবিড় অন্তৰ্গত। গতিকে দুয়োটা ভাষাৰ বচন, লিঙ্গ, কাৰক, সৰ্বনাম, সম্বন্ধবাচক শব্দ আৰু নঞৰ্থক প্ৰত্যয় ইত্যাদিক ভেদাত্মক ভাষাবিজ্ঞানৰ আধাৰত আলোচনা কৰিলে দেখা যায় যে দুয়োটা ভাষাৰ মাজত ভালেখিনি বৈসাদৃশ্য আছে। কিছু কিছু ক্ষেত্ৰত সাদৃশ্য থাকিলেও প্ৰত্যয়, বিভক্তি আৰু সৰ্গবোৰৰ প্ৰয়োগৰ বেলিকা যথেষ্ট পাৰ্থক্য দেখা যায়। ❑

পাদটীকা ঃ

১। Census of India, 2011, Language, India, States, Union Territorials (Table- C_ 16). Office of the Register General, India, 2A, Manshing Road, New Delhi_ll Pg.-6-7

২। বাণীকান্ত কাকতি (অনুঃ) ঃ অসমীয়া (বিশ্বেশ্বৰ হাজৰিকা) ভাষাৰ গঠন আৰু বিকাশ, পৃ, ১৩

৩। নগেন ঠাকুৰ ঃ ভাৰতীয় ভাষাৰ পৰিচয়, পৃঃ ১৮

৪। Cencus of India, 2011, pg 6-7

৫। বেক্স', পি, চি ঃ কুঁড়ুখ বিল্লী (ব্যাকৰণ), সত্য ভাৰতী, পৃঃ ৪৯

৬। চৌঠি ওৰাওঁ ঃ কুঁড়ুখ ব্যাকৰণ আৰু নিৱন্ধ, পৃঃ ১৯

৭। গোলোকচন্দ্ৰ গোস্বামী ঃ অসমীয়া ব্যাকৰণৰ মৌলিক বিচাৰ, পৃঃ ৮২

৮। যোগেশ্বৰ ওৰাওঁ ঃ কুঁড়ুখ অসমীয়া অভিধান ও ব্যাকৰণ, পৃঃ ১২৫

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

১। ওৰাওঁ, যোগেশ্বৰ ঃ কুঁড়ুখ অসমীয়া অভিধান ও ব্যাকৰণ, ৰাজকিশোৰ ওৰাওঁ, বাণীপুৰ ডিব্ৰুগড়, অসম, প্ৰথম প্ৰকাশ, মাৰ্চ ২০১৯

২। গোস্বামী, উপেন্দ্ৰনাথ ঃ অসমীয়া ভাষাৰ ৰূপ কথা, মণিমাণিক প্ৰকাশ, পানবজাৰ, গুৱাহাটী, ২০০৪

৩। ---- ঃ অসমীয়া ভাষা আৰু উপভাষা, মণিমাণিক প্ৰকাশ, পানবজাৰ গুৱাহাটী, ১৯৬

৪। ----- ঃ ভাষা আৰু সংস্কৃতি, মণিমাণিক প্ৰকাশ, পানবজাৰ, গুৱাহাটী, ১৯৮৯

৫। গোস্বামী, গোলোকচন্দ্ৰ ঃ অসমীয়া ব্যাকৰণৰ মৌলিক বিচাৰ, শান্তি ৰঞ্জন দে, পানবজাৰ, গুৱাহাটী, এপ্ৰিল-২০০৪

৬। চৌঠি ওৰাওঁ ঃ কুঁড়ুখ ব্যাকৰণ আৰু নিৱন্ধ, ভগীৰথী আদিবাসী বালিকা মহাবিদ্যালয় ছাত্ৰাবাস, ৰাঁচী, ২০০৮

৭। দত্তবৰুৱা, ফণীন্দ্ৰ নাৰায়ণ ঃ আধুনিক ভাষা বিজ্ঞান পৰিচয়, শ্ৰীমাখন হাজৰিকা, বনলতা, ডিব্ৰুগড় -১, জুলাই ২০০৬

৮। দাস, বিশ্বজিৎ(সম্পা) ঃ অসমৰ আৰু অসমৰ ভাষা, গণেশ চন্দ্ৰ নাথ, গুৱাহাটী, ২০১০ বসুমতাৰী, ফুকন চন্দ্ৰ

৯। শইকীয়া বৰা, লীলাৱতী ঃ অসমীয়া ভাষাৰ ৰূপতত্ত্ব, অনন্ত হাজৰিকা, বনলতা, পানবজাৰ, গুৱাহাটী, অক্টোবৰ ২০১১

১০। বেক্স, পি, চি ঃ কুঁড়ুখ বিল্লী (ব্যাকৰণ), সত্য ভাৰতী, ৰাঁছী, ৩য় সংস্কৰণ, ২০০৮

১১। লকৰা, ব্যাতোৰ ঃ কুঁড়ুখ ব্যাকৰণ আৰু নিৱন্ধ, কেথলিকপ্ৰেছ, ৰাঁছী, ১মপ্ৰকাশ, ২০০৯

১২। ভগত, মহেশ, কেৰকেট্ৰা, পুষ্পা ঃ কুঁড়ুখ ভাষা ব্যাকৰণ আৰু সাহিত্য, শিৰাংগন প্ৰকাশন, ৰাঁছী, ৩য়সংস্কৰণ, ২০২০

১৩। Hahn,Ferdinand . : *Kurukh grammar,* Bengal Secretariat Press. Retrieved 26 August 2012.

১৪। Orange,Narayan : *Origin and development of Tolong Siki,* Nava Jarkhand Prakashan, Jarkhand,2003

১৫। Pereira. Francis : The Faith Tradition Of The Kunrukhar (Uraons), Drlhi, ISPCK, 2007

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

ছপা আলোচনীৰ পৰা বৈদ্যুতিন আলোচনীলৈ অসমীয়া গল্প

পৰিণীতা বৰা

সাৰাংশ ঃ

ভাষা-সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ প্ৰচাৰ-প্ৰসাৰ তথা সমৃদ্ধি সাধনত আলোচনীৰ ভূমিকা অনন্য। এইসমূহে বৈচিত্ৰময় জগতৰ বহুমুখী ভাবধাৰা, সাহিত্যৰ ৰচনাশৈলী আৰু সাহিত্যিক ৰূপৰ লগত পাঠকৰ পৰিচয় ঘটাই দিয়াৰ লগতে সাহিত্যত নতুন ৰীতি নাইবা বাদ প্ৰৱৰ্তনত অৰিহণা যোগায়। ছপা আৰু বৈদ্যুতিন যিধৰণৰেই আলোচনী নহওঁক কিয় সকলোতে লেখক অনুযায়ী সাহিত্যৰ লেখনশৈলীৰ বিবিধতা আহি পৰে। এনে লেখনশৈলীৰ সৈতে পাঠকৰ পৰিচয় ঘটোৱাত আলোচনীয়ে সহায় কৰে। অসমীয়া আলোচনীৰ ইতিহাস ছপা মাধ্যমতে আৰম্ভ হয় যদিও সম্প্ৰতি নব্য মাধ্যমতো আলোচনীৰ প্ৰকাশ আৰু প্ৰসাৰ হ'বলৈ লয়। বৈদ্যুতিনভাৱে প্ৰকাশিত আৰু প্ৰসাৰিত এনে আলোচনীসমূহকে বৈদ্যুতিন আলোচনী বুলি কোৱা হয়। এনে আলোচনীত কবিতা, লিমাৰিক, কথা-কবিতা, গল্প, উপন্যাস, ব্যঙ্গ ৰচনা, ৰম্য-ৰচনা, পত্ৰলেখা, সাধুকথা, বিজ্ঞান, ৰাজনীতি, অৰ্থনীতি, বাণিজ্য, ভ্ৰমণ, সমালোচনা, নাটক, অনুবাদ, সাক্ষাৎকাৰ ইত্যাদি বিষয়ৰ সাহিত্যই প্ৰাধান্য পায়। অৱশ্যে উক্ত অধ্যয়নত বৈদ্যুতিন আলোচনীত প্ৰকাশিত গল্পৰ বিষয়বস্তু, ধৰণ, বৈশিষ্ট্য সম্পৰ্কীয় আলোচনাই প্ৰাধান্য লাভ কৰিছে।

বীজ শব্দ ঃ

বৈদ্যুতিন আলোচনী, নব্য মাধ্যম, ইউনিক'ড।

০.০ অৱতৰণিকা

জোনাকী আলোচনীৰ চতুৰ্থ বছৰ চতুৰ্থ সংখ্যাত প্ৰকাশিত লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ 'সেউতী' হৈছে প্ৰথম অসমীয়া চুটিগল্প। বেজবৰুৱাৰ সময়ৰেপৰা ছপা মাধ্যমৰ যোগেদি অসমীয়া গল্প প্ৰকাশৰ যি ধাৰাবাহিকতা সেয়া আজিও বৰ্তি আছে। কিন্তু সময় পৰিৱৰ্তনৰ লগে লগে সাহিত্যৰ প্ৰকাশ মাধ্যমৰ অনুক্ৰমে পৰিৱৰ্তন আৰু ৰূপান্তৰ হৈছে। একবিংশ শতিকাৰপৰা ছপা মাধ্যমৰ সমান্তৰালভাৱে নব্য মাধ্যমতো অসমীয়া গল্পৰ প্ৰকাশ তথা প্ৰচাৰ-প্ৰসাৰ হ'বলৈ লয়। সেয়ে প্ৰকাশৰ মাধ্যম অনুসৰি অসমীয়া গল্পক মূলতঃ দুটা ভাগত ভাগ কৰিব পাৰি ঃ

(ক) পৰম্পৰাগত মাধ্যমৰ গল্প ঃ এই শ্ৰেণীৰ গল্পক প্ৰধানকৈ দুটা ভাগত ভগাব পাৰি -

১। ছপা মাধ্যম, বিশেষকৈ ছপা আলোচনী, গ্ৰন্থ, সংবাদপত্ৰ নাইবা বাতৰিকাকতৰ গল্প।

২। বৈদ্যুতিন মাধ্যম নাইবা ৰেডিঅ', দূৰদৰ্শনত সম্প্ৰচাৰিত গল্প।

(খ) নব্য মাধ্যমৰ গল্প ঃ বৈদ্যুতিন আলোচনী, ব্লগ, ৱেবছাইট, বৈদ্যুতিন বাতৰিকাকত, সামাজিক নেটৱৰ্কিং ছাইট আৰু এপ ইত্যাদিৰ গল্পৰাজি এই শ্ৰেণীৰ অন্তৰ্গত। আনহাতে

বিভাগীয় মুৰব্বী, অসমীয়া বিভাগ
পণ্ডিত দীনদয়াল উপাধ্যায় আদৰ্শ মহাবিদ্যালয়, বিহালী
বিশ্বনাথ, অসম-৭৮৪১৮৪
৭০৮৬৩৫৬৭৫৯
paribora018@gmail.com

প্ৰকাশৰ ৰূপ অনুসৰি অসমীয়া গল্পক দুটা ভাগত বিভক্ত কৰিব পাৰি --- ছপা গল্প আৰু বৈদ্যুতিন গল্প। নব্য মাধ্যমৰ অন্যতম গুৰুত্বপূৰ্ণ উপাদান হৈছে বৈদ্যুতিন আলোচনীসমূহ। কবিতা, উপন্যাস, নাটক আদি সৃষ্টিশীল সাহিত্যৰ দৰে অসমীয়া গল্প সাহিত্যৰ প্ৰকাশ তথা বিস্তাৰ সাধনত এই আলোচনীসমূহৰ অৱদান অনস্বীকাৰ্য। এনে আলোচনীয়ে একশ্ৰেণীৰ নতুন অসমীয়া গল্পকাৰ তথা পাঠকৰ গঢ় দিছে। সমান্তৰালভাৱে পুৰণি তথা নতুন গল্পকাৰসকলৰ মৌলিক আৰু অনূদিত ছপা গল্পৰাজিৰ বৈদ্যুতিনভাৱে পুনৰ প্ৰকাশত গুৰুত্ব দিছে। বহুকেইখন আলোচনীত পাঠকৰ অধিক উপভোগ্য হোৱাকৈ শ্ৰব্য আৰু দৃশ্য-শ্ৰব্য আকাৰত গল্প প্ৰকাশৰ সুবিধা আছে।

০.১ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব ঃ

ভৌগোলিক দৃষ্টিকোণৰপৰা লক্ষ্য কৰিলে ছপা আলোচনীৰ সীমিত পাঠকতকৈ বৈদ্যুতিন আলোচনীৰ গল্পই এচাম পাঠকক বিস্তৃত পৰিসৰত সামৰি লয়। বিশ্বৰ ভিন্ন প্ৰান্তৰ এইচাম পাঠকে এনে আলোচনীৰ ইউনিক'ডভিত্তিক গল্পৰাজি প্ৰকাশৰ লগে লগে, একে সময়তে পঢ়িব পাৰে। পৰম্পৰাগত আলোচনীতকৈ এনে আলোচনীত গল্পৰ প্ৰকাশ তথা প্ৰচাৰ কাৰ্যত কেতবোৰ সুবিধা আছে। আলোচনীসমূহৰ ব্যাপ্তি, লেখা প্ৰকাশত লেখকৰ বাধাহীনতা, প্ৰকাশৰ লগে লগে পাঠকৰপৰা মতামত, উপদেশ তথা সমালোচনা লাভৰ সুবিধা, কমখৰচী, সাহিত্যক পাঠকৰ বাবে সহজে ব্যৱহাৰৰ উপযোগী, ত্বৰিৎ, দীৰ্ঘদিনীয়া আৰু সুলভ কৰি তোলা আদিকে ধৰিব পাৰি। এনে আলোচনীৰ গল্প পঢ়ি মনলৈ অহা যিকোনো ধৰণৰ ভাব-চিন্তাক পাঠকসমাজে মন্তব্য আকাৰে তাৎক্ষণিকতাৰে প্ৰেৰণ কৰিব পাৰে। এনেবোৰ সা-সুবিধাৰ বাবেই নৱ প্ৰজন্মৰ গল্পকাৰসকলৰ বৈদ্যুতিন আলোচনীত গল্প-চৰ্চাৰ প্ৰতি আকৰ্ষণ বৃদ্ধি পাইছে। সেয়ে উক্ত বিষয় সম্পৰ্কত আলোচনাৰ যথেষ্ট গুৰুত্ব আৰু প্ৰাসংগিকতা আছে।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

(ক) ছপা আলোচনীৰপৰা বৈদ্যুতিন আলোচনীলৈ অসমীয়া গল্পৰ বিকাশ সম্পৰ্কে সম্যক ধাৰণা তুলি ধৰা।

(খ) অসমীয়া বৈদ্যুতিন আলোচনীৰ গল্পৰ বিষয়বস্তু সম্পৰ্কে সম্যক আলোচনা।

(গ) অসমীয়া বৈদ্যুতিন আলোচনীত গল্প প্ৰকাশৰ ধৰণ তথা বৈশিষ্ট্য সম্পৰ্কে আলোচনা।

০.৩ অধ্যয়নৰ উৎস আৰু পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে পুথিগত তথ্যৰ লগতে ইণ্টাৰনেটৰ তথ্যকো সমানে গুৰুত্ব দিয়া হৈছে। পত্ৰখনত বিশ্লেষণাত্মক, বৰ্ণনাত্মক আৰু ঠায়ে ঠায়ে তুলনামূলক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.০ বিষয় বিশ্লেষণ ঃ

*জোনাকী*ৰ পাছত অসমীয়া গল্পই ক্ৰমবিকাশৰ মাজেদি আগবাঢ়ি গৈ কলিকতাৰপৰা প্ৰকাশিত *আৱাহন*ত পৈণত অৱস্থা লাভ কৰে। *আৱাহন*ত বহুতো নতুন গল্পকাৰৰ সৃষ্টি হয়। চেকভ, মোপাছাঁ, হেনৰী প্ৰভৃতি গল্পকাৰৰপৰা অনুপ্ৰেৰণা লৈ এইচাম গল্পকাৰে গল্পত নতুন বিষয় আৰু কৌশলৰ অৱতাৰণা কৰে। *জোনাকী*ত আত্মপ্ৰকাশ কৰি *আৱাহন*ৰ সময়ত বিস্তৃতি লাভ কৰা অসমীয়া গল্প স্বৰাজোত্তৰ কালত অধিক সমৃদ্ধিশালী হয়। এই সময়তে মহাযুদ্ধৰ আগৰ গল্পকাৰসকলৰ লগত যোগ দিলেহি *ৰামধেনু*ত আত্মপ্ৰকাশ কৰা এচাম নতুন গল্পকাৰে। *ৰামধেনু*ৰ নতুন গল্পকাৰসকলৰ গল্পত চুটিগল্পৰ ভাৱবস্তু আৰু কলা-কৌশলৰ পৰিসৰ যথেষ্ট বহল হৈ পৰে। স্বাধীনতাৰ পাছতে অৰ্থনৈতিক সংকটৰ দৰে নতুন নতুন সমস্যাৰ উদ্ভৱ হয়। এই সমস্যাসমূহে জীৱন আৰু সমাজ সম্পৰ্কীয় মূল্যবোধৰ ৰূপান্তৰণত বৰঙণি যোগায়। লগতে সমাজবাদী, মনস্তাত্ত্বিক, অৱস্থিতিবাদী ইত্যাদি পশ্চিমীয়া মতাদৰ্শৰ প্ৰভাৱে অসমীয়া গল্পক বৈচিত্ৰ্যময় কৰি তোলে। যুগৰ জটিলতাই সৃষ্টি কৰা কঠোৰ বাস্তৱতাৰ প্ৰতি লেখক সমাজৰ সজাগতা বৃদ্ধি পায়। এনে সময়তে সমাজৰ দুৰ্বল শ্ৰেণীটোৰ প্ৰতি গল্পকাৰসকলে উদাৰ তথা মানৱতাবাদী দৃষ্টিভংগী গ্ৰহণ কৰে।

বিংশ শতিকাৰ পঞ্চাশ আৰু ষাঠিৰ দশকত অসমীয়া গল্পৰ ভাৱবস্তু আৰু ৰূপবস্তুৰ পৰিৱৰ্তন-পৰিৱৰ্ধনত সহায় কৰা গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত স্নেহ দেৱী, চৈয়দ আব্দুল মালিক, বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য, মহিম বৰা, সৌৰভ কুমাৰ চলিহা, হোমেন বৰগোহাঞি, ভৱেন্দ্ৰনাথ শইকীয়া, লক্ষ্মীনন্দন বৰা ইত্যাদি উল্লেখযোগ্য। ষাঠি-সত্তৰ দশকৰ ভিতৰত আৰু তাৰ পৰৱৰ্তী কালত গল্পকাৰৰূপে প্ৰতিষ্ঠা লাভ কৰা শীলভদ্ৰ, অতুলানন্দ গোস্বামী, নগেন শইকীয়া, অৰুণ গোস্বামী, অপূৰ্ব শৰ্মা, প্ৰণৱজ্যোতি ডেকা, দেৱব্ৰত দাস, মনোজ কুমাৰ গোস্বামী আদিৰো অসমীয়া গল্প-সাহিত্যলৈ যথেষ্ট অৱদান আছে। শীলভদ্ৰই জীৱনৰ গভীৰ আৰু বিস্তৃত অভিজ্ঞতাক কম পৰিসৰতে যথোপযুক্ত শব্দৰ সহায়ত পাঠকৰ আগত দাঙি

ধৰিছে। হৰেকৃষ্ণ ডেকা, ভূপেন্দ্ৰ নাৰায়ণ ভট্টাচাৰ্য, কুল শইকীয়া, বিপুল খাটনিয়াৰ, হেমন্ত বৰ্মনৰ দৰে গল্পকাৰৰ লগতে সাম্প্ৰতিক কালছোৱাত মহিলা গল্পকাৰৰ সংখ্যাও বহু পৰিমাণে বৃদ্ধি পায়। মামণি ৰয়চম গোস্বামীয়ে বাস্তৱ পৰিস্থিতিক নিৰ্ভেজাল ৰূপত সংকোচবিহীনভাৱে পাঠকৰ আগত তুলি ধৰে। অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাই সমাজৰ শোষণ, নিপীড়ন, কপটতাৰ স্বৰূপ; অণিমা ভৰালী, প্ৰবীণা শইকীয়া, মিনতি চৌধুৰীৰ সৰহভাগ গল্পৰ মাজেদি নাৰীমনৰ অনুভূতি আৰু দ্বন্দ্ব প্ৰকাশ পাইছে।

ছপা মাধ্যমৰ উপৰি ৰেডিঅ', দূৰদৰ্শনৰ উদ্ভাৱনে অসমীয়া গল্পক একপ্ৰকাৰ নতুন ৰূপ দিয়ে। এই মাধ্যমসমূহত সময়ে সময়ে গল্প পাঠৰ কেতবোৰ অনুষ্ঠান সম্প্ৰচাৰিত হ'বলৈ লয়। শ্ৰোতা-দৰ্শকে শ্ৰব্য তথা দৃশ্য-শ্ৰব্য ৰূপত গল্প পাঠ শুনিব পৰা হ'ল। ইয়াৰ পিছতে তথ্য-প্ৰযুক্তিৰ অন্যতম উদ্ভাৱন ইণ্টাৰনেট আহি পৰিল। এনে সময়তে জনসাধাৰণে ইণ্টাৰনেটক নব্য মাধ্যমৰূপে গ্ৰহণ কৰিবলৈ ল'লে। সম্প্ৰতি এই মাধ্যমৰ যোগেদি অসমীয়া গল্পই সাৰ্বজনীনভাৱে প্ৰচাৰ-প্ৰসাৰ আৰু সংৰক্ষণৰ দিশত অন্য মাত্ৰা লাভ কৰিছে। নব্য মাধ্যম হ'ল ক্ষিপ্ৰ যোগাযোগ মাধ্যম। বাতৰিকাকত, দূৰদৰ্শন, ৰেডিঅ' আদি পৰম্পৰাগত গণমাধ্যমৰ লগত জড়িত নথকা ব্যক্তিয়েও নব্য মাধ্যমৰদ্বাৰা বিশ্বৰ বিবিধ বিষয়ৰ তথ্য আহৰণ কৰিব পাৰে। নব্য মাধ্যমত কেতবোৰ উন্নত কাৰিকৰী কৌশল নিহিত আছে। পৰম্পৰাগত গণমাধ্যমত বাৰ্তা প্ৰেৰণ কৰিব পাৰি যদিও প্ৰেৰকৰ কাষলৈ গ্ৰাহকৰ তাৎক্ষণিক প্ৰতিক্ৰিয়া (পোনপটীয়াকৈ সম্প্ৰচাৰিত অনুষ্ঠানক বাদ দি) প্ৰেৰণৰ ব্যৱস্থা নাথাকে। কিন্তু নব্য মাধ্যমত প্ৰেৰকৰদ্বাৰা প্ৰেৰিত বাৰ্তাৰ সঁহাৰি তাৎক্ষণিকতাৰে প্ৰতিপ্ৰেৰণৰ সুবিধা আছে। সেয়ে নৱ-প্ৰজন্ম আৰু শিক্ষিত আগ্ৰহী ব্যক্তিসকলৰ মাজত এই মাধ্যমটি অতিকৈ জনপ্ৰিয়।

বৈদ্যুতিন আলোচনীসমূহে ন-পুৰণি অসমীয়া গল্পকাৰসকলক ছপা মাধ্যমৰ লগতে নব্য মাধ্যমতো গল্প-চৰ্চাৰ এখন মুকলি ক্ষেত্ৰ প্ৰদান কৰিছে। ২০১১ চনত *মাহেকীয়া গল্প* নামৰ প্ৰথমখন গল্পভিত্তিক অসমীয়া বৈদ্যুতিন আলোচনী প্ৰকাশ পায়। *ৰূপান্তৰ* হৈছে এনে ধাৰাৰ আলোচনীৰ অন্যতম নিদৰ্শন। ভিন্নধৰ্মী বৈদ্যুতিন আলোচনীৰ নিয়মিত সাহিত্য শিতানসমূহৰ মাজতো গল্পই গুৰুত্বপূৰ্ণ স্থান পাইছে। আলোচনীভেদে গল্প শিতানসমূহৰ ভিন ভিন নাম আছে। তাৰে ভিতৰত "গল্প" (*সাহিত্য ডট অৰ্গ, নীলা চৰাই, প্ৰজন্ম, অঙ্গন, অন্যযুগ, জোনাক, বেটুপাত*), "চুটিগল্প" (*জ্ঞানম, বেটুপাত*), "এক-মিনিটৰ গল্প" (*প্ৰজন্ম, বেটুপাত*), "কথা-শিল্প" (*সন্ধান*), "Short Stories" (*এনাজৰী*), "অণুগল্প" (*মণিকূট, জ্ঞানম, দকচিৰি, বেটুপাত*), "গল্পগুচ্ছ" (*মণিকূট, ঐশানু*), "গল্প-কবিতা" (*মুক্ত চিন্তা*), "গল্প-শিতান" (*সাঁচিপাত*), "অনু-গল্প শিতান" (*সাঁচিপাত*) ইত্যাদি লেখতল'বলগীয়া গল্পৰ শিতান। গতানুগতিকাৰ বিপৰীতে ধাৰাবাহিকভাৱে গল্পৰ প্ৰকাশ এনে আলোচনীৰ অতিকৈ গুৰুত্বপূৰ্ণ বিশেষত্ব। উদাহৰণস্বৰূপে, ৰাতুল আখতাৰৰ 'তেজৰ ৰং ৰঙা' (*বেটুপাত*), বিজয় শইকীয়াৰ 'চিতা' (*বেটুপাত*) ইত্যাদি।

১.১ অসমীয়া বৈদ্যুতিন আলোচনীৰ গল্পৰ বিষয়বস্তু ঃ

সৰ্বপ্ৰথম *এনাজৰী*ৰ যোগেদিয়েই অসমীয়া গল্পই বৈদ্যুতিন আলোচনীত প্ৰকাশৰ মুখ দেখে। ইউনিক'ডভিত্তিক আলোচনীখনৰ গল্পৰাজি "Literature" শীৰ্ষক মুখ্য শিতানৰ 'Short Stories' নামৰ উপ-শিতানটোত প্ৰকাশ পাইছে। ইয়াত ওঠৰ গৰাকীকৈ প্ৰতিষ্ঠিত গল্পকাৰৰ বাইশটিকৈ ছপা অসমীয়া গল্প বৈদ্যুতিনভাৱে উপলব্ধ। তাৰে ভিতৰত অতুলানন্দ গোস্বামীৰ 'অপত্য', অপু ভৰদ্বাজৰ 'চিকাডা', ৰিজু হাজৰিকাৰ 'লাজ', লক্ষ্মীনন্দনবৰাৰ 'বিছুৰ উপহাৰ', সুৰঞ্জনা শৰ্মাৰ 'বিসৰ্গ বলয়', হেমন্ত বৰ্মনৰ 'উপত্যকাৰ উপমা', অপূৰ্ব শৰ্মাৰ 'হলধৰ', গীতালি বৰাৰ 'মৌন মহানগৰ', সৃষ্টি শ্ৰেয়মৰ 'অনাহূত' ইত্যাদি মৌলিক গল্প প্ৰকাশ পাইছে। একেটা উপ-শিতানতে ইংৰাজীলৈ অনূদিত নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ 'Spring in Hell', 'The Second Death', 'Tantalus', অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ 'The daughter, the wife and the mother', কুল শইকীয়াৰ 'Ningni the Ghost', ৰূপম সিন্ধু কলিতাৰ 'Lessons from a rain country', ভাস্কৰ ঠাকুৰীয়াৰ 'The journey', মনালিছা শইকীয়াৰ 'Roots Bacon' এ ঠাই পাইছে।

স্বাধীনোত্তৰ কালত অসমৰ সমাজ, ৰাজনীতি, অৰ্থনীতি ইত্যাদিত বিবিধ পৰিৱৰ্তন সাধিত হয়। এই সময়ছোৱাত জমিদাৰী প্ৰথাৰ প্ৰভাৱ ক্ৰমশঃ হ্ৰাস হয় যদিও পুঁজিবাদী ব্যৱস্থাই ভালদৰে গা কৰি উঠিব পৰা নাছিল। ফলত সামন্তবাদ আৰু পুঁজিবাদী সমাজ-ব্যৱস্থা এক মীমাংসাত উপনীত হয়। সেয়ে এই সময়ৰ অসমীয়া গল্পসমূহত পুঁজিবাদৰ বিপক্ষে প্ৰতিবাদৰ সুৰ তীব্ৰ নহ'লেও ক্ষয়ংকৰী সমাজ-ব্যৱস্থাৰ বিৰুদ্ধে প্ৰতিবাদৰ ক্ষীণ সুৰ অনুৰণিত হয়। বিশেষকৈ মাটিৰ মালিক, জমিদাৰ, মহাজন প্ৰভৃতি শোষক শ্ৰেণীৰ বিৰোধিতা কৰি

অসমীয়া সাহিত্যত বহুকেইজন গল্পকাৰে গল্প লিখে। এইক্ষেত্ৰত *এনাজৰীত* প্ৰকাশিত অপূৰ্ব শৰ্মাৰ 'হলধৰ' (পূৰ্বে ছপাৰূপত প্ৰকাশ) অন্যতম। গল্পটিত মহাজনৰদ্বাৰা শোষিত জনসাধাৰণে এনে শোষণৰ বিৰুদ্ধে কৰা সৰৱ বিদ্ৰোহৰ ছবি তথা প্ৰতিবাদৰ সুৰ প্ৰতিধ্বনিত হয়। বিভিন্ন ছল-চাতুৰিৰে সাধাৰণ মানুহৰ মাটি-বাৰী আত্মসাৎ কৰা আৰু গাঁওবাসীক নানা অত্যাচাৰ-অবিচাৰ-উৎপীড়ন চলাই যোৱা মহাজনৰ বিৰুদ্ধে শোষিত শ্ৰেণীৰ অসহায় প্ৰতিনিধি সোমেশ্বৰ জাগি উঠিছে। মহাজনৰ শোষণৰ বাবে সৰ্বস্ব হেৰুৱা সোমেশ্বৰে বলোৰামৰ নাঙল চোৰ কৰি আনি মহাজনৰ চাঙৰ তলতে লুকাই ৰাখিছে। ঘটনাটোৰ সম্ভেদ পাই বলোৰামৰ যি ক্ৰোধ সেয়াও গল্পটিত বৰ্ণিত হৈছে। আনকি ৰাইজে 'নাঙল চোৰক ধৰ' বুলি মহাজনকে চোৰ সজাই উলিওৱা সমদলত মহাজনৰ সৰু পুতেকেও ভাগ লৈছে। নাঙল চোৰক ধৰিবৰ বাবে সোমেশ্বৰৰ পিছে পিছে যোৱা শিশুসকলৰ মাজত নিজৰ নুমলীয়া সন্তানক দেখি মহাজনৰ ভৰিৰ তলৰ মাটি কঁপি উঠিছে। প্ৰতিশোধৰ মনোভাৱেৰে এনে কাৰ্য কৰাৰ শেষত সোমেশ্বৰ অনুশোচনাতো দগ্ধ হৈছে। *এনাজৰীত* প্ৰকাশিত অপু ভৰদ্বাজৰ 'চিকাডা' (পূৰ্বৰূপ-ছপা)ত সম্পূৰ্ণ অগতানুগতিক বিষয়বস্তু আৰু প্ৰকাশভংগীৰ মাজত গল্পকাৰৰ প্ৰথাবিৰুদ্ধ জীৱনাদৰ্শৰ উমান পোৱা যায়।

পূৰ্বে *প্ৰান্তিকত* 'নিলাজ' (৩১ ডিচেম্বৰ, ২০১৭) শিৰোনামেৰে প্ৰকাশিত সঞ্জীৱ পল ডেকাৰ 'লাজ' (ৰচনাকাল ২০০৫) *এনাজৰী*ৰ এটি উল্লেখনীয় গল্প। এগৰাকী স্বামীহীনা মহিলাৰ জীৱন-নিৰ্বাহৰ সকৰুণ দৃশ্য গল্পটোৰ কেন্দ্ৰীয় বিষয়। গল্পৰ কাহিনীভাগ আগবাঢ়িছে চৰকাৰী বেনাৰ এখনকলৈ। এই বেনাৰখনতে লিপিবদ্ধ আছে শাসকীয় চৰকাৰৰ চতুৰ্থ বছৰ সম্পূৰ্ণ হোৱাৰ উপলক্ষ্যে দেশত দৰিদ্ৰতা, নিৰক্ষৰতা দূৰীকৰণ সকলোতে অভূতপূৰ্ব সফলতাৰ কথা। কিন্তু সাম্যবাদী চৰকাৰৰ সফলতাৰ প্ৰতীকস্বৰূপ বেনাৰখনকে এগৰাকী বিধবাই ঘৰলৈ নি পেটিকোট চিলাই পিন্ধিলে। স্বামীয়ে বিয়াৰ লগতে দিয়া পেটিকোটটো একেবাৰে উৰলি যোৱাত উপায়ান্তৰ হৈ বিধবাগৰাকীয়ে এনে কাম কৰে। কিন্তু বেনাৰখনক নিৰ্দিষ্ট স্থানত নেদেখি চৰকাৰৰ ধাৰণা হ'ল এয়া বিৰোধী দলৰ কৰ্ম। নিৰক্ষৰ চুবুৰীত গোপনে হয়তো ৰাজনীতিৰ খেল চলিব পাৰে। বিৰোধী দলেই চক্ৰান্ত কৰি দিন-হাজিৰাৰে ঘৰখন চলাই থকা নিৰক্ষৰ জনসাধাৰণক বিশেষ কিবা টোপ দি এই কাম কৰোৱাইছে। সেয়ে চৰকাৰৰ কাঢ়া নিৰ্দেশ মানি পুলিচে অতিশীঘ্ৰে অপৰাধীক গ্ৰেপ্তাৰৰ বাবে তদন্ত আৰম্ভ কৰিলে। অৱশেষত পুলিচৰ বিচাৰ-খোচাৰত জলজট পটপটকৈ ধৰা দিছে সাম্যবাদী চৰকাৰৰ সফলতাৰ জলন্ত প্ৰতিচ্ছবি। গছত আঁৰি থোৱা চৰকাৰী বেনাৰখনত বৰ বৰ হৰফেৰে লিখা 'দৰিদ্ৰ দূৰীকৰণ' বোলা কথাষাৰক বিধবাগৰাকীয়ে অজ্ঞাতেই ভেঙুচালি কৰিলে। তাই লজ্জা নিবাৰণৰ নিমিত্তেহে বেনাৰখন চোৰ কৰি নি পেটিকোট চিলাই পিন্ধিব লগাত পৰিল। বিধবাগৰাকীয়ে সংঘটিত কৰা এনে কাৰ্যত কাকতি পুলিচৰ বুকুত এক প্ৰচণ্ড বিষ অনুভৱ হ'ল। কাকতিয়ে মহিলাগৰাকীক গ্ৰেপ্তাৰ নকৰাৰ প্ৰতিশ্ৰুতি দি পেটিকোট কিনিবলৈ বুলি পাঁচশ টকা আগবঢ়াই দি মানৱীয়তাৰ পৰিচয় দাঙি ধৰিলে। কৰ্তব্য পালনৰ স্বাৰ্থতেই পেটিকোটৰ সিঁয়নি কাটি খণ্ডিত বেনাৰখন লৈ কাকতি জীপত বহিলগৈ। গল্পকাৰে গল্পটিত অতি সাৱলীলভাৱে দৰিদ্ৰ-নিপীড়িতসকলৰ প্ৰতি অনুকম্পা স্পষ্টকৈ ফুটাই তুলিছে। লগতে শাসকীয় পক্ষৰ শাসনকালৰ বিয়াগোম সফলতাক বিধৱাগৰাকীৰ প্ৰতিচ্ছবিৰে ব্যঙ্গভাৱে উপস্থাপন কৰিছে।

আধুনিক অসমীয়া গল্প সাহিত্যত আংগিকৰ ক্ষেত্ৰত মৌলিক প্ৰতিভাৰ পৰিচয় দিয়া গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত দেৱব্ৰত দাস অন্যতম। তেওঁৰ 'অৰ্পিতাৰ এৰাতি' নামৰ মনোজগতৰ ইচ্ছাপূৰণমূলক কাল্পনিক গল্পটি পিছলৈ *এনাজৰীত* বৈদ্যুতিনভাৱে প্ৰকাশ পায়। এই গল্পটিক গল্পকাৰে প্ৰথম পুৰুষৰ জৰিয়তে নায়কৰ মুখেৰে বৰ্ণাইছে। নিঃসহায়, নিৰুপায়, অভাৱী বিশ্বমানৱৰ বাবে কিঞ্চিত কিবা কৰি আত্মসন্তুষ্টি লাভৰ নিমিত্তে গল্পটি নিৰ্মাণ কৰিছে। নায়কে প্ৰথম দৃষ্টিতে অৰ্পিতাৰ মাজেৰে কৌতূহল আৰু আগ্ৰহ জগাই তোলা এক ৰোমাঞ্চকৰ চৰিত্ৰ আৰু কাহিনীৰ সন্ধান পাইছে। ইয়াৰপৰাই গল্পকাৰজন নায়কৰ লগত একাকাৰ হৈ পৰিছে। গল্পকাৰে তেওঁৰ মনোজগতৰ কাল্পনিক কথাৰে নায়ক আৰু অৰ্পিতাক লৈ গল্পৰ কাহিনী সৃষ্টি কৰিছে। নায়কে অৰ্পিতাৰ ৰূপৰ বৰ্ণনাক অগ্ৰাহ্য কৰি তাইৰ বিশুদ্ধ দৈহিক ভংগীমা আৰু চকু-মুখৰ ভাৱৰ বৰ্ণনাত সৰ্বাধিক গুৰুত্ব দিছে। গল্পৰ নায়ক ঘটনাক্ৰমৰ লগত আকস্মিকভাৱে জড়িত হৈ পৰা কেৱলমাত্ৰ এজন অংশীদাৰহে। যান্ত্ৰিক ভদ্ৰতাৰ সীমাত আবদ্ধ নায়কে অপৰিচয়ৰ ব্যৱধানতে সন্তুষ্টি লভি মনোজগতত নায়িকাৰ বিষাদত আশ্ৰয়দাতা হোৱাৰ এটি সুন্দৰ বাসনা গল্পটিত প্ৰতিভাত হৈছে। নায়ক আৰু অৰ্পিতাৰ বাহিৰে নায়কৰ বন্ধু কিৰণ দেৱনাথ, ট্ৰেইনৰ টিকটৰ যোগান ধৰোতা নায়কৰ

চুবুৰিৰে এন.এফ.ৰেলৱেৰ টি.টি.ই. কৃষ্ণ, অৰ্পিতাৰ দেউতাক, ভাত দিবলৈ অহা খানচাম চৰিত্ৰৰ ভূমিকা গল্পটিত বিশেষ ধৰণে পোৱা নাযায়। অৰ্পিতা চৰিত্ৰই সমাজৰ দুখী, আৰ্থ মানৱতাৰ ইংগিত দিছে। কেৱল এক মুহূৰ্তৰ বাবে দুখৰ সাৰথি হোৱাৰ আশালৈয়ে অৰ্পিতাৰ দুখাত্মক পৰিস্থিতিৰ লগত নায়ক আকস্মিকভাৱে জড়িত হৈছে।

নীলা চৰাই নামৰ ইউনিক'ডভিত্তিক আলোচনীখনৰ "গদ্যশিল্প" শিতানৰ 'গল্প' শীৰ্ষক উপ-শিতানতো চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ 'এজনী নতুন ছোৱালী', মহিম বৰাৰ 'টোপ' (৬ জুলাই, ২০১৯), 'কাঠনিবাৰীৰ ঘাট' (৬ আগষ্ট, ২০১৬), ৰঞ্জু হাজৰিকাৰ 'শিৱৰ তৃতীয় নয়ন' (৫ আগষ্ট, ২০১৮), ধ্ৰুৱজ্যোতি শৰ্মাৰ 'জলছবি' (১২ এপ্ৰিল, ২০১৮), জয়শ্ৰী গোস্বামী মহন্তৰ 'তৰগ ৰস ৰস ইন্দু' (১৩ জুলাই, ২০২০), ইন্দ্ৰনীল গায়নৰ 'বিকল্প' (৯ ডিচেম্বৰ, ২০১৯), অনামিকা বৰুৱাৰ 'সন্ধিক্ষণ' (১৪ এপ্ৰিল, ২০১২)ৰ দৰে বহু ন-পুৰণি গল্পকাৰৰ গল্প প্ৰকাশ পাইছে। আলোচনীখনৰ অনূদিত গল্পৰাজি তথা গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত উৎপল ফুকনৰ 'অণ্ড' (২১ মাৰ্চ, ২০২০, মূল-ইং., Andy Weir), প্ৰতিভা গোস্বামীৰ 'তিনিটা অমূল্য ভোট' (মূল-ওড়িয়া, মনোজ দাসৰ 'তিনোটি মহাৰ্ঘ্য ভোট'), অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতাৰ 'চিঠিখন' (১৪ এপ্ৰিল, ২০১২, মূল- টেমচুলা আওৰ গল্প 'The Letter') ইত্যাদি লেখতল'বলগীয়া। প্ৰতিটো গল্পৰ লিখিত পাঠৰ লগত ছবিৰ সংযোজন *নীলা চৰাই*ৰ অন্যতম বিশেষত্ব। ইয়াৰ "ই-বুক" শিতানত সংৰক্ষিত *নীলা চৰাইৰ গল্প ১* গ্ৰন্থখন পি.ডি.এফ. আকাৰে ডাউনল'ড কৰিব পাৰি। এই সংকলনৰ গল্প আৰু গল্পকাৰসকল হ'ল ইমৰান হুছেইনৰ 'বাঁক', কুসুম বৰাৰ 'অনুৰাগ', ধ্ৰুৱজ্যোতি শৰ্মাৰ 'আপোচ', ভূপেন শৰ্মাৰ 'বিচ্ছিন্নতা', নীল কোঁৱৰৰ 'পোষ্ট মডাৰ্ন ঃ এটা গল্প অথবা অগল্প লিখন', ৰিপুঞ্জিত হাজৰিকাৰ 'যাত্ৰা', তুলিকা নিৰ্মলীয়াৰ 'প্ৰয়াণ', অমিয়া বৰগোঁহাইৰ 'চকু', বনপংখী গোস্বামীৰ 'বাঘ', মালিনী গোস্বামীৰ 'দাপোণ', কবিতা বৰা কলিতাৰ 'বৃষভ', ধনজিৎ কলিতাৰ 'আবেলি', মনোৰঞ্জন মজুমদাৰৰ 'আধালিখা গল্পটো' ইত্যাদি।

*নীলা চৰাই*ৰ উল্লেখনীয় গল্প মহিম বৰাৰ 'টোপ' (পূৰ্বৰূপ- ছপা)ত গল্পকাৰে অসমীয়াৰ চহা জনজীৱনৰপৰা বিলুপ্তি পথলৈ গতি কৰা বৰশিক সুশৃংখলিতভাৱে সংৰক্ষণ কৰি থৈ গৈছে। বৰশিক লৈ গাঁৱৰ মানুহৰ আৱেগ, অনুভূতি, বৰশি টোপোৱাৰ অনাবিল আনন্দ আৰু তাৰ বাবে আৱশ্যকীয় কাৰ্যকলাপসমূহ গল্পকাৰে মনোৰমভাৱে উপস্থাপন কৰিছে। শিঙি পুখুৰীত শ'ল মাছ ধৰাৰ প্ৰসংগৰে গল্পটি আৰম্ভ হৈছে। সম্প্ৰতি নগৰকেন্দ্ৰিক সংস্কৃতিয়ে আৱৰি ধৰা গাঁৱসমূহত পূৰ্বৰেপৰা প্ৰচলন হৈ অহা অসমীয়া সংস্কৃতি যাতে কালৰ বুকুত হেৰাই নাযায় গল্পকাৰে তাক সযতনে ধৰি ৰখাৰ প্ৰয়াস কৰিছে। অসমীয়া গ্ৰাম্য ভাৱ-ভাষা, ঘৰুৱা ভাষাৰ প্ৰয়োগেৰে গল্পকাৰে টোপক অনন্য ৰূপ দিছে। টোপৰ পৰিৱেশ চিত্ৰণ অতি মনোমোহা আৰু ভাৱবস্তু বৈচিত্ৰ্যহীন। গল্পটিৰ আৰম্ভণি আৰু সামৰণিৰ বৰ্ণনাভঙ্গীও নাটকীয়। এই নাট্যগুণধৰ্মিতাৰ বাবেই গল্পটিয়ে পাঠকৰ মনত ৰসৰ সঞ্চাৰ কৰিছে।

সমাজত চলি অহা অন্ধবিশ্বাসৰ শিকলি চিঙাৰ বাবে তৰামাইৰ জোঁৱায়েকে লোৱা ধনাত্মক পদক্ষেপেই হৈছে পল্লৱী শইকীয়াৰ 'সেন্দুৰ' (*নীলা চৰাই*, ১৬ মে', ২০২০) গল্পৰ কেন্দ্ৰীয় বিষয়। তৰামায়ে নিজেও গাঁৱৰ নাৰীসমাজৰ দৰেই বিশ্বাস কৰে যে শুভ কৰ্মত কেৱল আয়তীৰহে স্থান। এনে কৰ্মত সদায় বিধবাসকল এলাগী হৈ পৰে। কিন্তু তৰামাইৰ জোঁৱায়েক এনে কাৰ্যৰ ঘোৰ বিৰোধী। পত্নী মামু অৰ্থাৎ তৰামাইৰ জীয়েকৰ পঞ্চামৃতৰ দৰে শুভ অনুষ্ঠানটি বিধবা মাকৰদ্বাৰা সম্পন্ন কৰিবলৈ জোঁৱায়েকে নিজেই পৰামৰ্শ দিছে। বিধবা মাকে অকলে দিন-ৰাতি একাকাৰ কৰি মামুক ডাঙৰ কৰিছে। তেনেস্থলত এনে এক শুভ দিনত বিধবা মাকক অন্ধবিশ্বাসৰ বলি হৈ সুখৰ সমভাগী হ'বলৈ দিব নোখোজাৰ কথাটোৱে জোঁৱায়েকক মনোকষ্ট দিছে। জোঁৱাৰেকে পঞ্চামৃত অনুষ্ঠানত বহি এই প্ৰসংগত বু-বু বা-বা কৰি থকা নাৰীসকলক উদ্দেশ্যি সেয়ে কৈ উঠিল যে এগৰাকী নাৰীৰ কপালৰ সেন্দুৰকণ মচি পেলাব লগা হোৱাটো নাৰীগৰাকীৰ দুৰ্ভাগ্যহে। এইক্ষেত্ৰত শিক্ষিত সমাজ সচেতন হোৱা উচিত। বিধবা বুলিয়েই এগৰাকী নাৰীক এলাগী কৰাৰ অধিকাৰ সমাজৰ যিদৰে নাই, একেদৰে তেওঁক এলাগী বুলি মানি লোৱাৰো কোনো যথোপযুক্ত যুক্তি নাই। গল্পকাৰৰ সমাজ-সচেতনতা তথা গভীৰ সামাজিক দায়বদ্ধতাৰে সংস্কাৰকামী মনোভাৱৰ পৰিচয় গল্পটিৰ প্ৰধান বিশেষত্ব। বিশেষকৈ গল্পটিত প্ৰস্ফুটিত অবৈজ্ঞানিক মানসিকতাই পাঠকৰ মনত গভীৰ ৰেখাপাত কৰিছে।

অসমীয়া গল্প-সাহিত্যৰ পৰিপুষ্টি সাধনত সৰ্বাধিক অৰিহণা থকা বৈদ্যুতিন আলোচনীসমূহৰ ভিতৰত *সাহিত্য ডট অৰ্গ* অন্যতম। আলোচনীখনৰ যোগেদি একশ্ৰেণী নতুন অসমীয়া গল্পকাৰে আত্মপ্ৰকাশ কৰে। এই চাম গল্পকাৰৰ

লগতে ছপা মাধ্যমৰ ন-পুৰণি গল্পকাৰৰো মৌলিক আৰু অনূদিত উভয় ধৰণৰ গল্প আলোচনীখনে সামৰি লৈছে। ৰীতা চৌধুৰী, পাৰ্থ বিজয় দত্ত, ঈশ্বৰ প্ৰসন্ন বৰা, পাৰ্থ প্ৰতীম গোস্বামী, নীৰুজা বৰা, দিগন্ত কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য, মিতালী বৰ্মন, উৎপলা কৌৰ, মনোৰঞ্জন মজুমদাৰ ইত্যাদিৰ গল্পই ইয়াৰ "গল্প" শিতানটি সমৃদ্ধ কৰিছে। আলোচনীখনৰ "অনুবাদ" শিতানৰ গল্পৰাজি হ'ল অঞ্জল বৰাৰ 'এটা ল'ৰা আৰু এজোপা আপেল গছ' (আগষ্ট ১৫, ২০১১, মূল-Akramulla Syed), পম্পা বসাকৰ 'বাঘৰ গাখীৰ' (মে' ১৬, ২০১৭, মূল-বুদ্ধদেৱ গুহ), অংকিনী বৰাৰ 'মহ' (মে' ১৫, ২০১৭, মূল-প্ৰেমেন্দ্ৰ মিত্ৰ), মিতালী নাৰায়ণিৰ 'পুত্ৰ প্ৰেম' (জুলাই ১৯, ২০১৯, মূল-মুন্সী প্ৰেমচন্দ্ৰৰ "পুত্ৰ-প্ৰেম") ইত্যাদি।

আধুনিক নগৰীয়া জীৱনৰ কৃত্ৰিম ভাব-ভাৱনা, মলিয়ন চিন্তাৰ প্ৰতিফলন অনামিকা বৰুৱাৰ 'দাপোণত কাৰ মুখ' (জুলাই ১৪, ২০১৪, *সাহিত্য ডট অৰ্গ*) নামৰ গল্পটিৰ মুখ্য বৈশিষ্ট্য। চহৰত ডাঙৰ-দীঘল হোৱা অভিজাত পৰিয়ালৰ গপ-ভেমেৰে পৰিপূৰ্ণ আধুনিক যুৱকজনেই গল্পটিৰ প্ৰধান চৰিত্ৰ। যাৰ জীৱনৰ অৰ্থই হ'ল খাৱ-পিয়' মৌজ কৰ'। যুৱকজনৰ দৃষ্টিত ছোৱালী বুলিলে কেৱল কামনাৰ সংগী। কিন্তু হঠাৎ আকাশী নামৰ ছোৱালীজনীয়ে অট্টহাস্যত তাচপাতৰ দৰে খহাই পেলাইছে যুৱকজনৰ সেই ফোঁপোলা আভিজাত্য আৰু নিকৃষ্ট মানসিকতাক। গল্পকাৰে সহজ-সৰল, পোনপটীয়া উপস্থাপনেৰে আধুনিক নগৰীয়া সভ্যতাৰ ছবি আৰু জীৱনবোধক গল্পটিত চিত্ৰায়িত কৰিছে। মনোৰঞ্জন মজুমদাৰৰ 'হঁহা নিষেধ' (আগষ্ট ১৫, ২০১১, *সাহিত্য ডট অৰ্গ*)ত অৰ্ধাংগিনীৰ মৃত্যুৰ পাছত কলিয়াবৰৰ ৰবিৰাম শেনচোৱা নামৰ পাঠশালাৰ পণ্ডিতজনৰ মুখৰ হাঁহি কিদৰে বিলীন হ'ল তাকে সাৱলীলভাৱে ব্যক্ত কৰিছে। আনফালে আকৌ পণ্ডিতৰ বোৱাৰীয়েক কেতেকী এজনী হাঁহিমুখীয়া ছোৱালী। পৰিস্থিতিৰ দাসত আজি তাই হাঁহিব নোৱাৰে। কিজানিবা তাই হঁহা শুনিলে শহুৰেকৰ খং উঠে। কেতেকীয়ে শহুৰেকৰ ভয়ত হঁহাৰপৰা বিৰত থকাৰ কথাৰে সমাজত ভদ্ৰতাৰ মুখা পিন্ধা এচাম লোকৰ কথাকে পৰোক্ষভাৱে বৰ্ণনা কৰিছে। লগতে ৰবিৰামৰ বিষণ্ণতাবোধে গল্পটিত মুখ্য স্থান পাইছে।

ৰূপাঙ্কৰ চৌধুৰীৰ 'আধালেখা প্ৰেম কাহিনী' (জানুৱাৰী ১৪, ২০১৫, *সাহিত্য ডট অৰ্গ*)ত এগৰাকী ধৰ্ষিতা যুৱতীৰ ভয়াবহ জীৱন-যন্ত্ৰণাৰ ছবি পৰিস্ফুট হৈছে। শেৰালী নামৰ বিশ্ববিদ্যালয়ত অধ্যয়নৰত হাঁহিমুখীয়া ছোৱালীজনীৰ হাঁহিৰ আঁৰত লুকাই আছে তাই জীৱনত ঘটি যোৱা এজাক ধুমুহা। তথাপিও সকলো পাহৰি হাঁহি-আনন্দৰে তাই জীয়াই থকাৰ আপ্ৰাণ চেষ্টা চলাইছে। উকীল হৃদয় বৰুৱাই সকলো জানিও তাইৰ লগত জীৱন অতিবাহিত কৰাৰ সপোন পুহি ৰাখিছে। তাৰ বাবে সি ঘৰৰ মানুহৰ লগত অনেক প্ৰতিবাদো কৰিছে। কিন্তু হঠাতে তাইৰ জীৱনলৈ পুনৰ নামি আহিছে আন এজাক ধুমুহা। শেৰালি এইচ.আই.ভি.ত আক্ৰান্ত হৈছে। সেয়ে তাই প্ৰেমিক হৃদয়ৰ কাষৰপৰা আঁতৰি যাব খুজিছে। তাৰ বাবে অকণমান সহায় বিচাৰিছে তাইৰ বান্ধৱী নন্দিনীৰ প্ৰেমিকবন্ধু নিয়ৰৰপৰা। নিয়ৰেও বন্ধুত্বৰ খাতিৰতে শেৰালিৰ কথামতে তাইৰ লগত মিছা ভালপোৱাৰ অভিনয় কৰিছে। গল্পটিত শেৰালীৰ জীৱনত ঘটি যোৱা অমানৱীয় শাৰীৰিক নিৰ্যাতনৰ বাবে তাইৰ মানসিক অন্তৰ্দ্বন্দ্ব চিত্ৰিত হৈছে। আনফালে নিজৰ প্ৰেমিকাক মনোকষ্ট দি এগৰাকী বান্ধৱীক বিপদৰপৰা উদ্ধাৰৰ বাবে আন এজন বন্ধুৱে মিছা অভিনয়েৰে দিন পাৰ কৰিছে। বাৰে বাৰে এই মিছা প্ৰেম অভিনয়ৰ বাবে জীৱনত যে নিয়ৰে বহুত কিবা হেৰুৱাব লাগিব সেই কথা জানি-বুজিও শেৰালীৰ মুখখনলৈ মনত পেলাই সকলো পাহৰি যোৱাৰ যত্ন কৰিছে। গল্পটিত বন্ধুজনৰ প্ৰকৃত মানৱীয়তা ফুটাই তোলাত গল্পকাৰজন কৃতকাৰ্য হৈছে।

দেশ বিভাজনৰ সময়ত সংঘটিত অমানৱীয় ঘটনাৰ বিৰুদ্ধে কলমেৰে প্ৰতিবাদ কৰা লেখকসকলৰ ভিতৰত চাদাত হাচান মাণ্ট' নামৰ উৰ্দু লেখকজন অন্যতম। তেওঁৰ 'খোল দো'ৰ দীপাংক বৰাই অসমীয়ালৈ কৰা ভাৱানুবাদ *সাহিত্য ডট অৰ্গত* প্ৰকাশ পাইছে। গল্পটিত প্ৰতিফলিত হৈছে অসৃতসৰৰপৰা লাহোৰলৈ ৰেলযাত্ৰাৰ সময়ত সংঘটিত এক অমানৱীয় হত্যাকাণ্ডৰ দুৰ্বিসহ ছবি। চিৰাজুদ্দিনৰ পৰিয়ালটোৰ দৰেই সেই ঘটনাত অসংখ্য ৰেলযাত্ৰীৰ বিৱৰ্ণ, অসহায় ছবি গল্পটিৰ ঘাই চালিকা শক্তি। নিৰীহ ৰেলযাত্ৰীৰ ওপৰত আক্ৰমণকাৰীদলে চলোৱা অমানুষিক অত্যাচাৰ তথা ধৰ্ষণৰ ছবিয়ে তৎকালীন সময়ৰ ছবি ফুটাই তুলিছে। *নিজাইনৰ* গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত দীপামণি শইকীয়াৰ নাম বিশেষভাৱে লেখতল'বলগীয়া। মানৱীয় মূল্যবোধ, আতৰ্জনৰ প্ৰতি সহমৰ্মিতা, দুখ-দুৰ্দশাৰ প্ৰতিচ্ছবি, নাৰী জীৱনৰ সপক্ষে এক বিশেষ দৃষ্টি তথা মনস্তাত্ত্বিক দিশৰ অৱলোকন তেওঁৰ গল্পৰ বিষয়বস্তু। প্ৰাঞ্জল দাসৰ 'মৰুভূমি' (ডিচেম্বৰ ১, ২০১৩, *সন্ধান*)ত মালতী বুঢ়ীৰ বৃদ্ধ মনস্তত্বৰ সন্ধান পোৱা যায়।

হেমেশ্বৰৰ সৈতে পলাই গুচি যোৱাৰ পাছত তাইৰ জীৱনলৈ নামি অহা চৰম দুৰ্দশাৰ ছবি এখন গল্পটিত প্ৰতিভাত হৈছে। *অন্যযুগত* অপূৰ্ব কুমাৰ শইকীয়াৰ 'গিনিপিগ', গীতালি বৰাৰ 'তুমি', বিদ্যুৎ বিকাশ শৰ্মাৰ 'জন্মদিনৰ গল্প এটা', সিদ্ধাৰ্থ গোস্বামীৰ 'পাব্‌জি খেলা ল'ৰাটো', যুগল লোচন দাসৰ 'ফুলদানীৰ ফুল', জিণ্টু গীতাৰ্থৰ 'কথন-মথন', পঞ্চানন হাজৰিকাৰ 'গোট মৰা ঘৃণা, গলি যোৱা প্ৰেম' ইত্যাদি গল্প প্ৰকাশ পাইছে। *অন্যযুগৰ* অন্যান্য গল্পকাৰসকল হ'ল মণিকা দেৱী, নীলাক্ষী চলিহা গগৈ, পংকজ প্ৰতিম বৰদলৈ, পাপৰি বৰ্মন, বিশ্বজ্যোতি শৰ্মা, অংগনা ভট্টাচাৰ্য, পৰিস্মিতা বৰদলৈ, ৰাজশ্ৰী ধনদিয়া, নিৰ্মালি নয়নতৰা, প্ৰতীক্ষা প্ৰিয়ম, ৰূপাঞ্জলি চেতিয়া নেওগ, সমীৰণ হাজৰিকা আদি।

অসমীয়া গল্প-সাহিত্যৰ সমৃদ্ধি সাধনত *মণিকূটৰ* "গল্পগুচ্ছ" শিতানৰ গুৰু ভূমিকা আছে। এই শিতানৰ গল্পকাৰসকল হ'ল খনীন বায়ন, খজেন ডেকা, বিক্ৰম দেৱ, প্ৰশান্ত শইকীয়া, কুসুমাঞ্জলি শৰ্মা, শোণিত কুমাৰ গোস্বামী, ৰূপম দাস, ৰামচৰণ পাঠক, অসীম তালুকদাৰ, ৰাজশ্ৰী ধনদিয়া, শিশিৰ কুমাৰ ৰাজবংশী, নৱজিৎ মেধি, খনিন্দ্ৰ ভূষণ মহন্ত, পুলকেশ বৰ্মন, ৰাস্না পালক, সঞ্জীৱনী পাঠক, জ্যোতিষ্মা গোস্বামী, প্ৰণীতা দাস ইত্যাদি। "গল্পগুচ্ছ"ৰ অনূদিত গল্পৰাজিৰ ভিতৰত স্মৃতি কুমাৰ সিংহৰ 'মৰা সুঁতিৰ মাছ' (অক্টোবৰ ১৬, ২০১৮), সুৰেন তালুকদাৰৰ 'শুভানুধ্যায়ী' (মূল-ওড়িয়া, আচাৰ্য ভাৱানন্দ, ফেব্ৰুৱাৰী ১৫, ২০১৯) আৰু 'বোৱঁতী নদীৰ দৰে' (মূল-হিন্দী, মাধুৱ কপিলা, ডিচেম্বৰ ১৬, ২০১৮), দেৱাশ্ৰী বৰগোহাঁইৰ 'অনুবাদ গল্প' (আগষ্ট ১৩, ২০১৯) ইত্যাদি। *মুক্ত চিন্তাৰ* গল্পৰাজিৰ মাজত ন-পুৰণি গল্পকাৰৰ মৌলিক আৰু অনূদিত উভয় ধৰণৰ গল্পৰ প্ৰকাশ দেখা যায়। আলোচনীখনৰ প্ৰধান গল্প তথা গল্পকাৰসকল হ'ল বৰ্ণালী বৰুৱা দাসৰ 'বৰ্ণহীন' (প্ৰথম সংখ্যা), দীপজ্যোতি দাসৰ 'কণ্টেইনমেণ্ট জ'ন' (পঞ্চম বছৰ, পঞ্চম সংখ্যা), হেমন্ত বৰ্মনৰ 'ঘৰ' (ষষ্ঠ বছৰ প্ৰথম সংখ্যা), মনস্বিনী মহন্তৰ 'তেজীমলাৰ মাহীমাকে চুলি কাটিবলৈ ঠাই এটুকুৰা পালে' ইত্যাদি। অনুবাদ গল্পৰ ভিতৰত কৌশিক দাসৰ 'একুৰি বছৰ পাছত' (অ' হেনৰী, প্ৰথম সংখ্যা), 'কুকুৰাজনী' (মূল-লৰ্ড দানচানী, দ্বিতীয় বছৰ প্ৰথম সংখ্যা) আৰু 'ঐক্য' (মূল-ইটালো কালভিনো, পঞ্চম সংখ্যা), বসন্ত কুমাৰ বৰাৰ 'ডাইনীজনী' (মূল-এণ্টন চেখভ, তৃতীয় সংখ্যা),বৰ্ণালী বৰুৱা দাসৰ 'জমা খৰচ' (মূল-মনোজ বসু, পঞ্চম সংখ্যা), সন্ধ্যা দেৱীৰ 'অৱৰোধবাসিনী"(মূল-ৰোকেয়া বেগম, ষষ্ঠ বছৰ তৃতীয় সংখ্যা) ইত্যাদি।

সন্ধ্যা দেৱী অনূদিত ৰোকেয়া বেগমৰ 'অৱৰোধবাসিনী' ১৯৩১ চনত প্ৰকাশ পায়। গল্পকাৰে সৰু সৰু গল্পৰ যোগেদি নাৰীৰ অৱৰুদ্ধ জীৱনৰ দুখ-দুৰ্গতিৰ এক জ্বলন্ত প্ৰতিচ্ছবি গল্পটিত অংকন কৰিছে। নাৰীক মধ্যযুগীয়া পুৰুষপ্ৰধান সংস্কৃতিৰ শিকলিৰে বান্ধি গৃহবন্দী কৰি ৰখাৰ ছবি অৱৰোধবাসিনীত প্ৰকাশ পাইছে। কেতিয়াবা তেওঁৰ ৰচনাত ফুটি উঠিছে গভীৰ মমতাবোধ, কেতিয়াবা আকৌ ক্ষোভ মিহলি ব্যংগ। অৱৰোধবাসিনীৰ গল্পকেইটাত কুল-কামিনীৰ অৱৰোধৰ এখনি জীয়া ছবি বৰ্ণিত হৈছে। এগৰাকী নাৰীয়ে পুৰুষৰ সন্মুখত বাহিৰ ওলাব নোৱাৰাৰ বাবেই ঘৰখনত জুই লগাৰ পাছতো অলংকাৰৰ বাকচটো বুকুত সাৱটি খাটৰ তলতে বহি থকা অৱস্থাত অগ্নিদগ্ধ হৈ মৰিছে, আনফালে কোনোবা গৰাকীয়ে আকৌ বিয়াৰ পিছতো নিজৰ স্বামীক কোনো দিনে ভালদৰে দেখা নাই। যাৰ বাবে স্বামী আৰু শাহুৰ লগত গংগাস্নানলৈ বুলি যোৱা পশ্চিম দেশৰ এগৰাকী হিন্দু বোৱাৰীয়ে ভিৰৰ মাজত তেওঁলোককবিচাৰি নাপাই হালধীয়া পাৰীৰ ধুতি পৰিধান কৰা আন এজন ব্যক্তিকে স্বামী বুলি ভাবি তেওঁৰ পিচ লয়। কিয়নো মহিলাগৰাকীয়ে বিয়াৰ পিছতো তাইৰ স্বামীয়ে কেৱল হালধীয়া পাৰীৰ ধুতি পৰিধান কৰাৰ কথাটোহে জানিছিল। কিন্তু উক্ত ব্যক্তিজনে মহিলাগৰাকীক পলুৱাই নিছে বুলি ধাৰণা কৰি আদবাটতে পুলিচে চিঞৰ-বাখৰ কৰে। তেতিয়াহে তাই জ্ঞাত হয় যে অতপৰে তাই অনুসৰণ কৰি থকা সেই হালধীয়া ধুতি পৰিহিত ব্যক্তিজন তাইৰ প্ৰকৃত স্বামী নহয়।

১.২ অসমীয়া বৈদ্যুতিন আলোচনীত গল্প প্ৰকাশৰ ধৰণ আৰু বৈশিষ্ট্য

১.২.১ অসমীয়া বৈদ্যুতিন আলোচনীত বৈদ্যুতিনভাৱে গল্পৰাজি প্ৰকাশিত হয়। ইয়াত গল্প তথা গল্প-সংকলনসমূহ ইউনিক'ড, জে.পি.ই.জি. আৰু পি.ডি.এফ. ইত্যাদি ৰূপত উপলব্ধ। লগতে বহুকেইখন অসমীয়া গল্পপুথি পূৰ্ণাঙ্গ বৈদ্যুতিন কিতাপ আকাৰে পোৱা যায়।

১.২.২ এনে আলোচনীত মৌলিক আৰু অনূদিত দুই ধৰণৰ গল্পৰ প্ৰকাশ পৰিদৃষ্ট। লগতে ছপা আৰু নব্য উভয় মাধ্যমৰে গল্পকাৰৰ চুটিগল্প, অণুগল্প, একমিনিটৰ গল্প, ৰহস্যধৰ্মী গল্প,

ভৌতিক গল্প ইত্যাদি ভিন্ন প্ৰকাৰৰ গল্প সামৰি লৈছে। কিন্তু এনাজৰীৰ দৰে কিছুসংখ্যক আলোচনীয়ে কেৱল ছপা মাধ্যমৰ প্ৰতিষ্ঠিত গল্পকাৰসকলৰ মাজৰপৰা নিৰ্বাচিত গল্পকাৰৰ গল্পহে বৈদ্যুতিনভাৱে প্ৰকাশ কৰিছে।

১.২.৩ দৃশ্য-শ্ৰব্য আকাৰে গল্প প্ৰকাশৰ সুবিধা এনে আলোচনীৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ বৈশিষ্ট্য। ফলত এইধৰণৰ গল্পৰাজি ছপা পাঠতকৈ পাঠকৰ বাবে অধিক আকৰ্ষণীয়, মনোগ্ৰাহী আৰু উপভোগ্য। লগতে এনে গল্পৰাজি যিকোনো শ্ৰেণীৰ পাঠকৰ বাবেই সহজ বোধগম্য।

১.২.৪ এনে আলোচনীত যিকোনো গল্পৰে লিখিত পাঠসমূহক ছবি, ধ্বনি, এনিমেছন আৰু ভিডিঅ'ৰ সৈতে একত্ৰিত কৰিব পাৰি; যাক মাল্টিমিডিয়া বোলে। সম্প্ৰতি পৃষ্ঠা ফ্লিপ প্ৰযুক্তিৰে পাঠকে ছপা আলোচনীৰ দৰে এনে আলোচনীৰ বৈদ্যুতিন পৃষ্ঠাসমূহ লুটিয়াব পৰা হৈছে।

১.২.৫ সময়ৰ দিশেৰে চালে ছপা আলোচনীতকৈ বৈদ্যুতিন আলোচনীসমূহৰ প্ৰকাশ বহু পৰিমাণে শিথিল। বহু প্ৰকাশকে আলোচনীসমূহ প্ৰকাশৰ ক্ষেত্ৰত ছপা আলোচনীৰ দৰে নিৰ্দিষ্ট সময়সীমা মানি নচলে। উদাহৰণস্বৰূপে *নীলা চৰাই*ৰ গল্পৰাজি নিশ্চিত সময়ৰ ব্যৱধানত প্ৰকাশিত নহয়। একেদৰে *মণিকূট, সাহিত্য ডট অৰ্গ, অন্যযুগ* ইত্যাদিত গল্প প্ৰকাশৰ নিজা নিজা সময়সীমা আছে।

১.২.৬ বহুকেইখন অসমীয়া পি.ডি.এফ. আলোচনী পাঠকে নিজা বৈদ্যুতিন আহিলাত ইণ্টাৰনেট সংযোগেৰে সহজতে ডাউনল'ড কৰি ল'ব পাৰে। তাৰ পাছত পাঠকে ইয়াৰ গল্পৰাজি ইণ্টাৰনেট সংযোগ অবিহনে নাইবা অফলাইনত যিকোনো সময়ত পঢ়িব পাৰে। অৱশ্যে ইউনিক'ডভিত্তিক নোহোৱাৰ বাবে এনে আলোচনীৰ গল্পৰাজি পোনপটীয়াকৈ গুগল অনুসন্ধান ইঞ্জিনে সন্ধান উলিয়াব নোৱাৰে।

১.২.৭ অসমীয়া গল্পৰ বিশ্বব্যাপী প্ৰচাৰ-প্ৰসাৰত ইউনিক'ড ভিত্তিক বৈদ্যুতিন আলোচনীসমূহৰ মহত্ত্বপূৰ্ণ ভূমিকা আছে। বিশেষকৈ ইউনিক'ডভিত্তিক আলোচনীসমূহৰ গল্পৰাজি অতি সহজে গুগল অনুসন্ধান ইঞ্জিনে বিচাৰি পায়। অসমীয়া ভাষাৰ বেছিভাগ আলোচনীয়েই ইউনিক'ডভিত্তিক। সেয়ে এনে আলোচনীসমূহত গল্পৰ সম্পূৰ্ণ পাঠ ইউনিক'ডত প্ৰকাশ কৰা হয়। কেতিয়াবা এনে গল্পৰ লগত আলোকচিত্ৰৰো সংযোজন কৰা দেখা যায়।

১.২.৮ গল্পৰ ধাৰাবাহিকভাৱে প্ৰকাশ অসমীয়া বৈদ্যুতিন আলোচনীৰ এক মনকৰিবলগা বিশেষত্ব।

১.২.৯ বেছিভাগ এনে আলোচনীৰে লেখনিৰাজিত স্ৰষ্টা নাইবা প্ৰকাশকৰ কপিৰাইট আছে। লেখক তথা প্ৰকাশকে ইচ্ছা অনুসৰি কপিৰাইট সম্পৰ্কত নিজা দৃষ্টিভংগী ৰাখে। *এনাজৰী, অন্যযুগ, নীলা চৰাই* আদি কপিৰাইটযুক্ত আলোচনীৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ উদাহৰণ। *সাহিত্য ডট অৰ্গ*ৰ গল্পৰাজিত গল্পকাৰৰ নিজা কপিৰাইট আছে। আনহাতে *মণিকূট, মুক্তচিন্তা, নীলা চৰাই*ত প্ৰকাশকৰ কপিৰাইট আছে। সেয়েহে গল্পকাৰ নাইবা প্ৰকাশকৰ অনুমতি নথকাকৈ আনে এইসমূহ গল্প নিজৰ নামত ছপা, প্ৰচাৰ, বিতৰণ, প্ৰদৰ্শন তথা সংৰক্ষণ কৰিব নোৱাৰে। কপিৰাইটে বৈদ্যুতিন গল্পৰাজি সুৰক্ষিত কৰি ৰখাত ভালেখিনি সহায় কৰিছে।

১.২.১০ কেতবোৰ প্ৰকাশকে পাঠকসমাজে সহজে লেখনিৰাজি পঢ়িব পৰাকৈ আলোচনীখনৰ লগতে এটি এণ্ড্ৰইড এপ সংযোগ কৰে। *অন্যযুগ, সাহিত্য ডট অৰ্গ* ইত্যাদিৰ একোটাকৈ নিজা এণ্ড্ৰইড এপ আছে। আলোচনীখনৰ গল্পৰাজি এই এপৰ মাধ্যমেৰে পাঠকে পঢ়িব পাৰে।

২.০ উপসংহাৰ

সময়ৰ অনুক্ৰমত অসমীয়া গল্পই ক্ৰমবিৱৰ্তনৰ মাজেদি আহি বৰ্তমানৰ অৱস্থা পায়হি। অসমীয়া সাহিত্যৰ ইতিহাসলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে প্ৰতিটো যুগৰ জাতীয় সমস্যা আৰু জাতীয় মনৰ স্বৰূপ প্ৰকাশৰ ক্ষেত্ৰত গল্পই মুখ্য ভূমিকা পালন কৰিছে। আকৌ অসমীয়া বৈদ্যুতিন আলোচনীসমূহে স্থায়ী আৰু শৃংখলাবদ্ধ লেখনি সংগ্ৰহ কৰি নতুন প্ৰজন্মক উৎসাহিত কৰাৰ সমান্তৰালভাৱে ন ন গঠনমূলক কামৰ ক্ষেত্ৰতো বিশেষধৰণৰ পদক্ষেপ লৈছে। এই আলোচনীসমূহ নতুন লেখক-পাঠকৰ বাবে সাহিত্যচৰ্চাৰ এখন সম্পূৰ্ণ বিনামূলীয়া বৈদ্যুতিন মঞ্চ। ভাষাৰ দিশেৰে চালে এনে আলোচনীসমূহ একভাষী, দ্বিভাষী, ত্ৰিভাষী আৰু বহুভাষী ৰূপত উপলব্ধ। সেইসূত্ৰে ইয়াত প্ৰকাশিত গল্পৰাজিৰ ভাষা আলোচনীসমূহৰ ভাষা নিৰ্ভৰশীল। এনেধৰণৰ আলোচনীসমূহত গল্পকাৰে গল্প ৰচনাৰ বাবে যিকোনো এটা ভাষা নিৰ্বাচন কৰিব পাৰে। আনহাতে, কিছুমান আলোচনীৰ ক্ষেত্ৰত একেটা গল্পই আলোচনীখনত উপলব্ধ আটাইকেইটা ভাষাতে প্ৰকাশ কৰা হয়। অসমীয়া বৈদ্যুতিন আলোচনীসমূহৰ ভিতৰত *এনাজৰী*তে সৰ্বপ্ৰথম গল্প প্ৰকাশ পায়।

আলোচনীখনৰ “সাহিত্যৰথী ডট কম” নামৰ প্ৰকল্পৰ অধীনত লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ সাহিত্য আৰু জীৱন পৰিক্ৰমাৰ তথ্যৰাজিক বৈদ্যুতিন ৰূপ দিয়া হৈছে। ইয়াতে বেজবৰুৱাৰ বহুকেইটা চুটিগল্প অন্তৰ্ভুক্ত আছে। অৱশ্যে গল্পভিত্তিক বৈদ্যুতিন আলোচনীৰ সংখ্যা অসমীয়া ভাষাত তেনেই কম। ভৱিষ্যতে এনে ধাৰাৰ আলোচনীৰ বহুলভাৱে প্ৰকাশ তথা প্ৰচাৰেহে বৈদ্যুতিন আলোচনীৰ অসমীয়া গল্পৰ ক্ষেত্ৰখন আগবঢ়াই নিয়াত যথেষ্ট সহায় কৰিব। ❑

গ্ৰন্থপঞ্জীঃ

১। বৰগোহাঞি, হোমেন. *অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী ষষ্ঠ খণ্ড (পৰিবৰ্ধিত সংস্কৰণ).* আনন্দৰাম বৰুৱা ভাষা-কলা-সংস্কৃতি সংস্থা, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, মাৰ্চ, ২০১২

২। ভৰালী, শৈলেন. *আধুনিক ভাৰতীয় সাহিত্য.* তৃতীয় প্ৰকাশ, চন্দ্ৰপ্ৰকাশ, পাণবজাৰ, মাৰ্চ, ২০১৯

৩। শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ. *অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত.* সৌমাৰ প্ৰকাশ, গুৱাহাটী, ২০১৩

প্ৰসংগ গল্পৰাজি ঃ

১। শৰ্মা, অপূৰ্ব. “হলধৰ.” *এনাজৰী*

২। ভৰদ্বাজ, অপু. “চিকাডা.” *এনাজৰী*

৩। ডেকা, সঞ্জীৱ পল. “লাজ.” *এনাজৰী*

৪। দাস, দেৱব্ৰত. “অৰ্পিতাৰ এৰাতি.” *এনাজৰী*

৫। বৰা, মহিম. “টোপ.” *নীলা চৰাই*

৬। শইকীয়া, পল্লৱী. “সেন্দুৰ.” *নীলা চৰাই,* ১৬ মে’, ২০২০

৭.। হাজৰিকা, ভুপেন্দ্ৰ নাথ. “বৃত্ত.” *নীলা চৰাই,* ১১ এপ্ৰিল, ২০২০

৮। বৰুৱা, অনামিকা. “দাপোণত কাৰ মুখ.” *সাহিত্য ডট অৰ্গ,* ১৪ জুলাই, ২০১৪

৯। মজুমদাৰ, মনোৰঞ্জন. “হঁহা নিষেধ.” *সাহিত্য ডট অৰ্গ,* ১৫ আগষ্ট, ২০১১

১০। চৌধুৰী, ৰূপাঙ্কৰ. “আধালেখা প্ৰেম কাহিনী.” *সাহিত্য ডট অৰ্গ,* ১৪ জানুৱাৰী, ২০১৫

১১। বৰা, দীপাংক (অনু.). “খোল দো.” হাচান মাণ্ট’. *সাহিত্য ডট অৰ্গ,* ১৪ জুলাই, ২০১৪

১২। দেৱী, সন্ধ্যা (অনু.). “অৱৰোধবাসিনী.” ৰোকেয়া বেগম. *মুক্ত চিন্তা,* ষষ্ঠ বছৰ, তৃতীয় সংখ্যা

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

‘কৰ্মবাদ’ৰ আওতাত লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ “বুঢ়ী আইৰ সাধু”ৰ আলোচনা

কুকুমণি শৰ্মা

সহকাৰী অধ্যাপিকা, অসমীয়া বিভাগ
নৰ্থ কামৰূপ ক'লেজ, বাঘমাৰা,
বজালী, অসম-৭৮৭০০১
৭০০২৪০৯৫৬৩
sarmakukumoni@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

প্ৰাচীন কালৰে পৰাই মানৱ সমাজৰ কাহিনী কোৱা বা শুনাৰ আগ্ৰহ চলি অহাৰ ফলশ্ৰুতিতেই সাধুকথাৰ জন্ম। অসমীয়া সাধুকথাক পৰিপূৰ্ণ ৰূপ দিয়া স্বনাম ধন্য ব্যক্তিজনেই হ'ল লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা। অসমীয়া সাহিত্যৰ সকলো আংগিককে চুই চোৱাৰ হাবিয়াস কৰোঁতেই কোনো কোনো ক্ষেত্ৰত তেওঁ জিলিকি উঠিছে; ইয়াৰ ভিতৰত সাধুকথাৰ জগতখনো অন্যতম। জাৰ্মানীৰ গ্ৰীম ভাতৃদ্বয়ৰ পথেৰে বাট বুলি তেওঁ অসমীয়া সাধুবোৰক লোক সমাজৰ পৰা বুটলি আনি নিজ শৈলীৰে লিখি গ্ৰন্থৰ ৰূপে দিলে। বেজবৰুৱাই বান্ধি দিয়া পথেৰে বাট বুলি সাম্প্ৰতিক সময়ত অসমীয়া সাধুৱে ডিজিটেল পৃথিৱীখনত প্ৰৱেশ কৰিছে। তেওঁ সাধুকথাক সজ কথা বুলি কৈছিল। এই কথাৰ আঁত ধৰি ক'ব পাৰি যে সাধুত নীতি শাস্ত্ৰ নিহিত হৈ আছে। কৰ্মবাদ নীতি শাস্ত্ৰৰ সদাচৰ্চিত এটি বিষয়। অসমীয়া সাধুকথাৰ বিষয়বস্তু আৰু পৰিণতিলৈ চাই ক'ব পাৰি যে ইয়াত কৰ্মবাদ নিহিত হৈ আছে।

আমাৰ আলোচনাত লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ “বুঢ়ী আইৰ সাধু”ত সন্নিবিষ্ট কেইটামান উল্লেখযোগ্য সাধু কৰ্মবাদৰ আওতালৈ আনি বিশ্লেষণ কৰা হ'ব। এই প্ৰচেষ্টাই শিক্ষাৰ বহুমুখীতাক সাৰ্থকতা প্ৰদান কৰাৰ লগতে সাধুকথাৰ জগতখনলৈ নতুন চিন্তাৰ আগমন ঘটাত সহায়ক হ'ব।

০.০১ ঃ মানব জীৱনক সাহিত্যই নতুন ৰূপেৰে পৰিশোধিত কৰে। নিচুকণি গীতৰ পিছতেই শিশুৰ পৰিচয় ঘটা সাহিত্যৰ একমাত্ৰ অংগ হ'ল সাধুকথা। সাধুকথাৰ মাজেৰে শিশুৱে বাস্তৱ পৃথিৱীখনৰ লগত ক্ৰমশঃ চিনাকি হ'বলৈ ধৰে। প্ৰজন্মৰ ব্যৱধান নাইকিয়া কৰি একেখন চোতাললৈ লৈ আহে সাধুকথাই। মৌখিক সাহিত্যৰ গণ্ডীৰ পৰা অসমীয়া সাধুকথাক লিখিত ৰূপ দি স্থায়ীত্ব প্ৰদান কৰিছিল ৰসৰাজ সাহিত্যৰথী লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই। ১৭৭৮-১৭৭৯ খ্ৰীষ্টাব্দত ছপা হোৱা হাৰ্ডাৰৰ “Collection of Popular songs” আৰু পণ্ডিত গ্ৰীম ভাতৃদ্বয়ে জাৰ্ম্মানীৰ গাঁৱলীয়া সাধু সমূহ সংৰক্ষণৰ ক্ষেত্ৰত লোৱা প্ৰচেষ্টাই বেজবৰুৱাক মৌখিক ৰূপত থকা অসমীয়া সাধুকথা সমূহৰ সংগৃহীত ৰূপ দিয়াৰ ক্ষেত্ৰত অনুপ্ৰাণিত কৰিছিল। ‘বুঢ়ী আইৰ সাধু’, ‘ককাদেউতা আৰু নাতি ল'ৰা’, ‘জুনুকা’ এই প্ৰচেষ্টাৰেই স্বাক্ষৰ। এই কেইখনৰ ভিতৰত “বুঢ়ী আইৰ সাধু” সদায়েই বিশেষ ৰূপে চিহ্নিত হৈ আহিছে। বেজবৰুৱাদেৱে ‘সাধু’ শব্দৰ অৰ্থ পোনপটীয়াভাৱে ‘সজ কথা’ বুলি উল্লেখ কৰাৰ প্ৰসংগৰ আঁত ধৰি ক'ব পাৰি যে সাধু

কথাত নীতি শাস্ত্ৰ জড়িত হৈ আছে। কৰ্মবাদ ভাৰতীয় নীতি শাস্ত্ৰৰ বহু চৰ্চিত বিষয়। কৰ্ম আৰু কৰ্মফল সম্পৰ্কীয় বিশ্বাসে অতীজৰ পৰা সাম্প্ৰতিক সময়লৈকে ভাৰতীয় জন মানসক প্ৰভাৱান্বিত কৰি আহিছে। নীতি শাস্ত্ৰ জড়িত হৈ থকা সাধু কথা সমূহত কৰ্মবাদৰ ধাৰণা নিহিত হৈ আছে। আমাৰ আলোচনাত লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ "বুঢ়ী আইৰ সাধু" পুথিখনত সন্নিবিষ্ট সাধু কেইটামান কৰ্মবাদৰ ধাৰণাৰে বিশ্লেষণ কৰি চোৱা হৈছে।

০.০২ ঃ সাহিত্যৰ শাখা সমূহৰ ভিতৰত শিশু সাহিত্যৰ বৈশিষ্ট্য সুকীয়া। শিশু মনঃস্তত্বৰ লগত সংপৃক্ত হোৱাকৈ শিশু সাহিত্য সমূহ ৰচিত হয়। লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই ব্যক্তিগত প্ৰচেষ্টাৰে অসমীয়া সাধুকথা সমূহক মান্যতা প্ৰদান কৰে। লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ "বুঢ়ী আইৰ সাধু" গ্ৰন্থখনে অসমীয়া সাধুকথাক জনপ্ৰিয় কৰি তোলাৰ লগতে চৰ্চাৰ বিষয় ৰূপে প্ৰতিষ্ঠিত কৰে। অসমীয়া সমাজৰ চুকে-কোণে সিচঁৰতি হৈ থকা ৩১ টা সাধু সংগ্ৰহ কৰি বেজবৰুৱাদেৱে নিজ ভাষা শৈলী আৰু প্ৰকাশভংগীৰে লিখি গ্ৰন্থ ৰূপ দিয়ে। নাতিয়েকে আইতাকৰ মুখেৰে সাধু শুনা পৰম্পৰাৰ আধাৰতে গ্ৰন্থখনৰ নাম ৰাখিলে "বুঢ়ী আইৰ সাধু"। "বুঢ়ী আইৰ সাধুৰ সাধু কেইটা হ'ল- 'মেকুৰী জীয়েকৰ সাধু', বান্দৰ আৰু শিয়াল, ঔ- কুঁৱৰী, ঢোঁৰা কাউৰী আৰু টিপচী চৰাই, "এজনী মালিনী আৰু এজোপা ফুল", বুধিয়ক শিয়াল, বাঘ আৰু কেকোঁৱাৰ সাধু, তেজীমলা, বুঢ়া-বুঢ়ী আৰু নুমলীয়া পো, সৰবজান, খাৰণি দি ঢাক, তীখৰ আৰু চুটিবাই, চম্পাৱতী, জৰদ্গৱ ৰজাৰ উপাখ্যান, পানেশৈ, জোঁৱাইৰ সাধু, কুকুৰীকণা, ভেকুলীৰ সাধু, তাৱৈয়েকৰ সাধু, লট্‌কন, লখিমী তিৰোতা, দুই বুধিয়ক, কাঞ্চনী, ভুচুংপহু। "বুঢ়ী আইৰ সাধু"ৰ প্ৰতিটো সাধুৰ মাজত বহুতো বিশেষত্ব লুকাই আছে। সাধু কেইটাৰ প্ৰকাশ ভংগী, শৈলী আৰু প্ৰকাশিত বক্তব্যই এইবোৰক শিশু সাহিত্যৰ গতানুগতিকতাৰ পৰা পৃথক কৰিছে। সেইবাবেই ১৯১১ চনতে প্ৰকাশিত হোৱা এই গ্ৰন্থখন সম্প্ৰতি পঢ়ুৱৈ সমাজত জনপ্ৰিয়। 'জোনাকী' যুগৰ ত্ৰিমূৰ্তিৰ অন্যতম এগৰাকী হিচাপে লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জীত নিজৰ স্থিতি গজগজীয়া কৰিলেও 'বুঢ়ী আইৰ সাধু'ৰ প্ৰণেতা হিচাপেহে বেজবৰুৱা সদা পৰিচিত, অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী সম্পৰ্কে অপৰিচিত ব্যক্তিৰো 'লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা' নামটোৰ সৈতে পৰিচয় ঘটে "বুঢ়ী আইৰ সাধু"ৰ জৰিয়তে। সেই পিনৰ পৰা লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ "বুঢ়ী আইৰ সাধু" অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জীত একক আৰু অনন্য সম্পদৰূপে স্বীকৃত হৈছে।

০.০৩ ঃ সামাজিকতা মানুহৰ সহজাত প্ৰবৃত্তি। সমাজত মানুহক অমানুহ হোৱাৰ পৰা বিৰত ৰাখিবলৈ, এখন সুস্থ সমাজ গঢ়াৰ স্বাৰ্থত ভাৰতীয় সংস্কৃতিয়ে নীতিশাস্ত্ৰক গুৰুত্ব দিছে। নীতি শাস্ত্ৰত পোৱা নৈতিক ধাৰণা সমূহৰ ভিতৰত কৰ্মবাদ উল্লেখযোগ্য আৰু প্ৰভাৱশালী। ব্যক্তি বৈষম্যতাৰ কাৰণ নিৰূপণ আৰু ইয়াৰ ব্যাখ্যা আগবঢ়োৱাৰ বাবে কৰ্মবাদেই হৈছে বলিষ্ঠ আৰু অকাট্য যুক্তি। সংস্কৃত 'কৃ' ধাতুৰ পৰা কৰ্ম শব্দটো আহিছে ; 'কৃ' ধাতুৰ অৰ্থ- হ'ল কাৰ্য্য কৰা। কৰ্ম শব্দটোৰ অৰ্থৰ লগত সকলো ধৰণৰ শাৰীৰিক মানসিক কাৰ্য জড়িত হৈ আছে। গতিকে, এক কথাত ক'বলৈ হ'লে কৰ্মৰ লগত জড়িত মতবাদেই হৈছে কৰ্মবাদ। ভাৰতীয় নীতিশাস্ত্ৰত উল্লিখিত এই মতবাদটো হ'ল- "প্ৰত্যেক কৰ্মৰে এটা সুনিৰ্দিষ্ট ফল আছে। যেনে কৰ্ম তেনে ফল। সৎ কৰ্মৰ ফল শুভ হয় আৰু অসৎ কৰ্মৰ ফল অশুভ হয়।" কৰ্মবাদ অনুসৰি ভাৰতীয় জনমানসত বিশ্বাস আছে যে মানুহৰ বৰ্তমান জীৱন অতীত কৰ্মৰ ফল আৰু বৰ্তমান জীৱনৰ কৰ্মৰ দ্বাৰাই গঠিত হয় ভৱিষ্যত জীৱন। এই নিয়ম অমোঘ, চিৰন্তন আৰু অলংঘনীয়। তলৰ দুটা নীতিয়ে কৰ্মবাদৰ মূল ভেটি নিৰ্মাণ কৰিছে। এই মূল কথা দুটা হ'ল- (i) অকৃত অৰ্থাৎ কৃতকৰ্মৰ ফল ভোগ কৰাটো নিশ্চিত। (ii) অকৃতাভ্যাগম অৰ্থাৎ অসম্পাদিত বা অকৃত কৰ্মৰ ফল ভোগ কৰিব নালাগে।

মানৱ জীৱনৰ বৈষম্যতাৰ কাৰণ বিচাৰি গ'লেই আমি তাৰ আঁৰত লুকাই থকা কৰ্মবাদৰ ধাৰণাকে বিচাৰি পাওঁ। কেতিয়াবা ভালৰ লগত বেয়া আৰু বেয়াৰ লগত ভাল হোৱা পৰিঘটনাই সকলোকে আচৰিত কৰি তোলে। ইয়াৰ উত্তৰো কৰ্মবাদৰ আলমতহে পোৱা সম্ভৱ। মানুহে কৰা কৰ্মৰ ফলে মানৱ জীৱনৰ বৈষম্য আনি দিছে। এই কৰ্মবাদৰ লগত ভাৰতীয় নীতিবিদ সকলে পূৰ্বজন্মকো সাঙুৰি লৈছে। পূৰ্বজন্মৰ কৰ্মফলৰ বলত এজন ব্যক্তিয়ে বৰ্তমান জীৱনত অসৎ কাম কৰি শুভ ফল আৰু আনজনে সৎ কাম কৰিও বৰ্তমান সময়ত অশুভ ফল পোৱা যায় বুলি ভাৰতীয় জনমানসত মান্যতা আছে।

কৰ্মবাদৰ লগত সম্পৰ্কিত আন এটি বিষয় হ'ল কাৰ্যকাৰণ বিধি। কাৰ্যকাৰণ বিধি অনুসৰি প্ৰত্যেক কাৰ্য্যৰে এটা সুনিৰ্দিষ্ট কাৰণ থাকে। অনুৰূপভাৱে কৰ্মবাদ অনুসৰি প্ৰত্যেক কৰ্মৰে একোটা ফল থাকে।

কাৰণৰ পৰা কাৰ্য্যৰ সৃষ্টি হয় আৰু কাৰ্য্য বা কৰ্মৰ পৰা ফলৰ উৎপত্তি হয়। গতিকে, কাৰ্যকাৰণবাদ আৰু কৰ্মবাদ একেডাল সূত্ৰৰ দ্বাৰা বান্ধ খাই আছে বুলি ক'ব পাৰি। পৰজন্মত কৰ্মফল ভোগ কৰাৰ সৈতে নৈতিক জগতৰ কাৰ্যকাৰণবাদৰ সম্পৰ্ক আছে। নৈতিক জগতৰ কাৰ্যকাৰণবাদত কাৰণ সৃষ্টি হোৱাৰ লগে লগে কাৰ্য্য নঘটে; একেদৰে সম্পাদিত কৰ্মৰ কৰ্মফল সঞ্চিত ৰূপত থাকে। পৰজন্মত সেই কৰ্মফল ভোগ কৰিব লগা হয়। ভাৰতীয় নীতিশাস্ত্ৰৰ এই কৰ্মনিয়মক নৈতিক মূল্যৰ সংৰক্ষণ নিয়ম বুলি অভিহিত কৰা হয়।

'কৰ্মবাদৰ লগত ঘনিষ্ঠভাৱে সম্পৰ্কিত আন এটি গুৰুত্বপূৰ্ণ বিষয় হৈছে জন্মান্তৰবাদ। জন্মান্তৰবাদ বুলিলে বুজায় সেই মতবাদক যি মতবাদ অনুসৰি জীৱই মৃত্যুৰ পিছত পুনঃ জন্ম গ্ৰহণ কৰিব লগা হয়। জন্মান্তৰবাদ অনুসৰি আত্মাৰ কেতিয়াও মৃত্যু নহয়। মৃত্যুৰ পিচত পুনৰ জনম হয় আৰু তেতিয়া আত্মাই এক নতুন দেহ ধাৰণ কৰে'[১]। কৰ্মবাদৰ এই ধাৰণাৰ লগত নৈতিক মূল্যৰ সংৰক্ষণ নিয়ম সাঙোৰ খাই আছে। সম্পাদিত কৰ্মৰ ফল যদি এই জীৱনত লাভ নকৰে নৈতিক মূল্যৰ সংৰক্ষণ নিয়ম আৰু জন্মান্তৰবাদ অনুসৰি পুনৰ জন্ম যেতিয়া লাভ কৰে তেতিয়া সেই কৰ্মৰ ফল ভোগ কৰে। শ্ৰীমদ্ভাগৱদ গীতায়ো কৰ্মবাদৰ এই ধাৰণা সমৰ্থন কৰে। গীতাৰ দ্বিতীয় অধ্যায়ৰ ২২ নম্বৰ শ্লোকত জন্মান্তৰবাদ সম্পৰ্কে উল্লেখ আছে এনেদৰে-

বাসাংসি জীৰ্ণানি যথা ৱিহায়।
নৱানি গৃহ্নাতি নৰোঽ পৰাণি।
তথা শৰীৰাণি ৱিহায় জীৰ্ণা-
ন্যন্যানি সংযাতি নৱানি দেহী।।২২।।

শ্লোকানুবাদ ঃ মানুহে যেনেকে জীৰ্ণ বস্ত্ৰ সমূহ ত্যাগ কৰি অন্য নতুন (বস্ত্ৰ) গ্ৰহণ কৰে, তেনেদৰে দেহীয়ে জীৰ্ণ শৰীৰ ত্যাগ কৰি অন্য নতুন দেহ পৰিগ্ৰহ কৰে ।।২২।।[২]

অৰ্থাৎ সঞ্চিত কৰ্মফল ভোগ কৰাৰ বাবেই মানুহৰ পুনৰ জন্ম হয় বুলি গীতাই মত দাঙি ধৰিছে। শ্ৰীমদ্ভাগবদ গীতাই এই প্ৰসংগতে আৰু এখোজ আগুৱাই গৈ কৈছে কৰ্মবাদৰ লগত জন্মান্তৰবাদৰ সম্পৰ্ক সকাম কৰ্মৰ ক্ষেত্ৰতহে প্ৰযোজ্য। নিষ্কাম কৰ্মত জীৱই জন্ম-মৃত্যুৰ চক্ৰত আৱদ্ধ নহয়।

কৰ্মবাদৰ ধাৰণা সমূহ প্ৰাচীন যদিও মানুহৰ মনত সংস্কাৰৰ জন্ম কৰা, মানৱ জাতিক আশাবাদী আৰু বৰ্তমানৰ পৰিস্থিতিৰ প্ৰতি সহিষ্ণু কৰি তোলাৰ ক্ষেত্ৰত এনে চিন্তাৰ প্ৰাসংগিকতা সদায় আছে।

০.০৪ ঃ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ সাহিত্য সমূহৰ ভিতৰত আটাইতকৈ জনপ্ৰিয় আৰু সৰহ সংখ্যক পঢ়ুৱৈ লাভ কৰা গ্ৰন্থখনেই হৈছে "বুঢ়ী আইৰ সাধু"। বেজবৰুৱাদেৱে বিভিন্নজনৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰা ৩১ টা সাধুক নিজ সাহিত্যিক শৈলীৰে গঢ়ি "বুঢ়ী আইৰ সাধু" নামেৰে প্ৰকাশ কৰি উলিয়াইছে। সূৰ্য্যকান্ত হাজৰিকাই বেজবৰুৱা দেৱৰ শিশু সাহিত্য সমূহক একত্ৰ কৰি "ৰসৰাজ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ শিশু সাহিত্য সম্ভাৰ" নামেৰে সম্পাদিত গ্ৰন্থ প্ৰকাশ কৰিছে। এই গ্ৰন্থৰ 'আগকথা' ত সূৰ্যকান্ত হাজৰিকাই "বুঢ়ী আইৰ সাধু"য়ে বহন কৰি থকা তাৎপৰ্য্য উল্লেখ কৰিছে এনেদৰে ঃ

'বুঢ়ী আইৰ সাধু'ৰ প্ৰত্যেকটো সাধুৱেই বহন কৰিছে এক বিশেষ তাৎপৰ্য্য। পুথিখনৰ সাধুখিনিত লক্ষ্য কৰিব লগীয়া অন্যতম বৈশিষ্ট্য হ'ল- কথন শৈলী আৰু বহন কৰা বাৰ্তা। সাধুবোৰৰ প্ৰায়ভাগতে প্ৰত্যক্ষ বা পৰোক্ষ ভাবে দেখা যায় শেষত সত্য সুন্দৰৰ জয়। উদাহৰণ স্বৰূপে ঃ 'তেজীমলা' সাধুটোত তেজীমলা নিৰ্যাতিতা সৰল সুন্দৰ সংস্কৃতিৰ প্ৰতীক, আনহাতে মাহীমাক হ'ল সমাজৰ অসুন্দৰ বা অশুভ শক্তিৰ প্ৰতীক। সদাগৰ দেউতাক সুন্দৰৰ সাধক, অসুন্দৰ অশুভক আঁতৰোৱাৰ প্ৰচেষ্টাৰ প্ৰতীক। শেষত সংস্কৃতিৰেই জয় হয় সংস্কৃতিক কোনেও মাৰি শেষ কৰিব নোৱাৰে, যেন তেজীমলাৰ দৰেই বাৰে বাৰে উজ্জীৱিত হৈ থাকিব।..........."[২]

(আগকথা, ৰসৰাজ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ শিশু সাহিত্য সম্ভাৰ সম্পাঃ সূৰ্য্য হাজৰিকা) বেজবৰুৱাৰ 'বুঢ়ী আইৰ সাধু' সমূহৰ প্ৰাচীনতা, মহত্ব আৰু সামৰণিলৈ চাই এই গ্ৰন্থৰ কেইটামান সাধুক কৰ্মবাদৰ ধাৰণাৰ আওতালৈ আনি বিশ্লেষণ কৰিব পাৰি। এই বিশ্লেষণে "বুঢ়ী আইৰ সাধু" ৰ তাৎপৰ্য্য বৃদ্ধি কৰিব। ৩১ টা সাধুৰ মাজৰ পৰা আলোচনাৰ আওতালৈ "বুঢ়ী আইৰ সাধু" গ্ৰন্থ খনৰ কেইটামান উল্লেখযোগ্য সাধুহে অনা হ'ব।

"বুঢ়ী আইৰ সাধু"ৰ প্ৰথম সাধুটো হৈছে মেকুৰীৰ জীয়েকৰ সাধু। গা-ভাৰি মেকুৰীজনীয়ে মাছ খাবলৈ মন কৰি গিৰিহঁতনীক মাছ চুৰকৈ হ'লেও যোগাৰ কৰি দিছিল। গিৰিহঁতনীয়ে অন্যায় ভাবে নিজে মাছ খাই মেকুৰীজনীক কাঁইট খাবলৈ দিছিল। এই কৰ্মৰ প্ৰতিফল হিচাপে গৰ্ভৱতী গিৰিহঁতনীয়ে মেকুৰীৰ শাওপাত পালে। ফলত তাই সন্তান হিচাপে মেকুৰীহে জন্ম দিলে। মেকুৰীজনীয়ে দুজনী ছোৱালী জন্ম দিলে। একেটা গল্পতে, মেকুৰীৰ সৰুজনী ছোৱালীক মুদৈৰ বাকী দুজনী ঘৈনীয়েকে কৰা অন্যায়ৰ বাবে দুই পুত্ৰক

হেৰুৱাব লগীয়া হোৱাৰ লগতে গৃহহাৰা হ'ব লগা হৈছিল। সাধুটোৰ শেষত, নৈত উটাই দিয়া সৰুজনী ছোৱালীৰ সন্তান দুটি জলকোঁৱৰে লৈ যোৱা বায়েকৰ দ্বাৰা লালিত পালিত হৈছে আৰু সিহঁতেই মাকক ন্যায় দিয়াইছে। মুদৈয়ে আন দুজনী ঘৈনীয়েকক নাক-কাণ কাটি ঘৰৰ পৰা খেদি দিলে আৰু সৰুজনী ঘৈনীয়েকক সন্তানৰ সৈতে আদৰি ল'লে। গল্পটোত গিৰিহঁতনীয়ে মুদৈ দুজনী ঘৈনীয়েক উভয়েই কৃতকৰ্মৰ ফল ভোগ কৰিলে। “বান্দৰ আৰু শিয়াল” সাধুটোত বন্ধুক কৰা বিশ্বাসঘাতকতাৰ প্ৰতিফল মৃত্যু পৰ্য্যন্ত হ'ব পাৰে সেয়া সন্দুৰকৈ দেখুৱাইছে। দুয়োৰে কষ্ট কৰি যোগাৰ কৰা ফল-মূলবোৰ শিয়ালক ঠগি বান্দৰে অকলে ভোগ কৰে। বান্দৰৰ এই বিশ্বাসঘাতকতাৰ পোটক স্বৰূপে শিয়ালেও বিভিন্ন ধৰণে বান্দৰক শাস্তি দিয়ে। অৱশেষত বান্দৰে নিজ কৰ্মৰ কৰ্মফল ভোগ কৰে। শিয়ালৰ ফন্দীত পৰি বান্দৰে মৃত্যুক আকোঁৱালি লয়।

‘বুধিয়ক শিয়াল’ সাধুটোত শিয়ালটোৱে নিজ বুধিৰে বাঘৰ পোৱালি কেইটাৰ মুখৰ আগৰ মাংস খাই আৰামেৰে আছিল। বাঘকো চলেৰে মাৰি বাঘিনীক নিজৰ বহতীয়া কৰি ৰাখিলে। বহুদিন চলে কৌশলেৰে শিয়ালে বাঘিনীৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি দিন পাৰ কৰিবলৈ ধৰিলে। শেহত শিয়ালে তাৰ অপকৰ্মৰ ফল ভোগ কৰে; বাঘৰ পোৱালি দুটাৰ হাতত শিয়ালৰ মৃত্যু হয়।

“বুঢ়া-বুঢ়ী আৰু শিয়াল” সাধুটোত শিয়ালে বুঢ়াক ঠগি কচু খোৱাৰ ফল হাতে হাতে পালে। শিয়ালৰ ওপৰত প্ৰতিশোধ ল'বলৈ বুঢ়াই মৰা মানুহৰ ভেশ জুৰিলে আৰু সুযোগ বুজি শিয়ালক টাঙোনেৰে মাৰিলে। নিজ কৰ্মৰ কৰ্মফল শিয়ালে এনেদৰেই পালে।

‘চিলনী জীয়েকৰ সাধু’ “বুঢ়ী আইৰ সাধু”ৰ এটি জনপ্ৰিয় কাহিনী, ছোৱালী হৈ জন্ম হোৱা বাবেই চিলনীৰ জীয়েকক মাক দেউতাকে পৰিত্যাগ কৰিছিল। চিলনীয়ে কষ্টৰে লালিত-পালিত কৰাৰ পিছত সদাগৰে বিয়া পাতে। সদাগৰৰ ঘৰত সতিনী সকলে চিলনী জীয়েকৰ ওপৰত নানা নিৰ্যাতন চলাইছিল। শেষত তাইক মুদৈৰ ওচৰত বেছি দিছিল আৰু মুদৈয়ে তাইক শুকান মাছৰ ৰখীয়া কৰিছিল। সদাগৰে তাইক সৌভাগ্যক্ৰমে পাই লৈ আহে। শেহান্তত সতিনী কেইজনীয়ে নিজ কৰ্মফল ভোগ কৰে। সদাগৰে সিহঁতক গাঁতত পুতি থোৱাই শাস্তি বিহালে।

“বুঢ়ী আইৰ সাধু”ৰ গল্পবোৰৰ ভিতৰত ‘তুলা আৰু তেজা’ অন্যতম। এলাগীৰ সন্তান হোৱা বাবে কানাই তেজাও এলাগী হৈ পৰিছিল। লাগীয়ে প্ৰথমে এলাগীক কাছলৈ পৰিৱৰ্তন কৰি নিজৰ পথ কন্টক মুক্ত কৰিলে। তুলা-তেজাকো নানা অত্যাচাৰ কৰিবলৈ ধৰিলে। মাকে কানাই তেজাৰ কষ্ট সহি থাকিব নোৱাৰি কাছ হৈয়ে নিজৰ মাতৃ দায়িত্ব পালন কৰিছিল। লাগীয়ে এই কথা গম পাই মাতৃৰূপী কাছটো মাৰি পেলালে। কানাই আৰু তেজাই কাছটোৰ হাঁতোৰা দুটা পুতি থ'লে, তাতে এজোপা জবা টেঙা আৰু এজোপা জবা ফুলৰ গছ হ'ল। মাকে এই গছ দুজোপা হৈ পুনৰ মাকৰ কৰ্তব্যৰত হ'ল। মাকৰ পৰামৰ্শ মতেই কানায়ে স্বৰ্গদেউৰ ওচৰত তেজাৰ বিয়াৰ প্ৰস্তাৱ ৰাখিলে। মাকৰ এই ৰূপান্তৰ জন্মান্তৰবাদৰে দৃষ্টান্ত। পুনৰ জন্মত কৰ্ম আৰু কৰ্মফল ভোগ কৰাৰ নীতি ইয়াতো এলাগী চৰিত্ৰয়ে মানি চলিছে। মাকৰ কৰ্ম পুনৰ জন্মতো কৰিয়েই আছে আৰু কৰ্মফল তেজা আৰু কানাইৰ সুখকৰ ভবিষ্যত জীৱনৰ মাজেদি লাভ কৰিছে। লাগীয়ে তাই কৰা অপকৰ্মৰ ফল তুলাৰ মৃত্যুৰ জৰিয়তে লাভ কৰিছে।

‘চম্পাৱতী’ সাধুটোত এলাগীৰ সন্তান হোৱা বাবে চম্পাৱতীয়ে লাগী আৰু দেউতাকৰ পৰা নানা নিৰ্যাতন পাইছিল। ঈৰ্ষাতে দুয়োৰে চম্পাৱতীক অজগৰ সাপলৈ বিয়া দিলে। সৌভাগ্যক্ৰমে এই বিবাহে চম্পাৱতী আৰু মাকৰ জীৱনলৈ সুখ কঢ়িয়াই আনিলে। অজগৰ সাপলৈ বিয়া দি চম্পাৱতীৰ সুখ হোৱা দেখি লাগীয়ে নিজৰ জীয়েককো সাপলৈ বিয়া দিলে। কিন্তু সাপটোৰ হাতত লাগীৰ জীয়েকৰ মৃত্যু হ'ল। ইয়াৰ পিছত লাগী আৰু দেউতাকে মিলি এলাগী আৰু চম্পাৱতীক মাৰিবলৈ পৰিকল্পনা কৰিছিল। কিন্তু অজগৰৰ প্ৰচেষ্টাত দুয়ো উদ্ধাৰ হ'ল। চম্পাৱতীক কৰিবলৈ লোৱা অন্যায়ৰ কৰ্মফল ৰূপে লাগী আৰু গিৰিয়েকে নিজ সন্তানক হেৰুৱালে। চম্পাৱতীৰ অজগৰৰূপী গিৰিয়েকৰ মাকে কৰা অন্যায়ৰ বাবে চম্পাৱতীয়ে গিৰিয়েকৰ পৰা ছয় বছৰ আঁতৰি থাকিব লগা হৈছিল। শেহতে ৰাক্ষসী মাকে ইয়াৰ প্ৰতিফল পালে; নিজ পুত্ৰৰ হাততে প্ৰাণ হেৰুৱাব লগীয়া হয়।

‘কাঞ্চনী’ সাধুত কৰ্মবাদৰ নৈতিক মূল্যৰ সংৰক্ষন নিয়মৰ প্ৰতিফলন দেখা যায়। বুঢ়াৰ নুমলীয়া পোক বৌৱেক হঁতে হিংসা কৰি কু-মন্ত্ৰ শক্তিৰে কুকুৰলৈ ৰূপান্তৰিত কৰে। কুকুৰৰ ৰূপ লৈ সি নগৰৰ মানুহ এঘৰত থাকিবলৈ ল'লে। সময়ৰ সোঁতত এই নিঃ সন্তান মানুহ হালৰ এজনী ছোৱালী জন্ম পালে। মাকে কুকুৰটোক দিয়া বচন অনুসৰি কাঞ্চনীক

কুকুৰাটোলৈ বিয়া দিলে। সৌভাগ্যবশতঃ কাঞ্চনীৰ হাতত কুকুৰটোৱে পূৰ্বৰ ৰূপ ঘুৰাই পালে।

কাঞ্চনী আৰু তাইৰ গিৰিয়েকৰ এই মিলন স্থায়ী নহ'ল। কাঞ্চনীক নিজৰ কৰি ল'বৰ বাবে ৰজাই গিৰিয়েকক শালত দিলে আৰু এই খবৰ শুনি কাঞ্চনীয়েও কাৰো হাক বচন নুশুনি গিৰিয়েকৰ সৈতে আত্মঘাতী হয়। কাঞ্চনী আৰু তাইৰ গিৰিয়েকে এই জন্মত ভোগ নকৰা কৰ্মফল সঞ্চিত ৰূপত পুনৰ জন্মত লাভ কৰে। মৃত্যুৰ পিছত আঁহত আৰু বৰ গছ হৈ পুনৰ জীৱন পোৱা কাঞ্চন আৰু তাইৰ স্বামীয়ে এজোপা গছ হৈ বাঢ়িবলৈ ধৰিলে।

"বুঢ়ী আইৰ সাধু" পুথিখনৰ এটি উল্লেখযোগ্য সাধু হৈছে তেজীমলা। সতিনীৰ জীয়েক হোৱা বাবেই নিঃসন্তান মাহীমাকে দেউতাক ঘৰত নথকাৰ সুযোগতে তেজীমলাৰ ওপৰত নানা নিৰ্যাতন চলাবলৈ ধৰিলে। সখীয়েকৰ বিয়া খাবলৈ যাওঁতে মাহীমাকৰ চক্ৰান্তৰ বলি হৈ তেজীমলা কাপোৰ নষ্ট কৰাৰ বাবে দোষী সাব্যস্ত হ'ল। এই সুযোগতে মাহীমাকে ঢেঁকীত খুন্দি তেজীমলাক মাৰি পেলাই গাঁত খান্দি পুতি থ'লে । ইয়াৰ পিছৰে পৰাই তেজীমলাই পুনৰ জন্ম লাভ কৰি ক্ৰমে লাও গছ, জৰা টেঙা, পদুম ফুল আৰু শেষত শালিকা চৰাই হৈ আছিল। সদৌ শেষত তেজীমলাই শালিকা চৰাইৰ পৰা পুনৰ নিজৰ ৰূপ ঘূৰাই পালে। সাউদৰ ঘৈনীয়েকে নিজ কৰ্মৰ ফল হাতে হাতে পালে। তেজীমলা সাধুটো কৰ্মবাদৰ ধাৰণাৰে চালে দেখা যায় যে কৰ্মবাদৰ কৰ্মফল লাভ কৰা নীতিৰ লগতে জন্মান্তৰ বাদৰ ধাৰণাও ইয়াত সুন্দৰকৈ ফুটি উঠিছে। সংৰক্ষণৰ নিয়মেই। ইয়াত প্ৰযোজ্য। কৰ্মফল ভোগ নকৰা বাবেই তেজীমলাৰ এই পুনৰ জনম।

০.০৪ ঃ কৰ্মবাদ আৰু লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ 'বুঢ়ী আইৰ সাধু' উভয়েই ভিন্ন প্ৰান্তত অৱস্থান কৰা দুটি বিষয়। কৰ্মবাদ দৰ্শন বিষয় আৰু বুঢ়ী আইৰ সাধু হ'ল সাহিত্য। কিন্তু উভয়ৰে মাজত থকা এক উল্লেখযোগ্য বৈশিষ্ট্যই দুয়োকে একেখন মঞ্চলৈ আনি সমন্বয়ৰ সাকোঁ গঢ়িছে। কৰ্মবাদ আৰু লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ বুঢ়ী আইৰ সাধু দুয়োটাই প্ৰাচীন হৈও নতুন। দুয়োটা সম্পদক এক কৰি নতুনত্ব অনাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। কৰ্মবাদৰ ধাৰণাৰে সংপৃক্ত হৈ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ "বুঢ়ী আইৰ সাধু"ৰ নীতি শিক্ষামূলক বাৰ্তাসমূহ অধিক প্ৰাসংগিক আৰু স্পষ্ট ৰূপত ফুটি উঠিছে। সাধুকথাৰ মাধ্যমেৰে নীতি শাস্ত্ৰৰ এনে আপুৰুগীয়া জ্ঞান প্ৰদানৰ প্ৰচেষ্টা নতুন প্ৰজন্মৰ বাবে লাভদায়ক হ'ব বুলি আমি আশাবাদী।

পাদটিকা ঃ

১) শ্ৰীমদ্ভগৱদ গীতাৰ দৰ্শন- হেমন্ত কুমাৰ ৰয় নয়ন মনি কলিতা, ইউনিয়ন বুক পাব্লিকেচন, পাণ বজাৰ, গুৱাহাটী-১। প্ৰথম প্ৰকাশ, চেপ্তেম্বৰ, ২০২১।

২) শ্ৰীধৰ স্বামীৰ সুবোধিনী টিকাসহিত শ্ৰীমদ্ভভগৱদ্ গীতা। ড° মালিনী গোস্বামী (অনুঃ)। শ্ৰীৰাজেন্দ্ৰ মোহন শৰ্মা, চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, পান বজাৰ, গুৱাহাটী- ৭৮১০০১ প্ৰথম প্ৰকাশ, জানুৱাৰী, ২০০৫।

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

গোস্বামী ড° মালিনী (অনুঃ)। শ্ৰীধৰ স্বামীৰ সুবোধিনী টিকাসহিত শ্ৰীমদ্ভভগৱদ্ গীতা। প্ৰথম প্ৰকাশ। শ্ৰীৰাজেন্দ্ৰ মোহন শৰ্মা, চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, পান বজাৰ, গুৱাহাটী- ৭৮১০০১, জানুৱাৰী, ২০০৫।

বৰুৱা ড° গিৰীশ। নীতিশাস্ত্ৰ। ষষ্ঠ প্ৰকাশ। শ্ৰীঘনশ্যাম লভিয়া, দিব্য প্ৰকাশন, জি. এন. বি ৰোড, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী- ৭৮১০০১ , ২০০৮-২০০৯।

ৰয় হেমন্ত কুমাৰ। শ্ৰীমদ্ভগৱদ গীতাৰ দৰ্শন। প্ৰথম প্ৰকাশ। নয়ন মনি কলিতা, ইউনিয়ন বুক পাব্লিকেচন, বজাৰ, গুৱাহাটী-১, চেপ্তেম্বৰ, ২০২১।

হাজৰিকা সূৰ্য্যকান্ত (সম্পাঃ)। ৰসৰাজ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ শিশু সাহিত্য সম্ভাৰ। দ্বিতীয় প্ৰকাশ। এছ. এইছ এডুকেশ্বনেল ট্ৰাষ্ট, চন্দ্ৰকান্ত হাজৰিকা পথ, তৰুণ নগৰ, গুৱাহাটী- ৭৮১০০৫, ২০১৪।

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

উপন্যাসৰ পৰা চলচ্চিত্ৰলৈ : ৰীতা চৌধুৰীৰ উপন্যাস ‘ৰাজীৱ ঈশ্বৰ’ আৰু মঞ্জুল বৰুৱাৰ চলচ্চিত্ৰ ‘কানীন’

(অভিযোজনা তত্ত্বৰ আধাৰত এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন)

ঋষিকন্যা বাৎস

গৱেষক ছাত্ৰী, অসমীয়া বিভাগ
তেজপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়
অসম-৭৮৪০২৮
৮৬৩৮৫৭৩০১০
rhishikanya@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

সাধাৰণ অৰ্থত সাহিত্যিক অভিযোজনা হৈছে, সাহিত্যিক পাঠ একোটাক এটা মাধ্যম বা শাখাৰ পৰা আন শাখা বা মাধ্যমলৈ কৰা ৰূপান্তৰ। বহুক্ষেত্ৰত সাহিত্যিক পাঠক চলচ্চিত্ৰ পাঠলৈ অভিযোজনা কৰা হয়। অৰ্থাৎ ইয়াৰ মাধ্যমৰ পৰিৱৰ্তন কৰা হয়। এই চলচ্চিত্ৰৰ অভিযোজনা বৰ্তমান সময়ত অতি সমাদৃত। অভিযোজকে স্বকীয় দক্ষতা আৰু চলচ্চিত্ৰীয় কৌশলৰ প্ৰয়োগেৰে লিখিত বা মৌখিক পাঠ একোটাক দৃশ্য-শ্ৰাব্য ৰূপ দিয়ে। বিশ্বৰ আন আন ভাষাৰ লগতে অসমীয়া ভাষাৰ ক্ষেত্ৰতো চলচ্চিত্ৰ নিৰ্মাণত অভিযোজনাই বিশেষ গুৰুত্ব লাভ কৰি আহিছে। ভিন্ন ঐতিহাসিক মহাকাব্যিক আখ্যানৰ পৰা আৰম্ভ কৰি মৌখিক সাহিত্য (সাধুকথা, লোকগাঁথা, লোক-সাহিত্য আদি), লিখিত সাহিত্য (গল্প, উপন্যাস, কবিতা আদি)ক চলচ্চিত্ৰীয় সাহিত্যলৈ ৰূপান্তৰ কৰা হৈছে। এইক্ষেত্ৰত চলচ্চিত্ৰৰ ৰূপ দিয়া অসমীয়া উপন্যাসসমূহৰ ভিতৰত ৰীতা চৌধুৰীৰ উপন্যাস ‘ৰাজীৱ ঈশ্বৰ’ বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। মঞ্জুল বৰুৱাৰ পৰিচালনাত ‘কানীন’ নামেৰে উক্ত উপন্যাসক চলচ্চিত্ৰ ৰূপ দিয়া হৈছে। চতুৰ্থ সংখ্যক নৰ্থ-ইষ্ট ফিল্ম ফেষ্টিভেলত বহুলভাৱে সমাদৃত এই চলচ্চিত্ৰৰ অভিযোজনা আৰু ইয়াৰ লগত সম্পৰ্কিত দিশসমূহক এই আলোচনাত বিচাৰৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। এই সম্পৰ্কত অভিযোজনা সম্পৰ্কে মত আগবঢ়োৱা বহুকেইজন সমালোচক-বিশেষজ্ঞৰ ধাৰণাক আলোচনাৰ আওতালৈ অনা হৈছে। মূলতঃ উপন্যাসৰ পৰা চলচ্চিত্ৰলৈ হোৱা ৰূপান্তৰেই এই অধ্যয়নৰ প্ৰধান বিচাৰ্য্য।

বীজ শব্দ ঃ

ৰূপান্তৰ, সমতুল্য, বিশ্বাসযোগ্যতা, উৎস পাঠ, লক্ষ্যপাঠ।

১.০০ অৱতৰণিকা ঃ

অষ্টাদশ শতিকা বা তাৰ আগলৈকে এক বৈজ্ঞানিক ধাৰণা হিচাপে Adaptation শব্দটো ব্যৱহাৰ কৰা হৈছিল। ঊনবিংশ শতিকাৰ পৰা মানৱিকীবিদ্যাত পৃথকধৰণেৰে (এটা মাধ্যমৰ পৰা আন এটা মাধ্যমলৈ ৰূপান্তৰ) ইয়াৰ ব্যৱহাৰ হৈছে। বিংশ শতিকাৰ মাজভাগৰ পৰা বিদ্যায়তনিক ক্ষেত্ৰত ইয়াৰ ব্যৱহাৰ হয়। প্ৰথমাৱস্থাত, অভিযোজনাক সমালোচকসকলে এক ঋণাত্মক প্ৰয়োগ হিচাপে অভিহিত কৰিছিল। উৎস বা মূল পাঠৰ প্ৰতি থকা মোহৰ বাবেই ঋণাত্মক ধাৰণাৰ সৃষ্টি হৈছিল। পাছলৈ এই ধাৰণাৰ

সলনি হয়। আমি অভিযোজনাক অনুবাদৰ এক অংশ বুলিব পাৰোঁ, য'ত উৎস পাঠ একোটাক কিছু সাল - সলনি বা পৰিৱৰ্তন কৰি লক্ষ্য পাঠ একোটা নিৰ্মাণ কৰা হয়। আমাৰ অধ্যয়নত উৎস পাঠ হৈছে, ৰীতা চৌধুৰীৰ উপন্যাস 'ৰাজীৱ ঈশ্বৰ' আৰু লক্ষ্য পাঠ হৈছে, মঞ্জুল বৰুৱা পৰিচালিত চলচ্চিত্ৰ 'কানীন'। উপন্যাসৰ পৰা চলচ্চিত্ৰলৈ অভিযোজিত হওঁতে হোৱা সংযোগ-বিয়োগকে ধৰি অন্যান্য দিশসমূহ এই অধ্যয়নত সন্নিবিষ্ট কৰা হৈছে।

১.০১ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

১। উপন্যাসৰ পৰা চলচ্চিত্ৰলৈ হোৱা অভিযোজনাৰ গুৰুত্ব বিচাৰ কৰা।

২। ৰাজীৱ ঈশ্বৰৰ পৰা কানীনলৈ হোৱা অভিযোজনাত সংযোজন-বিযোজন ঘটা দিশসমূহ বিচাৰ কৰা।

৩। অসমীয়া চলচ্চিত্ৰৰ অভিযোজনাৰ ক্ষেত্ৰখনৰ গুৰুত্ব বৃদ্ধি কৰা।

১.০২ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

এই অধ্যয়ন ৰাজীৱ ঈশ্বৰ উপন্যাস আৰু কানীন চলচ্চিত্ৰৰ পাঠৰ আধাৰত কৰা হৈছে। ৰাজীৱ ঈশ্বৰৰ পৰা কানীনলৈ হোৱা অভিযোজনাৰ বিভিন্ন ধনাত্মক-ঋণাত্মক দিশ ইয়াত বিচাৰ কৰা হৈছে। আৱশ্যক মতে, কেইবাজনো বিশেষজ্ঞৰ অভিযোজনা সম্পৰ্কীয় মতক বিচাৰ কৰা হৈছে।

১.০৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

এই অধ্যয়নত প্ৰধানকৈ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। আৱশ্যক অনুসৰি, সমীক্ষাত্মক আৰু বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰো ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। তথ্য সংগ্ৰহৰ বাবে পুথিভঁৰাল অধ্যয়ন পদ্ধতিৰ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে।

১.০৫ পূৰ্বকৃত অধ্যয়নৰ সমীক্ষা ঃ

Simone Murray1 *Materializing Adaptation Theory: The Adaptation Industry,* Thomas Leitchৰ *Twelve Fallacies in Contemporary Adaptation Theory,* Thomas Leitch1 *Adaptation Studies at a Crossroads,* S Murrayৰ *The adaptation industry : The cultural economy of contemporary literary adaptation,* JI Marsden1 *The Re-Imagined Text: Shakespeare, Adaptation, & Eighteenth-Century Literary Theory,* P Edwards1 *Adaptation: Two Theories* আদিত সাহিত্যৰ অভিযোজনা সম্পৰ্কে সাৱলীল ব্যাখ্যা পোৱা যায়।

John Harrington in his book Film And /As Literature (1977) estimates that one third of all films ever made has been adapted from novels and if we include other literary genres, such as drama or short story, that estimate will be sixty-five percent or more. Nearly all of the works of classic literature in every language have been adapted for films – some, many times and in multiple languages, settings and formats (Dutta, 2016)। ভাৰত তথা অসমৰ চলচ্চিত্ৰ উদ্যোগ ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। হিন্দীৰ লগতে অন্যান্য . আঞ্চলিক ভাষাসমূহত চলচ্চিত্ৰ অভিযোজনাই বিশেষ স্থান লাভ কৰে। যাৰবাবে বিদ্যায়তনিক ক্ষেত্ৰত চলচ্চিত্ৰ অধ্যয়নত অভিযোজনা এক গুৰুত্বপূৰ্ণ বিষয় হৈ পৰিছে।

এই বিষয়ৰ তাত্ত্বিক অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰত Brian McFarlane1 *Novel to Film: An Introduction to the Theory of Adaptation,* George Bluestone1 *Novels into Film,* Jack Boozerৰ *Authorship and Film Adaptation, Evolution,* Brian Boydৰ *Literature, and Film:. A Reader* আদি উল্লেখযোগ্য। Mohammad Rezaul Karimৰ *Adaptation of Shakespeare's Plays into Assamese Farce:. A Study on Historical Perspective,* Deborah Cartmell সম্পাদিত *A Companion to Literature, Film, and Adaptation,* Camila Augusta Pires de Figueiredoৰ *Introduction: Some Theoretical Models for Adaptation Studies,* Cenk Tanৰ *Film Philology: The Value And Significance Of Adaptation* আদিত অভিযোজনা সম্পৰ্কে বিস্তৃত আলোচনা পোৱা যায়।

চলচ্চিত্ৰ অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰত অভিযোজনা বিশেষ অংশ, যাৰবাবে ইয়াৰ বিদ্যায়তনিক আলোচনাৰো অভাৱ নাই। চলচ্চিত্ৰ সমালোচক-গৱেষকসকলৰ গৱেষণা পত্ৰ, প্ৰবন্ধ-নিবন্ধ আদিত বিভিন্ন ভাষাত এই সম্পৰ্কে অধ্যয়নৰ প্ৰচুৰ সমল পোৱা যায়।

২.০০ বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

Works of literature have been adapted for film from the dawn of the industry. Some of the earliest examples come from the work of Georges Méliès, who pioneered many film techniques. In 1899, he released two adaptations—Cinderella based on the Brothers Grimm story of the same name and King John, the first known film to be based on the works of Shakespeare. The 1900 film Sherlock Holmes

Baffled, directed by Arthur Marvin featured Arthur Conan Doyle's detective character Sherlock Holmes intruding upon a pseudo-supernatural burglary. The film, considered the first detective movie, ran for only 30 seconds and was originally intended to be shown in hand-cranked Mutoscope machines. (Literary Adaptation).

বিভিন্ন পৰীক্ষা-সম্পৰীক্ষাৰ মাজেৰে বিকাশ লাভ কৰা অভিযোজনা কেইবাপ্ৰকাৰেৰে হ'ব পাৰে :- প্ৰথমতে; একে শাখাৰ ভিতৰতে (বাল্মিকীৰ ৰামায়ণৰ পৰা মাধৱ কন্দলীৰ ৰামায়ণৰ অনুবাদ), দ্বিতীয়তে, এটা শাখাৰ পৰা আন এটা শাখালৈ (ভট্টদেৱৰ কথা ভাগৱত পদ্যৰ পৰা গদ্যলৈ), তৃতীয়তে, এটা মাধ্যমৰ পৰা আন এটা মাধ্যমলৈ (সাহিত্যিক পাঠৰ পৰা চলচ্চিত্ৰ পাঠৰ নিৰ্মাণ)।

চলচ্চিত্ৰৰ অভিযোজনাত তৃতীয়বিধ সংঘটিত হয়। ইয়াত এটা সাহিত্যিক উৎস পাঠৰ প্ৰতি বিশ্বস্ত থাকি উৎসৰ ভাৱ-ধাৰণাক ধৰি ৰাখি লিখিত পাঠক দৃশ্য পাঠলৈ বা চলচ্চিত্ৰ পাঠলৈ পৰিৱৰ্তন কৰা হয়। এটাৰ পৰা আন এটা মাধ্যমলৈ অভিযোজিত হৈ নিৰ্মিত চলচ্চিত্ৰসমূহত উৎস পাঠৰ লগত বহুতো সাদৃশ্য - বৈসাদৃশ্য পৰিলক্ষিত হয়। Andre Bazinৰ মতে, ই ভাষিক (linguistic) মাধ্যমৰ পৰা দৃশ্য (visual) মাধ্যমলৈ অনুবাদ (Cartmell, 2012)। George Bluestoneৰ মতে, ই কলাৰ এক নতুন কৰ্ম, য'ত অভিযোজকজন সৃষ্টিকৰোঁতা (creator) (Cartmell, 2012)।

উৎস সাহিত্যিক পাঠ, বিশেষকৈ গল্প বা উপন্যাসৰ পৰা অভিযোজিত চলচ্চিত্ৰত সাধাৰণতে সমীক্ষাত্মক দৃষ্টিভংগীৰে উৎস পাঠক বিচাৰ কৰা হয়। এনে কৰিবলৈ যাওঁতে কেতিয়াবা উৎস পাঠৰ কিছু অংশত বিশেষ গুৰুত্ব দি বা কেতিয়াবা উৎস পাঠৰ মূল বিষয়ৰ সংযোজন-বিয়োজন ঘটাই চলচ্চিত্ৰ প্ৰস্তুত কৰা হয়। এইক্ষেত্ৰত অভিযোজনাৰ মূল হৈছে, বিশ্বাসযোগ্যতা বা বিশ্বস্ততা। মূলৰ বিশেষত্ব অটুট ৰাখি উৎস পাঠৰ পৰা বিচ্যুৎ নোহোৱাকৈ থাকি অভিযোজন কৰা হয়।

Michael Klein আৰু Gillian Parker এ তিনি প্ৰকাৰৰ অভিযোজনাৰ কথা কৈছে (Klein, 1981) : -

১। শিথিল অভিযোজনা : মূল পাঠৰ কেৱল ধাৰণা গ্ৰহণ। (শ্বেক্সপীয়েৰৰ অথেলোৰ ধাৰণাত নিৰ্মিত হেমন্ত কুমাৰ দাসৰ অথেলো।)

২। সাহিত্যিক অভিযোজনা : ইয়াত Cinematic Technique ব্যৱহাৰ কম হয় আৰু প্ৰত্যক্ষভাৱে সাহিত্যিক পাঠৰ Videography কৰি উপস্থাপন কৰা হয়। (এই ক্ষেত্ৰত ধ্ৰুপদী সাহিত্যৰ অভিযোজনাৰ কথা ক'ব পাৰোঁ।)

৩। বিশ্বাসযোগ্য অভিযোজনা : উৎকৃষ্ট Cinematic Techniqueৰ ব্যৱহাৰেৰে উৎস পাঠৰ পৰা আঁতৰি নগৈ এই অভিযোজনা কৰা হয়। অৱশ্যে, ইয়াত মূলৰ লগত অভিযোজকৰ নিজস্ব ধাৰণাৰো সংযোজন কৰা হয়। শ্বেক্সপীয়েৰৰ নাটকৰ বিশ্বাসযোগ্য অভিযোজনা Kenneth Banaghৰ Henry V ১৯৮৯।

ৰাজীৱ ঈশ্বৰৰ পৰা কানীনলৈ অভিযোজনা সম্পন্ন কৰোঁতে অভিযোজক মূল পাঠৰ পৰা আঁতৰি অহা নাই। ৰাজীৱ ঈশ্বৰ উপন্যাসখনৰ মূল চৰিত্ৰ মন্দিৰাই কৈশোৰ অৱস্থাত জন্ম দিয়া অবৈধ সন্তানক প্ৰায় চৌবিছ বছৰৰ পাছত বিচাৰি যোৱাৰ যি কাহিনী, তাক প্ৰায় সমতুল্য ৰূপত কানীনত চলচ্চিত্ৰ ৰূপ দিয়া হৈছে। অভিযোজনা সম্পৰ্কীয় চৰ্চাত অভিযোজন প্ৰক্ৰিয়া আৰু অভিযোজকৰ বিশ্বস্ততা বা বিশ্বাসযোগ্যতাই ঘাই স্থান লাভ কৰে। আলোচ্য চলচ্চিত্ৰখনৰ অভিযোজনাত মূলৰ কিছু হৰণ-ভগন হ'লেও সাধাৰণভাৱে মূল উপন্যাসখনত ঔপন্যাসিকে দিব খোজা ইংগিত বা ক'ব খোজা কথাক সামৰি অভিযোজকে দৰ্শকৰ কাষলৈ চলচ্চিত্ৰখন নিব পাৰিছে। এইক্ষেত্ৰত চলচ্চিত্ৰখনৰ সংলাপ-চিত্ৰনাট্য সংৰচনাত মূল ঔপন্যাসিক ডঃ ৰীতা চৌধুৰী জড়িত থকাৰ বাবে অভিযোজনা সম্পাদিত হোৱাৰ স্বত্বেও চলচ্চিত্ৰখন মূলৰ পৰা আঁতৰি অহা নাই যেন ভাৱ হয়।

ৰাজীৱ ঈশ্বৰৰ পৰা কানীনলৈ অভিযোজনা কৰোঁতে পৰিচালকে বহু ক্ষেত্ৰত কিছুমান সুন্দৰ Cinematic Techniqueৰ ব্যৱহাৰ কৰিছে। উদাহৰণস্বৰূপে; আমি চলচ্চিত্ৰখনত ব্যৱহাৰ কৰা সংগীতৰ কথা ক'ব পাৰোঁ। মূল উপন্যাসখনত ঔপন্যাসিকে মূল চৰিত্ৰৰ অন্তৰৰ যন্ত্ৰণা, মমতা, দুখ-দ্বিধা, সংশয় সকলোবোৰ সংলাপ-শব্দৰ যোগেদি প্ৰকাশ কৰিছে। ইয়াৰ পৰিৱৰ্তে চলচ্চিত্ৰখনত বহুক্ষেত্ৰত মন্দিৰাৰ মানসিক স্থিতিক বুজাবলৈ সংলাপৰ পৰিৱৰ্তে সংগীতৰ ব্যৱহাৰ কৰিছে। নিজৰ অবৈধ সন্তানক বিচাৰিবলৈ আৰম্ভ কৰোঁতে সেই সন্তানৰ সামাজিক স্বীকৃতি বা পৰিয়ালৰ দ্বাৰা গ্ৰহণক লৈ মন্দিৰাৰ মনত যি সংশয়ৰ সৃষ্টি হৈছে, তাক এটি গীতৰ জড়িয়তে অতি হৃদয়স্পৰ্শী ৰূপত প্ৰকাশ কৰিছে -----

'শুই থকা আৱেগবোৰ জাগি উঠে,
মনে মনে সাঁচি বুকুতে।'

অবিবাহিত অৱস্থাত জন্ম দিয়া এটি সন্তান, যাৰ অস্তিত্বৰ কথা মন্দিৰাই চৌব্বিশ বছৰে ভবা নাছিল, সেই সন্তান বিচাৰি মন্দিৰা হাহাকাৰ কৰি উঠিছে। বাটৰ কাষত কোনোবাই পেলাই যোৱা এটি সৰু কেঁচুৰাই মন্দিৰাৰ নিজ অবৈধ সন্তানৰ প্ৰতি মমতা জগাই তুলিছে। তেওঁ নিজ সন্তানক ঘূৰাই পাব বিচাৰিছে -

'ইতিহাসৰ পাত লুটিয়াই নিচুকণি গীত গাবলৈ,
অ' আকাশ, দিয়া বিশালতা মইনাক সাৱটি ল'বলৈ।'

অবৈধ সন্তান ৰাজীৱৰ পৰিচয় পোৱাৰ পাছত মন্দিৰাৰ মনত সমাজ-পৰিয়াল সকলোকে লৈ দোমোজাৰ সৃষ্টি হৈছে। ঔপন্যাসিকে শাব্দিক ব্যাখ্যাৰে এই অনুভৱ প্ৰকাশ কৰাৰ দৰেই পৰিচালকে সংগীতৰ শাৰীৰ ব্যৱহাৰ কৰিছে -----

'হেৰুৱাই পোৱা জোনাকৰ ঠিকনাই সুখৰ অশ্ৰু নিগৰায়,
দুহাত দিওঁনে মেলি, লওঁনে সাৱটি মমতাৰ যাতনা বুজে কোনে?'

উপন্যাসখনত কাহিনীভাগ যি ক্ৰমত আগবাঢ়িছে, চলচ্চিত্ৰখনতো একেদৰেই কাহিনীভাগক আগবঢ়োৱা হৈছে। ভিজুৱেল প্ৰকাশৰ সুবিধাৰ বাবে দুই-এটা চিকুৱেন্স উপন্যাসতকৈ আগ-পিছ কৰা হৈছে। সংলাপৰ ক্ষেত্ৰত বহু সময়ত উপন্যাসৰ সংলাপসমূহকেই ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। আনবোৰ উপন্যাসৰ দৰে হুবহু নহ'লেও সমতুল্য ৰূপতেই উপস্থাপন কৰা হৈছে।

John Drydenৰ অনুবাদ তত্ত্বৰ আৰ্হিৰ মতে, অনুবাদৰ প্ৰকাৰ তিনিটা : - Metaphrase, Paraphrase, Imitation। এই অনুবাদ তত্ত্বৰ আৰ্হিত Geoffrey Wagnerএ অভিযোজনা তত্ত্বক তিনি ভাগত বিভক্ত কৰিছে (Zaini, 2016): -

১। Transposition : য'ত Metaphrase অনুবাদৰ দৰে মূল বা উৎস পাঠৰ সম্পূৰ্ণ একেদৰে অভিযোজনা কৰা হয়।

২। CommentaryÊ. û'îÂ Paraphrase অনুবাদৰ দৰে মূল ভাৱ সম্পূৰ্ণ একেই ৰাখি কোনো ঠাইত সংযোগ-বিয়োগ কৰি অভিযোজন কৰা হয়।

৩। Analogy: য'ত Imitation অনুবাদৰ দৰে কেৱল উৎস পাঠৰ ধাৰণা এটাহে লোৱা হয়।

উল্লিখিত বিভাজনৰ আৰ্হিত কানীন চলচ্চিত্ৰৰ অভিযোজনাক Commentary অভিযোজনা বুলি ক'ব পাৰোঁ। ইয়াত মূল পাঠৰ সমতুল্য ৰূপত কাহিনীভাগক উপস্থাপন কৰা হৈছে যদিও বহুক্ষেত্ৰত সংযোগ-বিয়োগ কৰা হৈছে। উদাহৰণ স্বৰূপে;

ৰশ্মিতাৰ জন্মদিনৰ বজাৰ কৰা চিকুৱেন্স, মন্দিৰাহঁত ক্লাবলৈ যোৱা প্ৰথম চিকুৱেন্সটোত গায়িকা, বহু ঠাইত সংগীতৰ ব্যৱহাৰ আদি চলচ্চিত্ৰখনত সংযোগ কৰা হৈছে।

কৈশোৰৰ মন্দিৰা ৰজনী শৰ্মা নামৰ ঘৰুৱা শিক্ষকজনৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত হয়। মন্দিৰালৈ অহা প্ৰেমৰ প্ৰস্তাৱ, বান্ধৱীৰ লগত হোৱা যৌৱনৰ কৌতুহলপূৰ্ণ কথোপকথন, মা-দেউতাকৰ পৰা লাভ কৰা অবাধ স্বাধীনতা তথা মন্দিৰাৰ প্ৰতি আওকণীয়া মনোভাৱ -- এই সকলোবোৰৰ বাবে ভাল-বেয়াৰ সিদ্ধান্ত ল'ব নোৱাৰা মন্দিৰাই শাৰীৰিক আকৰ্ষণৰ বাবে ৰজনী শৰ্মাৰ লগত যৌন সম্পৰ্ক স্থাপন কৰে। যৌৱনৰ দুদোল্যমান সময়ৰ এই ভুলক উপন্যাসখনত যিমান স্পষ্ট ৰূপত উপস্থাপন কৰা হৈছে, তেনেদৰে কিন্তু চলচ্চিত্ৰখনৰ অভিযোজনাত প্ৰকাশ নাপালে। এই দিশত যথেষ্ট অৱকাশ আছিল।

মন্দিৰাই ৰাজীৱক প্ৰথম লগ পোৱা, মন্দিৰাৰ প্ৰতি ৰাজীৱৰ সৌজন্যতাহীন আচৰণ, ৰাজীৱৰ কাষ চাপিবলৈ মন্দিৰাই কৰা প্ৰচেষ্টা, মন্দিৰাৰ কাষত ৰাজীৱ সহজ হোৱাৰ পৰা মন্দিৰা ৰাজীৱৰ ঘৰলৈ যোৱালৈকে গোটেই প্ৰক্ৰিয়াটো উপন্যাসখনত অতি হৃদয়স্পৰ্শী ৰূপত প্ৰকাশ কৰা হৈছে। কিন্তু অভিযোজিত চলচ্চিত্ৰখনত এই ক্ৰমটোৱে উপন্যাসখনৰ দৰে দৰ্শকক চুব পৰা নাই যেন ভাৱ হয়। উপন্যাসখনত ব্যৱহাৰ কৰা সংলাপ আৰু বৰ্ণনাই এই দিশটোক অধিক স্পষ্ট কৰি তুলিছে।

ৰাজীৱ ঈশ্বৰ উপন্যাসখনৰ সমতুল্য ৰূপত কানীনৰ অভিযোজনা কৰিলেও উপন্যাস আৰু চলচ্চিত্ৰ দুয়োখনৰে সামৰণিত পাৰ্থক্য দেখা গৈছে। আমি বাস কৰা পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজত অবিবাহিত অৱস্থাত এগৰাকী মাতৃয়ে সন্তান জন্ম দিয়াটো যেনেদৰে অৱহেলিত ঘটনা, একেদৰেই বিবাহৰ পাছত নিজৰ অবৈধ সন্তানক পৰিয়ালৰ মাজত ঠাই দিবলৈ বিচৰাটোও এক অনাদৰণীয় ঘটনা। ইয়াত মন্দিৰাই নিজ অবৈধ সন্তানক আঁকোৱালি লবলৈ যুঁজিছে। মন্দিৰাই চেষ্টা কৰিছে যদিও শেষত হাৰ মানিছে। চলচ্চিত্ৰখনত মন্দিৰাই ৰাজীৱক নিজ ঘৰলৈ নিয়াৰ কথা দিয়ে আৰু নিজৰ মনত ৰাজীৱক পৰিয়ালৰ সকলোৰে লগত চিনাকি কৰোৱাৰ সিদ্ধান্ত লয়। কিন্তু সেয়া

হৈ নুঠৈগৈ। কথা দিয়া মতে মন্দিৰা ৰাজীৱৰ ওচৰলৈ নাযায়। সমাজৰ কাষত মন্দিৰাই হাৰ মনিছে। ৰাজীৱে মন্দিৰাৰ বাবে অপেক্ষা কৰি থাকে আৰু ইয়াতে কাহিনীৰ অন্ত পৰে।

আনহাতে, উপন্যাসখনত ইয়াৰ পাছত মন্দিৰাৰ স্বামী অভিজিতে ৰাজীৱক ঘৰলৈ অনাৰ কথা সংযোগ হৈছে। অভিজিতে মন্দিৰাৰ সকলো কথা গম পাই ৰাজীৱক নিজ পৰিয়ালত ঠাই দিয়ে। এই ধনাত্মকতাৰে উপন্যাসখনৰ সামৰণি মৰা হৈছে। যিখন পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ ওচৰত মন্দিৰাই হাৰ মানিছে, সেই সমাজৰে পুৰুষ মন্দিৰাৰ স্বামী অভিজিতে মন্দিৰাৰ অবৈধ সন্তানক পৰিয়ালত ঠাই দিছে। ই আমাৰ তথাকথিত সমাজ ব্যৱস্থাৰ প্ৰতি ইতিবাচক ইংগিত। উপন্যাসখনৰ এই ধনাত্মক সামৰণিৰ বিপৰীতে চলচ্চিত্ৰখনত ৰাজীৱ নিজ পৰিচয় নোপোৱাকৈয়ে ৰৈ গৈছে।

নামকৰণলৈ মন কৰিলে দেখিম যে, ৰাজীৱ ঈশ্বৰ উপন্যাসখনৰ মূল চৰিত্ৰৰ নামেৰে নামাকৰণ কৰা হৈছে। আনহাতে, চলচ্চিত্ৰখনত মূল চৰিত্ৰৰ নাম প্ৰত্যক্ষভাৱে নাৰাখি সেই চৰিত্ৰটোক সূচাই কানীন নামাকৰণ কৰা হৈছে। কানীন শব্দৰ অৰ্থ হৈছে, অবৈধ সন্তান। এগৰাকী অবিবাহিত কিশোৰীয়ে জন্ম দিয়া অবৈধ সন্তানৰ কাহিনী প্ৰতিফলিত চলচ্চিত্ৰখনৰ নামকৰণৰ সাৰ্থকতা ইয়াতে প্ৰকাশ পাইছে।

৩.০০ সামৰণি ঃ

এই অধ্যয়নত উৎস পাঠ - ৰীতা চৌধুৰীৰ উপন্যাস 'ৰাজীৱ ঈশ্বৰ'ৰ অভিযোজিত ৰূপ হ'ল, লক্ষ্য পাঠ - মঞ্জুল বৰুৱাৰ পৰিচালিত চলচ্চিত্ৰ 'কানীন'। চলচ্চিত্ৰ অধ্যয়ন আৰু অভিযোজনা তত্ত্বৰ বিচাৰ কৰি উৎস পাঠৰ সমতুল্য প্ৰতিফলন লক্ষ্য পাঠত ঘটিছে।

বিশেষকৈ, চলচ্চিত্ৰৰ ভাষাৰ যথোপযুক্ত ব্যৱহাৰে কাহিনীভাগক উপন্যাসখনৰ সদৃশ ৰূপত চলচ্চিত্ৰত উপস্থাপন কৰিছে। এইক্ষেত্ৰত শ্বট, কেমেৰাৰ গতি, পোহৰ আদিৰ ব্যৱহাৰ শলাগনীয়।

আলোচ্য অভিযোজনাত সংগীতৰ প্ৰয়োগ বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। বহুক্ষেত্ৰত সংগীতৰ এই ব্যৱহাৰে অপ্ৰয়োজনীয় সংলাপৰ প্ৰয়োগৰ পৰা চলচ্চিত্ৰখনক আঁতৰাই ৰাখিছে।

আন কিছু ক্ষেত্ৰত অৱশ্যে উপন্যাসখনত ব্যৱহাৰ হোৱা সংলাপে চৰিত্ৰৰ ভাৱক অধিক হৃদয়স্পৰ্শী ৰূপত প্ৰকাশ কৰিছে, যি সাৱলীল প্ৰকাশ কিন্তু চলচ্চিত্ৰখনৰ ক্ষেত্ৰত হোৱা নাই।

সাহিত্যিক পাঠৰ যথাযোগ্য সমতুল্য অভিযোজনাই সেই পাঠৰ চৰ্চা আৰু সৌষ্ঠৱ বৃদ্ধি কৰে। ইয়াত অভিযোজনাই কোনো কাৰণতে উৎস পাঠৰ মূল ৰূপ নষ্ট নকৰে। বিশ্বাসযোগ্যতা বৰ্তাই ৰাখি কৰা অভিযোজনাই একোটা পাঠৰ পাঠক নতুবা দৰ্শকৰ সংখ্যা বৃদ্ধি কৰে। বহুক্ষেত্ৰত অভিযোজনাই ভাষা-মাধ্যম-শাখা-বিষয় আদিৰ পাৰ্থক্য নোহোৱা কৰে। ❑

প্ৰসংগ সূত্ৰ ঃ

Cartmell, Deborah, editor; *A Companion to Literature, Film, and Adaptation;* Blackwell Companions to Literature and Culture, Blackwell Publishing Ltd, 2012

Cartmell, Deborah, editor; *A Companion to Literature, Film, and Adaptation;* Blackwell Companions to Literature and Culture, Blackwell Publishing Ltd, 2012

Dutta, Amar; The Guide: Adaptation from Novel to Film; postscriptum, An Interdisciplinary Journal of Literary Studies, Vol:1,January 2016; pp. 22-34; https://postscriptum.co.in/wp-content/uploads/2016/09/AMAR-DUTTA.pdf

Klein, Michael and Gillian Parker, editor; *The àßnglish Novel and the Movies;* New York: Ungar, 1981, pp.9-10

Literary Adaptation. en.wikipedia.org/wiki/Literary_adaptation. Accessed 2 Sept. 2023.

Zaini, Ahmad, THEORIES OF ADAPTATION: NOVEL TO FILM, www.academia.edu/30568663/ THEORIES_OF_ADAPTAT , Dec. 2016, pp.11

সহায়ক গ্ৰন্থ ঃ

Neog, Subratjyoti; Chalacchitra Sahitya; Aank-Baak, Guwahati; 2014

Wright, Christine àßtherington- and Ruth Doughty; Understanding Film Theory; Palgrave Macmillan; 2011

Osborne, Richard and Angie Brew; Film Theory for Beginners; Zidane Press, London; 2014

Lacey, Nick; Introduction to Film; Palgrave Macmillan, New York, 2005

Cartmell, Deborah(ed.); A Companion to Literature, Film, and Adaptation; Blackwell Publishing, UK; 201

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

বড়ো ভাষাত সংগৃহীত শব্দ

স্বৰ্ণ প্ৰভা চৈনাৰী

সংগৃহীত শব্দই এই আলোচনাত বড়ো ভাষাৰ চৌদিশে থকা ভাষাসমূহৰ পৰা আদৰি লৈ বড়ো ভাষাত ব্যৱহাৰ কৰা শব্দক সূচাইছে। সাধাৰনতে সংগ্ৰহণ প্ৰক্ৰিয়া স্বাভাৱিকভাৱে হ'ব পাৰে বা প্ৰয়োজনীয়তাত আদৰি ভাষাৰ সুকীয়া গাঁথনিক বৈশিষ্ট্যৰে গঢ়ি লোৱা, অনুবাদ কৰা বা পোনে পোনে প্ৰয়োগ কৰাও হ'ব পাৰে। বড়ো ভাষাত সংগ্ৰহণৰ পৰিৱেশ গঢ় লোৱাৰ ইতিহাস অনুসন্ধান কৰিবলৈ লোক-সাহিত্যৰ সমলৰ পৰাও উদাহৰণ ল'ব লাগিব। বড়ো লোক-সাহিত্যৰ ভাষা অনুধাৱন কৰিলে কোনো কোনো প্ৰকাশভংগীত ছেগা-চোৰোকাকৈ অসমীয়া ভাষাৰ শব্দ পোৱা যায়। যেনে, খেৰাই পূজাত ওজাই যেতিয়া মন্ত্ৰ উচ্চাৰণ কৰে সেই সময়ত বাথৌ দেৱতাৰ লগতে কেবাগৰাকী দেৱতালৈও পূজা আগবঢ়ায় আৰু লগতে নদ-নদীলৈও পূজা আগবঢ়ায়। ওজাই উচ্চাৰণ কৰা মন্ত্ৰক মৌন্থৌৰ আওৱায়নায় কোৱা হয়। মৌন্থৌৰ আওৱায় শব্দ দুটিও ক্ৰমে অসমীয়া শব্দ মন্ত্ৰ আৰু আওৱোৱাৰ পৰা ধ্বনি পৰিৱৰ্তন হৈ প্ৰয়োগ হ'ব পাৰে। এই শব্দ দুটিৰ বাবে বড়ো ভাষাত ৰায়সং বা ৰায়ফৗৰ বা গাবজ্ৰি শব্দৰ প্ৰয়োগ আছে। খেৰাই পূজাত দাহাল-থুংগ্ৰি চিবনায় নামৰ এটি অধ্যায় আছে। বড়ো ভাষাত থুংগ্ৰি শব্দৰ বাবে প্ৰাচীন শব্দৰ প্ৰয়োগ আছে। সেয়া হ'ল ইম্‌ফি বা এম্‌ফি। সেইদৰে পূজা শব্দৰ বাবে প্ৰাচীন ৰূপ আছে। সেয়া হ'ল চিবিনায়। বড়ো ভাষাত প্ৰয়োগ হোৱা গচাই (গোঁসাই) শব্দৰ বাবে প্ৰাচীন শব্দ মৗদায়ৰ প্ৰয়োগ আছে। এনেদৰে অনুধাৱন কৰিলে বহুতো শব্দ পোৱা যাব। এনে কাৰকৰ অন্তৰালত সামাজিক সংস্পৰ্শ বা সাংস্কৃতিক সহৱস্থান মূল বিষয়। একে ভৌগোলিক পৰিসৰ আৰু পৰিৱেশত কেবাযুগ ধৰি জীৱন যাপন কৰাৰ ফলত দুয়োটা ভাষিকগোষ্ঠী সংস্পৰ্শলৈ আহিছে আৰু ফলশ্ৰুতিত সাংস্কৃতিক শব্দৰ আদান প্ৰদান হৈছে। ভাষাত এনেদৰে সংগ্ৰহণ প্ৰক্ৰিয়া সিদ্ধ হয়।

বিংশ শতাব্দিৰ প্ৰথম দশকত বড়ো ভাষাত লিখিত সাহিত্যৰ জাগৰণ হৈছিল। সেই সময়ত ভালেসংখ্যক লেখা প্ৰকাশ পাইছিল। লেখক সকলে লেখাৰ পৰিৱেশ আৰু উদগণি পাইছিল বিশেষকৈ অসমীয়া আৰু বাংলা সাহিত্য পঢ়ি। এফালে অসমীয়া সাহিত্যৰ প্ৰভাৱ আৰু আনফালে বাংলা সাহিত্যৰ প্ৰভাৱত লিখিত বড়ো সাহিত্যৰ ভেঁটি গঢ় লৈছিল। ঠন ধৰি উঠা সাহিত্য সৃষ্টিৰ বাবে উপযুক্ত আৰু প্ৰায়োগিক শব্দৰ প্ৰয়োজন নিশ্চয় থাকিব। আনহাতে লেখক সকলেও যিহেতু অসমীয়া ভাষাৰ লেখাৰদ্বাৰা প্ৰভাৱিত হৈছে স্বাভাৱিকভাৱে বা সচেতনভাৱে অসমীয়া ভাষাৰ শব্দ প্ৰয়োগ কৰাতো সন্দেহৰ বিষয় হ'ব নোৱাৰে। বড়ো ভাষাৰ প্ৰথম লিখিত পুথি বুলি সাহিত্যৰ

অধ্যাপিকা, বড়ো বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী-১৪
৯৪৩৫১৪৪৩২৩
swarna@gauhati.ac.in

বুৰঞ্জী প্ৰণেতা সকলে উল্লেখ কৰা অনুসৰি ১৯১৫ চনত শ্ৰীযুত গংগাচৰণ কাছাড়ী আৰু শ্ৰীযুত নৰপতিচন্দ্ৰ কাছাড়ী প্ৰণীত বড়োনি ফিছা ও আয়েন (বড়োৰ সন্তান আৰু পৰম্পৰাগত আইন)-ত অসমীয়া ভাষাৰ বহুতো শব্দক গ্ৰহণ কৰি লোৱা দেখা যায়। আইন শব্দৰ বাবে বড়ো ভাষাত খান্থি শব্দৰ প্ৰাচীন প্ৰয়োগ আছে। অথচ আইন শব্দটো বেছি গ্ৰহণযোগ্য হ'ল। সম্প্ৰতিকালত এই শব্দটোৰ গ্ৰহণযোগ্যতা বেছি। আনকি দুই-এজনে প্ৰাচীন শব্দ বুলিও ক'ব বিচাৰে যদিও সেয়া অৰান্তৰ। সেইদৰে জনম বা জৌনৌম শব্দটো অসমীয়া জনম বা জন্ম শব্দৰ পৰা লোৱা। জাতিৰ পৰা জাথি প্ৰয়োগ হৈছে। কিন্তু ইয়াৰ বাবে বিকল্প শব্দ হাৰি আছে। অসমীয়া বিচাৰ শব্দৰ বাবে বড়ো ভাষাত চায়খ' শব্দৰ প্ৰচলন আছে। তথাপিও অধিক প্ৰচলিত শব্দ হ'ল বিচাৰ। সেইদৰে অসমীয়া খণ্ডৰ পৰা খৌন্দৌ গঠন হৈছে। ইয়াৰ পিচত প্ৰকাশিত (১৯২০) প্ৰসন্ন কুমাৰ বড়োখাখ্লৌয়াৰী প্ৰণীত বাথুনাম্ বৈখাগুনি গীদু নামৰ পদ্যধৰ্মী পুস্তিকাখনিত অসমীয়া ভাষাৰ শব্দ প্ৰয়োগ কৰা দেখা যায়। ইয়াত নাম্ শব্দটো প্ৰাৰ্থনা বা অসমীয়া নাম শব্দৰ সদৃশ অৰ্থ প্ৰকাশক শব্দৰূপে প্ৰয়োগ হৈছে। গীদু শব্দটো গীতৰ ধ্বনি পৰিৱৰ্তিত ৰূপ। পুথিৰ এঠাইত মহাদেও শব্দৰ প্ৰয়োগ আছে। সেয়া ডাঙৰ অৰ্থ সূচাইছে। অৰ্থাৎ মহাদেৱক সূচাবলৈ প্ৰয়োগ হৈছে। সেইদৰে লক্ষীদেৱীক আৰাধনা কৰাৰ সময়ত মাইনাও সুন্দুৰি শব্দৰ প্ৰয়োগ আছে। ইয়াত সুন্দুৰি শব্দটো সুন্দৰী শব্দৰ ৰূপান্তৰ। এঠাই স্বৰ্গ সূচাবলৈ খৰ্গেয় শব্দৰ প্ৰয়োগ আছে। সম্প্ৰতিকালত চৌৰগী (সৌৰগী) শব্দৰ প্ৰয়োগ আছে। স্বৰ্গ, মৰ্ত্ত আৰু পাতালৰ ধাৰনা আছে যদিও তেনে শব্দৰ প্ৰয়োগ নাছিল। সময়ৰ গতিত স্বৰ্গ বুজাবলৈ চৌৰগী (সৌৰগী), মৰ্ত্ত বুজাবলৈ মৌৰৌথ বা মৌৰৌদ আৰু পাতাল বুজাবলৈ ফাথাল শব্দৰ বহুল প্ৰয়োগ হ'ল। কিন্তু লোক-গাথাত পোৱা অনুসৰি প্ৰাচীন শব্দৰ প্ৰয়োগো আছে। যেনে- স্বৰ্গৰ বাবে ৰাংচাৰ, মৰ্ত্তৰ বাবে হা আৰু পাতালৰ বাবে হাচিং। উদাহৰণস্বৰূপে খেৰাইৰ মন্ত্ৰ হিচাপে উচ্চাৰিত মৈথা হাচি ৰাংৰাচি বাৰিগংথাম... ইত্যাদি ইত্যাদি। ইয়াত মিথা (মৈথা) শব্দই মনুষ্য আৰু আন আন জীৱৰ বাসস্থান পৃথিৱীক সূচাইছে, হাচি (হাচিং) শব্দই পাতাল সূচায় আৰু ৰাংৰাচি শব্দই স্বৰ্গ সূচাইছে। এই কেইটা প্ৰাচীন বড়ো শব্দ। মুঠতে বড়ো লোক-গাথা আৰু লিখিত বড়ো সাহিত্যত লাহে লাহে অসমীয়া ভাষাৰ শব্দৰ প্ৰচলন হ'ল। এই শব্দবোৰ ৰূপৰ ফালৰ পৰা অসমীয়া ভাষাৰ পৰা সংগৃহীত বুলিব পাৰি।

পৃথিৱীৰ কোনো ভাষাই প্ৰভাৱ বা ঋণৰ পৰা মুক্ত নহয়। ভাষাৰ গঠন অনুধাৱন কৰিলে সেই কথা বুজা যায়। সাংস্কৃতিক অনুষংগত মানুহে স্বাভাৱিকভাৱে আৰু স্বতঃস্ফূৰ্তভাৱে পৰস্পৰে প্ৰভাৱিত হয়। তেনে ধনাত্মক পৰিৱেশত এটা ভাষিক সম্প্ৰদায়ে নিকটস্থ ভাষাৰ পৰা ব্যৱহাৰিক শব্দ সংগ্ৰহ কৰে। অসমৰ প্ৰেক্ষাপট আৰু সাংস্কৃতিক অনুষংগৰ মাজত জীৱন যাপন কৰি বড়ো ভাষিকসম্প্ৰদায়ে চৌপাশে আবৃত্ত হৈ থকা ভাষাৰ পৰা ব্যৱহাৰিক শব্দ সংগ্ৰহ নকৰাকৈ থকা নাই। আনহাতে বাংলা আৰু হিন্দীৰ লগতে জ্ঞান-বিজ্ঞানৰ লগত সংপৃক্ত কিছুমান শব্দ যিবোৰ ইংৰাজী ভাষাত বেছিকৈ প্ৰচলন হয় তেনে কিছুমান শব্দও বড়ো ভাষাত সংগৃহীত হৈছে। মুঠতে বড়ো ভাষাত প্ৰাচীন তিব্বত-বৰ্মীয় মূলৰ উপাদানৰ লগতে ভাৰতীয় আৰ্যমূলীয় আৰু ইউৰোপীয় ভাষাৰো প্ৰভাৱ পৰা দেখা যায়। পৃথিৱীৰ সংযোগী ভাষাৰূপে গ্ৰহণ কৰা ইংৰাজী ভাষাত ইটালি, ফ্ৰান্স, জাৰ্মানী, কেলটিক আৰু ইউৰোপীয় বহুতো ভাষাৰ প্ৰয়োগ আছে। ভাৰতীয় আৰ্যভাষাৰো কিছুমান শব্দ লাহে লাহে সংগৃহীত হ'বলৈ ধৰিছে। Oxford Advanced Learners' Dictionaryত তেনে উদাহৰণ পোৱা যায়। উল্লিখিত দুই এটা শব্দৰ ভিতৰত আধাৰ, দাব্বা, হৰতাল, গুলাব জামুন, দাদাগিৰি ইত্যাদি।[১] সেইদৰে যাৰ, লাড্ডু, ধাবা, মছলা চাটনী আদি শব্দও ভাৰতীয় আন আন ভাষাৰ পৰা অন্তৰ্ভুক্ত কৰা হৈছে।[২]

সংগৃহীত শব্দই ভাষাৰ অভাৱ পূৰ কৰাৰ লগতে প্ৰকাশিকা শক্তিও বঢ়ায়। মনকৰিবলগীয়া যে মনোধৰ্মী বা বস্তুধৰ্মী ধাৰনা প্ৰকাশ কৰিব পৰা যিকোনো শব্দই নহওক কিয় সংগৃহীত শব্দ এটা জীন যোৱাৰ লগে লগে তাৰ সৈতে এটা ভাষিক গোষ্ঠীৰ সাংস্কৃতিক চেতনাও প্ৰৱাহিত হ'বলৈ ধৰে। তেনেকৈয়ে অৱলীলাক্ৰমে পৰস্পৰে ভাষা আৰু সংস্কৃতিৰ দিশত প্ৰভাৱৰ ছাপ পৰে। আনকি আধুনিক যুগত বিদ্যায়তনিক কাম-কাজৰ বাবেও অনুবাদৰ জৰিয়তে নানা ধৰনৰ শব্দ এটা ভাষাৰ পৰা আন এটা ভাষালৈ সংগৃহীত হ'ব পাৰে। তেনে উদাহৰণ বড়ো ভাষাত পোৱা যায়। ৰাজ্য ভাষা হিচাপে অসমীয়া হ'ল বড়ো ভাষাৰ অতি নিকটত সহৱস্থান কৰা আৰু ৰাজ্যৰ মাজত সামূহিকভাৱে ভাৱ প্ৰকাশ কৰিবলৈ ব্যৱহাৰ কৰা বাগ্‌মাধ্যম। সেই অনুসৰি অসমীয়া হ'ল অসমৰ সামাজিক আৰু সাংস্কৃতিক জীৱনৰ যোগসূত্ৰ।

তেনে অনুষংগৰ মাজত বড়ো ভাষাই প্ৰয়োজনীয় শব্দ সংগ্ৰহ কৰাতো স্বাভাৱিক। সেইদৰে অসমীয়া ভাষাতো আৰবী, ফাৰ্চী, উৰ্দু, পৰ্তুগীজ আদি ভাষাৰ শব্দও সোমাইছে আৰু অসমীয়া ভাষাৰ আপোন হৈছে। বড়ো ভাষাৰ শব্দভাণ্ডাৰ অনুসন্ধান কৰি দেখা গৈছে জীৱ-জন্তুবাচক শব্দ যেনে- চিয়াল (শিয়াল), চিলা (চিলা), হাংচৌ (হাঁহ), ফাৰৌ (পাৰ), গৰাই (ঘোঁৰা) ইত্যাদি শব্দবোৰ প্ৰাচীন বড়ো ভাষাৰ শব্দৰ ৰূপৰ লগত মিল নাই। অৰ্থাৎ গাঁথনিক দিশত প্ৰভেদ আছে। বড়ো ভাষাত চ'ৰাইবাচক শব্দসমূহ দুটা ৰূপৰ সংযোগত গঠিত। প্ৰথম ৰূপটো মুক্তৰূপ আৰু দ্বিতীয় ৰূপটো বদ্ধমূল আৰু কোনোবা শব্দৰ ক্ষেত্ৰত মুক্তৰূপ হ'ব পাৰে। যেনে- দাউ-ব' (বগলী), দাউ-খা (কাউৰী), দাউ-থু (কপৌ), দাউ-জ্লা (মতা কুকুৰা), দাউ-গাং (চ'ৰাইৰ পাখী) ইত্যাদি। চ'ৰাইবাচক দাউ শব্দৰ পাছত যোগ হোৱা ৰূপটো বিশেষ বিশেষ চ'ৰাইক সূচাবলৈহে ব্যৱহাৰ হয়। ওপৰত উল্লেখ কৰা চিলা, হাংচৌ, ফাৰৌ শব্দ তিনিটাৰ গঠন প্ৰাচীন বড়ো শব্দ গঠনৰ লগত পাৰ্থক্য আছে। এই বৈশিষ্ট্যৰ পৰা শব্দ দুটা অসমীয়া ভাষাৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰা বুলি ক'ব পৰা যায়। সেইদৰে জন্তুবাচক চিয়াল আৰু গৰাই শব্দ দুটাও প্ৰাচীন বড়ো শব্দৰ গঠনৰ লগত সম্পৰ্ক নাই। জন্তুবাচক শব্দৰ আগত এটা উপ-সৰ্গ যোগ হৈ থাকে। গৰু, হাতী, হৰিণ, বান্দৰ, উদ আদি বুজাবলৈ মৌ- উপ-সৰ্গটো বিশেষ বিশেষ বদ্ধমূলৰ আগত ব্যৱহাৰ হয়। যেনে- মৌচৌ, মৌইদেৰ, মৌই, মৌখ্ৰা, মৌথাম আদি। পৰুৱাৰ ক্ষেত্ৰতো মৌ- উপ-সৰ্গ ব্যৱহাৰ হয়। যেনে- মৌচ্ৰৌম। এই আটাইবোৰ দিশ চালে শিয়াল, চিলা, হাঁহ, ঘোঁৰা শব্দ কেইটা ধ্বনি পৰিৱৰ্তন হৈ বড়ো ভাষাত থিতাপি ল'ব পাৰে বুলি অনুমান কৰিব পৰা যায়।

বড়ো ভাষাত ফাৰ্চী ভাষাৰ শব্দ সোমাইছে। অৱশ্যে সেয়া নিকটস্থ ভাষা অসমীয়াৰ জৰিয়তে আহিছে বুলিয়ে ধাৰনা হয়। ফাৰ্চী ভাষাৰ শব্দ অসমীয়ালৈ অহাৰ ধাৰনা দি আসিফ চক্ৰৱৰ্ত্তীয়ে এনেদৰে কৈছে, "১২০৬ খৃষ্টাব্দত মোহম্মদ ইবনে বখতিয়াৰ খলজীয়ে প্ৰাকৃতিক সৌন্দৰ্য অন্যতম পীঠস্থান অসমভূমিত ভৰি দিয়াৰ পৰাই ফাৰ্চী ভাষা অসমত প্ৰৱেশ কৰিছিল। কিন্তু অসমীয়া ভাষাত ফাৰ্চী ভাষাৰ ব্যাপক প্ৰয়োগ সপ্তদশ শতাব্দিৰ পৰাহে আৰম্ভ হৈছিল। অৱশ্যে ইয়াৰ আগতেই ভাৰতবৰ্ষৰ অন্যতম বৈষ্ণৱ গুৰু আৰু দাৰ্শনিক মহাপুৰুষ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ আৰু তেওঁৰ শিষ্য মহাপুৰুষ শ্ৰী শ্ৰী মাধৱদেৱৰ বিশল সাহিত্য সম্ভাৰৰ মাজত বহুতো আৰবী-ফাৰ্চী ভাষাৰ শব্দ ব্যৱহাৰ হোৱা লক্ষ্য কৰা গৈছিল, যেনে- দোকান, বাজাৰ, হাজাৰ, মুলুক, দেওৱান, দৰাচল আদি (চক্ৰৱৰ্ত্তী ২০১৬)।" অসমীয়া ভাষাত ফাৰ্চী শব্দ সোমোৱাৰ বিষয়ে চক্ৰৱৰ্ত্তীয়ে আৰু এটা মন্তব্য দিছে, "আহোম ৰাজত্বৰ সময়ত দিল্লীৰ মোগল সম্ৰাট সকলৰ লগত বংগৰ নবাবৰ লগত হোৱা যুঁজ বাগৰৰ ফলত ফাৰ্চী ভাষাৰ অনেক শব্দ সোমাই আহিবলৈ সুযোগ পায়। তদুপৰি আহোম ৰজাৰ লগত এইসকল শাসকৰ চিঠিপত্ৰৰ যোগাযোগ হৈছিল আৰু মোগলসকলে বা বংগৰ নবাবৰ সকলে ফাৰ্চী ভাষাত লিখা চিঠি পঢ়িবলৈ আহোম ৰজাই 'ফাৰ্চী পঢ়িয়া' নিয়োগ কৰিছিল (চক্ৰৱৰ্ত্তী ২০১৬)।

প্ৰশ্ন হয়, খলজীয়ে অসমত পদাৰ্পণ কৰা সময়ৰ পৰাই লাহে লাহে ফাৰ্চী শব্দৰ সংগ্ৰহণ হ'ল নেকি? সেই সূত্ৰৰ পম খেদি বড়ো ভাষাৰ ক্ষেত্ৰতো একে অনুমানকে গ্ৰহণ কৰিব পৰা যায় নেকি? সেয়া যিয়েই নহওক বড়ো ভাষাত যে ফাৰ্চী শব্দৰ প্ৰচলন আছে সেয়া গ্ৰহণযোগ্য কথা। কিন্তু ফাৰ্চী শব্দৰ সংগ্ৰহণ পোনে পোনে হ'ল নে আন ভাষাৰ যোগেদি সেই পৰিৱেশ ৰচনা হ'ল সেয়া থাওকতে সিদ্ধান্তলৈ আহিব নোৱাৰি। বড়ো ভাষাৰ লিখিত নিদৰ্শন খুব প্ৰাচীন নহয় বাবে সঠিক সিদ্ধান্ত দিবলৈ বিংশ শতাব্দিৰ প্ৰথম দশকৰ পৰা বৰ বেছি আগলৈ আগুৱাব নোৱাৰি। অৱশ্যে অসমীয়া ভাষাত ফাৰ্চী শব্দৰ প্ৰয়োগৰ প্ৰাচীন দৃষ্টান্ত উলিয়াব পৰা যায়। অসমীয়া আৰু বাঙালী ভাষিকসম্প্ৰদায়ৰ লগত সামাজিক-সাংস্কৃতিক সম্পৰ্কৰে জীৱন যাপন কৰি আহিছে বাবে পৰোক্ষ্যভাৱে বড়ো ভাষাত লাহে লাহে সেই সেই ভাষাৰ জৰিয়তে ফাৰ্চী শব্দৰ প্ৰচলন হোৱাৰ সম্ভাৱনা বেছি। অৱশ্যে দুই-এটা লোক উপাদানত নবাব, বাদশাহ, চালামি আদি শব্দৰো উল্লেখ পোৱা যায়। কিন্তু বিংশ শতাব্দিৰ প্ৰথম দশকৰ বড়ো ভাষাৰ ৰচনাত (গঙ্গাচৰণ কাছাড়ী আৰু নৰপতিচন্দ্ৰ কাছাড়ী প্ৰণীত পুথি বড়োনি ফিছা ও আয়েন, ১৯১৫) ফাৰ্চী শব্দ প্ৰয়োগৰ উদাহৰণ পোৱা যায়। যেনে- আয়েন (আঈন), খৰচা(খৰ্চ), জায়গা(জায়েগা), খাগজু (কাগজ), জখম (জখ্ম) ইত্যাদি ইত্যাদি। ইয়াৰোপৰি লিখিত সাহিত্যত ক্ৰমান্বয়ে ফাৰ্চী শব্দৰ ব্যৱহাৰ হ'বলৈ ধৰিলে। লিখিত সাহিত্যত পোৱা অনুসৰি আবহাৱা, আৱাজ, আৰাম, গৰম, জবান আদি শব্দৰ কথা উল্লেখ কৰিব পৰা যায়। দুই-এটা শব্দ বড়ো ভাষাৰ উচ্চাৰণ অনুসৰিও সজাই লোৱাৰ উদাহৰণ দিব পৰা যায়। যেনে-

খুচি, চাখৰ, ফাইমাল, থিয়াৰি ইত্যাদি। ফাৰ্চীত উচ্চাৰিত চ, ছ, স,শ,য আদি ধ্বনিসমূহ বড়ো ভাষাত দন্ত্যমূলীয় চ হিচাপে উচ্চাৰিত হৈছে আৰু ব্যৱহাৰ হৈছে। সেইদৰে প,ত ধ্বনিৰ পৰিৱৰ্তে ফ আৰু থ ধ্বনিৰ উচ্চাৰণ হৈছে।

এটা ভাষাৰ পৰা আন এটা ভাষালৈ শব্দ সংগ্ৰহণ হ'লে আৰু ব্যৱহাৰ কৰিলে মূল শব্দৰ অৰ্থও কেতিয়াবা পৰিৱৰ্তন বা অৰ্থান্তৰ হ'ব পাৰে। ধাৰ লোৱাৰ ফলত মূল শব্দৰ অৰ্থ সমানে প্ৰৱাহিত নহ'বও পাৰে বা প্ৰকাশ নহ'বও পাৰে । তেনে উদাহৰণ বড়ো ভাষাত পোৱা যায়। ফাৰ্চী ভাষাৰ শব্দ বড়ো ভাষাত ব্যৱহাৰ হওঁতে তেনে পৰিৱেশ সৃষ্টি হোৱাও দেখা যায়। তেনেকুৱা দুটামান শব্দ যেনে- গয়েন্দা, গোমস্তা, আবাদ ইত্যাদি। ফাৰ্চী ভাষাত আৱাদ শব্দই জনসংখ্যাৰ লগত জৰিত অৰ্থ বহন কৰিছে। সেই শব্দৰ লগত -ঈ পৰ-সৰ্গ যোগ হৈ আৱাদী গঠন হৈছে। ইয়াৰ অৰ্থ হ'ল জনসংখ্যাৰ বসতি থকা। কিন্তু বড়ো ভাষাত খেতি অৰ্থতহে প্ৰয়োগ হৈছে। আবাদ শব্দৰ পৰা আবাদাৰি (কৃষক) শব্দৰ গঠন হৈছে। সেইদৰে গমশ্তা শব্দই ফাৰ্চীত জমিদাৰে পাব লগা বস্তু বা খাজনা তোলা বিষয়া। কিন্তু বিপৰীতে বড়ো ভাষাত কাৰোবাৰ দোকানত বস্তু বিক্ৰীৰ বাবে দা-দৰমহা লৈ খাতি দিয়া লোককহে বুজায়। গোইন্দা শব্দই ফাৰ্চীত গুপ্তচোৰক সূচায়। কিন্তু বড়ো ভাষাত দুষ্ট কৰ্মৰে আনৰ টকা-পইচা বা বস্তু আদি কাঢ়ি লোৱা দকাইত প্ৰবৃতিৰ লোককহে বুজায়।

মোগল সাম্ৰাজ্যৰ যুগত অমসীয়া ভাষাত সোমোৱা আৰবী শব্দ পৰোক্ষভাৱে বড়ো ভাষালৈও সংক্ৰমিত হোৱা বুলি ধাৰনা হয়। অসমীয়া আৰু বাংলা ভাষা-সাহিত্যৰ প্ৰভাৱ বড়ো ভাষা-সাহিত্যত নুই কৰিব নোৱাৰি। তেনে পৰিৱেশে বড়ো ভাষাৰ ওপৰত ইতিবাচক প্ৰভাৱ পেলাইছে। অসমীয়া বা বাংলাৰ জৰিয়তে আইন-আদালত, সামাজিক-সাংস্কৃতিক আদি দিশৰ লগত সম্পৰ্ক থকা নানা শব্দ বড়ো ভাষালৈ সংক্ৰমণ হোৱাতো স্বাভাৱিক। বড়ো ভাষাত প্ৰয়োগ হোৱা আদালত, জামনি, এজাহাৰ, জুৰিমানা, খাজৌনা, থালিম, আনাৰস (পশ্চিম অসমৰ বড়ো সকলে ৰাইমালি বুলিও কয়), অজন, খবৰ, বখেয়া, ফচল, মচলিচ আদি শব্দ অসমীয়া বা বাংলাৰ জৰিয়তে প্ৰৱেশ কৰিছে। এইসমূহ উদাহৰণ চালে দেখা যায় বড়ো ভাষাত ব্যৱহৃত আৰবী শব্দসমূহ পোনে পোনে আহিছে বা অসমীয়া বা বাংলা ভাষাত ধ্বনি পৰিৱৰ্তন হৈ ব্যৱহৃত শব্দৰ অনুকৰণত প্ৰয়োগ হৈছে। আদালত, ফচল, খবৰ, মচলিচ আদি শব্দবোৰ আৰবীত যেনে আছে তেনেকৈয়ে সামন্যভাৱে ধ্বনি পৰিৱৰ্তন কৰিহে ব্যৱহাৰ কৰিছে, কিন্তু আৰবীৰ জুৰমানা, ইজাহাৰ শব্দবোৰ জুৰিমানা, এজাহাৰৰূপে ব্যৱহাৰ কৰিছে। সেয়া অসমীয়া ভাষাৰ জৰিয়তে ব্যৱহাৰ হোৱা বুলি ধাৰনা হয়। আৰবী ৰজন শব্দৰ বিপৰীতে বড়ো ভাষাত লিৰথাই শব্দৰ প্ৰয়োগ আছে। তথাপিও অজন বা উজন শব্দও প্ৰয়োগ হয়। আৰবী তাআলীম শব্দৰ অনুকৰনত বড়ো ভাষাত থালিম, বকীয়া শব্দৰ অনুকৰনত বখেয়া বাবাখি প্ৰয়োগ হৈছে। সেইদৰে আৰবীৰ আলাহিদানি শব্দৰ বিপৰীতে আলাদা প্ৰয়োগ হয়। ইয়াত ধ্বনি লোপ হৈছে। বড়ো ভাষাত সেই শব্দৰ সদৃশ অৰ্থ সূচোৱা শব্দ হ'ল গুবুন। তথাপিও বড়ো ভাষাত ইয়াৰ প্ৰয়োগ হ'ল। সেয়া বাংলাত সঘনে ব্যৱহাৰ হোৱা আলাদা শব্দৰ পৰা পাব পাৰে। পশ্চিম অসমৰ বড়ো লেখকসকলে এই শব্দটো লিখিত সাহিত্যত সঘনে প্ৰয়োগ কৰা দেখা যায়। আৰবী ভাষাৰ শব্দ বড়ো ভাষাত প্ৰয়োগ হৈছে যদিও তাৰ ব্যাপক অৰ্থ পৰিৱৰ্তন হোৱা নাই, মাথোন ধ্বনিৰ সাল সলনি হোৱা দেখা যায়। অৱশ্যে দুই-এটা শব্দ মনকৰিবলগীয়া আছে।

যেনে- আবকাৰি বা আবগাৰি শব্দৰ অৰ্থ বড়ো ভাষাত চাউলেৰে ৰন্ধা মদ পানীৰে মিহলাই ভাপৰ পৰা উৎপাদন কৰা একপ্ৰকাৰৰ মদ। কিন্তু আৰবীত একপ্ৰকাৰৰ নিচাজাতীয় দ্ৰব্যৰ বেপাৰীক বুজায়। ওপৰত উল্লেখ কৰা হৈছে যে মোগল শাসনৰ প্ৰভাৱে আৰবী আৰু ফাৰ্চী ভাষাৰ শব্দৰ প্ৰচলনত অসম মুলুকত ক্ষীণকৈ হ'লেও পৰিৱেশ গঢ় দিছিল।

ভাৰতবৰ্ষত পৰ্তুগীজৰ প্ৰভাৱ মনকৰিবলগীয়া। ১৪৯৮ খৃষ্টাব্দত ভাস্কডাগামাই কলিকতাত ভৰি দিয়ে আৰু পিচলৈ গোৱা, কোচি আদি ঠাইত প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰে। সেই আগমনে ভাৰতবৰ্ষত পৰ্তুগীজ শব্দৰ প্ৰচলনৰ সুচল পৰিৱেশ সৃষ্টিত কৰে। গোৱাৰ কোংকনী ভাষাত সেয়েহে বহুতো পৰ্তুগীজ শব্দ সোমাই পৰিল। আলমা (আত্মা),পাদ্ৰি (পুৰোহিত), বম (ভাল), অব্ৰিগাদ (ধন্যবাদ সূচক শব্দ) আদি শব্দ কোংকনী ভাষাত প্ৰচলন হ'ল। সেইদৰে বাঙালী বা অসমীয়া ভাষাতো লাহে লাহে বিভিন্ন সূত্ৰৰ যোগেদি নানা শব্দৰ প্ৰচলন হ'বলৈ ধৰিলে। বড়ো ভাষাতো অসমীয়া বা বাংলাৰ যোগেদি দুই-এটা পৰ্তুগীজ শব্দৰ প্ৰচলন হ'ল। পৰ্তুগীজ আয়া শব্দই শিশু আলপৈচান ধৰা মহিলাক বুজায়। বড়ো ভাষাত বোখালী শব্দৰ প্ৰচলন আছে যদিও সেয়া কম বয়সীয়া মহিলা বা

ছোৱালীহে। তথাপিও তেনেকুৱা কাৰ্যৰ বাবে দা-দৰমহা দি বয়সীয়াল মহিলাও ৰখা হয়। সেই ক্ষেত্ৰত আয়া শব্দৰো প্ৰচলন আছে। সেইদৰে পৰ্তুগীজ আলফাইনেতে ইংৰাজীত আলপিন হিচাপে প্ৰয়োগ হ'ল। অসমীয়াত আলপিন আৰু বড়োত ধ্বনি পৰিৱৰ্তন হৈ আলফিন হ'ল। পৰ্তুগীজৰ পৰা অহা আৰু অসমীয়া ভাষাত প্ৰচলন হোৱা আলমাৰি বড়ো ভাষাতো সদৃশভাৱে প্ৰচলন হ'ল। সেইদৰে গুদাম (পৰ্তুগীজ-গুদাৰ), চাবি (পৰ্তুগীজ- চাভে), নিলাম (পৰ্তুগীজ- লেইলাম), বয়াম (পৰ্তুগীজ -বইয়াৰ) আদি শব্দও বড়ো ভাষালৈ আহিল।

ওপৰত উল্লেখ কৰা ভাষাবোৰৰ উপৰিও আন্তৰ্জাতিক সম্পৰ্কৰ মাধ্যমৰূপে আদৰি লোৱা ইংৰাজী ভাষাৰ শব্দৰ প্ৰচলনো বড়ো ভাষাত হ'ল। সেয়া প্ৰধানকৈ অসমীয়া বা চুবুৰীয়া আন আন ভাষাৰ যোগেদি প্ৰভাৱিত হোৱা কাৰক। শিক্ষা-দীক্ষাৰ জাগৰণ, জ্ঞান-বিজ্ঞানৰ প্ৰভাৱ, যোগাযোগৰ সুচল ব্যৱস্থা, গণমাধ্যমৰ প্ৰচলন আৰু প্ৰভাৱ, ব্যৱসায়-বাণিজ্য আৰু বজাৰ অৰ্থনীতিৰ প্ৰভাৱ আদি অনেক কাৰকে মানুহৰ মাজত সংস্পৰ্শ আৰু দৈনন্দিন সম্পৰ্কৰ প্ৰতি থকা ভাৱনাক যোগাত্মক কৰিছে। ইয়াৰ ফলস্বৰূপে ভাষা-সংস্কৃতিৰ সংযোগ বৃদ্ধি পাইছে। ভাষা-সংস্কৃতিক মানুহে উদাৰ দৃষ্টিৰে আকোৱালি ল'বলৈ আগবাঢ়িছে। তেনেকুৱা কাৰকৰ বাবে বড়ো ভাষাত চৌপাশে থকা ভাষাৰ শাব্দিক উপাদান সোমাই আহিল। টিবি, মেলেৰিয়া, ইনজেকচন, ডিগ্ৰী, ফ্ৰক, স্কাৰ্ট ইত্যাদি ইত্যাদি। ওপৰত উল্লেখ কৰাৰ দৰে বহুতো ইংৰাজী শব্দ অসমীয়া ভাষাৰ যোগেদি বড়ো ভাষাত প্ৰচলন হোৱাৰ পৰম্পৰা অনুধাৱন কৰিলে তাৰ অন্তৰালত অসমত বৃটিছৰ আগমন আৰু ইংৰাজী শিক্ষাৰ প্ৰভাৱ উভয়ে কাৰক বুলিব পৰা যায়। জনসংযোগ বা প্ৰচাৰ মাধ্যম আৰু বজাৰ অৰ্থনীতিৰ প্ৰভাৱো নুই কৰিব নোৱাৰি। বিদ্যা-শিক্ষাৰ প্ৰসাৰ, চিকিৎসা বিজ্ঞানৰ উন্নতি আদি কাৰকৰ বাবেও লাহে লাহে ইংৰাজী ভাষাৰ শব্দ সোমাবলৈ ধৰিছে। বেমাৰ-আজাৰৰ লগত জৰিত শব্দ ডেংগু বা মেলেৰিয়া বুজাবলৈ বড়ো ভাষাত নিজস্ব শব্দ নাই। সেইদৰে ঔষধৰ নামসূচক শব্দ সমূহো লাহে লাহে ইংৰাজী ভাষাৰ পৰা সংগ্ৰহণ হ'বলৈ ধৰিছে। চিকিৎসা বিজ্ঞান, ইঞ্জিনিয়াৰিং, বাণিজ্য, ৰাজনীতি আদি নানা বিষয়ৰ লগত জৰিত শব্দ পোনে পোনে বা অনুবাদৰ জৰিয়তে বড়ো ভাষালৈ সংক্ৰমণ হৈ আছে। উদাহৰণস্বৰূপে অসমীয়া ৰাজনীতি শব্দৰ অনুৰূপ অৰ্থ বুজাবলৈ বড়ো ভাষাত ৰাজখান্থি শব্দৰ প্ৰচলন আছে। বড়ো ভাষাত খান্থি শব্দই নীতি বুজায়। সেইদৰে গণতন্ত্ৰ শব্দৰ বাবে বড়ো ভাষাত গনখান্থি বা সুবুংদাৰা, অৰ্থনীতিৰ বাবে ৰাংখান্থি, সমাজবিজ্ঞানৰ বাবে সমাজবিগিয়ান, ভুগোলৰ বাবে ভুমখৌৰাং ইত্যাদিৰূপে অনুবাদ কৰা দেখা যায়। অনুবাদ কৰোতে প্ৰধানকৈ মূল শব্দৰ অৰ্থৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰা হয় আৰু সেইসমূহ শব্দক ভাষাৰ গাঁথনিক বৈশিষ্ট্যৰে সজাই লোৱা দেখা যায়। সম্প্ৰতি কালত শিক্ষা-দীক্ষা, জ্ঞান-বিজ্ঞানৰ প্ৰসাৰৰ বাবে আন ভাষাৰ পৰা শব্দ সংগ্ৰহণ কৰা বা উপযোগিকৈ ব্যৱহাৰ কৰিব পৰাকৈ যতনাই লোৱাৰ পৰিৱেশ সৃষ্টি নোহোৱাকৈ থকা নাই। বড়ো ভাষাত প্ৰাচীন মৌলিক উপাদানৰ উপৰিও সাধিত বৈশিষ্ট্যও আছে। সেয়া ভাষাৰ প্ৰাচীন স্বৰূপ নিৰ্ধাৰন কৰে। কিন্তু শাব্দিক অনুবাদে ভাষাৰ বিশেষ বৈশিষ্ট্যৰ স্বৰূপ নিৰ্ধাৰন নকৰিলেও তাক নব্য ৰূপ বুলিলেও বিশেষ ভুল নহ'ব। বড়ো ভাষাৰ ক্ষেত্ৰত তেনেকুৱা পৰিৱেশ আন আন ভাষাৰ শব্দ অনুবাদ কৰি প্ৰচলন কৰাৰ ফলত সৃষ্টি হৈছে। দুটামান শব্দ যেনে- চেবখাংচালি বা চাফায়চালি (ছপাশাল), ফৰায়চালি (পঢ়াশালী) আদি শব্দৰ অনুবাদৰ কথাকে ক'ব পাৰি। ইয়াত ছপা কৰ্ম আৰু ছপা কাৰ্যৰ শাল অৰ্থত বড়ো ভাষাত চাফায় আৰু চালি শব্দৰ ব্যৱহাৰ হৈছে। কিন্তু বড়ো ভাষাত সমাৰ্থকৰূপে ব্যৱহাৰ কৰা চালি শব্দৰ অৰ্থ শাল নহয়। চালি শব্দই সাময়িকভাৱে সজা সৰু ঘৰ বুজায়। তথাপি পাৰ্যমানে অৰ্থ বহন কৰিব পৰাকৈ শব্দটো সজাই লোৱা হৈছে। ফৰায়চালি শব্দৰ ক্ষেত্ৰতো তদ্ৰূপ অনুবাদ কৰা হৈছে। ফৰায় শব্দটো অসমীয়া পঢ্ ক্ৰিয়াৱাচক ধাতুৰ লগত অৰ্থৰ মিল আছে। সেইদৰে চাফায় শব্দটোও ছপা শব্দৰ লগত অৰ্থৰ সাদৃশ্য আছে। চিকিৎসালয় শব্দটো বড়ো ভাষাত দেহাফাহামচালিৰূপে সজাই লোৱা হৈছে। অসমীয়া দেহ শব্দৰ পৰা বড়ো ভাষাত দেহা হৈছে আৰু এই মূল শব্দৰ লগত বড়ো ফাহাম (ভাল কৰ্) আৰু ঘৰ বা ঠাইৱাচক শব্দ চালি যোগ কৰি বড়ো ভাষাত দেহাফাহামচালি শব্দৰ উৎপত্তি হৈছে। তেনেকুৱা শংকৰ শব্দৰ উদাহৰণ বড়ো ভাষাত পোৱা যায়। যেনে- মাচলাংখাৰ (মাছৰোকা)। মাছ অসমীয়া শব্দ আৰু লাংখাৰ (লৈ যা) হ'ল প্ৰাচীন বড়ো শব্দ। দুয়োটা মিলি এটা শব্দৰ গঠন হৈছে। জ্ঞান-বিজ্ঞানৰ প্ৰসাৰৰ ফলত বড়ো ভাষাত অনুবাদ কাৰ্যৰ সমাদৰ আৰু প্ৰয়োজনীয়তাও বাঢ়িছে। ইয়াৰ ফলস্বৰূপে শব্দৰ সমৃদ্ধি যিদৰে হৈছে সেইদৰে শব্দ

সংগ্ৰহণৰ পৰিমাণো বাঢ়িছে। মুঠতে বড়ো ভাষাত তিব্বত-বৰ্মীয় মূলৰ উপাদান থকাৰ উপৰিও ভাৰতীয় আৰ্যভাষাৰ লগতে ইউৰোপীয় ভাষাৰ শব্দৰ প্ৰচলন বিদ্যমান। লগতে প্ৰায়োগিক শব্দৰ অনুবাদ কাৰ্য দিনে দিনে বাঢ়ি অহাৰ ফলত বড়ো ভাষাত ধাৰ শব্দ বা সংগৃহীত শব্দৰ পৰিমাণ লাহে লাহে বৃদ্ধি পাবলৈ ধৰিছে। ❑

ৱেব উৎস ঃ

[1]https://ddnews.gov.in/people

[2]https://www.indiatoday.in/visualstories/lifestyle/indian-words-in-oxford-dictionary-1874-10-08-2021

[3]https://en.wikipedia.org/wiki/List_of_loanwords_in_Konkani#Family_relationships

প্ৰসংগ পুথি ঃ

আসিফ, মহজৰ আৰু চক্ৰৱৰ্ত্তী, অমলেন্দু. ফাৰ্চী-অসমীয়া-ইংৰাজী অভিধান. গুৱাহাটীঃগুৱাহাটী ইউনিভাৰচিটি প্ৰেছ, ২০১৬

চলিহা, সুমন্ত. আধুনিক অসমীয়া শব্দকোষ. গুৱাহাটীঃ বাণী মন্দিৰ, ১৯৯৬

দ্বাসগুপ্ত, অজয় আৰু দাস, মৃণালকান্তি. বাংলায় অতিথি শব্দেৰ অভিধান. কলকাতাঃ পুনশ্চ, ২০০৪

নাৰ্জী, ভবেন. বড়ো-কছাৰীৰ সমাজ আৰু সংস্কৃতি. গুৱাহাটীঃ বীণা লাইব্ৰেৰী, ১৯৯৬

বৰুৱা, হেমচন্দ্ৰ. হেমকোষ. গুৱাহাটীঃ হেমকোষ প্ৰকাশন, ১৯৯৮

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি ঃ ছপা, সমৰূপতা আৰু বাদ-বিবাদ

প্ৰাঞ্চী বৰা

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
তেজপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়
নপাম, অসম -৭৮৪০২৮
৯১০১৫৮৯০০২
pranchikamarbandha@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

পৃথিৱীৰ প্ৰত্যেকটো জীৱিত ভাষাৰ কম-বেছি পৰিমাণে আখৰ-জোঁটনিৰ সমস্যা থাকে। যেতিয়াৰ পৰা লিখাৰ পৰম্পৰা আহিছে, তেতিয়াৰ পৰাই আখৰ-জোঁটনিৰ প্ৰসংগও আহি পৰিছে। প্ৰাক-আধুনিক কালৰে পৰা অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনিৰ এক সুনিৰ্দিষ্ট ৰূপ নাই। আধুনিক কালতো অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনিয়ে সমৰূপ (standard form) লাভ কৰা দেখা নাযায়। অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে চিন্তা-চৰ্চা আৰম্ভ হৈছে উনবিংশ শতিকাত, ঔপনিৱেশিক শাসন আৰম্ভৰ পাছত। এই বিষয়ে প্ৰথমতে দৃষ্টিগোচৰ কৰে ব্যাপিস্ত মিছনেৰী নাথান ব্ৰাউনে। তেওঁ উচ্চাৰণভিত্তিক সৰল আখৰ-জোঁটনিৰ পোষকতা কৰে। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাকে প্ৰমুখ্য কৰি অসমীয়া পণ্ডিতে তেওঁৰ আখৰ-জোঁটনিৰ ৰীতিক নস্যাৎ কৰি সংস্কৃতীয়া ৰীতিৰ প্ৰস্তাৱ আগবঢ়াই।পৰৱৰ্তী সময়ত কেইবাজনো পণ্ডিতে আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে নিজা নিজা মত প্ৰকাশ কৰা দেখা যায়। এই সম্পৰ্কে ডিম্বেশ্বৰ নেওগ, মহেশ্বৰ নেওগ, গোলোক চন্দ্ৰ গোস্বামীকে ধৰি কেইবাজনো পণ্ডিতে গাইগুটীয়া গ্ৰন্থ প্ৰকাশ কৰিছে। কিন্তু অসমীয়া আখৰ-জোঁটনিৰ সৰ্বজনে গ্ৰহণ কৰা এক নীতি এতিয়াও আগবঢ়াব পৰা নাই। বৰ্তমানে হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ ৰীতিকেই অলপ সালসলনি কৰি প্ৰচলন কৰা হৈ আছে যদিও বাদ- বিবাদৰ ওৰ পৰা নাই। সেয়ে আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰত অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে বিভিন্ন পণ্ডিতৰ মতসমূহ বিশ্লেষণ কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হ'ব।

বীজশব্দ ঃ

আখৰ-জোঁটনি,সমৰূপ, সমস্যা।

প্ৰস্তাৱনা ঃ

আখৰৰ শৃংখলাবদ্ধ গাঁথনিয়ে হ'ল আখৰ-জোঁটনি অৰ্থাৎ একোটা শব্দ বা বাক্য লিখিত ৰূপ দিবলৈ যাওঁতে ধ্বনি প্ৰতীক স্বৰূপ আখৰসমূহ প্ৰণালীবদ্ধভাৱে সজোৱাই আখৰ-জোঁটনি। অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনিৰ সমস্যাটো এটা জন্মগত ব্যাধি; অসমীয়া ভাষাৰ জন্মৰ লগতে এই সমস্যাও লাগি আহিছে।[১] উচ্চাৰণ আৰু বৰ্ণৰ মাজত পাৰ্থক্য থকাৰ বাবে অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনিত প্ৰাচীন কালৰ পৰাই বেমেজালি পৰিলক্ষিত হয়। প্ৰাক আধুনিক পুথিসমূহৰ ক্ষেত্ৰত আখৰ-জোঁটনিৰ কোনো ধৰণৰ সমৰূপ দেখা পোৱা নাযায় যদিও অসমীয়া ভাষাত আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে প্ৰাচীন কালত কোনোধৰণৰ আলোচনা হোৱা দেখা নাযায়। প্ৰাক্-আধুনিক সময়ত যিসমূহ পুথি ৰচনা কৰা হৈছিল সেই পুথিসমূহ কোনো এক নিৰ্দিষ্ট পৰিসৰতেই আৱদ্ধ হৈ থাকে। এই পুথিসমূহ হাতেলিখা আৰু এইসমূহৰ এটাই প্ৰতিলিপি এবাৰত প্ৰস্তুত

কৰা হয়। নকলকাৰে মূলপুথিৰ পৰা নকল কৰোঁতেও আখৰ-জোঁটনিলৈ ধ্যান নাৰাখে। লগতে প্ৰাক-আধুনিক লেখকসকলৰ মাজত যোগাযোগৰ অথবা পুথিৰ আদান-প্ৰদানৰ সুবিধা কম হোৱাৰ বাবে এজন লেখকে আন ওজন লেখকৰ পুথি দেখাটো বৰ সহজ নহয়। সেয়েহে আখৰ-জোঁটনিৰো কোনো সমৰূপ বা 'Standard' ৰূপ এটাই বিকাশ লাভ কৰিব পৰা নাছিল। উল্লেখ কৰিব লাগিব যে, আখৰ জোঁটনি সম্পৰ্কে প্ৰাক-আধুনিক লেখকসকল ইমান অসতৰ্ক যে এখন পুথিৰ একেটা পৃষ্ঠাত দুবাৰ বা ততোধিক থকা এটা শব্দৰ পৃথক পৃথক আখৰ-জোঁটনিও দেখা পোৱা যায়।

ঔপনিবেশিক শাসনৰ আৰম্ভণিৰ লগে লগে সৃষ্টি হোৱা আধুনিক বাতাবৰণে বিভিন্ন ক্ষেত্ৰৰ লগতে ভাষা অধ্যয়নতো পৰিৱৰ্তন আনে। ইয়াৰ ফলস্বৰূপেই ঊনবিংশ শতিকাৰ মধ্যভাগৰ পৰা আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কেও আলোচনা হ'বলৈ আৰম্ভ কৰে। প্ৰিন্টিং প্ৰেছৰ আগমনৰ লগে লগে এটা সুস্থিৰ আখৰ-জোঁটনিৰ প্ৰসংগ আহি পৰিল। ১৮৪৬ চনৰ জানুৱাৰী মাহত প্ৰথম অসমীয়া আলোচনী *অৰুনোদই* প্ৰকাশে আখৰ-জোঁটনি সন্দৰ্ভত নতুন চিন্তা চৰ্চাৰ অৱতাৰণা কৰিলে। *অৰুনোদই* লগত জড়িত নাথান ব্ৰাউনেই প্ৰথম অসমীয়া আখৰ-জোঁটনি সন্দৰ্ভত মতামত আগবঢ়ালে। ইয়াৰ পাছত অসমীয়া পণ্ডিতসকলেও কাকত-আলোচনীৰ পাতত আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিবলৈ লয়। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ পৰা শেহতীয়াকৈ দেৱব্ৰত শৰ্মালৈকে বহুকেইজন আলোচকে অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে মত আগবঢ়োৱা পৰিলক্ষিত হৈছে। *অৰুনোদই,জোনাকী, উষাৰ* আদি কাকত-আলোচনীৰ পাততো এই বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছিল। পৰৱৰ্তী সময়তআখৰ-জোঁটনিৰ কেইবাখনো গাই-গুটীয়া গ্ৰন্থ ৰচনা হৈছিল।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ জোঁটনি ঃ ছপা,সমৰূপতা আৰু বাদ-বিবাদ শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুতৰ উদ্দেশ্যসমূহ হৈছে —

- অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনিৰ সমৰূপ (standard form)ৰ সম্পৰ্কে বিশ্লেষণ কৰি কাকত-আলোচনী বা গ্ৰন্থত প্ৰকাশ পোৱা আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কীয় আলোচনাসমূহ অধ্যয়ন কৰা।
- নাথান ব্ৰাউনৰ সৰল আখৰ-জোঁটনিৰ পটভূমি আৰু ইয়াৰ সীমাবদ্ধতাসমূহ বিশ্লেষণ কৰা।
- হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাই আগবঢ়োৱা সংস্কৃতীয়া ৰীতিৰ আখৰ-জোঁটনিৰ নীতিৰ বিভিন্ন দিশ আৰু পৰৱৰ্তীসময়ত এই নীতিৰ ভিত্তিতেই বিভিন্ন পণ্ডিতে আগবঢ়োৱা মতসমূহ বিশ্লেষণ কৰা।

তথ্য আহৰণৰ উৎস ঃ

অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ জোঁটনি ঃ ছপা, সমৰূপতা আৰু বাদ-বিবাদ শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰ প্ৰস্তুত কৰোঁতে তথ্যসমূহ বিভিন্ন কিতাপ, কাকত-আলোচনীৰ পৰা লোৱা হৈছে। নাথান ব্ৰাউনৰ *Grammatical Notices of Asamese Language* (১৮৪৮) , হেমচন্দ্ৰ বৰুৱা *পঢ়াশলীয়া অভিধান*(১৮৯২), *অসমীয়া ভাষাৰ ব্যাকৰণ* (১৮৫৯) ডিম্বেশ্বৰ নেওগৰ *শুধ অসমীয়া*(১৯৭৫), মহেশ্বৰ নেওগৰ *নিকা অসমীয়া ভাষা*(১৯৯০), শিৱনাথ বৰ্মনৰ *অসমীয়া আখৰ-জোঁটনিৰ কথা* (১৯৯৩), গোলোকচন্দ্ৰ গোস্বামীৰ *অসমীয়া আখৰ-জোঁটনি সমীক্ষা*(২০১০), দেৱব্ৰত শৰ্মা *অসমীয়া জাতীয় অভিধান* (২০১৩) আদিক মূল উৎস হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। গৌণ উৎস হিচাপে বিভিন্ন কাকত আলোচনীত প্ৰকাশিত প্ৰবন্ধ, অসমীয়া ভাষাৰ ব্যাকৰণ আদিক লোৱা হৈছে।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ জোঁটনি ঃ ছপা,সমৰূপতা আৰু বাদ-বিবাদ শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি প্ৰয়োগ কৰা হৈছে।

অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

ঊনবিংশ শতিকাৰ মাজভাগৰ পৰা অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে বিভিন্ন ধৰণৰ আলোচনা হৈ আহিছে। বিভিন্ন ব্যকৰণ, অভিধান,কাকত-আলোচনীৰ জড়িয়তে নাথান ব্ৰাউনৰ পৰা দেৱব্ৰত শৰ্মালৈকে অসমীয়া আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে আগবঢ়োৱা সকলো মতকে আমাৰ পত্ৰই সামৰি ল'ব। এই মতসমূহৰ বিশ্লেষণৰ লগতে এইসমূহৰ সীমাবদ্ধতাসমূহকো এই পত্ৰত আলোচনা কৰা হ'ব।

উচ্চাৰণভিত্তিক আখৰ-জোঁটনি ঃ নাথান ব্ৰাউনৰ মতে- ঔপনিবেশিক শাসনৰ আৰম্ভণীতে খ্ৰীষ্ট ধৰ্মৰ প্ৰচাৰৰ উদ্দেশ্যে ১৯৩৬-৩৭ চনত অসমলৈ অহা আমেৰিকান মিছনেৰীৰ দলটোৰ অন্যতম ৰেভাৰেণ্ড নাথান ব্ৰাউন (১৮০৭-১৮৮৬)এ অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে প্ৰথমতেই মতামত দাঙি ধৰে। ১৮৪৮ত প্ৰকাশ হোৱা নাথান ব্ৰাউনৰ *Grammatical Notices of Asamese Language*ত অসমীয়া ভাষা সম্পৰ্কে প্ৰথমবাৰৰ বাবে বিশদভাৱে আলোচনা কৰে।

তেওঁ *Grammatical Notices of Asamese Language*-ৰ 'Introduction' বা ভূমিকাতেই অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে মতামত আগবঢ়াইছে। অৱশ্যে মনত ৰাখিব লাগিব যে নাথান ব্ৰাউনে অসমৰ শদিয়াত প্ৰথমে থিতাপি লৈছিল। তেওঁৰ প্ৰথম পৰিচয় ঘটে উজনি অসমৰ কথিত ভাষাটোৰ সৈতে।

নাথান ব্ৰাউনে স্পষ্টভাৱে উল্লেখ কৰিছে যে অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনিৰ নীতি নাই — "Although, as a spoken language , the Assamese has been fixed in its present form for centuries, it appears never to have been written on any settled and uniform principles of arthoghaphy."[২] অৰ্থাৎ নাথান ব্ৰাউনে যিসমূহ পুৰণি পুথি অধ্যয়ন কৰিছিল তাত আখৰ-জোঁটনিৰ কোনো এটা সুস্থিৰ নীতি নাই। তেওঁ উল্লেখ কৰিছে যে অসমীয়া ভাষাৰ বৰ্ণ সংস্কৃতিৰ প্ৰায় সমানেই অৰ্থাৎ ৫০টাৰ ওচৰ-পাজৰ; কিন্তু অসমীয়া ভাষাত ইয়াৰ ৩৬ টাৰহে নিৰ্দিষ্ট উচ্চাৰণ আছে। ব্ৰাউনে যিসমূহ পুৰণি পুথি পঢ়িছিল বিশেষকৈ বুৰঞ্জী পুথিসমূহ তাত লক্ষ্য কৰিছিল যে এটা শব্দৰ দুটা বা ততোধিক আখৰ-জোঁটনি আছে। সেয়ে তেওঁ সকলো চালি-জাৰি চাই আখৰ-জোঁটনিৰ এক নীতি *অৰুনোদই*ৰ পাতত সূচনা কৰে। নাথান ব্ৰাউনে আখৰ-জোঁটনি সমমান এটা নিৰ্মাণ কৰোঁতে তিনিটা দিশত মন দিছিল—

১।সংস্কৃত বা অন্যান্য ভাষাৰ পৰা অহা শব্দৰ উচ্চাৰণ যদি সেই ভাষাৰ উচ্চাৰণৰ সৈতে একে, তেন্তে সেই ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি গ্ৰহণ কৰা হ'ব ।

২। অসমীয়া সাহিত্যৰ স্থানীয় লেখকৰ উল্লেখযোগ্য কৰ্মৰাজিৰ পৰা আখৰ-জোঁটনি অনুকৰণ কৰা।

৩। বহুলভাৱে ব্যৱহাৰ হোৱা শব্দৰ আখৰ-জোঁটনিৰ ৰূপটোক তেনেদৰেই উচ্চাৰণ অনুসৰি গ্ৰহণ।

প্ৰথম অসমীয়া অভিধান প্ৰণেতা যদুৰাম ডেকাবৰুৱাই ১৮৩৯ চনত আখৰ-জোঁটনি ক্ষেত্ৰত যি নীতি অৱলম্বল কৰিছিল, সেইয়াও আছিল সৰল আখৰ-জোঁটনি । নাথান ব্ৰাউনে বহু ক্ষেত্ৰত যদুৰাম ডেকাবৰুৱাৰ আখৰ-জোঁটনিকে গ্ৰহণ কৰিছে বুলি নিজেই উল্লেখ কৰিছে। ব্ৰাউনৰ আখৰ-জোঁটনিত এনেধৰণৰ দিশ সমূহত গুৰুত্ব দিছে—

১। 'ই' আৰু 'ঈ'-ৰ ঠাইত 'ই' ব্যৱহাৰ।

২। 'উ' আৰু 'ঊ'-ৰ কেৱল 'উ' ব্যৱহাৰ।

৩। ঋ , ৯ আৰু ব্যৱহাৰ নাই।

৪। 'চ' আৰু 'ছ' কেৱল 'চ', একেদৰে 'জ' আৰু 'ঝ'-ৰ 'জ' ব্যৱহাৰ।

৫। 'শ', 'ষ' আৰু 'স'-ৰ কেৱল 'স' ব্যৱহাৰ।

৬। 'ণ'-ৰ ঠাইত 'ন'-ৰ ব্যৱহাৰ।

৭। 'ক্ষ'-ৰ ঠাইত 'খ'-ৰ ব্যৱহাৰ।

*অৰুনোদই*ৰ *Style and Mode of spelling* শীৰ্ষক প্ৰবন্ধত ব্ৰাউনে লিখিছে—

"ভাষা লিখোঁতে, আখৰৰ যিমান জাতি তিমানহে লিখিব লাগে, একে জাতিৰে দুই তিনি প্ৰভেদৰ সকাম নাই। জয়, জৰ এই দুইৰো একেটা উচ্চাৰণ, এই জাতিৰে অন্তস্থ য়-ৰ বাহিৰে আন 'য' লিখিছোঁ। শ, ষ, স তিনিটাৰে একে মাত শ্ৰী স্ৰী-ৰ একো ভেদ নে দেখোঁ, আমি কেৱল সহে লিখোঁ। ম, ণ আৰু হ্ৰস্ব দীৰ্ঘতো এইদৰে বুজিবা। ভাষাত ৰণ নোবোলে, ৰনহে বোলে, পানী হ'লে পাণি বোলে, পাপীৰ ঠাইত পাপি, কূলৰ ঠাইত কুল, সূৰ্য্যৰ ঠাইত সুৰ্জ বা সুৰুজ।"[৩]

দৰাচলতে নাথান ব্ৰাউনে যি শুনিছিল সেই ৰূপতে আখৰ-জোঁটনি লিখাৰ পোষকতা কৰে। আনহাতে ধৰ্মীয় বা অন্যান্য কাৰণত তেওঁ পুৰণি পুথিসমূহৰ পৰা কেৱল বুৰঞ্জী পুথিসমূহৰ অধ্যয়নৰ সুবিধাহে লাভ কৰে। সেয়েহে নাথান ব্ৰাউনৰ সৰল বানান পদ্ধতিত বুৰঞ্জী পুথিৰ প্ৰভাৱ পোনপটীয়াকৈ পৰে, লগতে ৰজাৰ পৃষ্ঠপোষকতাত লিখা বুৰঞ্জীসমূহত সংস্কৃত ভাষাৰ প্ৰভাৱ কম।

সংযুক্ত বৰ্ণৰ ক্ষেত্ৰতও তেওঁ যিমান পাৰি সৰল কৰাৰ পোষকতা কৰে। উল্লেখযোগ্য যে নাথন ব্ৰাউনে দ্বিত ব্যঞ্জনৰ বিৰোধিতা কৰিছে। তেওঁ *অৰুনোদয়* ৰ পাতত কৈছে - " ৰেফৰ পাচত এটা আখৰ দুটাকৈ নুফুটে"[৪]।

মুঠৰ ওপৰত ব্ৰাউনৰ আখৰ-জোঁটনি আছিল সৰল। মন কৰিবলগীয়া যে নাথান ব্ৰাউনে আখৰ-জোঁটনিৰ নীতি আগবঢ়োৱাৰ আগতেই তেওঁ *অৰুনোদয়*ৰ যোগেদি এই নীতি ব্যৱহাৰ কৰে। তেওঁৰ উচ্চাৰণভিত্তিক আখৰ-জোঁটনি আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনকে ধৰি সেইসময়ৰ অসমীয়া লেখকসকলেও প্ৰয়োগ কৰে।

হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ মত ঃ

অসমীয়া আখৰ-জোঁটনিৰ সুস্থিৰ নীতি এটাৰ বাবে চেষ্টা চলোৱা হেমচন্দ্ৰ বৰুৱা (১৮৩৫-১৮৯৬) আছিল প্ৰথম অসমীয়া ব্যক্তি। ইয়াৰ আগতে অসমীয়া আখৰ-জোঁটনিৰ বাবে যিসকলে প্ৰচেষ্টা লৈছিল তেওঁলোক আছিল আমেৰিকান

মিছনেৰী। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাই প্ৰথম অৱস্থাত আমেৰিকান মিশ্যনেৰীৰ সৰল আখৰ-জোঁটনিৰ নীতিকে ব্যৱহাৰ কৰিছিল; কিন্তু পাছলৈ তেওঁ সংস্কৃতৰ আখৰ-জোঁটনিৰ নীতিৰে অসমীয়া ভাষাক এক সুস্থিৰ ৰূপ দিবলৈ যত্ন কৰিছিল। তেওঁৰ *পঢ়াশলীয়া অভিধান (১৮৯২)*ৰ পাতনিত কৈছেঃ

"আমাৰ ভাষাৰ বৰ্ণবিন্যাস তিনিপ্ৰকাৰে কৰা যায়— প্ৰথমে উচ্চাৰণ অনুসৰি, দ্বিতীয়ত শব্দৰ মূলৰ দৰে, তৃতীয়ত জনা লোকসকলে বহুদিন চলোৱা নিয়মমতে। কিন্তু বৰ্ণবিন্যাসৰ কথাত উচ্চাৰণেই ঘাই বাট দেখাওঁতা। এতেকে যদি মূল শব্দৰ আখৰ ৰাখিলে কোনো অসমীয়া শব্দৰ উচ্চাৰণ লৰে, তেনেহ'লে তাৰ মূললৈ নেচাই উচ্চাৰণৰ অনুগামী হ'ব লাগে। এই কাৰণ সংস্কৃত 'মসূৰ' শব্দক আমাৰ উচ্চাৰণ অনুসাৰে 'মচুৰ' লিখা কৰ্তব্য, আৰু এই অভিধানত লিখাও গৈছে।"[৫]

হেমচন্দ্ৰ বৰুৱা *অসমীয়া ভাষাৰ ব্যাকৰণ(১৮৫৯)*ত অসমীয়া ভাষাত সংস্কৃতৰ দৰে পঞ্চাশটা আখৰ আছে বুলি উল্লেখ কৰিছে। ইয়াৰ চৈধ্যটা স্বৰবৰ্ণ আৰু ছয়ত্ৰিশটা ব্যঞ্জনবৰ্ণ বুলি উল্লেখ কৰিছে। তেওঁ ব্ৰাউনৰ সৰল পদ্ধতিৰ বিপৰীতে অসমীয়া ভাষাত সংস্কৃতৰ দৰে দীৰ্ঘ স্বৰ,মূৰ্দ্ধণ্য বৰ্গ, 'ছ','শ','ষ','ঢ়' আদি আখৰৰ সংযোগ কৰিলে।

হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাই অসমীয়ালৈ অহা বেলেগ ভাষাৰ শব্দৰ আখৰ-জোঁটনি ক্ষেত্ৰত গুৰুত্বপূৰ্ণ মন্তব্য দিছে। তেওঁ কৈছে যে বাংলা আৰু হিন্দী ভাষাৰ দৰে সংস্কৃত বৰ্ণমালাৰ আখৰেৰে লিখা যায় ভাষাৰ কোনো শব্দ অসমীয়া ভাষাত লিখোঁতে তাত যদি 'শ', 'ষ', 'স' থাকে, তেন্তে আমাৰ ভাষাৰ দৰে তাৰ উচ্চাৰণ শুদ্ধকৈ লিখিবৰ নিমিত্তে সেই আখৰটোৰ 'চ' বা 'ছ' নিদি, সি যি ভাষাৰ শব্দ, সেই ভাষাতে লিখাৰ দৰেই তাক লিখা আৰু মতা উচিত। আনহাতে ফাৰ্চী আদি বিদেশী ভাষাৰ শব্দক আমাৰ উচ্চাৰণৰ দৰে লিখা উচিত; যেনে চাহাব, ব্ৰিটিচ্, ৰুচিয়া ইত্যাদি।[৬]

হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাই আখৰ-জোঁটনিৰ ক্ষেত্ৰত মূলৰ অনুগামী। তেওঁ যিমান পাৰে সিমান মূল শব্দৰ ওচৰ চপাতো বিচাৰিছিল। যিহেতু অসমীয়া ভাষাৰ মূল সংস্কৃত। সেয়ে তেওঁ সংস্কৃত আখৰ-জোঁটনিকে অনুসৰণ কৰাৰ পৃষ্ঠপোষকতা কৰিছিল। সংস্কৃতৰ যি বৈয়াকৰণিক নীতি আছিল ণত্ববিধি, ষত্ববিধি, সত্ববিধি, সন্ধি আদি অসমীয়া ভাষাতো মানি চলিছিল। *অসমীয়া ভাষাৰ ব্যাকৰণ*ৰ পাতনিত তেওঁ লিখিছে—"অসমীয়া ভাষা সংস্কৃতমূলীয় হেতু, এই ব্যাকৰণ সংস্কৃত ভাষাৰ ব্যাকৰণৰ পৰাও অনেক কথা প্ৰবিষ্ট কৰা হৈছে।"[৭]

হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাই অসমীয়া বৰ্ণমালাত 'ৱ' আখৰটি সংযোগ কৰে। তেওঁৰ নিজা প্ৰচেষ্টাত ছপাশালত 'ৱ' আখৰটো গঢ়ি ব্যৱহাৰ কৰা হয়। ইংৰাজ চৰকাৰ অথবা মিছনেৰীসকলে 'ৱ' ৰ উচ্চাৰণ অসমীয়াত নাই বুলি 'ৱ' ৰ বিৰোধিতা কৰাত চৰকাৰৰ লগত বৰুৱাৰ মনোমালিন্যও ঘটে। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ প্ৰচেষ্টাত বৰ্ণমালাত স্থান পোৱা 'ৱ' পৰৱৰ্তী সময়ৰ সকলো আখৰ-জোঁটনি সমালোচকে মানি লোৱা পৰিলক্ষিত হয়। ইতিমধ্যে ভাষাবৈজ্ঞানিক দৃষ্টিকোণৰ পৰাও ইয়াৰ বৈশিষ্ট্য অসমীয়া ভাষাত স্পষ্ট বুলি পৰৱৰ্তী সময়ত প্ৰমাণ হৈছে। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাই তেওঁৰ ৰচনাত 'ৱ' ব্যৱহাৰ কৰা শব্দসমূহ বৰ্তমানো তেনেদৰেই লিখা হয়।

হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ আখৰ-জোঁটনিৰ মূল ভাৱাৰ্থ হ'ল অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি কেৱল উচ্চাৰণৰ ওপৰতে নিৰ্ভৰ নকৰে। ইয়াত মূলক লক্ষ্য কৰা প্ৰয়োজনীয়। বিশেষকৈ সংস্কৃত মূলীয় শব্দক যিমান পাৰি সংস্কৃতৰ কাষতে ৰাখিব লাগে। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ আখৰ-জোঁটনিৰ বৈশিষ্ট তেওঁৰ ৰচনাসমূহত ফুটি উঠিছে। তেওঁ যেনেদৰে আখৰ-জোঁটনি নীতিসমূহ বান্ধিছিল,তেনেদৰেই নীতিসমূহ নিজেও প্ৰয়োগ কৰিছিল।

হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ আখৰ-জোঁটনিৰ সংস্কৃতীয়া নীতিক পৰৱৰ্তী সময়ৰ লেখকসকলে অনুসৰণ কৰিলে। *অৰুনোদই* কাকতৰো শেষৰ ফালে হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ ৰীতি বহু পৰিমাণে অনুসৰণ কৰা দেখা যায়। সি যি কি নহওঁক ভাষাবিজ্ঞানে যি নকলেও অসমীয়া আখৰ-জোঁটনিৰ ইতিহাসত হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ অৱদানক নুই কৰিব নোৱাৰি। পৰৱৰ্তী সময়ছোৱাত আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে বেছিভাগ আলোচকেই তেওঁ আগবঢ়োৱা নীতিকেই ভিত্তি হিচাপে লোৱা দেখা যায়।

কাকত-আলোচনীৰ পাতত আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কীয় বাদানুবাদঃ

নাথান ব্ৰাউনে যি সৰল বানান পদ্ধতিৰ পোষকতা কৰিছিল সেইয়া প্ৰকাশ ঘটিছিল ১৯৪৬ চনৰ জানুৱাৰী মাহৰ পৰা প্ৰকাশ হোৱা অসমীয়া আলোচনী *অৰুনোদই*ৰ পাতত। ব্ৰাউনে ১৯৪৮ চনত *Grammatical Notices on the Asamese language* ৰচনা কৰাৰ আগতেই *অৰুনোদই*য়ে সেই নীতি গ্ৰহণ কৰিছিল। *অৰুনোদই*ৰ আখৰ-জোঁটনিত

১৮২০ চনত প্ৰকাশিত প্ৰথম অসমীয়া ছপা পুথি আত্মাৰাম শৰ্মাৰ বাইবেলৰ 'নিউ টেষ্টামেন'ৰ অসমীয়া অনুবাদ "ধৰ্মপুস্তক"ৰ আখৰ-জোঁটনি সৈতেও মিল থকা বুলি ক'ব পাৰি। যি কি নহওক, *অৰুনোদই*ৰ আখৰ-জোঁটনিকে পৰৱৰ্তী সময়লৈ ব্ৰাউনে শৃংখলাবদ্ধভাৱে উপস্থাপন কৰিছিল। ১৯৫৪ চনৰ এপ্ৰিল মাহৰ *অৰুনোদই*ত 'Style and mode of spelling'ত অসমীয়া আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে ব্ৰাউনে আলোচনা কৰিছিল। এই সন্দৰ্ভত ইতিমধ্যে আলোচনা কৰা হৈছে। ইয়াত ব্ৰাউনে কৈছে —

"সংস্কৃত আৰু ভাসা মিহলি কৰিলে আমি ভাল নে দেখোঁ, সংস্কৃত হ'লে সুধ সংস্কৃতেই হ'ব লাগে, ভাসা হ'লে সুদা ভাসা হ'ব লাগে। সংস্কৃতত প্ৰায় সঞোগি আখৰ, ভাসাত গোট গোট আখৰ। আগৰ কালৰ মানুহৰ মুখত সংস্কৃতত সকলে মাত লিখা দৰে ফুটিছিল, এতিয়া প্ৰাই পণ্ডিতৰ মুখতো নু ফুটে।" [৮]

অৰুণোদই পাছত আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে ঊনবিংশ শতিকাৰ শেষৰ ফালে প্ৰকাশিত *জোনাকী* (১৮৮৯-১৯০৩)তো আলোচনা হৈছিল। *অসম ভাষা উন্নতি সাধিনী সভা*ৰ মুখপত্ৰ *জোনাকী*ত লম্বোদৰ বৰা (১৮৬০-১৮৯২)ই 'অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ জোঁটনি' শীৰ্ষক এলানি প্ৰবন্ধ লিখিছিল। তেওঁ তাত উল্লেখ কৰিছে যে "ভাষা লিখাৰ ঘাই অভিপ্ৰায় উচ্চাৰণ ৰখা আৰু আনলৈ পঠোৱা ,শব্দৰ মূল ৰখা নহয়।" [৯]

তেওঁ সংস্কৃতৰ তালব্য 'শ',মূৰ্দ্ধণ্য 'ষ',দন্ত্য 'স','চ','ছ' আৰু 'য' ৰ উচ্চাৰণ অসমীয়াত যেনেদৰে হয়,তেনেদৰে লিখাৰ পোষকতা কৰিছিল। তেওঁ কৈছিল যে আন ভাষাৰ শব্দৰ সঠিক উচ্চাৰণ নহ'লেও কোনো হানি নাই। সংস্কৃতৰ আন ভাষাৰ তালব্য 'শ',মূৰ্দ্ধণ্য 'ষ' আৰু দন্ত্য 'স ৰ উচ্চাৰণ অসমীয়াত কণ্ঠৰ পৰা হ'লে 'শ' 'ষ' বা 'স'য়েই হ'ব; কিন্তু যদি উচ্চাৰণ দাঁতৰ পৰা হয় তেতিয়া 'চ' বা 'ছ' হ'ব। যেনে—

সং- শাল (Shal) — অং- ছাল(কাপোৰৰ এবিধ) দোভাষা (হিন্দী) - দুভছীয়া সিধা (প্ৰা) - চিধা (Sidha) [১০]

সংস্কৃত বা সংস্কৃতৰ পৰা ওলোৱা ভাষা সমূহৰ বাদে আন ভাষাৰ তালব্য 'শ' আৰু মূৰ্দ্ধণ্য 'ষ' অসমীয়াত 'ছ' ৰে দন্ত 'স' অসমীয়াত 'চ' ৰে প্ৰকাশ কৰিবৰ বাবে লম্বোদৰ বৰাই আহ্বান জনালে। যেনে— Commissioner-কমিছনৰ; shillong - শিলং-ছিলং, ষট্-ছয়, summon - সমন-চমন। তেওঁ তালব্য 'শ' ৰ ঠাইত 'ছ' লিখাৰ যুক্তি দেখাইছে এনেদৰে "যেনেকৈ ক + হ = খ, গ+ হ = ঘ, সেইদৰে চ্ + হ = ছ, (অং) চ্ - S ; হ-h; ছ = চ্ + হ্ = s+h = sh = শ (সংস্কৃত) [১১]

সি যি কি নহওক,আনভাষাৰ পৰা পৰা শব্দৰ অসমীয়া আখৰ-জোঁটনি ক্ষেত্ৰত লম্বোদৰ বৰাই যি সমূহ নীতি বান্ধিছিল, সেইসমূহ পাছত সকলোৱে মানি লোৱা দেখা যায়। বৰাই স্পষ্টভাৱে কৈছে যে সংস্কৃতৰ সকলো আখৰ অসমীয়া ভাষাত উচ্চাৰণ নহয়, অৰশ্যে দীৰ্ঘ স্বৰৰ উচ্চাৰণ নাই যদিও তেওঁ বিশেষ ক্ষেত্ৰত 'ঈ' বা 'ঊ' ব্যৱহাৰ কৰিছে। অসমীয়া বৰ্ণমালাত 'ক্ষ', 'ঝ' আদি বৰ্ণৰ প্ৰয়োজনীয়তা নস্যাৎ কৰিছিল। মূলৰ সৈতে সম্পূৰ্ণ একে উচ্চাৰণ হোৱা শব্দৰ বাহিৰে বাকী শব্দত 'ক্ষ'ক 'খ' আৰু 'ঝ' আৰু 'য'ক 'জ' হিচাপে উচ্চাৰণ হয়। একেদৰে তালব্য 'শ', মূৰ্দ্ধণ্য 'ষ' ক্ষেত্ৰতো মূলৰ সৈতে একে হৈ নথকা শব্দত দন্ত্য 'স' আৰু 'ছ' ৰ ঠাইত 'চ' ব্যৱহাৰৰ পৰামৰ্শ দিছে। ণত্ববিধি,ষত্ববিধিৰ ক্ষেত্ৰত কেৱল সংস্কৃতৰ শব্দতেই আন ভাষাৰ শব্দতো মানি চলিলে বেমেজালি কমিব বুলি মত পোষণ কৰিছে। এটা কথা উল্লেখ কৰিব লাগিব যে লম্বোদৰ বৰাই *জোনাকী*ৰ যোগেদি উচ্চাৰণ আৰু মূল দুয়োটাৰে সামঞ্জস্য ৰক্ষা কৰি আখৰ-জোঁটনিক এক সুস্থিৰ নীতি আগবঢ়াব বিচাৰিছিল।

জোনাকী কাকততে লম্বোদৰ বৰাৰ 'অসমীয়া আখৰ জোঁটনি' শীৰ্ষক প্ৰবন্ধলানিৰ বিৰোধিতা কৰি শ্ৰী ছদ্মনামত কোনো লোকে সম্পাদকলৈ চিঠি লিখিছিল। হেমচন্দ্ৰ বৰুৱা নীতিৰ লগত মত নিমিলাৰ বাবে কোনোলোকে লম্বোদৰ বৰুৱাৰ আখৰ-জোঁটনিক অপ্ৰয়োজনীয় বুলি কৈছে।

পদ্মনাথ গোহাঞি বৰুৱাৰ সম্পাদনাত প্ৰকাশ হোৱা *উষা* (১৯০৭-১৯১২) আলোচনীতো আখৰ-জোঁটনিৰ আলোচনা হৈছিল। প্ৰধানকৈ চন্দ্ৰনাথ শৰ্মা (১৮৮৯-১৯২২) আৰু ৰত্নকান্ত বৰকাকতীয়ে (১৮৯৭-১৯৩৬) অসমীয়া আখৰ-জোঁটনি বিষয়ক লেখা-মেলা কৰিছিল। বৰকাকতীয়ে 'অসম, আসাম আৰু অসমীয়া' শীৰ্ষক প্ৰবন্ধটো আখৰ-জোঁটনিৰ সমস্যা মীমাংশাৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰচেষ্টা হাতত লৈছিল। কিছুমান শব্দৰ ক্ষেত্ৰত দুই-তিনিটা ৰূপ প্ৰচলিত থাকে। উদাহৰণস্বৰূপে 'অসম','অচম' আৰু 'আসাম'ৰ মাজত কোনোটো ৰূপ গ্ৰহণ কৰা উচিত এই সম্পৰ্কে তেওঁ যুক্তি আগবঢ়াইছে। তেওঁ 'অসম' শব্দটোৰ

প্ৰচলনত গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছে। একেদৰে 'মই' আৰু 'ময়', 'তই' আৰু 'তয়' কোনোটো গ্ৰহণযোগ্যতা আছে এই সম্পৰ্কেও মন্তব্য আগবঢ়াইছে। তেওঁ 'মই' বা 'তই' শব্দদুটাক 'ময়' বা 'তয়' হিচাপে লিখিবৰ বাবে যুক্তি দিছিল। এই সম্পৰ্কে তেওঁ ইংৰাজী গ্ৰন্থৰ উদ্ধৃতি দি কৈছে —

Acually there is no difference of pronunciation between মই (I) and হয় (is), but thay are written in different ways. In older Assamese literature we find ময় (I) instead of মই। মই seems to be incorrect [১২]

তেওঁ অ-কাৰ আৰু আ-কাৰন্ত শব্দত কৰ্ত্তা কাৰকৰ চিন 'য়' বুলি দেখুৱাইছে। তেওঁ এনেদৰে উল্লেখ কৰিছে —

When 'এ' (e) is added to অ (a) or আ (a) the (e) has the sound of ই (i) and য় (y), অৰ্থাৎ হ + য় = হয় (hay), যা + এ = যায় (jay)। তাৰ তলতে টীকাত আছেঃ— Actually the 'এ' has the sound of 'য়' (y), So it is correct to write হবয় Instead of হবই which word has the pronounciation of হবৈ। It is alw ays seen in Assamese that wherever an ই follows an অ the two together from one ঐ, Thus হ + ই = হই = হৈ, গ + ই = গই = গৈ। [১৩]

উষাৰ পাততে চন্দ্ৰনাথ শৰ্মাই ৰত্নকান্ত বৰকাকতীৰ মতসমূহৰ বিৰোধিতা কৰি আন এটা প্ৰবন্ধ লিখিছিল; কিন্তু বৰকাকতীয়ে পৰৱৰ্তী সময়ত শৰ্মাৰ মতসমূহ খণ্ডন কৰিছে।

ইয়াৰ পাছত *বাঁহী, আৱাহন, জয়ন্তী* আদি কাকততো আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে বিভিন্ন ধৰণৰ আলোচনা হৈছিল। আনন্দচন্দ্ৰ আগৰৱালাই আৱাহনৰ পাতত ঋ, ৯ আৰু ৯ তিনিটা আখৰ অসমীয়া ভাষাত নাই আৰু 'অ' আৰু 'এ'-ৰ দুটাকৈ ধ্বনি আছে বুলি দিয়া মন্তব্য গুৰুত্বপূৰ্ণ। বাণীকান্ত কাকতিয়ে ' অ' ' ধ্বনি উৰ্ধ্ব কমাৰ জৰিয়তে পূৰ্বৰে পৰা বুজাই আহিছে বুলি কৈছে। কিন্তু ' এ' '-ত উৰ্ধ্ব কমাৰ বিষয়ে তেওঁ একো উল্লেখ কৰা নাই। অসম সাহিত্য সভাই আখৰ-জোঁটনি বিষয়ক পত্ৰিকা প্ৰকাশ কৰাৰ লগতে গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়েও পত্ৰিকা প্ৰকাশ কৰিছে। কিন্তু এইসমূহতো একেধৰণৰ বাক-বিতণ্ডাই দেখা যায়। বৰ্তমানৰ কাকত-আলোচনীৰ পাততো আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে কম-বেছি পৰিমানে আলোচনা হৈ থকা দেখা যায়।

অসমীয়া আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কীয় গাই-গুটীয়া আলোচনা ঃ

ইতিমধ্যে উল্লেখ কৰা হৈছে যে অসমীয়া আখৰ-জোঁটনি বিষয়ক কেইখাখনো গ্ৰন্থ ৰচনা হৈছে। অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কীয় প্ৰথমখন গাইগুটিয়া গ্ৰন্থ হ'ল ডিম্বেশ্বৰ নেওগ (১৮৯৯-১৯৬৬)ৰ *শুধ অসমীয়া* (১৯৭৫)। পুথিখনৰ প্ৰথম অধ্যায়তে অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ জোঁটনি সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিছে। নেওগে হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ আখৰ জোঁটনিৰ তিনিটা নীতিক সমৰ্থন আগবঢ়ালেও কিছু ক্ষেত্ৰত মতানৈক্য প্ৰকাশ কৰিছে। বিশেষকৈ হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাই দিয়া শব্দৰ মূল থিক ৰাখিবৰ প্ৰয়োজন নহ'লে 'ই', 'উ', 'চ', আৰু দন্ত্য 'স'ৰ ব্যৱহাৰহে কৰা উচিত মন্তব্যৰ বিপক্ষে ডিম্বেশ্বৰ নেওগে যুক্তি দৰ্শাইছে। তেওঁ উল্লেখ কৰিছে যে "ভাষাত শব্দৰ মূল ঠিককৈ ৰাখিবৰ প্ৰয়োজন নোহোৱা কৰা কেতিয়াও হ'ব নোৱাৰে"।[১৪] বিশেষকৈ বিদেশী ভাষাৰ শব্দ অসমীয়াত লিখোঁতে 'চ', 'ছ', দন্ত্য 'স', মূৰ্দ্ধণ্য 'ষ' আৰু তালব্য 'শ'- ৰ ব্যৱহাৰ সম্পৰ্কে তেওঁ হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাতকৈ চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাক সমৰ্থন জনাইছে। আগৰৱালাৰ ইংৰাজী 'Ch', 'S', 'sh' ক্ৰমে 'চ',দন্ত্য 'স', আৰু তালব্য 'শ' হিচাপে লিখা নীতি নেওগে সমৰ্থন কৰিছে।

অসমীয়া ভাষাত দীৰ্ঘ স্বৰৰ অনুপস্থিতিত নেওগো একমত। তেওঁ গ্ৰন্থখনত উল্লেখ কৰিছে যে অসমীয়া ভাষাত 'চ', 'ছ', 'জ', 'য'; 'ট'-বৰ্গ আৰু 'ত'-বৰ্গ; দন্ত্য 'স', মূৰ্দ্ধণ্য 'ষ' আৰু তালব্য 'শ'-ৰ উচ্চাৰণত প্ৰভেদ নাই। আকৌ যুক্তাক্ষৰৰ ক্ষেত্ৰত সংস্কৃতৰীতিৰ অৱলম্বণ কৰি প্ৰত্যেকটো আখৰ সুকীয়াকৈ উচ্চাৰণত গুৰুত্ব দিছে। ণত্ববিধি আৰু ষত্ববিধিৰো সংস্কৃত ৰীতিৰ অনুগামী হোৱা দেখা গৈছে।

অসমীয়া আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে মহেশ্বৰ নেওগ (১৯১৫-১৯৯৫) এ *নিকা অসমীয়া ভাষা* (১৯৯০) নামেৰে এখন পুথি প্ৰণয়ন কৰে। অৱশ্যে এই পুথিত প্ৰণয়ন কৰা প্ৰবন্ধসমূহ আকাশবাণী গুৱাহাটীত পাঠ কৰিছিল। *নিকা অসমীয়া ভাষাত* মহেশ্বৰ নেওগে উল্লেখ কৰিছে যে অসমীয়া ভাষা কোৱা আৰু লিখাৰ ক্ষেত্ৰৰ প্ৰথম সমস্যাই হ'ল আখৰ-জোঁটনিৰ সমস্যা। মহেশ্বৰ নেওগেও হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ নীতি সমৰ্থন কৰি সংস্কৃত ৰীতিৰ আখৰ-জোঁটনি ব্যৱহাৰ কৰিছে। তেওঁ 'অ' ' ধ্বনিৰ উদ্ধকমা প্ৰয়োগৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিছে। যুক্তাক্ষৰৰ ক্ষেত্ৰত তেওঁ বিশেষ কিছুমান দিশত গুৰুত্ব দিছে। তিনিটীয়া ব্যঞ্জনৰ যুক্তাক্ষৰৰ শেষৰটো ব্যঞ্জন যদি 'ৰ' হয়,

তেতিয়া শেষৰ ‘ৰ’ টো উচ্চাৰণ নহয়। তেওঁ এই ক্ষেত্ৰত উজ্জ্বল < উজ্জল, তত্ব < তত্ত উদাহৰণ দিছে। অসমীয়া মানুহৰ মুখত তিনিটা ব্যঞ্জনযুক্ত বৰ্ণ উচ্চাৰণৰ ক্ষেত্ৰত তেওঁ কৈছেঃ

“অসমীয়া জিভাই যুক্তাক্ষৰ, বিশেষকৈ তিনিটা ব্যঞ্জনৰ যুক্ত ৰূপ উচ্চাৰণ কৰিবলৈ টান পায়; ক'তো ক'তো দুটা ব্যঞ্জনৰ মাজত এটা স্বৰ সুমুৱাই লৈ উচ্চাৰণ কৰে সঙসকৃতি, মোলান, গোলানি, সন্ধিয়া (সংস্কৃতি, ম্লান, গ্লানি, সন্ধ্যা)। ” [১৫]

শিৱনাথ বৰ্মনে ১৯৯৩ চনত *অসমীয়া আখৰ-জোঁটনিৰ কথা* শীৰ্ষক আখৰ-জোঁটনিৰ এখন পূৰ্ণাংগ গ্ৰন্থ প্ৰকাশ কৰে। গ্ৰন্থখনত ‘ই’ আৰু ‘ঈ’, ‘উ’ আৰু ‘ঊ’, ‘ঙ’ আৰু ‘ং’, ‘চ’ আৰু ‘ছ’, ‘জ’ আৰু ‘য’, ‘য়’ আৰু ‘ঞ’, ‘ট’ আৰু ‘ত’, ‘ঠ’ আৰু ‘থ’, ‘ড’ আৰু ‘দ’, ‘ঢ’ আৰু ‘ধ’, ‘ণ’ আৰু ‘ন’, ‘ব’ আৰু ‘ৱ’, ‘ৰ’ আৰু ‘ড়’, ‘ঢ়’, তালব্য ‘শ’,মূৰ্দ্ধণ্য ‘ষ’ আৰু দন্ত্য ‘স’-ৰ ব্যৱহাৰ সম্পৰ্কে বিশদভাৱে আলোচনা কৰিছে। ইয়াৰ বাহিৰেও বিসৰ্গ, চন্দ্ৰবিন্দুৰ স্থানসমূহো নিৰ্ণয় কৰি দেখুওৱাইছে। তেওঁ সংস্কৃত বৈয়াকৰণিক নিয়ম অনুসৰি হ্ৰস্ব,দীৰ্ঘ-স্বৰৰ স্থান নিৰ্ণয় কৰিছে। ইয়াত যুক্তাক্ষৰৰ সৰলীকৰণত তেওঁ বিশেষভাৱে মন দি ‘ৰেফ’-কাৰৰ পিছৰ দ্বিত ব্যঞ্জন বাদ দিয়ে। যেনে — ধৰ্ম্ম— ধৰ্ম, চৰ্চ্চা— চৰ্চা ইত্যাদি।

আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কীয় শেহতীয়া গ্ৰন্থ হৈছে গোলোকচন্দ্ৰ গোস্বামী (১৯২৩-২০২০)ৰ *অসমীয়া আখৰ-জোঁটনি সমীক্ষা* (২০১০)। গোলোকচন্দ্ৰ গোস্বামীয়ে অসমীয়া আখৰ-জোঁটনিৰ বিভিন্ন সমস্যা সমূহ উল্লেখ কৰি এই সমূহৰ সমাধান উপায় নিৰ্ণয় কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে। গোলোকচন্দ্ৰ গোস্বামী আছিল আধুনিক ভাষাবিজ্ঞানৰ ছাত্ৰ। সেয়েহে তেওঁ বৈজ্ঞানিক দৃষ্টিভংগীৰে ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনিৰ সমস্যা নিৰ্মূলত গুৰুত্ব দিছে— “আজি আমি অসমীয়া ভাষাৰ বানান পদ্ধতি সংশোধন আৰু সংস্কাৰ কৰিব খুজিলে ভাষাটোৰ উচ্চাৰণৰ ভিত্তিতহে কৰিব লাগিব। ” [১৬]

তেওঁ বৰ্ণৰ লগত সংগতি ৰাখি আখৰ-জোঁটনিৰ সংশোধন নীতি হাতত লৈছে। আখৰ বা বানান নিৰ্ধাৰণত চকু আৰু কাণৰ বিবাদ হ'লে খেলিমেলি অনিবাৰ্য। আমাৰ ভাষাৰ বানান ভুলৰ সকলো অনৰ্থৰ মূল এই বিবাদেই বুলিব লাগে। গতিকে বৰ্ণৰ লগত সঙ্গতি ৰাখি বানান সংশোধন কৰা উচিত;এইটোৱেই উৎকৃষ্টতম ভাষা বৈজ্ঞানিক নীতি।[১৭] তেওঁ উপধ্বনি, চলতা আদিৰ প্ৰসংগও সুন্দৰকৈ বাখ্যা কৰিছে। কোনো এটা বৰ্ণৰ বহুতো উপধ্বনি (allophonones) থাকিব পাৰে, সেয়েহে ঠাইবিশেষে উচ্চাৰণত ধ্বনিটো অলপ ইফাল-সিফাল হোৱাটো স্বাভাৱিক; কিন্তু উচ্চাৰণ বা ধ্বনি গুণ ইফাল-সিফাল হ'লেও বৰ্ণ সুনিদিৰ্ষ্ট। সেয়েহে বৰ্ণৰ লগত সংগতি ৰাখি আখৰ-জোঁটনি সংশোধন কৰিলে আখৰ-জোঁটনিৰ সমস্যা নোহোৱা হ'ব বুলি গোস্বামীয়ে মত পোষণ কৰিছে। গোস্বামীয়ে মতে ভাষাবিজ্ঞানৰ নীতি অনুসৰি ভাষাৰ মূল ৰখা কৰিব লাগিলে ধ্বনি তথা বৰ্ণগত লিপি গ্ৰহণ কৰা নিতান্ত প্ৰয়োজন।[১৮] যিহেতু ভাষাৰ মূল ৰক্ষাৰ বাবেই যদি আখৰ-জোঁটনি উচ্চাৰণ ভিত্তিক কৰিব নালাগে, তেন্তে এই ধাৰণা অবান্তৰ বুলি গোস্বামীয়ে উল্লেখ কৰিছে। কাৰণ যদি মূলৰ কথা ভাবিয়েই অসমীয়াত উচ্চাৰণ নোহোৱা দীৰ্ঘস্বৰ বা মুৰ্দ্ধণ্য ধ্বনি লিখোঁতে ব্যৱহাৰ কৰা হয়, তেনেহ'লে আজিৰ পৰা শ-বছৰৰ আগত মুৰ্দ্ধণ্য ধ্বনিৰ উচ্চাৰণ ইয়াত আছিল বুলিয়েই পণ্ডিতসকলে ভাবিবলৈ বাধ্য হ'ব। আনহাতে যি সূত্ৰৰ পৰাই শব্দ আহৰণ নকৰক লাগে, ভাষা এটাই গ্ৰহণ কৰাৰ লগে লগে সেইবোৰ ভাষা জননীৰ নিজৰ সন্তান হৈ পৰে, কিয়নো সিহঁতে ইতিমধ্যে নিজস্ব গোট সলাই পেলাই।[১৯] এইফালৰ পৰা চাবলৈ গ'লে আমি সংস্কৃত বুলি ভবা কিমান শব্দ আমাৰ ভাষাত সংস্কৃত হৈ থাকে, লক্ষণীয় হ'ব।

ণত্ববিধি আৰু ষত্ববিধিৰ নিয়মক অৰ্ধতৎসম আৰু তদ্ভৱ শব্দৰ ক্ষেত্ৰত গোস্বামীয়ে নস্যাৎ কৰিছে। অসমীয়া ভাষাত মুৰ্ধণ্য বৰ্ণও নাই, মুৰ্ধণ্য উচ্চাৰণো নাই। গতিকে অৰ্ধতৎসম আৰু তদ্ভৱ শব্দবোৰত ষত্ববিধি মানি নচলিলেও হয়।[২০] কৃৎ আৰু তদ্ধিত প্ৰত্যয়টো ‘ঈ’ৰ ব্যৱহাৰ কমাই নিছে। আনহাতে মুৰ্দ্ধণ্য ‘ট’ বৰ্গৰ আখৰ সমূহ খেলিমেলি হোৱাতকৈ ‘দন্ত’ আখৰেৰে লিখিবলৈ তেওঁ পৰামৰ্শ দিছে। একেদৰে ‘শ’,‘ষ’ আৰু ‘স’ৰ ঠাইত কেৱল ‘স’, ‘ব’ আৰু ‘ৱ’ ঠাইত ‘ব’ৰ ব্যৱহাৰৰ কথা কৈছে।

আনহাতে ‘ছ’ ‘ড়’ ৰ ব্যৱহাৰ কমাই অনাৰ কথা কৈছে। কিছু কিছু ক্ষেত্ৰত ‘জ’ আৰু ‘য’, দুয়োটাই ৰাখিব লাগে আৰু ‘ঢ়’ ব্যৱহাৰো থকাটো প্ৰয়োজনীয় বুলি মন্তব্য দিছে। আকৌ ‘ং’ ৰ ব্যৱহাৰ কমাই আনিছে ‘ঁ’ ৰ ব্যৱহাৰ পৰিস্থিতি অনুযায়ী অনিবাৰ্য বুলি তেওঁ উল্লেখ কৰিছে। স্বৰবৰ্ণৰ ক্ষেত্ৰত হ্ৰস্ব আৰু দীৰ্ঘ স্বৰৰ যি খেলিমেলি আছে ,সেই খেলিমেলি দূৰ কৰিবৰ বাবে লেখকে কেইটামান নীতি আগবঢ়াইছে। অৱশ্যে

হ্রস্ব আৰু দীৰ্ঘ দুয়োবিধ স্বৰৰ ব্যৱহাৰেই তেওঁ কৰিছে ; কিন্তু 'ই'ৰ গৌণৰূপ হিচাপে 'ী' ব্যৱহাৰ ব্যঞ্জনৰ পাছত হোৱা উচিত বুলি উল্লেখ কৰিছে।গোস্বামীয়ে ব্যঞ্জনৰ উষ্ম বৰ্গটো নতুনকৈ উপস্থাপন কৰিছে। আগৰ চ ছ বুজাবলৈ চ়; জ ঝ য বুজাবলৈ জ় আৰু শ, ষ, দন্ত্য স বুজাবলৈ স় আখৰ লোৱা হৈছে।[২১] ব্যঞ্জন মালাৰ 'ক্ষ' আখৰটো এটা যুক্তাক্ষৰ, সেয়েহে ইয়াক একাকী বৰ্ণমালাত স্থান দিয়া উচিত নহয় বুলি গোলোকচন্দ্ৰ গোস্বামীয়ে উল্লেখ কৰিছে। লিপ্যন্তৰৰ ক্ষেত্ৰত তেওঁ অৰ্থাৎ বিদেশী শব্দ লিখাৰ ক্ষেত্ৰত IPA তালিকা অনুসৰি নিকটতম উচ্চাৰণৰ আখৰ ব্যৱহাৰ কৰাৰ মন্তব্য দিছে। ইয়াৰ বাবে দুয়োটা ভাষাৰে বৰ্ণতাত্ত্বিক জ্ঞানৰ প্ৰয়োজনো আহি পৰে।

আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কীয় শেহতীয়া প্ৰস্তাৱনা —সৰল আখৰ-জোঁটনি ঃ

অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে শেহতীয়া সময়ত দেৱব্ৰত শৰ্মাই সম্পাদনা কৰা *অসমীয়া জাতীয় অভিধান* (২০১৩) এ কিছুমান নতুন দিশৰ অৱতাৰণা কৰিছে। নাথান ব্ৰাউনে নিৰ্ণয় কৰাৰ অসমীয়া ভাষাৰ বানান পদ্ধতিৰ সৰল ৰূপটোকেই দেৱব্ৰত শৰ্মাই সংস্কৰণ আৰু পৰিবৰ্দ্ধন কৰি *অসমীয়া জাতীয় অভিধান*ৰ যোগেদি পুনৰ উত্থাপন কৰিছে বুলি ক'ব পাৰি। দেৱব্ৰত শৰ্মাই অসমীয়া ভাষাৰ সৰল বানান পদ্ধতিৰ ক্ষেত্ৰত ঐতিহাসিক তথ্য দাঙি ধৰি কৈছে—

"আমি যাক প্ৰস্তাৱিত বানান, বিকল্প বানান বা সৰল বানান বুলি কৈছো, সেয়া কিন্তু অসমীয়া জাতীয় সম্পাদনা সমিতি অথবা ইয়াৰ মূখ্য সম্পাদকৰ মস্তিকৰ প্ৰসূত নহয়। বৰং ই অসমীয়া ভাষা তথা লিপি বিগত অন্ততঃ ৮০০/৯০০ বছৰ জুৰি প্ৰৱাহিত এক প্ৰধান ধাৰা আছিল আৰু আজিও ই গুৰুত্বপূৰ্ণ হৈ আছে। শৰ্মাই হেম সৰস্বতীৰ বা শংকৰদেৱৰ আখৰ-জোঁটনি খেলি-মেলি থাকিলেও উচ্চাৰণৰ বহু পৰিমাণে খাপ খোৱা আছিল বাবে সৰল আখৰ জোঁটনিৰ ওচৰ চপা বিধৰ বুলি মন্তব্য কৰিছে।"[২২]

দেৱব্ৰত শৰ্মাই প্ৰায় দুইলাখ শব্দৰ বিকল্প বানান বা সৰল আখৰ-জোঁটনি প্ৰস্তুত কৰিছে। শৰ্মাই নাথান ব্ৰাউনে আগবঢ়োৱা যদুৰাম ডেকাবৰুৱাৰ বৰ্ণমালাকে গ্ৰহণ কৰিছে। শৰ্মাৰ বৰ্ণমালাত 'ই','ঊ', 'ছ', 'য', 'ঝ', 'ঞ', 'ট' বৰ্গ, তালব্য 'শ', মূৰ্দ্ধণ্য 'ষ', 'ড়', 'ঢ়' নাই। এইসমূহ আখৰত থকা শব্দৰ বাবে বিকল্প আখৰ-জোঁটনি যোগান ধৰি এই সমস্যা সমাধানৰো প্ৰয়াস কৰা হৈছে। যেনে-

প্ৰচলিত আখৰ-জোঁটনি	— বিকল্প আখৰ-জোঁটনি
ঈগল	ইগল
ঈশ্বৰ	ইস্বৰ
ঊল	উল
কাৰ্য	কাৰ্জ
টাকোন	তাকোন
কঠিয়া	কথিয়া
শৰাই	সৰাই
কঢ়া	কহা
গড়	গৰ

যুক্তাক্ষৰৰ ক্ষেত্ৰতো তেওঁ বহুত সৰল কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে। সংস্কৃতৰ বৈয়াকৰণিক নীতিক *অসমীয়া জাতীয় অভিধান*ত প্ৰায় নস্যাৎ কৰা হৈছে। তেওঁ বলপূৰ্বক সংস্কৃতকৰণৰ বিৰুধিতা কৰিছে। সংস্কৃতৰ লগত ইয়াৰ সম্পৰ্কে যিমানেই ঘনিষ্ঠ আৰু সুগভীৰ নহওক লাগিলে অসমীয়া এটা সুকীয়া, স্বতন্ত্ৰীয়া ভাষা। এই ভাষাৰ জোঁটনি এই ভাষা-ভাষী মানুহৰ আশা আকাংক্ষ্যা অনুসৰিয়েই হোৱা উচিত।[২৩]

বিদেশী ভাষাৰ শব্দসমূহ লিপ্যন্তৰটো তেওঁ উচ্চাৰণকে গুৰুত্ব দিছিল। অভিধানখনৰ পাতনিতে তেওঁ ব্যৱহাৰ কৰা ইংৰাজী ভাষাৰ শব্দসমূহ সৰল জোঁটনিত লিখিছে। যেনে- ইন্তাৰনেট, ইউনিভাৰ্চিতি, হলেন্দ আদি।

মুঠৰ ওপৰত দেৱব্ৰত শৰ্মাই ভাষাবৈজ্ঞানিক দৃষ্টিকোণৰ পৰাই অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি সৰল কৰিবলৈ প্ৰস্তাৱ আগবঢ়াইছে। অসমীয়া ভাষাত উচ্চাৰিত নোহোৱা ধ্বনিসমূহৰ অসমীয়া আখৰ-জোঁটনিত প্ৰয়োজনীয়তা তেওঁ দেখা নাই। প্ৰাচীন পুথিসমূহৰ পৰা এই ধাৰা চলি অহা বুলি তেওঁ যুক্তিও দাঙি ধৰিছে ঃ

"আমাৰ প্ৰস্তাৱিত সৰল বানান এক উদ্ভট কল্পনা নহয়। বৰং ইয়াৰ আছে এক সুদীৰ্ঘ ঐতিহাসিক পটভূমি, কমেও আঠশতিকা বিয়পা সুলিখিত পৰম্পৰা এয়াও মনত ৰখা উচিত যে হেমসৰস্বতী সময়ত ই এক প্ৰান্তিক ধাৰা নাছিল, বৰং সিয়েই আছিল প্ৰধান ধাৰা, সেয়েহে আমাৰ প্ৰস্তাৱিত সৰল বানানৰ বিপক্ষে অনৈতিহাসিকতাৰ অভিযোগ ঢোপত নিটিকে। এক শতিকা পুৰণি হেমকোষ যেনেকৈ ইতিহাস, আঠশতিকা পুৰণি হেম সৰস্বতীও তেনেকৈ ইতিহাস, বৰং ক'ব পাৰি আৰু দীৰ্ঘতৰ, আৰু সুমহান, অবিস্মৰণীয় ইতিহাস।"[২৪]

সামৰণি ঃ

বৰ্ণ আৰু আখৰৰ ভেদ থকা প্ৰতিটো ভাষাৰে আখৰ-জোঁটনিত খেলিমেলি অনিবাৰ্য। তথাপি একোটা ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনিৰ এক সুস্থিৰ আৰু সকলোৰে বাবে গ্ৰহণযোগ্য নীতিৰ নিতান্তই আৱশ্যকীয়। ওপৰৰ আলোচনাৰ পৰা ক'ব পাৰি যে অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কীয় আলোচনাসমূহে এতিয়ালৈকে কোনো এক সুস্থিৰ নীতি দিব পৰা নাই। বৰ্তমান সময়ত প্ৰধানকৈ হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ সংস্কৃতীয়া নীতিকেই কিছু সাল-সলনি কৰি প্ৰয়োগ কৰা হয় যদিও বেমেজালিৰ অন্ত নাই।

উল্লেখ্য যে প্ৰাক-আধুনিক পুথিসমূহে আখৰ-জোঁটনিৰ ক্ষেত্ৰত উচ্চাৰণ ভিত্তিক বা সংস্কৃতীয়া কোনো এক নীতিকে গ্ৰহণ কৰিছিল বুলি ক'ব নোৱাৰি। অৱশ্যে উচ্চাৰণে লিপিকাৰসকলক নিশ্চয় প্ৰভাৱ পেলাইছিল, যাৰ বাবে হ্ৰস্ব স্বৰৰ ব্যৱহাৰ তুলনামূলকভাৱে দীৰ্ঘ স্বৰতকৈ বেছি আছিল; কিন্তু সেই বুলিয়েই আমি নাথান ব্ৰাউন বা বৰ্তমান দেৱব্ৰত শৰ্মাই আগবঢ়োৱা একেবাৰে সৰল জোঁটনিও এইসমূহত দেখা নাযায়। একেদৰে হেমচন্দ্ৰ বৰুৱা বা ডিম্বেশ্বৰ নেওগে আগবঢ়োৱা সংস্কৃত ব্যাকৰণৰ আৰ্হিও ইয়াত পোৱা নাযায়। যদি নাথান ব্ৰাউন বা দেৱব্ৰত শৰ্মাই কোৱা উচ্চাৰণভিত্তিক আখৰ-জোঁটনিক গ্ৰহণ কৰা হয়, প্ৰাক-আধুনিক অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনিকো নস্যাৎ কৰা হ'ব। প্ৰাক-আধুনিক অসমীয়া ভাষাত আখৰ-জোঁটনিৰ সমৰূপতা নাই যদিও ইয়াৰ নিৰ্দিষ্ট বৈশিষ্ট্য আছে। লগতে সৰল জোঁটনিয়ে বাদ দিয়া বৰ্ণসমূহ অসমীয়া লিপিৰ পৰা সম্পূৰ্ণভাৱে নোহোৱা হৈ যাব। ই লিপিৰ ইতিহাস বা ঐতিহ্যৰ বাবেও নেতিবাচক দিশ হ'ব।

সাম্প্ৰতিক কালৰ অসমীয়া ভাষাৰ কাকত-আলোচনীসমূহেও আখৰ-জোঁটনি সম্পৰ্কে নিজা-নিজা সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ পৰা দেখা যায়। ফলত সাধাৰণলোকৰ বাবে অসমীয়া ভাষা লিখাটো এক সমস্যা যেন হৈ পৰিছে। সেয়ে এই মতসমূহৰ ভিত্তিত সকলোৰে বাবে সুবিধা হোৱাকৈ অসমীয়া আখৰ-জোঁটনিৰ এক নিৰ্দিষ্ট নীতিৰ অতি প্ৰয়োজন। ❑

প্ৰসংগসূত্ৰ ঃ

১। গোলোক চন্দ্ৰ গোস্বামী, *অসমীয়া আখৰ- জোঁটনিৰ সমীক্ষা*, পৃ. ২৭

২। Nathan Brown, *Grammatical Notices of Assamese Language*, (Introduction), P. vii

৩। মহেশ্বৰ নেওগ (সম্পা.), *অৰুনোদই*, পৃ. ১১৩৩

৪। উল্লিখিত, পৃ. ১১৩৩

৫ যতীন্দ্ৰনাথ গোস্বামী, *হেমচন্দ্ৰ বৰুৱা ৰচনাৱলী*, পৃ. ১৮৫৯

৬ উল্লিখিত, পৃ. ৪৬৯

৭ উল্লিখিত, পৃ. ১১২

৮ মহেশ্বৰ নেওগ (সম্পা.), *অৰুনোদই*, পৃ. ১১৩৩

৯ নন্দ তালুকদাৰ (সম্পা.), *লম্বোদৰ বৰা ৰচনাৱলী*, পৃ. ২৫৪

১০ উল্লিখিত, পৃ. ৩২

১১ নগেন শইকীয়া (সম্পা.), *জোনাকী*, পৃ. ২৫৫

১২ লক্ষ্মীনাথ তামুলী (সম্পা.), *উষা*, পৃ. ৮০৫

১৩ উল্লিখিত, পৃ. ৮০৫

১৪ ডিম্বেশ্বৰ নেওগ, *শুধ অসমীয়া*, পৃ. ০৮

১৫ মহেশ্বৰ নেওগ, *নিকা অসমীয়া*, পৃ. ২০

১৬ গোলোক চন্দ্ৰ গোস্বামী, *অসমীয়া আখৰ-জোঁটনিৰ সমীক্ষা*, পৃ. ৫৭

১৭ উল্লিখিত, পৃ. ৫৭

১৮ উল্লিখিত, পৃ. ৬২

১৯ উল্লিখিত, পৃ. ৬১

২০ উল্লিখিত, পৃ. ৭২

২১ উল্লিখিত, পৃ. ৯৩

২২ দেৱব্ৰত শৰ্মা, *অসমীয়া জাতীয় অভিধান*, পৃ. ২২

২৩ উল্লিখিত, পৃ. ৩৭

২৪ উল্লিখিত, পৃ. ২৫

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ
গোস্বামী, গোলোকচন্দ্ৰ (সম্পা.)ঃ *অসমীয়া আখৰ-জোঁটনি সমীক্ষা,* বীনা লাইব্ৰেৰী, গুৱাহাটী, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, আগষ্ট, ২০১৪
গোস্বামী, যতীন্দ্ৰনাথ (সম্পা.) ঃ *বাঁহী,* অসম সাহিত্য সভা, যোৰহাট, প্ৰথম প্ৰকাশ, জানুৱাৰী, ২০০১
গোস্বামী, যতীন্দ্ৰনাথ (সম্পা.) ঃ *হেমচন্দ্ৰ বৰুৱা ৰচনাৱলী,* হেমকোষ প্ৰকাশন, গুৱাহাটী, প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৯৯
তামুলী, লক্ষ্মীনাথ (সম্পা.)ঃ *উষা,* অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, গুৱাহাটী,প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৫
তালুকদাৰ, নন্দ (সম্পা.)ঃ *লম্বোদৰ বৰা ৰচনাৱলী,* অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, গুৱাহাটী, বাণী প্ৰকাশ,প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৮৩
নেওগ, ডিম্বেশ্বৰ ঃ *শুধ অসমীয়া,* শুৱনী প্ৰকাশ, যোৰহাট, প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৫৩ চন
নেওগ, মহেশ্বৰ (সম্পা.)ঃ *অৰুণোদই,* অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, গুৱাহাটী, তৃতীয় প্ৰকাশ, ২০০৮
নেওগ, মহেশ্বৰ ঃ *নিকা অসমীয়া ভাষা,* কৌস্তুভ প্ৰকাশন, ডিব্ৰুগড়, জুন, ২০১১
বৰ্মন, শিৱনাথ ঃ *অসমীয়া আখৰ-জোঁটনিৰ কথা,* বনলতা, গুৱাহাটী, চতুৰ্থ সংস্কৰণ,২০১০
শইকীয়া, নগেন (সম্পা.)ঃ *জোনাকী,* অসম সাহিত্য সভা, যোৰহাট, প্ৰথম প্ৰকাশ, জানুৱাৰী, ২০০১
শৰ্মা, দেৱব্ৰত (সম্পা.) ঃ *অসমীয়া জাতীয় অভিধান,* অসম জাতীয় প্ৰকাশক, যোৰহাট, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১৩

ইংৰাজী গ্ৰন্থ ঃ
Brown, N : *Grammatical Notices of the Assamese Language*, American Bapist Misssion Press,Sibsagar,1848

ISSN 2321-4945
UGC CARàß Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অসমৰ লোকবাদ্য ঃ অৱক্ষয়, সংৰক্ষণ, সংবৰ্দ্ধন

মঞ্জু দাস

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

কোনো এটা জাতিৰ অতীতৰ বিষয়ে জানিবলৈ লোক সংস্কৃতিৰ অধ্যয়ন অপৰিহাৰ্য। সংস্কৃতি হৈছে জাতিৰ প্ৰাণ। কলা সংস্কৃতি বিপন্ন হ'লে জাতিটোও বিপন্ন হয়। জাতীয় সংস্কৃতিৰ মোল অন্তঃকৰণেৰে উপলব্ধি কৰিব পৰা সংস্কৃতি সম্পন্ন জাতি যুগে যুগে অমৰ। ইতিহাসে ঢুকি নোপোৱা কালৰে পৰা পৰম্পৰাগতভাৱে জীৱন-যাপনৰ কাৰণে দৈনন্দিন জীৱনত ব্যৱহৃত লোকবাদ্য তথা লোক কলাসমূহ জাতি-জনজাতিৰ পৰিচয়বাহক। অসমত বাস কৰা বিভিন্ন জাতি-জনজাতিৰ কলা কৃষ্টিৰ সু-সমন্বয়ত অসমীয়া সংস্কৃতি গঢ়ি উঠিছে। এই কলা কৃষ্টিৰ লগত জড়িত বাদ্যযন্ত্ৰসমূহেও অসমীয়া লোক সংস্কৃতিৰ ভঁৰাল টনকিয়াল কৰি ৰাখিছে।

বৈদিক যুগৰে পৰা নৃত্য-গীত-বাদ্য ব্যৱহাৰৰ উল্লেখ পোৱা যায়। কালিকা পুৰাণ, যোগিনী তন্ত্ৰতো ভালেমান বাদ্যযন্ত্ৰৰ উল্লেখ আছে। প্ৰাক্ শংকৰী যুগ, শংকৰী যুগ বিশেষকৈ আহোম ৰাজত্বৰ সময়ত বিভিন্ন বাদ্যযন্ত্ৰৰ সংগতে সংগীতৰ ক্ষেত্ৰখনত এক নতুন লহৰ তুলিছিল।

বীজ শব্দ ঃ

লোক বাদ্য, অৱক্ষয়, সংৰক্ষণ, সংবৰ্দ্ধন।

০.১ অৱতৰণিকা ঃ

জাতিৰ অতীত নাইবা পূৰ্বপুৰুষক লগ পোৱাৰ একমাত্ৰ সুযোগ হৈছে সেই জাতিৰ লোক সংস্কৃতি অধ্যয়ন। সংস্কৃতি হৈছে জাতি একোটাৰ প্ৰাণস্পন্দন। জাতীয় সংস্কৃতিৰ মোল অন্তঃকৰণেৰে উপলব্ধি কৰিব নোৱাৰিলে, তেনে সংস্কৃতি বিপন্ন হ'লে জাতীয়তাও বিপন্ন হয়। ইতিহাসে নিৰ্ণয় কৰিব নোৱাৰা কালৰে পৰা পৰম্পৰাগতভাৱে জীৱন-যাপনৰ কাৰণে দৈনন্দিন লোক জীৱনত ব্যৱহৃত লোক বাদ্য তথা লোক কলাসমূহ জাতি-জনগোষ্ঠীৰ পৰিচায়ক সংস্কৃতি।

ৰূপ-ৰস-গন্ধ-স্পৰ্শ আমোদিত চিৰ সেউজীয়া অসমৰ সংস্কৃতি বাৰেৰহণীয়া। প্ৰাচীন কালৰে পৰা অসমলৈ প্ৰব্ৰজিত জনগোষ্ঠীয় কৃষ্টি সংস্কৃতিয়ে অসমৰ জনজীৱন বৈচিত্ৰময় আৰু প্ৰাণচঞ্চল কৰি ৰাখিছে। ভাৰতৰ পূৰ্বাঞ্চলৰ অসম মুলুকত সু-সমন্বয়ৰে বসবাস কৰা জনগোষ্ঠীসমূহৰ পৰম্পৰাগত জীৱন প্ৰণালী, গতি প্ৰকৃতি, ধ্যান ধাৰণা, ধৰ্ম-কৰ্ম, বিশ্বাস, জন্ম-বিবাহ-মৃত্যু, শিল্প কলা, লোকবাদ্য, সংগীত নাট-নৃত্য লোক কৃষ্টি সংস্কৃতিৰ চৰ্চা, জাতি-উ ল্ডখাতিৰ সমন্বয়ৰে গঢ়া অসমীয়া সংস্কৃতি।

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
দমদমা মহাবিদ্যালয়
কামৰূপ - ৭৮১১০৪
৭০৮৬৭৪৮৮১৯
md6808112@gmail.com

অসমৰ জনজাতীয় আৰু অজনজাতীয় উভয় সম্প্ৰদায়ৰ মাজত ঢোলৰ প্ৰচলন থকা দেখা যায়। প্ৰণিধানযোগ্য যে অজনজাতীয় সম্প্ৰদায়ৰ মাজত ঢোলৰ প্ৰচলন অতি ব্যাপক। অসমৰ লোক পৰিৱেশ্য কলাসমৃদ্ধৰ ভিতৰত ঢুলীয়া অনুষ্ঠান এবিধ পুৰণি লোক পৰিৱেশ্য কলা। অসমৰ ঢুলীয়া অনুষ্ঠান ধৰ্মীয় আৰু সামাজিক উৎসৱ পাৰ্বনৰ লগত গভীৰভাৱে সম্পৃক্ত হৈ আছে। বিশেষকৈ পূজা পাৰ্বনসমূহ ঢুলীয়া অনুষ্ঠান অবিহনে সম্পূৰ্ণ নহয় বুলি বিশ্বাস আৰু পৰম্পৰা লোক সমাজত যুগ যুগ ধৰি চলি আহিছে। অসমৰ জাতীয় উৎসৱ বিহুৰো প্ৰধান বাদ্যযন্ত্ৰ হৈছে ঢোল। অসমৰ গ্ৰাম্য জীৱনতো বাতৰি নাইবা সংকেত আদি প্ৰদানৰ ক্ষেত্ৰত ঢোল বাদ্যই মুখ্য ভূমিকা গ্ৰহণ কৰি আহিছে। আনহাতে অসমৰ কামৰূপীয়া ঢুলীয়াৰো বিশেষ আদৰ আছে।

০.২ বিষয়বস্তুৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ

অসমৰ লোক বাদ্যসমূহৰ লগত নৱ প্ৰজন্মক পৰিচিত কৰাৰ লগতে কালৰ সোঁতত অৱহেলিত আৰু বিলুপ্ত হ'বলৈ উপক্ৰম হোৱা বাদ্যযন্ত্ৰ সমূহৰ উদ্ধাৰৰ ব্যৱস্থা আৰু সংৰক্ষণ তথা সংবৰ্দ্ধন কৰা। অৱক্ষয়ৰ কাৰণসমূহ উলিয়াই এইবোৰৰ উপযুক্ত ব্যৱহাৰৰ জৰিয়তে কিদৰে সংবৰ্দ্ধন কৰিব পাৰি, সেই উদ্দেশ্য আগত ৰাখিয়ে আলোচনাটি প্ৰস্তুত কৰা হৈছে।

০.৩ আলোচনাৰ পৰিসৰ ঃ

আমাৰ এই আলোচনাত অসমৰ লোকবাদ্যসমূহৰ চমু পৰিচয় দাঙি ধৰিবলৈ যত্ন কৰা হৈছে। লগতে এই বাদ্যযন্ত্ৰসমূহৰ অৱক্ষয় বা অৱলুপ্তিৰ কাৰণসমূহ উদ্ধাৰৰ চেষ্টা কৰা হৈছে। তাৰ উপৰিও অৱক্ষয় হ'বলৈ ধৰা লোকবাদ্যসমূহ উদ্ধাৰৰ প্ৰচেষ্টা, সংৰক্ষণৰ ব্যৱস্থা আদিৰ আলোচনাও সামৰি লোৱা হৈছে।

০.৪ অধ্যয়ন পদ্ধতি ঃ

প্ৰস্তাৱিত আলোচনাটি অধ্যয়নৰ সুবিধাৰ্থে বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

০.৫ তথ্য আহৰণৰ উৎস ঃ

আলোচনাটি প্ৰস্তুত কৰিবৰ বাবে বিষয়ৰ লগত সংগতি থকা বিভিন্ন সমালোচনামূলক গ্ৰন্থৰ সহায় লোৱা হৈছে যদিও নিজস্ব যুক্তি বিচাৰেৰে সজাই তোলা হৈছে।

১.০ অসমৰ লোক বাদ্যসমূহৰ চমু পৰিচিতি ঃ

লোক সংস্কৃতিত অসম যেনেদৰে চহকী লোকবাদ্যতো তেনেদৰে চহকী। অতীতৰে পৰা অসমত বসবাস কৰি থকা অনেক জাতি-উপজাতি আৰু জনজাতীয় লোকসকলৰ কলা কৃষ্টিৰ সমন্বয়ত অসমীয়া বাৰেৰহণীয়া সংস্কৃতি গঢ়ি উঠিছে আৰু সেইসকলৰ কলা কৃষ্টিৰ বাদ্যযন্ত্ৰবোৰেও অসমীয়া লোক সংস্কৃতিৰ ভঁৰাল টনকিয়াল কৰি ৰাখিছে।

অসমত সংগীত বিদ্যাৰ চৰ্চা অতি পুৰণি কালৰে পৰা চলি আহিছে। বৈদিক যুগৰ পৰা নৃত্যগীত বাদ্যৰ ব্যৱহাৰৰ উল্লেখ পোৱা যায়। নৰমেধ যজ্ঞ, অশ্বমেধ যজ্ঞ আদিত ব্যৱহৃত বাদ্যৰ উপৰিও ভগৱান শ্ৰীকৃষ্ণৰ হাতত বাঁহী, নাৰদৰ হাতত বীণ, সৰস্বতীৰ হাতত বীণা আৰু মহাদেৱৰ হাতৰ ডম্বৰুৱে সেই কথাকে প্ৰতিপন্ন কৰা দেখা যায়। প্ৰাক্ শঙ্কৰী যুগৰ শ্ৰেষ্ঠ কবি মাধৱ কন্দলিৰ 'ৰামায়ণ'ত আৰু যুদ্ধকাব্যৰ ৰচয়িতা হৰিবৰ বিপ্ৰৰ 'বভ্ৰুবাহনৰ যুদ্ধ' কাব্যতো বিভিন্ন বাদ্যযন্ত্ৰৰ নামোল্লেখ আছে। শঙ্কৰী যুগৰ বাদ্যযন্ত্ৰ ভিতৰত খুটিতাল, খমক, খোল, পাতিতাল, ভোৰতাল, মৃদাংগ আদি উল্লেখযোগ্য।

আহোম যুগত স্বৰ্গদেউ ৰুদ্ৰসিংহৰ ৰাজত্ব কালৰ থলুৱা বাঁহতলীয়া সংগীতেও ৰাজকীয় মৰ্যদা লাভ কৰিছে। এইগৰাকী ৰজাৰ দিনতে থলুৱা গীত-মাত চৰ্চা অব্যাহত ৰাখিবলৈ 'গায়নৰ বৰুৱা' বুলি বিষয় এটা সৃষ্টি কৰি তেওঁৰ অধীনত ঢুলীয়া, খুলীয়া, মৃদঙ্গীয়া, নেগেৰীয়া, কালীয়া, খুটিতালীয়া, নাচনীয়াৰ, বীনোৰা, পদগোৱা আদি খেল পাতিছিল। আহোম যুগতে অসমীয়াৰ হিয়াৰ আমঠু 'বিহু'ক ৰাজকীয় মৰ্যাদা প্ৰদান কৰে। ঢোল, তাল, গগনা, টকা, শিঙা, সুতলি আদি বাদ্যসমূহ বিহু নৃত্য-গীতৰ লগত সংগত কৰি নতুনত্বৰ জোৱাৰ আনে।

বাদ্যযন্ত্ৰৰ গঠন অনুসৰি ভাৰতীয় বাদ্যযন্ত্ৰক চাৰিটা ভাগত ভাগ কৰা হৈছে। ভাৰতৰ নাট্যশাস্ত্ৰত এই চাৰিশ্ৰেণীৰ যন্ত্ৰ হ'ল ঃ

১। তত্ যন্ত্ৰ বা তাঁৰযুক্ত বাদ্য, যেনে- গীতাৰ, চেতাৰ, বীণ, পিনাক, বেহেলা, দোঁতোৰা, লাওটোকৰী ইত্যাদি।

২। অৱনদ্ধ অৰ্থাৎ ছালেৰে তৈয়াৰী বাদ্য, যেনে- ঢোল, খোল, মৃদঙ্গ, পখোৱাজ, জয়ঢাক, নাগাৰা ইত্যাদি।

৩। ঘন যন্ত্ৰ বা তাল জাতীয় বাদ্য, যেনে- বৰতাল, ভোৰতাল, খুটিতাল ইত্যাদি।

৪। সুষিৰ যন্ত্ৰ বা ফু দি বজোৱা বাদ্য, যেনে- বাঁহী, পেপা, শংখ, সুতলি, শিঙা ইত্যাদি।

এনেদৰে বাদ্যযন্ত্ৰবোৰক বজোৱা কৌশল, সজোৱা সামগ্ৰী আৰু প্ৰায়োগিক বৈশিষ্ট্যৰ ভিত্তিত বিভক্ত কৰি সামাজিক, সাংস্কৃতিক আৰু ধৰ্মীয় অনুষ্ঠান আদিৰ লগত সংগত কৰা হয়। আনহাতে লোকেশ্বৰ গগৈয়ে 'অসমৰ লোক সংস্কৃতি' গ্ৰন্থত অসমৰ বাদ্যযন্ত্ৰবোৰক প্ৰধানত তিনিটা ভাগত বিভক্ত কৰি আলোচনা কৰিছে। যেনে-

ধাতুবাদ্য ঃ ধাতুৰ ব্যৱহাৰ কৰা সময়ত কাঁহ, তাল, ঘণ্টা, খঞ্জুৰী, টিলিঙা, জুনুকা, তৰোৱাল আদি ব্যদযন্ত্ৰৰ সৃষ্টি হয়।

তাৰবাদ্য ঃ টোকাৰী (লাও টোকাৰী), খমক, দোতোৰা, বীণ (জেমীসকলে 'ইনৰা', তাই-বৌদ্ধ জনগোষ্ঠীয়ে 'টিং', দেউৰাসকলে 'বীণ' আৰু মিচিংসকলে 'কেকুং' বোলে) আদি তাঁৰ বাদ্যৰ অন্তৰ্গত।

ঘাতবাদ্য ঃ ভাৰতীয় সংগীত শাস্ত্ৰত চৰ্ম আবৃত্ত বাদ্যযন্ত্ৰক অৱনদ্ধ অৰ্থাৎ ছালেৰে আবৃত্ত বাদ্য বা ঘাতবাদ্য বুলিও কোৱা হয়। এই ঘাতবাদ্যৰ ভিতৰত খোল, দবা, ডম্বৰু, ঢোল আদি ধৰা হৈছে। ঘাতবাদ্যৰ অন্তৰ্গত ঢোল অন্যতম এক বাদ্যযন্ত্ৰ। অসমৰ বিভিন্ন জাতি-ধৰ্ম সম্প্ৰদায়ে আনন্দ উৎসৱ আৰু বিভিন্ন অনুষ্ঠান আদিত ঢোলৰ ব্যৱহাৰ কৰা দেখা যায়। সাধাৰণতে আম, কঠাল, চাম গছৰ পৰা ঢোল সজা হয়। কেইবা প্ৰকাৰৰ ঢোলৰ ব্যৱহাৰ অসমত আছে। বৰঢোল বা জয়ঢোল, ঢেপাঢোল, সৰুঢোল বা বিহুঢোল ইত্যাদি ঢোলৰ প্ৰকাৰ।

পুৰণি সামাজিক প্ৰথা, বিশ্বাস, পূজা-পাৰ্বন, ক্ৰিয়া-কৰ্মৰ লগত এই লোকবাদ্যসমূহ সংগত কৰি অহা হৈছে। অসমত বসবাস কৰা বিভিন্ন জাতি-জনজাতিৰ নিজস্ব কলা সংস্কৃতিৰ স্বকীয় নাম আৰু ভিন্ন আকাৰৰ বাদ্যযন্ত্ৰ আছে। এই সকলো জাতি-জনগোষ্ঠীয় কলা কৃষ্টিৰ সমন্বয়ত অসমীয়া বাৰেৰহণীয়া সংস্কৃতিগঢ় লৈ উঠিছে আৰু তেওঁলোকৰ বিভিন্ন প্ৰকাৰৰ বাদ্যযন্ত্ৰই অসমীয়া লোক সংস্কৃতিৰ ভঁৰাল টনকিয়াল কৰি তুলিছে।

২.০ অৱক্ষয় আৰু ইয়াৰ প্ৰাসঙ্গিক কাৰণ ঃ

অসমৰ লোক সমাজত প্ৰচলিত অনেক আচাৰ অনুষ্ঠান লোপ পোৱাৰ লগে লগে সেই অনুষ্ঠানসমূহৰ লগত সংগত ভালেমান বাদ্যযন্ত্ৰও লোপ পাব ধৰিছে। অৱশিষ্টখিনিও সময়ৰ বিৱৰ্তনৰ আৱক্ষয়িক অৱলুপ্তিৰ গৰাহত কক্‌বকাই আছে। অৱশ্যে ইয়াৰ ভালেমান কাৰণ আছে-

(ক) আধুনিক অসমীয়া সমাজৰ ৰংচঙীয়া ঢঙত লোক বাদ্যসমূহৰ ব্যৱহাৰ আৰু লোকসমাজত সেইবোৰৰ মৰ্যাদা দিনে দিনে কমি আহিছে।

(খ) নতুনত্বৰ প্ৰতি আকৰ্ষণেই পুৰণিকলীয়া বাদ্যযন্ত্ৰসমূহৰ প্ৰতি অনীহা আনি দিছে।

(গ) পাশ্চত্যৰ প্ৰতি অন্ধ অনুকৰণে সমাজ ব্যৱস্থাৰ আমূল পৰিবৰ্তন ঘটাইছে।

(ঘ) আৰ্থিক অনাটন, বস্তু বাহানিৰ জুই ছাই দামে বাদ্য নিৰ্মাণ কৰা আৰু লোক অনুষ্ঠান জীয়াই ৰখাত অন্তৰায় হৈ পৰিছে।

(ঙ) উপযুক্ত বা প্ৰশিক্ষণপ্ৰাপ্ত কাৰিকৰৰ অভাৱেই লোক বাদ্যসমূহ তৈয়াৰ কৰা বা মেৰামতি কৰাত বাধাৰ সৃষ্টি কৰিছে।

(চ) লজ্জাবোধ, লোকবাদ্যসমূহৰ অৱক্ষয়ৰ আন এক কাৰণ। সমাজত শিক্ষিত লোকৰ সংখ্যা বাঢ়ি অহাৰ লগে লগে লোকবাদ্যবোৰ লোকানুষ্ঠানত বজাবলৈ লাজ পোৱা হ'ল।

(ছ) শুদ্ধ পৰিৱেশনৰ অভাৱেও লোক বাদ্যসমূহৰ মৰ্যাদা হানিত অৰিহণা যোগাইছে।

(জ) বিজ্ঞান আৰু প্ৰযুক্তি বিদ্যাৰ উন্নতিয়েও লোক বাদ্যসমূহৰ বিলুপ্তিত সহায় কৰিছে।

(ঝ) যুৱ প্ৰজন্মৰ মানসিকতাৰ অভাৱেও লোকবাদ্যৰ অৱক্ষয় সাধন কৰিছে।

(ঞ) সৰ্বশেষত অপসংস্কৃতি, সামাজিক ব্যাধি, ৰাজনৈতিক বাতাবৰণ আৰু শৈক্ষিক দিশৰ বিনষ্ট সাধানেও লোকবাদ্যসমূহৰ অৱক্ষয় সাধন কৰিছে।

আধুনিকতাৰ বশৱৰ্ত্তী হৈ মানুহে লোকবাদ্যসমূহ আঁতৰাই আধুনিক তথা পাশ্চত্যৰ যন্ত্ৰপাতিৰ মোহত আৱদ্ধ হৈ পৰিছে। আধুনিক যন্ত্ৰপাতিৰ সহায়ত পৰিবেশন কৰা আধুনিক সংগীতে লোকগীত তথা লোকবাদ্যসমূহ আঁতৰাই পেলাইছে। এনেদৰে জাতীয় সম্পদ অৱক্ষয়ৰ আগজাননীৰ প্ৰতি গুৰুত্ব আৰোপ কৰি লোক সংগীতক জীয়াই ৰখা আৰু লোকবাদ্যসমূহক সংৰক্ষণ কৰাৰ গুৰু দায়িত্ব নিশ্চয় প্ৰতিজন অসমীয়াৰে। ইয়াৰ যথাযথ ব্যৱস্থা হাতত ল'ব নোৱাৰিলে আমাৰ জাতীয় সম্পদযে এদিন কালৰ বুকুত হেৰাই যাব সি ধ্ৰুৱপ।

৩.০ সংৰক্ষণ-সংবৰ্দ্ধনৰ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ ঃ

অসমৰ সামাজিক, সাংস্কৃতিক আৰু ধৰ্মীয় মৰ্যাদা অক্ষুন্ন ৰাখিবলৈ হ'লে অসমীয়া লোক সংস্কৃতিৰ আচাৰ অনুষ্ঠাবোৰৰ লগতে লোকবাদ্যসমূহৰো উদ্ধাৰ, সংৰক্ষণ নিত্যন্তই প্ৰয়োজন। কিন্তু ইয়াৰ বাবে কিছুমান ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰিব লাগিব।

(ক) পশ্চিমৰ ৰংচঙীয়া ঢঙত ভোল নাযায় আমাৰ লোকবাদ্যসমূহৰ ব্যৱহাৰ আৰু মৰ্যাদা অক্ষুন্ন ৰাখিব লাগিব।

(খ) সময় গতিশীল, সমাজ পৰিবৰ্তনশীল হ'লেও সময়ৰ সোঁতত উটি গৈ পুৰণি আচাৰ আনুষ্ঠানবোৰ এৰি দিব নালাগিব। 'Old is gold' বাক্যশাৰী মনত ৰাখি আগবাঢ়িব লাগিব।

(গ) বাদ্যযন্ত্ৰ নিৰ্মাণ তথা কাৰিকৰী দিশৰ প্ৰশিক্ষণ দিয়াৰ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰিব লাগিব। অসমীয়া সমাজৰ আৰ্থিক দুৰৱস্থাৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি চৰকাৰে আৰ্থিক সাহাৰ্য প্ৰদান কৰিব লাগিব।

(ঘ) লোকবাদ্যসমূহ লোক অনুষ্ঠানত বজাবলৈ লজ্জাবোধ নকৰি আমাৰ অসমৰ আপুৰুগীয়া সম্পদ বুলি গৌৰৱবোধ কৰিব লাগিব।

(ঙ) লোকবাদ্যসমূহ যাতে শুদ্ধবাৰে পৰিৱেশন কৰিব পাৰে তাৰ বাবে ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰিব লাগিব।

(চ) যিবোৰ বাদ্যযন্ত্ৰ ইতিমধ্যে কালৰ গৰ্ভত হেৰাই গৈছে, সেইবোৰৰ পুনৰ উদ্ধাৰৰ ব্যৱস্থা কৰিব লাগে।

(জ) লোক সংগীতৰ অনুষ্ঠান কিছুমান সঘনে অনুষ্ঠিত কৰিব লাগিব। লোক সংগীত আৰু বাদ্যৰ কৰ্মশালা আদি পাতি মানুহৰ মন আকৰ্ষিত কৰিব পৰা যায়। এইক্ষেত্ৰত চৰকাৰ অথবা এন.জি.ও. (বেচৰকাৰী অনুষ্ঠান) আদিয়ে উদ্যোগ গ্ৰহণ কৰিব লাগিব।

(ঝ) গাৱে-ভূএও বিভিন্ন ধৰণৰ সাংস্কৃতিক প্ৰতিযোগিতামূলক অনুষ্ঠান পাতি নৱপ্ৰজন্মক আগ্ৰহী কৰি তুলিব পাৰিলে সুফল পোৱা যাব।

(ঞ) সম্প্ৰতি দুই এজন ব্যক্তিয়ে নিজস্বভাৱে গাঁৱৰ আগ্ৰহী ল'ৰা-ছোৱালীক বাদ্যযন্ত্ৰ পৰিবেশন সম্পৰ্কত প্ৰশিক্ষণৰ ব্যৱস্থা কৰিছে। আমি তেনে লোকৰ আগ্ৰহক সন্মান জনাই উৎসাহিত কৰিব লাগিব।

ওপৰোক্ত আটাইবোৰ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰিলেও লোকবাদ্য অথবা লোক সংস্কৃতিক জীয়াই ৰখাত সফল হ'ব পৰা নাযায়, যদিহে প্ৰতিজন অসমীয়াৰ মনত লোক মানসিকতা নাথাকে। আমি আমাৰ সংস্কৃতিক অন্তঃকৰণেৰে ভাল পাব লাগিব। তেতিয়াহে আমি আমাৰ সংস্কৃতিক জীয়াই ৰাখিব পাৰিম।

৪.০ সামৰণি ঃ

বৃহত্তৰ অসমৰ নিৰক্ষৰ হোজা গঞা ৰাইজেই অসমৰ মূলধন। এওঁবিলাকৰ সাংস্কৃতিক বিকাশেই প্ৰকৃততে অসমীয়া সংস্কৃতিৰ বিকাশ। সেয়েহে অসমৰ প্ৰতিগৰাকী জাতীয় মনোভাৱাপন্ন ব্যক্তিয়ে বুজিব লাগে যে গাওঁ অঞ্চলত কৃষিজীৱি মানুহৰ অৰ্থনৈতিক উন্নতিৰ মাজতেই লুকাই থাকে সাংস্কৃতিক ঐতিহ্য। ইয়াক বাস্তৱায়িত কৰিবলৈ হ'লে আমাৰ জাতীয় সম্পদ উদ্ধাৰ, সংৰক্ষণ, সংবৰ্দ্ধনৰ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰিব লাগিব। খক্সমচেট আৰু গীতাৰৰ যৌনগন্ধী শিহৰণৰ মাজত আমাৰ মৰমৰ সেই মঘাই ওজাৰ ঢোলৰ চেও 'বেখুৰা' হ'বলৈ দিব নোৱাৰি। বৰঞ্চ কেনেকৈ ইয়াক বিশ্ব দৰবাৰলৈ লৈ যাব পাৰি, সেইটোহে বাস্তৱত ৰূপায়িত কৰাত মনোযোগ দিব লাগে।

সমাজৰ বিৱৰ্তনৰ লগে লগে অনেক ধৰ্মীয় সামাজিক, সাংস্কৃতিক অনুষ্ঠানৰ লগতে আমাৰ আপুৰুগীয়া লোকবাদ্যসমূহ অৱহেলিত হোৱা দেখা যায়। মানৱ সমাজৰ বিৱৰ্তনৰ ফলত কৃষ্টি কৰ্মৰাজি সংস্কৃতি কৰ্মলৈ উন্নীত হোৱাত লগে লগে লোকবাদ্যবোৰেও ক্ৰমোন্নতি আৰু ক্ৰমবিকাশ লাভ কৰিছে। কিন্তু অতি পৰিতাপৰ কথা যে এই ক্ৰমবিকাশেই লোকবাদ্যসমূহৰ অপমৃত্যুও ঘটাইছে। আজি আমি প্ৰতিজন অসমীয়াই দৃঢ় সংকল্প ল'ব লাগিব যাতে লোকবাদ্যৰ কেতিয়াও মৃত্যু নহয় বা হ'বলৈ নিদিও।

পৃথিৱীত মানুহ থাকে মানে লোকবাদ্যও থাকিব আৰু লোকসংস্কৃতিও সদায় সজীৱ হৈ ৰ'ব। এইটো ধ্ৰুৱপ যে মানুহ থাকিলে সমাজ থাকিব আৰু সমাজ থাকিলে বাদ্যযন্ত্ৰও সদায় সজীৱ হৈ থাকিব। পাশ্চাত্য বাদ্যযন্ত্ৰৰ যিমানেই ব্যৱহাৰ নহওক কিয় গ্ৰাম্য জীৱনত ব্যৱহাৰ হোৱা বাদ্যযন্ত্ৰ কেতিয়াও লোপ নাপায়। অসমৰ লোকবাদ্য প্ৰতিজন অসমীয়াৰ হৃদয়ৰ পৰা স্বতঃস্ফুৰ্তভাৱে প্ৰকাশিত হোৱা বাদ্য কালৰ সোঁতত হয়তো লোপ পাব পাৰে, কিন্তু সম্পূৰ্ণৰূপে নিঃশেষ হৈ নাযায়। অসমৰ লোকবাদ্যত সুৰ, তাল, লয় চিৰদিন প্ৰবাহিত হৈ থাকিব। ❑

প্ৰসঙ্গ পুথি ঃ

১। কৰ্মকাৰ, সন্তোষ কুমাৰ ঃ সংস্কৃতি, সৃজন আৰু মনন, জ্যোতি প্ৰকাশন, ২০১৩।

২। গগৈ, লোকেশ্বৰ ঃ অসমৰ লোক সংস্কৃতি, ২০১১।

৩। গোস্বামী, ভৃগুমোহন ঃ সংস্কৃতি আৰু লোক সংস্কৃতি, চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, ১৯৯৪।

৪। দাস, নাৰায়ণ আৰু ৰাজবংশী, পৰমানন্দ (সম্পা.) ঃ অসমীয়া সংস্কৃতিৰ কণিকা, প্ৰকাশন গোট, প্ৰা.ম., ১৯৯৬।

৫। বৰুৱা, বিৰিঞ্চি কুমাৰ ঃ অসমীয়া লোক সংস্কৃতি, বীণা লাইব্ৰেৰী, ১৯৬১।

৬। শৰ্মা, ৰবীন ঃ সাংস্কৃতিক সংবীক্ষণ, পুথি নিকেতন, গুৱাহাটী, ১৯৯৭।

लेखकों से निवेदन

- द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशन हेतु पत्रिका की प्रकृति के अनुरूप भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक लेख आमंत्रित हैं।
- अनूदित रचनाओं के संदर्भ में मूल लेखक की अनुमति/स्वीकृति अनिवार्य है।
- लेखक अपनी रचनाएँ केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानक हिंदी यूनिकोड में 13 प्वाइंट में टंकित कराकर पत्रिका के ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com पर अथवा स्पष्ट अक्षरों में लिखकर समिति कार्यालय के पते (मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, रूपनगर, गुवाहाटी-781032, असम) पर भेजें।
- अस्वीकृत रचनाएँ लौटाई नहीं जाएँगी। अत: भेजी गई रचना की प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- लेखक अपनी रचना के साथ अपना नाम, पदनाम, मोबाइल नं., ई-मेल, पूरा पता सहित एक पासपोर्ट साइज फोटो अवश्य भेजें।
- शोधपत्र की न्यूनतम शब्द-सीमा 2000 और अधिकतम 3000 होनी चाहिए और सार 150 से 200 शब्दों के भीतर होना चाहिए।
- असमीया भाषा में लिखे गए लेख को पेजमेकर फारमेट में गीतांजलि फंट, 12 प्वांइट में टाइप कराकर भेज सकते हैं।
- शोधपत्र के लेखन में एमएलए शैली का अनुपालन करना होग।
- शोधपत्र में क्रमश: शीर्षक, सार, प्रस्तावना, उद्देश्य, संसाधन/सामग्री, प्रविधि/पद्धति, क्षेत्र, मूल विषयवस्तु का विश्लेषण, परिणाम/उपलब्धियाँ, निष्कर्ष और उद्धृत कार्य शामिल होंगे।
- शोधपत्र की मौलिकता हेतु रचना के साथ घोषणा-पत्र संलग्न किया जाना आवश्यक है।
- लेखक अपनी तथ्यात्मक सटीकता के लिए पूरी तरह जिम्मेदार हैं।

द्विभाषी राष्ट्रसेवक का सदस्यता प्र-पत्र

यहाँ से काटिए

नाम : ....

पदनाम : ....

पूरा पता : ....

: ....

ई-मेल : .... मोबाइल : ....

RTGS का विवरण : ....

सदस्यता शुल्क

व्यक्तिगत		*संस्थागत*	
प्रति अंक	: रु. 100/-	प्रति अंक	: रु. 150/-
वार्षिक	: रु. 1000/-	वार्षिक	: रु. 1,500/-
आजीवन सदस्य	: रु. 10,000/-		

निर्धारित शुल्क मनीऑडर/डी.डी. के द्वारा असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के नाम से समिति कार्यालय के पते पर भेजा जा सकता है। ऑनलाइन शुल्क निम्न विवरण के अनुसार भेजें :-

Name of Beneficiary	:	**Asom Rastrabhasha Prachar Samiti**
A/c No.	:	551802010004619
Name of Bank & Branch	:	**Union Bank of India**, Hatigaon Chariali, Dispur-781038
IFS Code	:	UBIN0555185

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें -

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया, मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, डाक : इंद्रपुर, जिला : कामरूप महानगर, गुवाहाटी-781032 (असम), मो. 9101541380, ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

POSTAL REGISTRATION NO. GH/127/2022-24 ❖ Date of Publication : 31st July, 2024 ❖ RNI No. ASSBIL/2009/31008

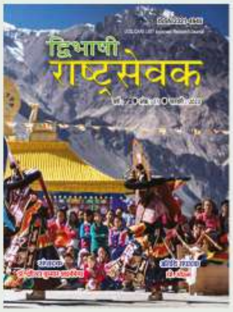

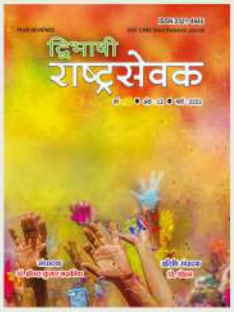

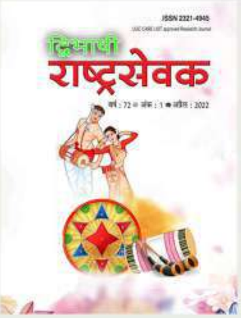

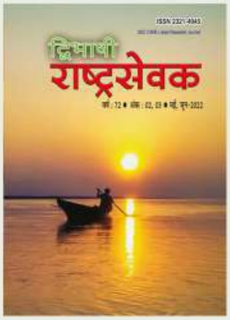

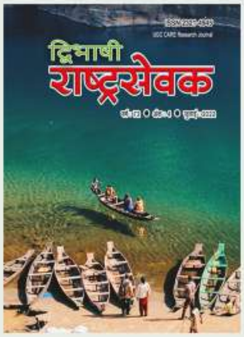

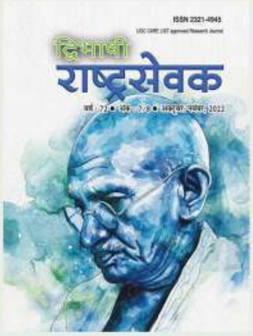

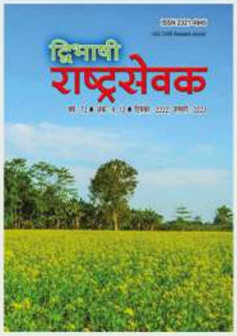

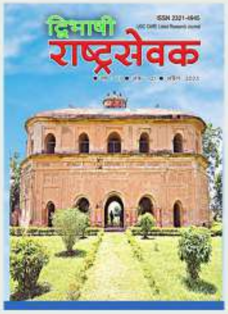

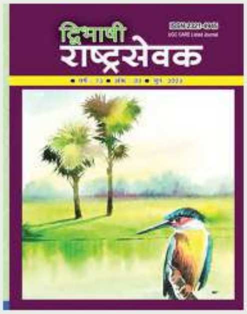

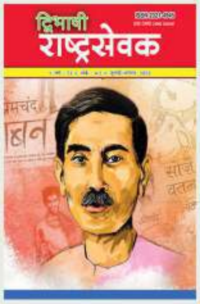

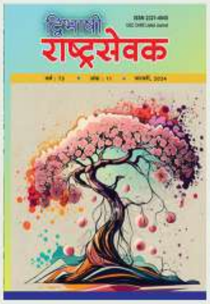

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी–781032

arpsguwahati.com rastrasewak51@gmail.com 9101541395/9101541380